# ग्रेट ब्रिटेन का आधुनिक इतिहास

राजनीतिक एवं वैधानिक

( १८१५—१९५६ ई० )

प्रो० राधाकृष्ण शर्मा, एम० ए०

अध्यक्ष, इतिहास विभाग, राजेन्द्र कालेज, छपरा

किताब महल

इलाहाबाद बम्बई दिल्ली

१९५७

# विषय-सूची

पूज्य पिता
स्वर्गीय श्री रामाज्ञा शर्मा जी
की
पुण्य एवं पावन स्मृति में

## अध्याय ३४

# गृहनीति ( १८१५—३० ई० )

## १. युद्धोपरान्त संकट और सुधार

### ( क ) शासक और मंत्रिमंडल

१८१५ ई० तक जार्ज तृतीय की हालत खराब ही रही थी। १८१० ई० के बाद से कमजोरी और पागलपन के कारण वह राज्य का काम देखने में असमर्थ होने लगा। अतः राज्य प्रतिनिधि की हैसियत से उसका बड़ा लड़का जार्ज राज्य की देख भाल करने लगा। उधर १८१२ ई० में ही स्पेन्सर पर्सिवेल के टोरी मंत्रिमंडल के पतन के बाद लार्ड लिवरपूल के नेतृत्व में पुनः एक टोरी मंत्रिमंडल कायम हुआ जो १५ वर्षों तक रहा। इस बीच १८२० ई० में जार्ज तृतीय का देहान्त हो गया और उसका लड़का जार्ज चतुर्थ के नाम से राजा हुआ। अपने ६ वर्षों के राज प्रतिनिधित्व काल में ही उसने अपने को जनता की दृष्टि में काफी हेय बना लिया था। उसका व्यक्तिगत जीवन बड़ा ही कलुषित और भ्रष्ट था। वह आलसी, विषयी, स्वार्थी तथा दम्भी था। राजा होने के बाद वह अस्वस्थ हो गया और राजकाज से कुछ अलग रह कर एकान्त जीवन व्यतीत करने लगा। उसके बुरे आचरण एवं घृणित आचार-विचार के कारण उसके मित्रों और समर्थकों की कमी थी और देश की राजनीति पर भी उसका अधिक प्रभाव न था। शासन कुछ जमीन्दारों के हाथ में ही केन्द्रित था। इस कारण पहले की दमन नीति जारी रही। इसी समय जार्ज रानी कैरोलीन को तलाक देना चाहता था और उसके प्रभाव से एक तलाक बिल पेश किया गया। लोकमत रानी के पक्ष में था। अतः बिल वापस करना पड़ा। इससे सरकार की बदनामी और भी बढ़ गई। दूसरे ही साल रानी की मृत्यु हो गई जिस कारण कोई झंझट नहीं उठा। इसी तलाक के प्रश्न पर भीषण अप्रियता के बीच मंत्रियों में फूट पड़ गई। १८२२ ई० में पुराने टोरियों के नेता सिडमौथ ने पद-त्याग कर दिया तथा कासलरे ने आत्महत्या कर ली। लिवरपूल के मंत्रिमंडल में जार्ज कैनिंग, विलियम हसकिसन और राबर्ट पील नामक तीन नये और योग्य टोरियों का पदार्पण हुआ। इस तरह प्रतिक्रिया के युग का अन्त हुआ और सुधारों का जमाना प्रारंभ हुआ। नये टोरियों के विचार बहुत ही प्रगतिशील थे और इनके प्रभाव से इस समय कितने ही महत्वपूर्ण सुधार हुए।*

---

* इनका विस्तृत विवरण आगे देखिये ४-ग, पृ० १०

अध्याय पृष्ठ

( २ ) यन्त्र युग का आगमन—हस्त कार्यों की जगह अब मशीनों की सहायता ली जाने लगी। इससे बहुत लोग कार्य से वंचित हो गये। इससे बेकारी की समस्या ने और भी विकराल रूप धारण कर लिया। इससे सस्ते मजदूर बिना परिश्रम के मिलने लगे। हजारों व्यक्ति ऐसे थे जिन्हें कोई कार्य नहीं करना पड़ रहा था। फिर भी १७९९ ई० और १८०० ई० के कम्बिनेशन ऐक्ट के कारण उनकी असुविधाओं का समुचित निराकरण भी न हो सकता था।

( ३ ) महादेशीय नियम—युद्ध ने स्वाभाविक रूप से ही खाद्यान्नों के मूल्य में वृद्धि ला दी थी। इस पर भी तुर्रा यह कि महादेशीय नियम ने खाद्यान्नों के आयात में कठिनाई पैदा कर दी थी। अतः खाद्यान्नों के मूल्य में अति वृद्धि हो गई। इस नियम ने एकत्रित किये हुए तैयार माल के निर्यात करने में असुविधाएँ पैदा कर दी थीं। यदि चीजों का आयात भी होता तो टोरी दल की संरक्षण-नीति के कारण कड़ी चुंगी लगायी जाती थी जिससे अन्न काफी महँगा पड़ता था। इसी में कभी-कभी फसलें भी नष्ट हो जाया करती थीं जो घाव पर नमक छिड़कने के समान कष्ट देती थीं।

( ४ ) दीर्घकालीन नेपोलियनिक युद्ध—दीर्घकालीन नेपोलियनिक युद्ध का भी इस संकटकाल में अपना एक अलग ही हाथ था। इसने देश की आर्थिक स्थिति को बड़ा ही भीषण बना डाला। युद्ध में अत्यधिक खर्च का होना आवश्यक था। खर्च आय के अनुपात में बहुत अधिक था। इस खर्च का अधिकांश भाग सिर्फ प्रत्यक्ष करों द्वारा नहीं पूरा होता था जिससे धनी प्रभावित होते, बल्कि उन सभी सामान्य चीजों पर जिनमें जीवन की आवश्यकताएँ भी सम्मिलित थीं, अप्रत्यक्ष कर लगे हुए थे, जिससे गरीब जनता पर बड़ा ही भीषण प्रभाव पड़ता था।

युद्ध के बाद भी राष्ट्रीय कर्ज के ब्याज को चुकाने के लिये जनता को बहुत अधिक कर देने को बाध्य होना पड़ा। युद्धकाल में यह कर्ज ६ करोड़ पौंड तक बढ़ गया था। पिट की युद्ध-कालीन योजना में एक आय-कर सम्मिलित था जो पीछे हटा दिया गया था। अब धनी लोगों पर प्रत्यक्ष कर नहीं लगाया गया बल्कि चुंगियों के द्वारा अतिरिक्त कर ही लगाया गया। जनता टैक्सों के बोझ से तबाह हो रही थी। नेपोलियन को पराजित करने के खर्च का बड़ा भाग गरीबों ने ही अपना पेट काटकर टैक्स के रूप में दिया था। १७९७ ई० में पिट ने इंगलैंड के बैंक को नगदी चुकती बन्द कर कागजी मुद्रा चलाने का अधिकार दे दिया था। इस तरह बहुत से काउन्टियों में विभिन्न बैंकों का प्रादुर्भाव हो गया था जिनकी स्थिति कमजोर थी और इस तरह के अधिकांश बैंकों ने अब चुकती बन्द कर दी थी।

( ५ ) युद्ध के बाद की शान्ति—अगर युद्ध को इस संकट का कारण कहा जाय तो शांति भी जिसने युद्ध का अन्त किया, संकट के लिये कम उत्तरदायी नहीं

# परिशिष्ट-सूची

मशीन-तोड़क व्यक्ति के नाम पर हुआ। नेडलड लीसेस्टरशायर का रहने वाला एक मूर्ख व्यक्ति था। वह एक बार किसी घर में प्रवेश कर मशीनों को तोड़ने लगा था, अतः उसके बाद मशीन तोड़ने वाले लडायट कहलाने लगे। करीब एक दशाब्दी तक ( १८१०-२० ) समय-समय पर इन लोगों के उपद्रव होते रहे। इनका प्रमुख कार्य मशीनों को तोड़ डालना ही था और इनके कार्यक्षेत्र का केन्द्र मिडलैंड था।

( २ ) लंदन के एक जन-समूह ने स्पाफिल्ड से टावर पर कब्जा करने का प्रयत्न किया। इनका नेता बालिग मताधिकार और प्रतिवर्ष पार्लियामेंट का निर्वाचन चाहता था। ये लोग लंदन शहर तक पहुँच गये और बहुत कुछ गड़बड़ कर दिया, लेकिन पीछे भगा दिये गये।

( ३ ) १८१७ ई० में डर्बी में करीब ५०० व्यक्तियों ने विद्रोह कर दिया पर १८ सवारों ने उन्हें रौंद डाला। उनके प्रसिद्ध नेताओं को प्राण-दंड दे दिया गया।

( ४ ) उसी साल कई सौ भूखे श्रमिक लंकाशायर से लंदन में चढ़ आये। ये राज प्रतिनिधि चौथे जार्ज के यहाँ एक आवेदन-पत्र प्रस्तुत करना चाहते थे। इनके पास सोने के लिये कम्बल थे। अतः ये कम्बल वाले कहलाये। इनमें बहुत से लोग तो कैद कर लिये गये और बहुतों को सैनिकों के द्वारा लौट जाने को विवश होना पड़ा।

( ५ ) १८१६ ई० में सेंट पीटर्स फील्ड ( मैनचेस्टर ) में पार्लमेंटरी सुधार के लिये दबाव डालने के निमित्त उग्र पन्थियों द्वारा उत्साहित लगभग ५० हजार व्यक्तियों की एक महती सभा हुई।

( ६ ) स्काटलैंड में भी बड़ा ही असन्तोष फैल रहा था। १८२० ई० में ग्लासगो में एक बड़ी हड़ताल हो गई और स्टर्लिंगशायर में भयानक विद्रोह हो गया लेकिन सशस्त्र विद्रोहियों को सैनिकों ने तितर-बितर कर दिया।

## ४. सरकार का रुख

जहाँ तक उस समय की सरकार का सम्बन्ध है संकट के ये साल अंध प्रतिक्रिया के थे। इस गंभीर परिस्थिति को सफलतापूर्वक सँभालने के लिये वह सर्वथा अयोग्य थी। बूढ़ा राजा जार्ज तृतीय १८१० ई० से ही निःशक्त और पगला हो गया था तथा राजप्रतिनिधि जार्ज चतुर्थ भी अयोग्य और चरित्रहीन व्यक्ति था। प्रधान व्यक्ति लिवरपूल कुशल राजनीतिज्ञ नहीं था। उसकी सरकार में सिर्फ ३ व्यक्तियों का प्रभुत्व था—विदेश मंत्री तथा कॉमन्स सभा का नेता लार्ड कैसलरे जो गृह-राजनीति में बड़ा ही प्रतिक्रियावादी था; चांसलर लार्ड एल्डन जो भयंकर प्रतिक्रियावादी था, वह 'किसी भी समय में किसी भी उद्देश्य से किसी भी परिवर्तन का विरोधी' था; तीसरा था लोकशांति के लिये जिम्मेवार, गृह मंत्री सिडमौथ ( एडिंग्टन ) जो अदूर-दर्शी और अयोग्य था।

१८२७ ई० में लार्ड लिवरपूल का देहावसान हो गया और कैनिंग प्रधान मंत्री बना। इसके पहले वह कई वर्षों तक राजनीतिक क्षेत्रों में कार्य कर चुका था। उसने यौवन काल से ही अपनी असाधारण प्रतिभा का प्रदर्शन किया था। जिस समय वह ऑक्सफोर्ड में विद्यार्थी था उसी समय उसे फौक्स आदि जैसे बड़े-बड़े ह्विग नेताओं से परिचय हो गया था। वह सम्पादन कला भी खूब जानता था। फ्रांसीसी क्रान्ति के समय वह टोरी हो गया और १७९६ ई० में पिट मन्त्रिमण्डल में परराष्ट्र सहायक सचिव नियुक्त हुआ था। १८०१ ई० में पिट के पद त्याग करने पर इसे भी कैबिनेट से हटना पड़ा, किन्तु पिट के द्वितीय मंत्रिमण्डल में (१८०४-०६ ई०) वह पुनः शामिल हो गया। १८०७ ई० के पोर्टलैंड मन्त्रिमण्डल में वह परराष्ट्र सचिव रहा। किन्तु जब पर्सिवल प्रधान मन्त्री हुआ तो कैनिंग ने पद-त्याग कर दिया। १८१५ से १८१६ ई० तक वह लिवरपूल मन्त्रिमण्डल में काम करता रहा। १८२२ ई० में वह कॉमन्स सभा का नेता और परराष्ट्र सचिव हुआ था। राजनीति में वह नरम टोरीवाद का समर्थक था। वह कैथोलिकों को सुविधा देना चाहता था और इस प्रश्न पर वेलिंगटन तथा पील ने पद-त्याग कर दिया। इस समय कुछ ह्विग इस मन्त्रिमण्डल में सम्मिलित हुए। लेकिन शीघ्र ही कैनिंग इस संसार से चल बसा और गोडरिक प्रधान मन्त्री हुआ। पर उसे कुछ ही महीनों के बाद पद-त्याग करना पड़ा। तब ड्यूक ऑफ वेलिंगटन ने १८२८ ई० में नया मन्त्रिमण्डल बनाया। कैनिंग के समर्थक से मतभेद हो जाने के कारण ड्यूक ने उन्हें निकाल दिया और १८३० ई० तक प्रधान मन्त्री बना रहा। इस बीच कई सुधार हुए। इसी साल जार्ज चतुर्थ परलोक सिधार गया और उसका भाई विलियम चतुर्थ राजा हुआ। अब तक वेलिंगटन ने भी अपने को जनता की दृष्टि में हेय और अप्रिय बना लिया था और नवम्बर १८३० ई० में उसे भी पद त्याग करना पड़ा।

## (ख) संकट का युग (१८१५—२२ ई०)

(१) १८१५ ई० में ग्रेट ब्रिटेन की स्थिति—वाटरलू के युद्ध के समय १८१५ ई० में ग्रेट ब्रिटेन को सर्वोच्च सत्ता और प्रतिष्ठा प्राप्त थी। वह प्राचीन दुनिया की ईर्ष्या और नमूना का पात्र बन गया था। प्रादेशिक और आर्थिक विकास तो हुआ ही, इससे भी अधिक नैतिक शक्ति का विकास हुआ। समुद्र पर उसका निर्विरोध स्वामित्व स्थापित हो गया था। कारखाने तथा बाजार के क्षेत्र में भी यह यूरोप के महान् राज्यों में अद्वितीय राष्ट्र बन गया था। इसके कुलीन तथा व्यापारी वर्गों ने अतुल सम्पत्ति एकत्र कर ली थी। इंगलैण्ड की इस अपूर्व उन्नति के कारण थे—औद्योगिक क्रान्ति और १८वीं सदी के विभिन्न युद्ध। फ्रांस के साथ युद्ध काल में (१७९३ से १८१५ ई०) भीतरी और बाहरी माँगें बहुत बढ़ गयी थीं और औद्योगिक क्रान्ति के ही कारण

कैनिंग, बोर्ड ऑफ ट्रेड के सभापति विलियम हसकिसन और गृह मंत्री राबर्ट पील। 'वाटरलू के पश्चात् इङ्गलैंड के दूषित वायुमंडल के बीच मंत्रिमंडल में इन मंत्रियों का आगमन स्वच्छ हवा के एक झोंके के सदृश था।'* कई विषयों में इन नये टोरियों के विचार विरोधी दल के ह्विगों से भी अधिक उदार थे। ह्विगों से इनका सिर्फ पार्लमेंटरी सुधार के विषय पर मतभेद था। इनके प्रभाव से सरकार में एक नयी चेतना का आरम्भ हुआ। कैनिंग ने राष्ट्रीयता के आदर्श को पुनः स्वीकार किया और पील ने भी कैथोलिकों के प्रति सहानुभूति दिखलाकर जनतंत्र की शक्ति की महत्ता प्रदर्शित की।

**सुधार के कार्य**—अतः अब विभिन्न लाभदायक सुधार किये गये। ६० वर्षों का वैधानिक स्थिरता का जो युग था वह अब समाप्त हो चला। इस तरह चौथे जार्ज के शासन काल में प्राचीन परम्पराएँ डूबने लगीं और नये सुधार-आन्दोलनों का प्राबल्य हुआ जो समय की प्रगति के साथ गतिशील होते गये। भिन्न-भिन्न सुधारों के भिन्न-भिन्न प्रचारक थे जिन्होंने इस दशा में अपने कदम बढ़ाये।

फ्रांसीसी युद्ध के समय पिट ने कम्बीनेशन ऐक्ट पास किया था और श्रमिकों का इकट्ठा होना तथा श्रमिक-संघों को गैरकानूनी करार दे दिया था लंदन में फ्रान्सिस प्लेस नाम का एक उग्रपन्थी दर्जी था जो बेन्थम का शिष्य था। उसका व्यक्तित्व बड़ा ही आकर्षक और प्रभावशाली था। उसके प्रयत्नों के फलस्वरूप १८२४ ई० में कम्बी-नेशन ऐक्ट रद्द कर श्रमिक संघों को वैध घोषित कर दिया गया।

इन सुधारकों में पील का नाम मुख्य है। १८१६ ई० में ही उसने इङ्गलैंड के बैंक को नकदी चुकती करने की आज्ञा दे अपनी प्रतिभा का परिचय दिया था। उसने फौजदारी कानूनों में सुधार किया और उसकी कठोरता कम कर दी। इस मामले में उसने सर मैकिनटोश ( १७६५-१८३२ ई० ) और बेन्थम का अनुसरण किया। अब तक पाकिटमारी, भेड़ चुराने या पुल तोड़ने जैसे अति साधारण अपराधों के लिये भी मृत्यु दंड दिया जाता था। इसका फल यह होता था कि जूरी के सदस्य अपराधियों के दोषों पर ठीक से विचार भी नहीं करते थे और मौत से छुटकारा पाने के लिए किसी तरह निकल भागने का अवसर दे देते थे। उसके मन्त्रित्व काल में लगभग ३०० कानून, जिनमें बड़े ही कड़े और अनुचित दंड निर्धारित थे, या तो एकदम हटा दिये या उनमें पर्याप्त सुधार किए गये। अब हत्या और राजद्रोह जैसे भारी अपराधों में ही फाँसी की सजा दी जा सकती थी। पील ने सीडमौथ द्वारा संगठित गुप्तचर विभाग को भी हटा दिया।

* ट्रिवेलन—हिस्ट्री ऑफ ब्रिटेन, पृ० ५४४

इस प्रकार १८१५ ई० में ग्रेट ब्रिटेन में बड़ा ही विचित्र दृश्य उपस्थित हुआ। वाटरलू की विजय के बाद के सात साल ठीक ही संकट और प्रतिक्रिया के साल कहे गये हैं। देश के गगन मंडल में अशान्ति और निराशा के बादल छा गये। अंग्रेजों के आधुनिक इतिहास में ये साल बड़े ही संकटपूर्ण थे।* एक लेखक के मतानुसार—"इंगलैंड के इतिहास में शायद ही कभी सामाजिक असंतोष इतना जोरदार या आर्थिक संकट इतना व्यापक था जितना १८१५ की शांति के बाद के कुछ सालों में।"

## २. संकट के कारण

इस संकट के निम्नलिखित बहुत से कारण थे—( १ ) संक्रमणकाल—यह समय अंग्रेजों के लिये संक्रमण-काल था। अधिकांश लोग ग्रामीण जीवन को छोड़ कर औद्योगिक जीवन व्यतीत करने लगे थे। संक्रमण-काल के साथ स्वाभाविक ही बहुत-सी और विपत्तियाँ भी उपस्थित होती हैं। ग्राम्य आन्दोलन ने छोटे छोटे किसानों को कष्टपूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिये बाध्य किया। किसान भूमि की उर्वराशक्ति बढ़ाने और घेरा के खर्च जुटाने में असमर्थ थे। अत उनमें से बहुत ग्राम छोड़कर शहरों में चले गये जहाँ बेकारी की समस्या अपना नग्न नृत्य प्रस्तुत करने लगी और बहुतों ने गाँवों में ही रहकर खेतिहर मजदूरी की जिन्दगी व्यतीत करना शुरू किया। इसके सिवा बढ़ती हुई जनसंख्या की माँग की पूर्ति करने में जमीन की बढ़ाई गई उर्वराशक्ति बिलकुल ही अपर्याप्त थी।

१७९५ ई० में बर्कशायर के विचारपतियों का स्पिनहमलैंड के पेलीकन सराय में एक सम्मेलन हुआ जिसका उद्देश्य गरीब खेतिहर मजदूरों की दयनीय दशा पर विचार विमर्श करना था। उन लोगों ने मजदूरों का वेतन अन्न के मूल्य और उनकी पारिवारिक संख्या के अनुसार निश्चित किया। यदि किसी समय दी गई मजदूरी और निश्चित की हुई मजदूरी में कोई अन्तर पड़ता तो इसकी पूर्ति पुअर रेट के द्वारा की जाती। अत हम देखते हैं कि समुचित मजदूरी के स्थान पर उन्हें दान दिया जाने लगा। इस विषय में कोई जाँच पड़ताल नहीं किया गया। स्वार्थी किसानों ने कम मजदूरी को प्रोत्साहित किया। कुछ काउन्टियों में प्रत्येक सप्ताह में ६ शिलिंग का दान एक पारिवारिक आय का अंग समझा जाने लगा। पुअर रेट में इतनी तीव्र वृद्धि हुई कि छोटे छोटे भूमिपतियों का नाश हो गया। मजदूर अभी भी भूख की ज्वाला में तड़प रहे थे। शिकार खेलने पर कड़ा प्रतिबन्ध होने के फलस्वरूप वे लोग आसानी से शिकार भी नहीं खेल सकते थे।

* रेम्जे म्योर—ब्रिटिश हिस्ट्री पृ० ५२४

## अध्याय ३५

# वैदेशिक नीति ( १८१५—३० )

१. कैसलरे की वैदेशिक नीति—इस युग में इंगलैंड में दो प्रमुख विदेश मंत्री रहे—लार्ड कैसलरे और जार्ज कैनिंग। कैसलरे १८१२ ई० में विदेश मंत्री बनाया गया और इस पद पर १८२२ ई० तक रहा। नेपोलियन के खिलाफ चौथे गुट के निर्माण का पूरा श्रेय उसी को था जिसके द्वारा अन्त में नेपोलियन का पतन हुआ और जिसका १८१५ ई० को वियना कांग्रेस में प्रमुख हिस्सा रहा। अपनी गृह नीति में तो वह प्रतिक्रियावादी था पर वैदेशिक नीति में उतना प्रतिक्रियावादी नहीं था। तत्कालीन अन्य यूरोपीय शासकों की तुलना में हम उसे उदारवादी ही कह सकते हैं। ब्रिटिश राजनीतिज्ञों में कैसलरे सर्वश्रेष्ठ माना जाता है और उसमें सर्वाधिक रचनात्मक प्रतिभा थी। आन्तरिक मामलों में वह राज्य के अधिकारों का पक्षपाती था और वैधानिक सरकार चाहता था। फिर भी वह क्रान्तियों का विरोधी था और अन्य प्रमुख शक्तिशाली देशों के साथ मैत्री पूर्ण सम्बन्ध कायम रखने के लिये सदा उत्सुक रहता था। इसी कारण उसने तटस्थता की नीति अपनायी थी। वियेना कांग्रेस में वह और वेलिंगटन इंगलैंड के प्रतिनिधि थे और इन्हीं के कारण फ्रांस के साथ उदारतापूर्ण व्यवहार किया गया। फ्रांस को क्रान्तियुग के पूर्व की सीमा तथा बोर्बन राजघराना वापस मिल गया और १८१८ ई० में उसे एक प्रमुख शक्ति माना गया। इस तरह अपने सभी दोषों के बावजूद भी वियना कांग्रेस पराजित फ्रांस के लिये कठोर न था। इसका सारा श्रेय उपरोक्त ब्रिटिश प्रतिनिधियों को ही था। पोलैंड रूस को मिला था पर कैसलरे ने उसे पोलैंड में वैधानिक सरकार कायम करने को मजबूर किया। कैसलरे की नीति के फलस्वरूप नेपोलियन की पराजय में इंगलैंड का बहुत बड़ा हाथ रहा और वियना कांग्रेस की समझौता में भी उसने प्रमुख भाग लिया था। इस कारण यूरोप में इंगलैंड का स्थान अग्रगण्य हो गया। इसका परिणाम यह हुआ कि अगले ५० वर्षों तक प्रत्येक अंग्रेज परराष्ट्र सचिव का ध्यान यूरोप की विकट परिस्थिति की ओर आकृष्ट हुए बिना नहीं रहता था।

नेपोलियन के पतन के बाद यूरोप की सभी शक्तियाँ वियना के समझौते के आधार पर आन्तरिक शांति-स्थापना के लिये उत्सुक थीं। रूस के अलेक्जेन्डर प्रथम के नेतृत्व में आस्ट्रिया, प्रशा और रूस के बीच एक पवित्र संघ* की स्थापना हुई

* होली एलायन्स

इस प्रकार १८१५ ई० में ग्रेट ब्रिटेन में बड़ा ही विचित्र दृश्य उपस्थित हुआ। वाटरलू की विजय के बाद के सात साल ठीक ही संकट और प्रतिक्रिया के साल कहे गये हैं। देश व गगन-मण्डल में अशान्ति और निराशा के बादल छा गये। अंग्रेजों के आधुनिक इतिहास में ये साल बड़े ही संकटपूर्ण थे।* एक लेखक के मतानुसार—"इंगलैंड के इतिहास में शायद ही कभी सामाजिक असंतोष इतना जोरदार या आर्थिक संकट इतना व्यापक था जितना १८१५ की शान्ति के बाद के कुछ सालों में।"

## २. संकट के कारण

इस संकट के निम्नलिखित बहुत से कारण थे—(१) संक्रमण-काल—यह समय अंग्रेजों के लिये संक्रमण-काल था। अधिकांश लोग ग्रामीण जीवन को छोड़ कर औद्योगिक जीवन व्यतीत करने लगे थे। संक्रमण-काल के साथ स्वाभाविक ही बहुत-सी और विपत्तियाँ भी उपस्थित होती हैं। ग्राम्य आन्दोलन ने छोटे-छोटे किसानों को कष्टपूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिये बाध्य किया। किसान भूमि की उर्वराशक्ति बढ़ाने और घेरा के खर्च चुकाने में असमर्थ थे। अत: उनमें से बहुत ग्राम छोड़कर शहरों में चले गये जहाँ बेकारी की समस्या अपना नग्न नृत्य प्रस्तुत करने लगी और बहुतों ने गाँवों में ही रहकर खेतिहर मजदूरों की जिन्दगी व्यतीत करना शुरू किया। इसके सिवा बढ़ती हुई जनसंख्या की माँग की पूर्ति करने में जमीन की बढ़ाई गई उर्वराशक्ति बिलकुल ही अपर्याप्त थी।

१७९५ ई० में बर्कशायर के विचारपतियों का स्पिनहमलैंड के पेलीकन सराय में एक सम्मेलन हुआ जिसका उद्देश्य गरीब खेतिहर मजदूरों की दयनीय दशा पर विचार विमर्श करना था। उन लोगों ने मजदूरों का वेतन अन्न के मूल्य और उनकी परिवारिक संख्या के अनुसार निश्चित किया। यदि किसी समय दी गई मजदूरी और निश्चित की हुई मजदूरी में कोई अन्तर पड़ता तो इसकी पूर्ति पुअर रेट के द्वारा की जाती। अत: हम देखते हैं कि समुचित मजदूरी के स्थान पर उन्हें दान दिया जाने लगा। इस विषय में कोई जाँच पड़ताल नहीं किया गया। स्वार्थी किसानों ने कम मजदूरी को प्रोत्साहित किया। कुछ काउन्टियों में प्रत्येक सप्ताह में ६ शिलिंग का दान एक पारिवारिक आय का अंग समझा जाने लगा। पुअर रेट में इतनी तीव्र वृद्धि हुई कि छोटे-छोटे भूमिपतियों का नाश हो गया। मजदूर अभी भी भूख की ज्वाला में तड़प रहे थे। शिकार खेलने पर कड़ा प्रतिबन्ध होने के फलस्वरूप वे लोग आसानी से शिकार भी नहीं खेल सकते थे।

* रैम्जे म्योर—ब्रिटिश हिस्ट्री, पृ० ५२४

**ब्राजील**—ब्राजील के लोगों ने भी स्पेन से अपनी स्वतंत्रता घोषित कर ली थी किन्तु स्पेन में स्वेच्छाचारिता की सफलता के कारण ब्राजील के लिये भी संकट पैदा हो गया था परन्तु कैनिंग के रुख के कारण स्पेन के राजा को ब्राजील की स्वतंत्रता स्वीकार करनी पड़ी।

**पूर्वी समस्या**—१८२१ ई० में ग्रीकों ने तुर्कों के विरुद्ध स्वतंत्रता की लड़ाई घोषित कर दी और तुर्कों को अपने देशों से निकाल दिया। लेकिन गृह-युद्ध के कारण ग्रीक अपनी स्वतंत्रता बचा न सके और १८२७ ई० तक तुर्कों ने यूनान पर पुनः अधिकार कर लिया। कैनिंग ने यूनानियों का पक्ष लिया और रूस तथा फ्रांस के साथ मिलकर तुर्कों के खिलाफ एक सेना भेजी। १८२७ ई० में नेवारिनों की लड़ाई हुई जिसमें तुर्की मिश्री बेड़े नष्ट कर दिये गये।

**३. वेलिंगटन की वैदेशिक नीति**—इसी बीच कैनिंग १८२७ ई० में प्रधान मंत्री हुआ और उसी साल उसकी मृत्यु भी हो गई। उसके बाद लार्ड पामर्स्टन विदेश मंत्री हुआ और लार्ड वेलिंगटन प्रधान मंत्री, जो दो वर्षों तक इस पद पर रहा। गृह-नीति में वेलिंगटन को अपनी इच्छा के विरुद्ध कैनिंग की कैथोलिक स्वतंत्रता की नीति का समर्थन करना पड़ा। अपनी वैदेशिक नीति में वह कैनिंग के सिद्धान्तों का विरोधी हो गया और इस तरह सारे यूरोप में निरंकुशता का सबसे बड़ा समर्थक समझा जाने लगा। उसने नेवारिनों की लड़ाई को दुर्घटना मात्र घोषित किया और ग्रीक राज्य की सरहद को सीमित करना चाहा। राजा ने भी टर्की को अपना पुराना मित्र कहा। अतः रूस को अकेले ही टर्की का सामना करना पड़ा। कैनिंग बाल्कन में अकेले हस्तक्षेप करने के लिये रूस को सुअवसर देना नहीं चाहता था किन्तु वेलिंगटन ने उसके इस सिद्धान्त के प्रतिकूल कार्य किया। १८२६ ई० में सुलतान ने यूनानियों की स्वतंत्रता स्वीकार कर ली।

जब पुर्तगाल में मिगुइल ने विधान को तोड़ दिया और स्वयं राजा बन गया तो उस समय वेलिंगटन ने चुप्पी साध ली। वह दसवाँ चार्ल्स का मित्र था जो बड़ा ही कट्टर और निरंकुश था। यह चार्ल्स १८२४ ई० में फ्रांस का राजा बन बैठा था। लेकिन १८३० ई० की क्रान्ति के फलस्वरूप उसे हटाकर उसके भाई लुई फिलिप ने उदार शासन स्थापित किया। उसी साल बेल्जियम ने भी हालैंड से अपनी स्वतंत्रता घोषित कर ली। लार्ड पामर्स्टन के रुख के कारण फ्रांस तथा बेलजियम की क्रांतियों का इङ्गलैंड ने समर्थन किया था।

थी। युद्ध वाणिज्य की वृद्धि में बहुत सहायक होता है क्योंकि चीजों की माँग में वृद्धि होने से उनके मूल्य में स्वाभाविक ही वृद्धि हो जाती है। अत शांति वाणिज्य पर आघात पहुँचाती है। १८१५ ई० की शांति ने औद्योगिक उन्नति के युग का अंत कर डाला। युद्ध काल में सौदागरों तथा कारीगरों ने भविष्य में बिक्री के लिये काफी माल का संग्रह कर रक्खा था। लेकिन अब वे निराश हो गये। (क) युद्ध ने महादेश को अत्यधिक गरीब बना दिया था और अब चीजों के खरीदने की शक्ति किसी में न थी। (ख) विदेशी राष्ट्र भी अपने उत्पादन एवं उद्योग धंधों को विकसित करने के लिये स्वतंत्र थे। इस तरह ब्रिटेन के व्यापारिक एकाधिकार का अन्त हो चला। १८१३-१४ में महादेशीय नियम के पतन के बाद इन राष्ट्रों ने इगलैंड में अन्न निर्यात करना प्रारम्भ कर दिया, जिसके फलस्वरूप अन्न का मूल्य लगभग आधा हो गया। (ग) युद्ध की समाप्ति के कारण युद्ध का सामग्रियों की आवश्यकता न रह गई। अत. घर बाहर सर्वत्र ही अंगरेजी मालों की माँग अत्यधिक कम हो गई। इस कारण बहुत से व्यवसाय और कारखाने बन्द कर देने पड़े और उत्पादन मृतप्राय सा हो गया। कितने ही व्यवसायी दरिद्र और दिवालिया हो चले।

शांति के फलस्वरूप एक बहुत बड़ी संख्या में युद्ध में काम करने वाले व्यक्तियों और सैनिकों का कार्य समाप्त हो गया। लगभग ५ हजार व्यक्ति अचानक बेकार हो गये और समाज को उनकी कोई आवश्यकता न रही।

(६) प्रचलित राजनीतिक प्रणाली—पार्लमेन्टरी सुधार भार नितान्त आवश्यक था। मध्ययुग के बाद से मताधिकार और प्रतिनिधित्व में अब तक किसी प्रकार का सुधार नहीं हुआ था। पार्लमेन्टरी प्रणाली उस काल की सामाजिक आवश्यकताओं के उपयुक्त नहीं थी। पार्लियामेंट में सिर्फ जमींदार ही भरे पड़े थे। अत पुरानी दूषित पार्लियामेंट ही उस समय की बहुत सी बुराइयों की जननी थी।

टोरी सरकार की प्रतिक्रियावादी और दमनकारी नीति भी इस स्थिति के लिये कम जिम्मेवार न थी। बहुत से व्यक्ति यह सोचते थे कि राजनीतिक सुधारों के बाद उनकी अपनी सुविधाएँ समाप्त हो जायँगी। ऐसे सुधार विरोधी लोग भी इस संकट पूर्ण स्थिति के लिये उत्तरदायी थे।

## ३. संकट की अभिव्यक्ति

एक लोकोक्ति है कि क्रांति का आरंभ भूख से होता है। इस भयानक संकट काल में देश में जहाँ तहाँ कितने ही दंगे और विद्रोह हो गये। लेकिन ये बड़े पैमाने पर संगठित भीषण विद्रोह नहीं थे और आसानी से कुचल दिये गये।

(१) इनमें प्रमुख था लडाइटों का दंगा जिसका नामकरण नेडलड नामक एक

व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व नहीं करता था बल्कि कई सदस्य एक ही आदमी का प्रतिनिधित्व करते थे।

( ख ) **रोटेन-बौरो**—ऐसे बौरो में घूस का खुले आम प्रचार था। वोट देने वालों की संख्या बहुत कम थी और इसलिए सभी वोटों को प्राप्त करने में कम ही धन खर्च होता था। सभी पार्टियों द्वारा विस्तृत पैमाने पर वोटों को खरीदने की प्रथा प्रचलित थी।

( ग ) **फ्री बौरो**—ऐसे बौरो में तो वोट देने वाले बहुत थे लेकिन निर्वाचन-क्षेत्र बहुत ही छोटे थे। मतदाताओं के स्वतंत्रमत के आधार पर केवल २०० मेम्बर थे जो कॉमन सभा में एक-तिहाई से भी कम होते थे।

दोषपूर्ण प्रतिनिधित्व प्रणाली के अलावा मताधिकार प्रणाली भी बड़ी ही दूषित थी। प्रत्येक बौरो से दो सदस्य भेजे जाते थे और मताधिकार स्थानीय प्रणाली पर आधारित था। बहुत कम व्यक्तियों को ही मताधिकार प्राप्त था। मताधिकार प्रणाली में बड़ा ही वैषम्य था। कुछ ऐसे बौरों में जो स्कौट और लौट कहलाते थे सभी रेट देने वालों को मताधिकार प्राप्त था। कुछ दूसरे प्रकार के बौरों में सिर्फ पैत्रिक फ्री मेन को ही मताधिकार प्राप्त था। कुछ ऐसे भी बौरो थे जिनमें सिर्फ कारपोरेशन के सदस्यों को या कुछ खास-खास मकान मालिकों को ही वोट देने का अधिकार प्राप्त था। काउन्टियों में मताधिकार प्रणाली उतनी दूषित नहीं थी जितनी कि बौरो में लेकिन वहाँ भी जमीन्दारों का पूर्ण प्रभाव रहता था। काउन्टियों में मताधिकार प्रणाली एक ही प्रकार की थी। प्रत्येक काउन्टी से दो सदस्य भेजे जाते थे। ये लोग ऐसे फ्री-होल्डरों द्वारा चुने जाते थे जिन्हें कम से कम ४० शि० सालाना लगान वाले ( फ्री-होल्ड ) जमीन पर पूर्ण अधिकार रहता था। फिर भी कुछ प्रसिद्ध श्रेणियों के लोगों को मताधिकार नहीं प्राप्त था।

स्कॉटलैंड और आयरलैंड में तो प्रतिनिधित्व प्रणाली इंगलैंड से भी अधिक दोषपूर्ण थी। यद्यपि इसका प्रचलन १७०७ ई० और १८०० ई० के संयोग कानूनों के बाद हुआ था, फिर भी इन देशों ने पुरानी पार्लियामेंटरी प्रणाली की सभी बुराइयों को अपना लिया था। यहाँ कुछ थोड़े से जमींदारों द्वारा ही निर्वाचन नियन्त्रित रहता था। सभी आइरिश सदस्य सिर्फ ५० जमींदारों के प्रभाव से निर्वाचित होते थे और स्कॉटलैंड में भी कुल ४ हजार वोटरों के मत सिर्फ १५० स्वामियों की मुट्ठी में रहते थे। ये मत किसी भी निर्वाचन क्षेत्र में व्यवहार किये जा सकते थे।

संक्षेप में ग्रेट ब्रिटेन में प्रचलित पार्लियामेंटरी प्रणाली के दोषों का विवेचन हम कर चुके हैं। इन्हीं दोषों के कारण अब सुधार अत्यावश्यक हो गया था। लार्ड डुरहम,

जिद्दी और अटल टोरियों की इस सरकार को अब भी क्रान्ति का भय लगा हुआ था। इसने परिस्थिति की गम्भीरता का सामना रचनात्मक तथा निषेधात्मक दोनों ही तरीकों से किया जिससे परिस्थिति सुलझने के बजाय उलझती ही गई। (क) रचनात्मक कार्य में कृषि को उत्साहित करने के लिये १८१५ ई० में कॉर्न-लॉ पास किया गया। इसके द्वारा इगलैंड में विदेशी अन्न का आयात तब तक के लिये रोक दिया गया जब तक कि देशी अन्न का भाव ८० शिलिंग प्रति क्वार्टर न हो जाय। अन्न के इस भाव की उम्मीद करना निरी बेहूदगी थी। यह कॉर्न-लॉ जमींदारों के स्वार्थ की रक्षा के हेतु पास किया गया था क्योंकि देशी अन्न का भाव गिर जाने के कारण उन्हें लगान नहीं मिल पाता था। जन साधारण के सकटों को दूर करने के बजाय इस कॉर्न लॉ ने उसमें और भी वृद्धि कर दी, क्योंकि अब रोटियों (खाद्यान्नों) का मूल्य बहुत अधिक हो गया। देश में विदेशी अन्न के आयात की स्वीकृति भी मिली जब उस पर बहुत ही अधिक चुगी लगा दी गयी।

(ख) निषेधात्मक कार्यों में—दगे और विद्रोहों को रोकने के लिये दमनकारी उपायों का प्रयोग किया गया। देशव्यापी अशांति की लहर देख कर सरकारी कर्मचारी बेचैन हो गये—उनके होश हवास गायब होने लगे। अत उन्होंने हिंसात्मक उपचारों का आश्रय लिया। सेंट पीटर्स फील्ड (मैन्चेस्टर) की सभा पर सैनिकों द्वारा गोली चलायी गई जिसमें १२ व्यक्ति मरे और सैकड़ों घायल हुए। इस कार्य के लिये सरकार ने मैजिस्ट्रेटों को धन्यवाद दिया। इतिहास में यह घटना मैन्चेस्टर हत्याकाड के नाम से प्रसिद्ध है। व्यंग्यात्मक रूप में वाटरलू की तुलना में इसे पीटरलू की लड़ाई भी कहते हैं। इस तरह के अन्य विद्रोहियों के दलों को भी सैनिकों ने रौंद डाला, लोग तितर बितर हो भाग गये और विद्रोहियों के नेताओं को कैद कर लिया गया तथा कुछ को फाँसी दे दी गयी। बड़े बड़े शहरों तथा नगरों में पर्याप्त सख्या में सैनिक तैनात कर दिये गये। बड़ी ही तीव्रगति से स्वयं सेवक सेना तैयार की जाने लगी जिसे सैनिक शिक्षा दी जाती थी। दो वर्षों के बाद स्वतन्त्रता नियम* पुन स्थगित कर दिया गया। १८१९ ई० में ही षट् नियम† या प्रतिबन्धक नियम‡ पास किये गये। इनके द्वारा अधिकारियों की अनुमति के बिना लोक सभाएँ रोक दी गई। समाचार-पत्रों तथा पर्चों पर कड़े कर लगा दिये गये और कार्यकारिणी विभाग को हथियार आदि के लिये घरों की तलाशी लेने का अधिकार दिया गया। बिना सरकारी स्वीकृति के किसी भी तरह की सैनिक शिक्षा गैरकानूनी करार दे दी गई। अपराधियों को

* हेबियस कोर्पस ऐक्ट
† सिक्स ऐक्ट्स
‡ गैग ऐक्ट्स

उनकी संख्या अब भी ६१८ रही। जिन नगरों तथा काउन्टियों की आबादी २ हजार से कम थी उन्हें एक भी सदस्य भेजने का अधिकार नहीं मिला। २ हजार से ४ हजार आबादी तक के काउन्टियों या नगरों को एक-एक सदस्य भेजने का अधिकार मिला। इस प्रकार ५६ बौरो ऐसे निकले जो कामन्स सभा में प्रतिनिधि भेजने के अधिकार से वंचित कर दिये गये। इनमें से ५५ बौरो से दो सदस्य प्रति बौरो के हिसाब से भेजे जाते और एक बौरो से सिर्फ एक ही सदस्य। इनके अलावा ३२ ऐसे बौरो थे जो दो सदस्य प्रति बौरो के हिसाब से भेजते थे। इनकी जनसंख्या चार हजार से कम थी। अतः अब इन्हें एक ही सदस्य भेजने का अधिकार मिला। इस प्रकार १४३ सदस्यों की जगह रिक्त हुई जिनका फिर से वितरण किया गया। इनमें १३० * इंगलैंड और वेल्स की काउन्टियों तथा छोटे एवं बड़े नगरों को, ८ स्कॉटलैंड को और ५ आयरलैंड को दिये गये।

( ख ) मताधिकार—बौरो में मताधिकार प्रणाली में जो विषमता थी उसे दूर कर दी गई और एकरूपता का सिद्धान्त अपनाया गया। उन सभी गृह-स्वामियों को जो १० पौंड सालाना लगान देते थे मताधिकार दे दिया गया। काउन्टियों में २ पौंड वार्षिक लगान देने वाले स्वतंत्र स्वामियों के अलावा दस पौंड वार्षिक लगान देने वाले कापी होल्डर और लम्बे पट्टेदार को मताधिकार मिला। कापी होल्डर के अधिकार भी फ्री होल्डर के समान ही होते थे, लेकिन वे अपने भूमि के स्वतंत्र मालिक नहीं होते थे फिर भी उनके राजी के बिना कोई उनकी भूमि को नहीं ले सकता था। ५० पौंड प्रति वर्ष लगान देने वाले साधारण काश्तकारों को भी मताधिकार दे दिया गया।

---

* काउन्टियों को ६५, २२ बड़े नगरों को ४४, २१ छोटे नगरों को २१, कुल १३०

नोट—१८३२ ई० के पहले और इसके बाद कॉमन्स सभा में सीटों का वितरण इस प्रकार था—

| | १८३२ ई० के पूर्व | १८३२ ई० के बाद |
|---|---|---|
| ( १ ) इंगलैंड और वेल्स— | | |
| (क) काउन्टी | ६४ | १५६ |
| (ख) बौरो | ४१६ | ३४१ |
| ( २ ) स्कॉटलैंड— | ४५ | ५३ |
| ( ३ ) आयरलैंड— | १०० | १०५ |

लेखकों और विचारकों ने प्रचलित प्रणाली के दोषों को जनता के सामने रखा और सुधारों का समर्थन कर उनकी जोरदार माँगें कीं। इस तरह के साहित्यिक सुधारकों में जेरिमी बेन्थम का नाम प्रमुख है। वह एक बहुत बड़ा लेखक और वकील था। उसने सभी चीजों पर व्यावहारिक रूप से विचार किया। वह अधिकाधिक व्यक्तियों के लिये अधिकाधिक सुख चाहता था। १८१७ ई० में उसने एक पुस्तक लिखी* जिसमें प्रतिनिधित्व की प्रचलित प्रणाली को दूषित बतलाया एवं सच्चे जनतंत्र का समर्थन किया। उसका बहुत बड़ा असर पड़ा। कहा जाता है कि १९वीं सदी का शायद ही कोई ऐसा सुधार होगा जिस पर उसका प्रभाव न पड़ा हो।

लेकिन यदि बेन्थम ने बुद्धिजीवी वर्ग को सुधारों के लिये प्रभावित किया तो विलियम कावेट ने सामान्य जनता को इसके लिये उत्साहित किया। वह स्वयं एक किसान था। लेकिन साथ ही एक प्रभावशाली लेखक भी था। उसने अपनी एक पुस्तक† में इङ्गलैंड की शोचनीय परिस्थिति का बड़ा ही व्यापक चित्र उपस्थित किया। उसका पत्र 'पोलिटिकल रजिस्टर' बड़ा ही लोकप्रिय हो गया और उग्र विचारों का एक प्रमुख पत्र बन गया। १८१५ ई० के बाद उसने इसे काफी सस्ता कर दिया जिससे इसकी जनप्रियता और व्यापकता बहुत ही बढ़ गई। जमींदारों, पादरियों, उत्पादकों, रौटेन बोरो के स्वामियों और नगरों से उसे किसी न किसी कारण बड़ी घृणा थी।

इनके सिवा शेली नामक एक कवि था (१७९२-१८२२ ई०) जिसने अपनी अनेक राजनीतिक कविताओं द्वारा जनता में जागृति का संदेश दिया और उन्हें सक्रिय बनने के लिये अनुप्राणित किया। १८२० ई० में उसने एक पुस्तक लिखी‡ जिसमें उसने ब्रिटेन के शासकों को दोषी ठहराया और जनता को निद्रा का त्याग कर शेर की तरह चैतन्य होने के लिये उत्साहित किया।

**(३) पुराने टोरियों का अन्त और नये टोरियों का पदार्पण**—१८२२ ई० में प्रतिक्रिया का अन्त हो गया। सुधार के युग का पदार्पण हुआ। प्रतिक्रियावादी टोरियों में सिडमौथ ने पद त्याग कर दिया। कैसलरे ने जो सरकार का वास्तविक प्रधान था आत्महत्या कर ली। ब्रिटेन की जनता को इससे अत्यधिक आनन्द अनुभव हुआ। लिवरपूल किसी तरह प्रधान मंत्री बना रहा लेकिन तीन नये और योग्य टोरी उसके मंत्रिमण्डल के सदस्य हुए। वे थे कामन्स सभा के नेता और विदेश मंत्री जार्ज

* कैटेशिज्म ऑफ पार्लमेन्टरी रिफॉर्म

† रूरल राईड्स

‡ मास्क ऑफ अनार्की

कर लिए जाते थे और बेचारे भूखे और गरीब माता-पिता अपने बच्चों को काम करने के लिए भेज देते थे। अतः उत्पादक क्षेत्रों में रोगियों की संख्या में वृद्धि हो रही थी। इस तरह की गम्भीर और भयंकर परिस्थिति समय-समय पर सरकार का ध्यान आकर्षित करती थी लेकिन प्रारंभ में जितने भी फैक्टरी कानून बने थे ( जैसे १८०२ ई० और १८१६ ई० के कानून ) वे सभी स्थानीय मैजिस्ट्रेटों की निष्क्रियता और अनुत्तरदायित्वपूर्ण कार्य के कारण असफल और प्रभाव शून्य रहे।

१८३३ ई० का फैक्ट्री ऐक्ट पहला कानून था जो सफल रहा। इसमें सिर्फ कपड़े के कारखाने में काम करने वाले मजदूरों की दशा सुधारने की कोशिश की गयी और बहुत साधारण सुधार किए गये। इसके द्वारा ६ वर्ष से कम उम्रवाले बच्चों से काम लेना गैरकानूनी घोषित कर दिया गया और १८ वर्ष से कम उम्र वाले लड़कों से काम लेने का समय निर्धारित कर दिया गया। ६ से १३ वर्ष तक के मजदूरों के लिए ६ घंटे और १३ से १८ वर्ष के मजदूरों के लिए १२ घंटे या प्रति सप्ताह ६८ घंटे काम करने का समय निश्चित हुआ। १३ वर्ष तक के लड़कों के लिये काम करने के बाद २ घंटा स्कूल भी जाना आवश्यक कर दिया गया। चार इन्सपेक्टरों के एक स्टाफ की नियुक्ति हुई जिनका काम यह देखना था कि इन कानूनों का उचित रूप से पालन हो रहा है या नहीं।

इस कानून की सबसे बड़ी महत्ता इस बात में है कि मालिकों और मजदूरों के मामलों में सरकारी हस्तक्षेप का यह प्रारंभ था। इन्सपेक्टर लोग वार्षिक रिपोर्ट दिया करते थे। इसके बाद ही खानों, कारखानों और फैक्टरियों सम्बन्धी कानून पास किए गये और उनका प्रयोग आरंभ हुआ। औद्योगिक क्रांति की घृणित विशेषताओं का अब अन्त हो गया फिर भी तत्कालीन नेताओं ने इसका विरोध किया और इसे व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर कुठाराघात बतलाया। उनका कहना था कि अब देश का उत्पादन संकटपूर्ण हो जायगा।

जो भी हो यदि इन विवादों से तटस्थ होकर देखा जाय तो इस कानून का बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ा अब एक परम्परा कायम हो गयी जिसका भविष्य में विकास हुआ। कारखानों में चिमनियों को साफ करने के लिए छोटे-छोटे बच्चे नियुक्त किए जाते थे। ये बच्चे चिमनियों के ऊपर चढ़कर उनकी सफाई किया करते थे। १८४० ई० में एक कानून पास किया गया जिसके द्वारा चिमनियों को साफ करने के लिए बच्चों की बहाली रोक दी गई।

अब तक खानों की स्थिति बड़ी ही दयनीय थी। जमीन के भीतर काम करने वाले मजदूरों की दशा पूर्व के कारखानों से भी बदतर थी। उसी साल ऐशले के अनुरोध से मेलबोर्न की सरकार ने खानों की स्थिति की जाँच के लिए एक कमीशन की नियुक्ति

वेलिंगटन मंत्रिमंडल में पील ने बूढ़े और अयोग्य चौकीदारों को हटा दिया जो अपराधों को रोकने में असमर्थ रहते थे। उसने लंदन में मेट्रोपोलिटन पुलिस का संगठन किया और बाद में दूसरे-दूसरे शहरों में भी इसका अनुसरण किया गया। उसी की स्मृति में नव संगठित पुलिस बोबीज़ या पीलर्स कहलाने लगी।

इस तरह उसने अपनी बुद्धिमत्तापूर्ण शासन से आम जनता का और खासकर गरीबों का सरकार में विश्वास स्थापित कर दिया।

हसकिसन एक प्रगतिशील अर्थशास्त्री था। कैनिंग और हसकिसन दोनों ही छोटे पिट के शिष्य थे। पिट ने जिस आर्थिक नीति का अवलम्बन किया था, हसकिसन ने भी उनका अनुसरण किया। १९वीं सदी में वह प्रथम व्यक्ति था जो स्वतंत्र व्यापार का पक्षपाती था। पिट के द्वारा प्रारंभ किए गये आर्थिक सुधारों को उसने जारी रखा जिसका अनुसरण बाद में भी पील और ग्लैडस्टोन ने किया। अब इंगलैंड संरक्षण-नीति से काफी अलग हो गया। इतना होने पर भी वह स्वतंत्र व्यापार में अन्धविश्वास नहीं रखता था। उसने आयात की बहुत सी चीजों की अत्यधिक चुंगियों को कम कर दिया या हटा दिया। फिर भी वृटिश उत्पादकों के संरक्षण के लिए १५ से ३० प्रतिशत चुंगी जारी ही रखा। अब तक मशीनों का निर्यात करना गैरकानूनी था। लेकिन हसकिसन ने उनके निर्यात की भी आज्ञा दे दी जो आगे चलकर बड़ा ही लाभदायक सिद्ध हुआ।

**औपनिवेशिक नीति में परिवर्तन**—अब कैनिंग और हसकिसन का ध्यान उपनिवेशों की ओर आकृष्ट हुआ। अब तक उपनिवेशों की स्थिति पूर्णतया ब्रिटेन के लाभ के लिए था और इनका अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था। इनकी रक्षा का भार ब्रिटेन पर रहता था और बदले में उनके व्यापार पर ब्रिटेन का पूर्ण एकाधिकार था। यह प्राचीन औपनिवेशिक नीति अब बदल दी गई। उनके शासन के लिए जो आर्थिक नियम थे उनमें परिवर्तन हो गया। कॉमनवेल्थ और चार्ल्स द्वितीय के समय जो नेविगेशन ऐक्ट पास किया गया था उसमें भारी परिवर्तन कर दिया गया। अब तक संयुक्त राज्य अमेरिका तथा अन्य देशों ने अंग्रेजी जहाजों से स्वतन्त्रतापूर्वक व्यापार करना अस्वीकृत कर दिया था। इससे अंग्रेजी व्यापार को बहुत धक्का पहुँचने लगा था। अब इतिहास में पहली बार विदेशों को अंग्रेजी उपनिवेशों के साथ सीधे व्यापार करने की अनुमति मिली। बदले में अंग्रेजी व्यापारियों को भी विदेशों ने अपने यहाँ कई सुविधाएँ दे दीं। इसे पारस्परिक सहयोग की नीति कहते हैं। बाद में १८४९ ई० में नेविगेशन ऐक्ट पूर्णतया हटा दिया गया लेकिन ब्रिटेन और उसके उपनिवेशों का आपसी व्यापार ब्रिटिश जहाजों के द्वारा ही होता रहा, विदेशी जहाजों द्वारा नहीं।

प्रणाली का जन्म हुआ। केन्द्रीय क्षेत्र में सुधार बिल का जितना महत्त्व था स्थानीय क्षेत्र में इस सुधार का भी वही महत्त्व था। इस कानून में अंगरेजों को बड़ा फायदा हुआ क्योंकि वे अब शहर के निवासी हो रहे थे। "इन नगर सभाओं के कार्यों से सर्वसाधारण को जितना लाभ हुआ, उतना १९वीं सदी में ब्रिटेन में पुनर्संगठन के लिये किये गये किसी भी सुधार से नहीं हुआ था।"*

७. अखबारों के कर में घटती १८३६ ई०—अब तक समाचारपत्रों पर पूरा कर लगता था जिसके कारण उनका विशेष प्रचार नहीं होता था। अब इस कर में बहुत कमी कर दी गई। इसे १ पेंस निश्चित कर दिया गया। अब अखबार सस्ते हो गये और उनका प्रचार बड़ी ही तीव्र गति से होने लगा।

८. कामन्स सभा के मत विभाजन का प्रकाशन १८३६ ई०—अब तक कामन्स सभा का मत विभाजन गुप्त ही रखा जाता था। इस प्रथा से निर्वाचकों को अपने प्रतिनिधियों के मत की जानकारी नहीं हो पाती थी। किन्तु अब १८३६ ई० से ही इस प्रथा का भी अन्त कर डाला गया। अब मत विभाजन का प्रकाशन होने लगा।

९. आयरिश टाइथ परिवर्तन नियम १८३६ ई०—चर्च के खर्च को पूरा करने के लिये आयरलैंड के किसानों से उनके उपज का दशांश कर के रूप में लिया जाता था जो टाइथ कहलाता था। लेकिन इसका परिमाण निश्चित नहीं था और प्रतिवर्ष कर में परिवर्तन होता रहता था। इससे किसानों को बहुत असुविधा होती थी। अतः इसमें सुधार लाने के लिये १८३६ ई० में टाइथ परिवर्तन नियम† पास हुआ। अब टाइथ को निश्चित लगान के रूप में बदल दिया गया। पिछले वर्षों में अनाज का जो भाव था उसी के आधार पर लगान की रकम निश्चित की गई।

१०. कानूनी सुधार ( १८३६ ई० )—प्रिवी कौंसिल के न्याय-समिति की स्थापना हुई जो आज सारे साम्राज्य भर में अपील सुनने वाली सबसे बड़ी अदालत है। भूमि कानूनों में भी सुधार किये गये। न्याय को सामान्य जनता के लिये सुलभ बनाने के हेतु पार्लियामेंट ने स्थानीय न्यायालयों की स्थापना करनी चाही, किन्तु लार्ड सभा के विरोध से ऐसा नहीं हो सका।

११. पेनी पोस्टेज ( १८४० ई० )—ब्रिटेन में अब तक डाक व्यवस्था भी बड़ी ही दूषित थी। अत्यधिक व्यय के बावजूद भी काफी समय की बरबादी होती थी। महसूल मील के हिसाब से लिया जाता था। किन्तु रोलैंड हिल के प्रयास से १८४० ई० में पेनी पोस्टेज जारी हुआ। एक पेनी में आधे औंस की चिट्ठी ब्रिटेन के किसी भी

*रेम्जे म्योर—ब्रिटिश हिस्ट्री, पृष्ठ ५४६

† टाइथ कम्यूटेशन ऐक्ट

लिक वकील ने जो कैथोलिकों का नेता था, कैथोलिक एसोसिएशन नामक एक संस्था की स्थापना की। ब्रिटिश सरकार से न्याय की याचना करना उसका उद्देश्य था। वह १८२४ ई० में क्लेयर काउन्टी के निर्वाचन में एक प्रोटेस्टैन्ट जमींदार के विरुद्ध विजयी हुआ। इस तरह क्रान्ति के भय से इंगलैंड और आयरलैंड के रोमन कैथोलिक के लिये कैथोलिक मुक्ति नियम* पास किया गया। अब रोमन कैथोलिक भी प्रोटेस्टेन्टों की बराबरी में आ गये। लेकिन अब भी वे लार्ड चान्सलर, लार्ड लेफ्टिनेन्ट तथा राज्याधिकारी नहीं हो सकते थे। फिर भी बचाव के ख्याल से वेलिंगटन और पील ने आयरिश मताधिकार के लिये एक ऐसी प्रणाली का प्रस्ताव किया जिसमें गरीब और छोटे किसान मताधिकार में वंचित हो जाते। इसके बाद भी ओकानोल को पार्लियामेन्ट में क्लेयर काउन्टी का प्रतिनिधि नहीं स्वीकार किया गया। अत एक नया निर्वाचन हुआ और ओकानोल पुन निर्विरोध निर्वाचित हुआ। पार्लियामेन्ट में उसे जगह मिल गयी। इससे उत्साहित होकर उसने संयोग को रद्द कराने के हेतु नया आन्दोलन आरंभ कर दिया।

वेलिंगटन का पतन—नवम्बर १८३० ई० तक वाटरलू का विजेता वेलिंगटन इंगलैण्ड में जनता की दृष्टि में बहुत ही हेय और घृणास्पद बन गया। उसकी इस अप्रसिद्धि के कई कारण थे। कैथोलिक स्वतन्त्रता से उग्र या पुराने टोरियों के दिल पर बहुत आघात पहुँचा और वे वेलिंगटन से दूर हट गये। उनके अलग हो जाने पर ह्विगों के समर्थन से भी वह कमी पूरा नहीं हो सकी। कैनिंग के समर्थकों को उसने मंत्रिमंडल से निकाल दिया था। अत वे पहले से ही असन्तुष्ट थे। पालमेन्टरी सुधारों की माँग जोरों से हो रही थी। लेकिन वेलिंगटन किसी भी तरह के सुधार का विरोधी था क्योंकि वह समझता था कि निर्वाचन की प्रचलित प्रणाली पूर्ण और सन्तोषजनक है। इस कारण सुधारवादी भी वेलिंगटन से नाराज थे। फिर प्रारंभ में एक सैनिक रह चुका था और बाद में राजनीतिज्ञ हुआ था। अत वह निरंकुशता में विश्वास करने वाला सैनिक प्रकृति का कठोर व्यक्ति था। इन सभी कारणों से वह जनता की दृष्टि में गिर गया और १८३० ई० के नवम्बर में उसे पद त्याग करना पड़ा।

* कैथोलिक इमैनसीपेशन ऐक्ट

इतना होने पर भी वह स्पेन और पुर्त्तगाल के संयोग के खिलाफ था क्योंकि इससे अंगरेजी स्वार्थ तथा शक्ति सन्तुलन की नीति के खतरे में पड़ जाने की आशंका थी। १८३४ ई० में ही वह शासकों की निरंकुशता को रोकने के लिये फ्रांस, स्पेन और पुर्त्तगाल के साथ एक सन्धि करने में सफल हुआ था।

३. पूर्वी समस्या—इस समय पूर्वी समस्या भी उठ खड़ी हुई। मुहम्मद अली जो अल्बानिया का निवासी था, १८११ ई० में मिश्र का अधिकारी बन बैठा। १८३१ ई० में इसने फिलिस्तीन और सीरिया पर हमला कर दिया। टर्की के सुल्तान ने रूस की सहायता प्राप्त की। मुहम्मद अली ने सीरिया को ले लिया किन्तु अब वह आगे नहीं बढ़ सकता था। सहायता के बदले सुल्तान ने रूस के साथ १८३३ ई० में उँकियार स्केलिशी की सन्धि की। इससे कुस्तुन्तुनिया पर रूस का प्रभाव बहुत बढ़ गया। १८३६ ई० में सुल्तान ने सीरिया को पुनः ले लेना चाहा किन्तु सफल न हुआ। इस पर मुहम्मद अली ने कुस्तुन्तुनियाँ पर हमला करना चाहा। फ्रांस ने मिश्र में अपना प्रभाव कायम करने के लिये मुहम्मद अली के साथ सहानुभूति दिखलाई। पामर्स्टन न तो तुर्की साम्राज्य को ही छिन्न-भिन्न होने देना चाहता था और न मिश्र में फ्रांस का प्रभाव ही देखना चाहता था। अतः मुहम्मद अली की प्रगति को रोकने के लिये उसने रूस, आस्ट्रिया और प्रशा को मिलाकर एक संघ का निर्माण किया। १८४० ई० में मित्र राष्ट्रों ने एकर पर अधिकार कर लिया। अब मुहम्मद अली को सीरिया से हटने और संघ की बातें स्वीकार करने के लिये बाध्य होना पड़ा। उसे केवल मिश्र का पाशा स्वीकार किया गया और इस तरह १८४१ ई० से मिश्र पर उसका पूर्ण आधिपत्य कायम रहा। यह जो व्यवस्था कायम हुई, उसमें फ्रांस को पूछा तक नहीं गया। अतः अपमानित हो वह लड़ाई की धमकी देने लगा किन्तु लड़ाई हुई नहीं। १८४१ ई० संघ के सदस्यों तथा सुल्तान ने मिलकर यह घोषणा कर दी कि डार्डेनेलस तथा बास्फोरस से होकर किसी भी राष्ट्र का जंगी जहाज नहीं जा सकता। इस तरह रूस के लिये १८३३ ई० की सन्धि निरर्थक ही सिद्ध हुई।

४. चीनी युद्ध तथा अफगानिस्तान की समस्या—पामर्स्टन को चीन से भी उलझ जाना पड़ा। चीन वाले किसी दूसरे देश को अपने यहाँ व्यापार नहीं करने देना चाहते थे। पर बहुत से अंगरेज व्यापारी भारत से अफीम ले जाकर वहाँ छुक-छिप कर बेचते थे। चीनी सरकार ने एक बार इन चोर व्यापारियों को माल के साथ गिरफ्तार कर लिया। इसपर पामर्स्टन ने चीन पर चढ़ाई करने के लिये एक फौज भेज दी क्योंकि वह इसे अपना अपमान समझता था।

इसी समय अफगानिस्तान में भी एक समस्या उठ खड़ी हुई। रूस और अफ-गानिस्तान के बीच एक षड्यन्त्र चल रहा था। भारतीय गवर्नर जेनरल ऑकलैंड ने

जिसका उद्देश्य यूरोपीय राष्ट्रों के बीच शान्ति और सद्भावना कायम रखना था। ईसाई धर्म के सिद्धान्तों को मानने और उस पर चलने के लिये वे राजी हुए। लेकिन असल में यह संघ यूरोप की जनतांत्रिक भावनाओं के विरुद्ध निरंकुश राजाओं का एक गठबन्धन था। वाटरलू के पश्चात् यूरोप का नेता आदर्शवादी रूस का जार नहीं था बल्कि आस्ट्रिया का चांसलर प्रिंस मेटरनिक था। वह पूर्ण प्रतिक्रियावादी था और आस्ट्रिया में उन्मुक्त जनवादी भावनाओं के सभी चिन्हों तक को उसने कुचल डाला था। प्रशा, इटली और जर्मनी में भी उसके इस आदर्श उदाहरण का अनुकरण किया गया। अतः पवित्र संघ का वास्तविक उद्देश्य यूरोप में सर्वत्र जन-जागरण का दमन करना ही था। कैसलरे शक्ति संतुलन और वैधानिकता का पक्षपाती था। उसने पवित्र संघ की योजना को बिल्कुल ही अव्यावहारिक समझा। उसने इसे 'सुन्दर रहस्यवादिता और अनर्थक प्रलाप का एक नमूना' कहा और इसमें सम्मिलित होने से साफ इनकार कर दिया। लेकिन उसने इसकी नीति का खुलेआम विरोध नहीं किया।

कैसलरे कांग्रेस प्रणाली के सिद्धान्त में विश्वास करता था। अर्थात् वह चाहता था कि यूरोप में शान्ति स्थापित रखने के लिये यूरोपीय राष्ट्रों की समय समय पर बैठक हुआ करे। वह कांग्रेस प्रणाली को ही उत्तम उपयोगी योजना समझता था। ग्रेट ब्रिटेन चतुर्मुख संघ* का एक मेम्बर था जो १८१५ ई० में आस्ट्रिया, प्रशा, रूस और ग्रेट ब्रिटेन को मिलाकर बना था। इसका उद्देश्य पेरिस की सन्धि की शर्तों को स्थायित्व प्रदान करना था। वाटरलू के पश्चात् एक दशाब्दी के अन्दर कई कांग्रेस बैठी। १८१८ ई० में एक्सलाशापल में कांग्रेस की एक बैठक हुई जिसमें फ्रांस को एक महान् राज्य मान लिया गया और उसे चतुर्मुख संघ में शामिल होने की अनुमति मिली।

लेकिन क्रमशः कांग्रेस में प्रतिक्रियावादियों का प्रभुत्व स्थापित हो गया। मेटरनिक क्रान्तिकारियों का जबरदस्त दुश्मन था और वह किसी भी क्रांति को कुचलने के लिए सदा प्रस्तुत रहता था और आवश्यकता पड़ने पर सम्मिलित शक्तियों का भी उपयोग कर सकता था। इस कारण कैसलरे को कांग्रेस में सन्देह होने लगा। वह वैधानिक शासन का पक्षपाती तो था किन्तु दूसरे राज्यों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करना नहीं चाहता था। अतः उसने यह घोषणा कर दी कि ग्रेट ब्रिटेन अन्य देशों में क्रान्तिकारी आन्दोलनों का दमन करने के लिये सैनिक सहायता नहीं देगा।

इस बीच स्पेन, पुर्तगाल, नेपुल्स और पीडमौण्ट में क्रांतियाँ हो गयी थीं।

* क्वाड्रपल एलायन्स

समय शासन में मंत्रिमंडलों की ही प्रधानता थी और शासक का प्रभुत्व क्रमशः कम होता गया। इस समय कैबिनेट प्रणाली का पूर्ण रूप से विकास हो गया। मंत्रिमंडल की स्थिति कॉमन्स सभा के बहुमत के ऊपर निर्भर करती रही और कैबिनेट में प्रधान-मंत्री का बोलबाला रहा।

अगले अध्यायों में इन मंत्रिमंडलों की नीतियों और कार्यों की विस्तृत विवेचना करेंगे।

का विरोध किया। किन्तु इसके विरोध का कुछ फल न हुआ। फ्रांस अकेला ही काम करता रहा और अन्त में स्पेन के राजा सातवें फर्डिनेन्ड को उसके पुराने निरंकुश स्थान पर ला दिया और अपनी महत्ता स्थापित की। इससे ग्रेट ब्रिटेन को बड़ा दुख हुआ क्योंकि स्पेन वाले अंगरेजों के साथ प्रायद्वीपीय युद्ध में नेपोलियन के विरुद्ध बड़ी बहादुरी के साथ लड़े थे और ग्रेट ब्रिटेन ने वहाँ बोर्बन राजा को पुनर्स्थापित करने में मदद दी थी लेकिन स्पेन में स्वेच्छाचारिता की विजय हुई और कैनिंग की नीति असफल रह गई।

कैनिंग चुप बैठने वाला व्यक्ति नहीं था। अब अमेरिका स्थित स्पेनिश उपनिवेशों की ओर उसका ध्यान आकृष्ट हुआ। १८२३-२४ ई० में दक्षिणी अमेरिका में स्पेनिश उपनिवेशों ने स्पेनिश राजा के खिलाफ विद्रोह कर दिया और अपनी स्वतन्त्रता घोषित कर दी। ब्रिटिश सरकार ने उनकी आजादी कबूल कर ली। यदि कैनिंग स्पेन को नहीं बचा सका तो भी उसने इन अमेरिकन उपनिवेशों को अवश्य ही बचा लिया।

अब फ्रांस अमेरिका में हस्तक्षेप करने के लिये बावला हो उठा। स्पेन के राजा ने यूरोपियन कांग्रेस की बैठक बुलाने की माँग की लेकिन कैनिंग ने उसमें अपना एक भी प्रतिनिधि भेजने से अस्वीकार कर दिया। उसने फ्रांस और स्पेन की सरकारों को सावधान कर दिया कि यदि वे अमेरिका में हस्तक्षेप करेंगे तो ब्रिटेन उन उपनिवेशों का पक्ष लेकर युद्ध तक कर सकता है। इसके बाद ही ब्रिटिश नीति से प्रोत्साहित हो राष्ट्रपति मुनरो ने अपना सिद्धान्त घोषित किया कि 'अमेरिका अमेरिकनों के लिये है।' उसने उत्तरी या दक्षिणी अमेरिका में किसी भी यूरोपीय राष्ट्र को हस्तक्षेप करने से मना कर दिया। इस तरह कैनिंग और मुनरो ने मिलकर कांग्रेस प्रणाली को अंतिम धक्का दिया जिससे उसका अन्त ही हो गया। एक बार कामन्स सभा में भाषण देते हुए कैनिंग ने कहा था, "मैंने यह निश्चय कर लिया है कि स्पेन यदि फ्रांस के साथ रहेगा तो उसके उपनिवेश स्पेन के साथ नहीं रह सकते। मैंने पुरानी दुनिया की इस क्षति को पूरा करने के लिये ही नयी दुनिया का अस्तित्व कायम किया है।"

पुर्तगाल—पुर्तगाल के राजा डोमपेड्रो की सिर्फ एक लड़की थी। उसने पुर्तगीज जनता के लिये एक विधान स्वीकृत कर दिया और १८२६ ई० में अपनी लड़की के पक्ष में राजगद्दी त्याग देना चाहा। लेकिन उसके भाई मिगुएल ने स्पेनिश सरकार की सहायता पाकर उसका विरोध किया। इस पर ब्रिटिश सरकार ने वहाँ एक सेना भेजी। स्पेन वाले वहाँ से भाग गये। युद्ध का खतरा टल गया। मिगुएल पराजित हुआ और पुर्तगाल में वैधानिक सरकार की स्थापना हुई तथा पुर्तगीज कुमारी को गद्दी मिली।

श्रायकर लगाया गया। यह कर पहले अस्थायी था बाद में इसे स्थायी बना दिया गया। इससे २० लाख पौंड का जो घाटा था वह अब २० लाख पौंड की बचत में परिवर्त्तन हो गया।

आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिये पील ने एक तीसरा उपाय भी अपनाया। १८४४ ई० में उसने एक बैंक चार्टर ऐक्ट पास किया। इसके द्वारा बैंकिंग प्रणाली का पुनर्संगठन किया गया और अंग्रेजी बैंकिंग के सिद्धान्त निरूपित किए गए। अब इंगलैंड के बैंक के दो विभाग कर दिए गये। एक विभाग साधारण बैंक का काम करता था और दूसरे का काम सिर्फ नोट जारी करना था। इस समय बैंक प्रायः बहुत अधिक संख्या में नोट जारी करने लगे थे और अपने सुरक्षित कोष का उन्हें ध्यान नहीं रहता था। फलस्वरूप लोगों को बड़ी असुविधा होती थी। इस कारण पील ने नोटों की संख्या निश्चित कर दी। अब कम से कम १ करोड़ ४० लाख पौंड का कोष सुरक्षित रखना अनिवार्य कर दिया गया ताकि नोटों का मुद्रा में कभी भी परिवर्तन हो सके। छोटे-छोटे और नये बैंकों को नोट जारी करने की मनाही कर दी गई। इसके परिणामस्वरूप अब मुद्रास्फीति रुक गई और बैंकों के जरिये मुद्रा व्यवस्था सरकार से सम्बन्धित हो गई।

सामाजिक सुधार—१८४२ ई० में एक कोलियरीज ऐक्ट पास हुआ। इसके द्वारा खानों में औरतों, लड़कियों और १० वर्ष से कम उम्र के लड़कों की नियुक्ति रोक दी गई। नियम ठीक रूप से पालन किया जाता है अथवा नहीं—इसके लिये इन्सपेक्टर नियुक्त हुए। इसके बाद १८४४ और १८४७ ई० के फैक्टरी ऐक्ट पास हुए।

कार्न-लॉ का अन्त—नेपोलियनिक युद्ध की समाप्ति के बाद विदेशी अन्न के आयात के कारण देशी अन्न का भाव बहुत गिर गया था। इसे रोकने के लिये १८१५ ई० में एक कार्न-लॉ पास हुआ था जिसके द्वारा विदेशी अन्न के आयात पर प्रतिबंध लगा दिया गया—ताकि देशी अन्न का भाव कम न हो जाय। लेकिन इससे राष्ट्र को कोई लाभ नहीं हुआ। जमीन्दार तथा बड़े किसान तो लाभान्वित हुए। पर देश को क्षति ही पहुँची। इससे समान्य जनता को कोई सुविधा नहीं मिली और कृषि के विनाश में भी यह सहायक हुआ।

१८२६ ई० में हसकिसन ने एक स्लाइडिंग स्केल चलाया था जिसके द्वारा विदेशी अन्न का मूल्य देशी अन्न के मूल्य के अनुसार घटता-बढ़ता रहता था। लेकिन यह प्रयोग भी असफल रहा। इससे जीवन-निर्वाह के साधनों में महँगी आ गई और गरीबों को बड़ी ही तकलीफ हुई। बढ़ती हुई आबादी के लिये स्वदेशी अनाज पर्याप्त नहीं था, इस कारण यह बड़ा ही महँगा पड़ता था। फसल की खराबी ने तो अग्नि में घी का काम किया। अतः इसके विरोध में लोग आवाज उठाने लगे थे।

## अध्याय ३६

# गृहनीति ( १८३०—४१ ई० )

१ शासक और मन्त्रिमडल—सन् १८३० ई० में जार्ज चतुर्थ की मृत्यु के बाद उसका भाई विलियम चतुर्थ राजा हुआ। विलियम एक प्रतिभाशाली उदार और जनप्रिय शासक था। वह सुधारों का पक्षपाती था। इधर १८३० ई० में ही वेलिंगटन-मन्त्रिमडल का पतन हो चुका था और एक ह्विग मन्त्रिमडल की स्थापना हुई। १८८३ ई० में पिट और फौक्स का संयुक्त ह्विग मन्त्रिमंडल कायम हुआ था जिसका शीघ्र ही पतन भी हो गया था। इसके बाद २३ वर्षों तक ह्विग पार्टी शासन कार्य से अलग रही और इस लम्बे अर्से के बाद पुन अब इस पार्टी का मन्त्रिमडल कायम हुआ और जब-तब कुछ हेर फेर के साथ १८४१ ई० तक कायम रहा। आन्तरिक क्षेत्र में यह काल सुधारों के लिये बड़ा ही महत्वपूर्ण है।*

ग्रे मन्त्रिमडल (१८३०-३४ ई०)—प्रारम में लार्ड ग्रे प्रधान मन्त्री हुआ। वह एक बहुत ही ईमानदार, दूरदर्शी और सम्मानित ह्विग सरदार था। वह उग्रपन्थी तो नहीं था पर सुधारों का बड़ा समर्थक था। उसकी वक्तृत्व शक्ति अच्छी थी परन्तु उसकी भाषा में ओज और सरसता का अभाव था। इस मन्त्रिमडल में लार्ड मेलबोर्न, जान रसल तथा पामर्स्टन जैसे प्रमुख व्यक्ति थे। कई महत्वपूर्ण सुधार करने के बाद १८३४ ई० में ग्रे मन्त्रिमडल का पतन हो गया। इस समय आयरिश नीति को लेकर मन्त्रियों के बीच मतभेद हो गया। ग्रे के कुछ साथियों ने पदत्याग कर दिया। इस समय तक उसकी अवस्था भी ७० वर्ष की हो चुकी थी और दरिद्र नियम पास होने के बाद वह कुछ अप्रिय भी हो गया था। अत उसे भी पदत्याग कर देना पड़ा।

मेलबोर्न मन्त्रिमडल ( १८३४-४१ ई० )—अब लार्ड मेलबोर्न के नेतृत्व में नये मन्त्रिमडल का निर्माण हुआ लेकिन शुरू में ही वैधानिक सकट पैदा हो गया। विलियम इसे नापसन्द करता था। अत पार्लियामेंट में उसका बहुमत रहने पर भी विलियम ने मन्त्रिमडल को भंग कर डाला। वह अन्तिम राजा था जिसने अपने व्यक्तिगत अधिकार का इस प्रकार व्यवहार किया। तत्पश्चात् पील को प्रधान मन्त्री बनाया गया। ( १८३४-३५ ई० ) कुछ महीनों के बाद पार्लियामेंट को भग कर दिया गया और नया निर्वाचन हुआ किन्तु टोरी पार्टी को बहुमत न प्राप्त हो सका। अत पील ने पद-त्याग कर दिया और मेलबोर्न पुन प्रधान मन्त्री हुआ। ( १८३५ ई० )

---

* सुधारों की विवेचना आगे देखिये।

जिनके विचार पील से नहीं मिलते थे। इस तरह अनुदार दल का नेता होकर भी वह उस दल के विचारों का सर्वोत्तम प्रतिनिधि नहीं था। वह स्थिति की अपरिवर्तन-शीलता में विश्वास नहीं करता था और टोरीवाद तथा कुशासन दोनों ही शब्दों को पर्यायवाची मानता था। उसने एक बार कहा था—"मैं अनुदार दल के सिद्धान्तों के अनुकूल ही मानता हूँ कि देश में इतनी खुशहाली और सन्तोष का प्रचार किया जाय कि असन्तोष की कोई बात उठे ही नहीं।' अतः यों तो वह सुधार का पक्षपाती नहीं था, बड़ी ही सावधानी से अपना पैर आगे बढ़ाता था। लेकिन सुधार की आवश्यकता आने पर वह माथापच्ची भी नहीं करता था। कट्टरता से दूर रह कर शीघ्र ही परि-वर्तन करने के लिये तैयार हो जाता था। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि वह एक कोरा सिद्धान्तवादी नहीं था, बल्कि एक निपुण उपयोगितावादी था। उसकी नीति की कसौटी थी—अधिक से अधिक लोगों का अधिक से अधिक कल्याण।

हम देख चुके हैं कि लिवरपूल मंत्रिमंडल में वह कैथोलिक मुक्ति नियम के एकदम विरुद्ध था। लेकिन ओकोनेल के उत्थान और प्रगति तथा सफलताओं को देखकर पीछे वही इसकी आवश्यकता महसूस करने लगा था। इसी तरह इंगलैंड और आयर-लैंड की संकटपूर्ण और हृदयविदारक परिस्थिति ने उसे अपने दल की नीति के खिलाफ भी अनाज विधान को रद्द करने के लिये बाध्य किया। उसे अपने दिल-दिमाग में यह दृढ़ विश्वास हो गया कि जनकल्याण स्वतंत्र व्यापार के ही अनुसरण में विशेष रूप से है तभी उसने अनाज विधान का अन्त कर डाला। इसके पहले वह कई महत्त्वपूर्ण आर्थिक सुधारों को भी कर चुका था।

अतः उस पर जो दोषारोपण हुआ उससे उसे अवश्य दुख हुआ। लेकिन उसे इस बात का पूरा सन्तोष था कि उसने अपने देश को शांतिपूर्ण, समृद्धिशाली और प्रगतिशील बनाये रखा। अपनी मृत्यु के पूर्व एक बार उसने बड़े ही कारुणिक शब्दों में कहा था कि उसके नाम गरीबों की झोपड़ियों में कृतज्ञतापूर्वक अवश्य ही स्मरण किये जायँगे।

अतः यदि उस पर कोई आक्षेप किया जा सकता है तो वह यह है कि वह बहुत ही रहस्यपूर्ण और गंभीर था और अपने विचारों को मंत्रियों के बीच नहीं खोलता था और वे उसकी नीति को अन्तिम क्षण जान पाते थे।

थी लेकिन लार्ड ग्रे के समय उसने पार्लियामेन्टरी सुधार के लिये जी जान से कोशिश की। इस मन्त्रिमंडल में लार्ड डरहम और जॉन रसल जैसे व्यक्ति भी थे जो पार्लियामेन्टरी सुधार के समर्थक थे। सुधारों की माँग बहुत जोरदार हो चुकी थी लेकिन पार्लियामेन्ट ने जनता की तकलीफों की ओर ध्यान देने और उनकी माँगों को पूरा करने की कभी भी कोशिश न की। इस कारण अब लोग इसका अन्त कर देने के लिये तुले हुए थे। यों तो सारे यूरोप में अब प्रतिक्रिया की लहर का अन्त हो रहा था। १८३० ई० का साल—पश्चिम के लिये क्रांतियों का साल था। फ्रांस, बेल्जियम इटली, जर्मनी, पोलैंड सर्वत्र क्रांतियाँ हो रही थीं। सुधारों में देर करने का अर्थ ही था ब्रिटेन में भी क्रांति को आमंत्रित करना। ग्रेट ब्रिटेन अब क्रांति के किनारे पर खड़ा था और उदारवादी आन्दोलन ने पार्लियामेन्टरी सुधार के लिए एक जबरदस्त विद्रोह का रूप पकड़ लिया था।

पार्लियामेंटरी प्रणाली की बुराइयाँ—इंगलैंड और वेल्स में जो प्रतिनिधित्व की प्रणाली थी, वह ट्यूडर काल से ही बिना किसी परिवर्तन या बहुत सामान्य परिवर्तन के साथ चला आ रही थी। कामनवल्थ के समय कुछ सुधार हुए भी थे। लेकिन पुनर्स्थापन के बाद उन्हें फिर हटा दिया गया। जगहों का वितरण बहुत ही विषमतापूर्ण था और आबादी के अनुपात में बहुत ही अनुचित था। प्रत्येक बौरो और प्रत्येक काउन्टी से दो-दो प्रतिनिधि आते थे। बौरो तथा काउन्टी के क्षेत्र या आबादी का कोई ख्याल नहीं था। कामन्स सभा में काउन्टी की तुलना में बौरो के सदस्यों की संख्या बहुत अधिक थी। जिस बौरो में आबादी ही नहीं था या जो बौरो समुद्र के पेट में भी चला गया था वहाँ से भी दो सदस्य पार्लियामेन्ट में आते थे लेकिन औद्योगिक क्रांति के कारण बर्मिंघम, मैनचेस्टर, लीड्स आदि नये-नये, शहर बस गये थे जहाँ की आबादी घनी थी और इन शहरों का कोई प्रतिनिधि नहीं था। सर्वत्र भूमि पतियों का बोलबाला था। घूस रिश्वत का रिवाज तो खूब ही चल गया था। कॉमन्स सभा में ६५८ सदस्य थे जिनमें ५१३ इंगलैंड और वेल्स से, १०० आयरलैंड से और ४५ स्काटलैंड से थे। ४१६ बौरो के सदस्य पार्लियामेंट को अपनी मुट्ठी में रखे हुए थे। ये बौरो भी तीन श्रेणियों में विभक्त थे।

(क) पाकेट बौरो या नॉमिनेशन बौरो—इस तरह के बौरो के स्वामियों को सदस्यों को मनोनीत करने का पूरा अधिकार रहता था। जिस तरह से अपने धन सम्पत्ति को बेच सकते थे, उसी तरह अपने मनोनीत किये हुए सदस्य के मत को भी बेचने का उन्हें पूरा अधिकार था। एक ही आदमी कई बौरो को अपने अधीन में रखता था और वह सामान्यतः एक पियर होता था। इसलिये उसे लार्ड सभा में जगह मिल जाती थी। प्रतिनिधित्व प्रणाली ही बिल्कुल विपरीत थी। सदस्य कई

वर्ग बौखला उठा। इसी समय दरिद्र नियम लागू किया गया जिससे प्रारम्भ में मजदूरों को असुविधा ही हुई। अतः अब उन्हें विश्वास हो गया कि इन 'नीच, खूनी और बर्बर' ह्विगों ने धोखा दिया है। उनकी समझ में अब सुधार बिल से भी अधिक परिवर्तन की आवश्यकता दीख पड़ने लगी।

इस कारण चार्टिस्टों का प्रादुर्भाव हुआ। यह पूर्णतया राजनैतिक आन्दोलन था जिसका उद्देश्य पूँजीपतियों और श्रमिकों के बीच राजनैतिक समानता स्थापित करना था। वे पूर्ण प्रजातन्त्र के सिद्धान्त को मानते थे।

सन् १८३८ ई० में मजदूर वर्ग की तरफ से एक आवेदन पत्र तैयार किया गया जिसे 'पीपुल्स चार्टर' कहा जाने लगा। इसके समर्थक ही चार्टिस्ट कहलाये। बहुत अधिक संख्या में मजदूरों ने इसका समर्थन किया। इनके दो प्रमुख नेता थे। इनमें एक था फीयर्गस ओकोनर नामक एक आयरिश, जिसने उत्तर के चार्टिस्टों का नेतृत्व किया। उसका पत्र 'नार्दर्न स्टार' इस आन्दोलन का प्रमुख पत्र था। दूसरा था लन्दन निवासी विलियम लॉवेट जिसने लन्दन के चार्टिस्टों का नेतृत्व किया। १८३६ ई० में लन्दन में एक श्रमिक संघ की स्थापना हुई थी जिसका वह एक प्रमुख और सक्रिय सदस्य था।

चार्टिस्टों की माँगें—चार्टिस्टों की छः प्रमुख माँगें थीं—पार्लियामेंट का वार्षिक निर्वाचन, पार्लियामेंट के सदस्यों को वेतन, पार्लियामेंट की सदस्यता के लिये साम्पत्तिक योग्यता का न रहना, समान निर्वाचन क्षेत्र, बालिग पुरुषों को मताधिकार और गुप्त मतदान की प्रथा। चार्टिस्टों की ये ही राजनैतिक माँगें थीं जिनका प्रचार समाचार-पत्रों तथा भाषणों के द्वारा किया जाने लगा।

२. चार्टिस्ट आन्दोलन का विकास—इस आन्दोलन के मूल में ही कमजोरी और असफलता के बीज छिपे हुए थे। नेताओं के बीच गैर तरीकों के सम्बन्ध में प्रारम्भ से ही गहरा मतभेद था। ओकोना क्रांतिकारी तथा हिंसात्मक तरीकों का समर्थक था। अतः उसके दल का नाम 'फिजिकल फोर्स पार्टी' था, किन्तु यह दल वाले अल्पसंख्यक थे। विलियम लॉवेट एक सुसंस्कृत व्यक्ति था और वैधानिक तरीकों का समर्थक था। अतः उसके दल का नाम 'मोरल फोर्स पार्टी' था। यह दल वाले बहुमत में थे।

चार्टिस्टों ने अपने आवेदनपत्र को पार्लियामेंट के विचारार्थ उपस्थित किया। किन्तु पार्लियामेंट ने उस पर कोई ध्यान नहीं दिया और उसे ठुकरा दिया। मोरल फोर्स पार्टी की प्रतिष्ठा में इससे बहुत आघात पहुँचा। अब इसके विरुद्ध प्रचार करने के लिये फिजिकल फोर्स पार्टी को मौका मिल गया। इस पार्टी के सदस्यों का प्रभाव बढ़ने लगा। ये जहाँ-तहाँ सभा करने लगे जिसमें क्रांतिकारी भाषण दिया करते थे।

थी लेकिन लार्ड ग्रे के समय उसने पार्लियामेंट में सुधार के लिये जी-जान से कोशिश की। इस मन्त्रिमंडल में लार्ड डुरहम और जॉन रसल जैसे व्यक्ति भी थे जो पार्लियामेन्टरी सुधार के समर्थक थे। सुधारों की माँग बहुत जोरदार हो चुकी थी लेकिन पार्लियामेन्ट ने जनता की तकलीफों की ओर ध्यान देने और उनकी माँगों को पूरा करने की कभी भी कोशिश न की। इस कारण अब लोग इसका अन्त कर देने के लिये तुले हुए थे। यों तो सारे यूरोप में अब प्रतिक्रिया की लहर का अन्त हो रहा था। १८३० ई० का साल—पश्चिम के लिये क्रान्तियों का साल था। फ्रांस, बेल्जियम इटली, जर्मनी, पोलैंड सर्वत्र क्रांतियाँ हो रही थीं। सुधारों में देर करने का अर्थ ही था ब्रिटेन में भी क्रांति का आमन्त्रित करना। ग्रेट ब्रिटेन अब क्रांति के किनारे पर खड़ा था और उदारवादी आन्दोलन ने पार्लियामेन्टरी सुधार के लिए एक जबरदस्त विद्रोह का रूप पकड़ लिया था।

**पार्लियामेंटरी प्रणाली की बुराइयाँ**—इगलैंड और वेल्स में जो प्रतिनिधित्व की प्रणाली थी, वह ट्यूडर काल से ही बिना किसी परिवर्तन या बहुत सामान्य परिवर्तन के साथ चला आ रही थी। कामनवेल्थ के समय कुछ सुधार हुए भी थे। लेकिन पुनर्स्थापन के बाद उन्हें फिर हटा दिया गया। जगहों का वितरण बहुत ही विषमतापूर्ण था और आबादी के अनुपात में बहुत ही अनुचित था। प्रत्येक बौरो और प्रत्येक काउन्टी से दो-दो प्रतिनिधि आते थे। बौरो तथा काउन्टी के क्षेत्र या आबादी का कोई ख्याल नहीं था। कामन्स सभा में काउन्टी की तुलना में बौरो के सदस्यों की संख्या बहुत अधिक थी। जिन बौरो में आबादी ही नहीं थी या जो बौरो समुद्र के पेट में भी चला गया था वहाँ से भी दो सदस्य पार्लियामेन्ट में आते थे लेकिन औद्योगिक क्रान्ति के कारण बर्मिंघम, मैनचेस्टर, लीड्स आदि नये नये, शहर बस गये थे वहाँ की आबादी घनी थी और इन शहरों का कोई प्रतिनिधि नहीं था। सर्वत्र भूमि पतियों का बोलबाला था। घूस रिश्वत का रिवाज तो खूब ही चल गया था। कॉमन्स सभा में ६५८ सदस्य थे जिनमें ५१३ इगलैंड और वेल्स से, १०० आयरलैंड से और ४५ स्काटलैंड से थे। ४१६ बौरो के सदस्य पार्लियामेंट को अपनी मुट्ठी में रखे हुए थे। ये बौरो भी तीन श्रेणियों में विभक्त थे।

**(क) पाकेट बौरो या नॉमिनेशन बौरो**—इस तरह के बौरो के स्वामियों को सदस्यों को मनोनीत करने का पूरा अधिकार रहता था। जिस तरह वे अपने धन सम्पत्ति को बेच सकते थे, उसी तरह अपने मनोनीत किये हुए सदस्य के मत को भी बेचने का उन्हें पूरा अधिकार था। एक ही आदमी कई बौरो को अपने अधीन में रखता था और वह सामान्यतः एक पियर होता था। इसलिये उसे लार्ड सभा में जगह मिल जाती थी। प्रतिनिधित्व प्रणाली ही बिल्कुल विपरीत थी। सदस्य कई

## अध्याय ४२

# लार्ड पामर्स्टन का मंत्रिमंडल ( १८५५—६५ ई० )

१. पामर्स्टन की राजनीतिक जीवनी—१९वीं सदी में पामर्स्टन सर्वाधिक सफल विदेश मंत्री हुआ है। इसके राजनैतिक जीवन से १९वीं सदी के पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध का कुछ भाग पूर्णतया आच्छादित हो जाता है। उसका जन्म १७८४ में हुआ था। वह एक आयरिश पीयर था और २३ वर्ष की अवस्था में सन् १८०४ ई० में एक रौटेनबौरो का प्रतिनिधि होकर पार्लियामेंट में प्रवेश किया था। तब से वह बराबर मृत्यु पर्यन्त कामन्स सभा का सदस्य रहता चला आया। इस तरह उसका राजनैतिक जीवन लगभग ६० वर्ष का था जिसमें वह ५० वर्ष किसी न किसी मन्त्री पद पर ही रहा था। इस काल में १० मंत्रिमंडल बने और बिगड़े, पर उसने सभों में काम किया और अनुभव प्राप्त करता रहा। प्रारंभ में वह टोरी था और विभिन्न टोरी मंत्रिमंडलों में उसने युद्ध-मन्त्री का कार्य किया। १८२८ ई० में वह ह्विगों के साथ हो गया और १८३० ई० में ग्रे और मेलबोर्न के मंत्रिमंडल में वहाँ परराष्ट्र सचिव बनाया गया। इस समय से सिर्फ तीन छोटे मध्यान्तरों के सिवा १८५६ ई० तक वही वैदेशिक विभाग का प्रधान बना रहा। १८४१ ई० में मेलबोर्न का पतन हो गया और पील का मंत्रिमंडल कायम हुआ जो १८४६ ई० तक रहा। इस समय पामर्स्टन कार्य-भार से अलग रहा। पर रसल के मंत्रिमंडल ( १८४६-५२ ई० ) में वही पुनः परराष्ट्र सचिव बनाया गया। एबर्डीन के मंत्रिमंडल में ( १८५३-५५ ई० ) वह गृह-सचिव रहा पर इस समय भी वैदेशिक क्षेत्र में उसी की ही नीति कार्यान्वित होती रही। १८५५ से ५८ ई० तक वह प्रधान मंत्री था। १८५८ ई० में हत्या और षड्यंत्र बिल के प्रश्न पर उसने पद-त्याग कर दिया और लार्ड डर्बी प्रधान मंत्री हुआ। पर १५ महीने के बाद ही उसे भी पद-त्याग करना पड़ा। तब १८५६ ई० में पामर्स्टन पुनः प्रधान मंत्री हुआ और मृत्युपर्यन्त १८६६ ई० तक इस पद पर रहा। इस काल में प्रधान मंत्री रह कर वैदेशिक मामलों को भी सँभालता रहा और प्रधानमन्त्री के रूप में ही १८६५ ई० में ८१ वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हो गई। अतः हम देखते हैं कि पामर्स्टन एक बेजोड़ परराष्ट्र मन्त्री था और १८३० से १८५६ ई० तक इंगलैंड की वैदेशिक नीति उसी के हाथों में खेलती रही। इस तरह इंगलैंड में दीर्घकाल तक हेनरी टेम्पुल वाइकाउन्ट पामर्स्टन एक तरह से अधिनायक ही बना रहा। १८५२ ई० से १८५६ ई० तक का युग तो पामर्स्टन के युग के नाम से ही प्रसिद्ध है।

के नेतृत्व में एक जाँच समिति नियुक्त की गई और ह्विग सरकार ने इसकी रिपोर्ट को अपनाया। इसमें तीन बातों की सिफारिश की गई थी

(क) अवनत नगरों से मताधिकार को कम कर देना। (ख) नये नये और बड़े नगरों में जहाँ से अभी प्रतिनिधि नहीं आते थे, मताधिकार देना और (ग) सभी बौरो में मताधिकार की एक सी प्रणाली का प्रचलन करना।

डुरहम समिति की रिपोर्ट और उसके सिफारिशों के आधार पर मार्च १८३१ ई० में लार्ड जॉन रसल ने सर्वप्रथम एक सुधार बिल पेश किया। यद्यपि इसके द्वितीय वाचन के बाद बिल के पक्ष में एक व्यक्ति का बहुमत था, कामन्स समिति के विरोध के कारण यह पास नहीं हो सकता। इसके पश्चात् राजा ने लार्ड ग्रे के अनुरोध पर इस पार्लियामेंट को भग कर दिया। आम चुनाव में ह्विगों को १०० सदस्यों का बहुमत प्राप्त हुआ।

जून १८३१ ई० में सुधार बिल द्वितीय बार पेश किया गया और कॉमन सभा में १०० बहुमत के द्वारा पास भी हो गया लेकिन लार्ड सभा में ४१ व्यक्तियों के बहुमत के विरोध के कारण बिल अस्वीकृत हो गया। इस पर पूरे देश में तहलका मच गया और देश के विभिन्न हिस्सों में दंगे और बगावतें हो गईं। जहाँ-तहाँ अनेकों सभाएँ होने लगीं। सम्पूर्ण बिल के सिवा अन्य कुछ भी नहीं—यही सभी लोगों की पुकार थी।

दिसम्बर महीने में तृतीय बार सुधार बिल पेश किया गया और कॉमन्स सभा में पास भी हो गया। लौर्डों की एक सीमित ने बिल में सुधार करने के लिए आवाज उठायी। ग्रे ने राजा से अपील की कि पर्याप्त सख्ता में ह्विग पियर बना दिये जायँ। लेकिन राजा ने इसपर कोई ध्यान नहीं दिया। तब ग्रे ने त्याग पत्र दे दिया। राजा ने टोरी दल के नेता वेलिंगटन को मंत्रिमंडल बनाने के लिए निमंत्रित किया लेकिन वेलिंगटन के किये कुछ न हो सका। तब राजा को पुन ग्रे को ही आमंत्रित करना पड़ा। इस बार उसने ग्रे को एक लिखित आज्ञापत्र दिया कि "इतनी सख्या में ह्विग पियर बना दिये जाँय जिससे सुधार बिल पास हो जाय। ऐसा करने में सभी पियरों के बड़े लड़कों को ही पहले बुलाया गया। इस पर टोरी लोगों ने देखा कि अब उनकी दाल नहीं गल सकती। अत उन लोगों ने अपना विरोध हटा लिया और बिल के अन्तिम पाठ के समय सभा भवन छोड़कर चले गये। जून १८३२ ई० में बिल पास होकर कानून बन गया।

## १८३२ ई० का प्रथम सुधार बिल

शर्तें—(क) प्रतिनिधित्व प्रणाली—इस बिल के द्वारा जगहों के वितरण में परिवर्तन तो किया गया लेकिन उनकी कुल संख्या में कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

# अध्याय ४३

# राजनीतिक पुनर्जागरण और द्वितीय सुधार बिल

## ( १८६५–६८ ई० )

१. रसल का द्वितीय मंत्रिमंडल ( १८६५-६६ ई० )—लार्ड पामर्स्टन की मृत्यु के बाद रसल का दूसरा मंत्रिमंडल कायम हुआ। हम देख चुके हैं कि पामर्स्टन के अधिनायकत्व काल में किसी भी तरह के सुधार नहीं हुए और सुधारवादी चुपचाप मुँह लटकाये रहे। अतः अब उसके निधन के पश्चात् इनमें फिर जागृति आई। साथ ही इस समय सुधार की आवश्यकता भी नितान्त थी। ३४ वर्ष पूर्व प्रथम सुधार बिल पास हुआ था और तब से अंग्रेजी राजनीति में कितने ही महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। पर निर्वाचन तथा प्रतिनिधित्व प्रणाली ज्यों की त्यों बनी रही। अतः अब इस दोष का निराकरण आवश्यक था। फिर, रसल स्वयं बहुत बड़ा सुधारवादी था। प्रथम सुधार बिल उसका पेश किया हुआ था। उसके बाद भी १८५२ और १८५४ ई० में उसने सुधार बिल पेश किये थे पर असफलता मिली थी तब इस बार जबकि सुधार आन्दोलन नये सिरे से संगठित हो रहा था और रास्ते की सारी रुकावटें समाप्त हो गई थीं रसल के लिये चुप बैठना अस्वाभाविक-सा था। अतः उसकी सम्मति से १८६६ ई० में ग्लैडस्टन ने मताधिकार बढ़ाने के लिये एक बिल उपस्थित किया। पर यह बिल बहुत नरम था और इससे किसी बड़े परिवर्तन की गुंजायश नहीं थी। अत: अनुदारवादियों के साथ-साथ राबर्ट लॉक के नेतृत्व में बहुत से उदारवादियों ने भी इसका विरोध किया और यह स्वीकृत न हो सका। इसपर जून १८६६ ई० में रसल की सरकार ने पद-त्याग दिया। इस समय से रसल ने राजनीति में सक्रिय भाग लेना छोड़ दिया और एक तरह से उसके राजनीतिक जीवन का अन्त हो गया।

२. डर्बी का तृतीय मंत्रिमंडल ( १८६६-६८ ई० )—रसल के बाद डर्बी तीसरी बार प्रधान मंत्री हुआ। इस बार डिसरैली उसका प्रमुख सहयोगी था। इस सरकार ने १८६७ ई० में एक कानून के द्वारा कनाडा का डोमेनियन स्थापित किया। सुधार बिल के लिये आन्दोलन तो चल ही रहा था और अब वह उग्र रूप पकड़ता जा रहा था। डिसरैली भी अब यह समझ गया था कि सुधार आवश्यक है और इसकी माँग टालना राष्ट्र के साथ विश्वासघात करना होगा। अतः उसने १८६७ ई० में एक सुधार बिल उपस्थित किया। १८६६ ई० के सुधार बिल से वह अधिक उग्र-

अब इंगलैंड के निर्वाचकों की संख्या में पहले से तिगुनी से भी अधिक वृद्धि हो गई। इस सुधार नियम के फलस्वरूप ४ लाख ५५ हजार नये निर्वाचक हुए। अब इंगलैंड की जनसंख्या में २४ व्यक्तियों में एक व्यक्ति को मताधिकार प्राप्त हो गया।

## प्रथम सुधार नियम के परिणाम

१६८८ ई० की क्रांति से तुलना—हम लोग देख चुके कि प्रथम सुधार नियम के द्वारा ग्रेट ब्रिटेन की प्रतिनिधित्व और मताधिकार प्रणाली में महान परिवर्तन हुआ। इंगलैंड के वैधानिक इतिहास में १८३२ ई० का सुधार नियम १६८८ ई० की महान क्रांति की ही तरह युगान्तरकारी है। 'इस क्रांति के फलस्वरूप राजनीतिक सत्ता राजा के हाथों में सीमित न रह कर भू-स्वामियों के हाथ में चली आई। अब १६८८ से १८३२ ई० तक देश के शासन में इन्हीं भू स्वामियों का बोलबाला था। इन्हीं को शक्ति का एकाधिकार प्राप्त हो गया था। सर्वत्र इन्हीं की तूती बोल रही थी। अत इस काल में यद्यपि लार्ड सभा परम शक्तिशाली नहीं थी, फिर भी धनी मानी सरदारों का तो प्रभुत्व अवश्य ही स्थापित था।

क्रांतिकारी परिवर्तन—इसी तरह १८३२ ई० के सुधार नियम ने महान् परिवर्तन किया। टोरियों के शब्दों में यह नियम 'क्रांतिकारी' ही था। जो दरवाजा बन्द था वह अब खुल गया। इसने प्राचीन परम्परा के दुर्ग की नींव हिला दी और राजनीतिक आकर्षण केन्द्र को बदल गया।

भू स्वामियों की शक्ति का ह्रास—इस सुधार नियम के कारण राजनीतिक सत्ता भू-स्वामियों के हाथ में न रही। यह मध्यम वर्ग के लोगों को हस्तान्तरित हो गई। अब भूस्वामियों की शक्ति के एकाधिकार का अन्त हो गया। मध्य वर्गीय लोगों को देश की राजनीति को प्रभावित करने का सुअवसर मिला। भूस्वामियों के अधिकार का तत्काल ही अन्त तो नहीं हो गया किन्तु राजनीतिक शक्ति के उपभोग में वे मध्य वर्ग वालों के साथ साझीदार हो गये। राजनीतिक क्षेत्र में अब उनका प्रभाव मात्र रह गया प्रमुख और अपने नेतृत्व को कायम रखने के लिये यह आवश्यक हो गया कि वे निर्वाचकों के मत का अध्ययन करें तथा उसे स्वीकार करने के लिये क्षमता रखें।

परिवर्तन के सिद्धान्त की स्वीकृति—समय की प्रगति के साथ भूस्वामियों का प्रभाव भी जाता रहा। १८३२ ई० के सुधार नियम से परिवर्तन के सिद्धान्त को मान लिया गया। जो दरवाजा दीर्घकाल से बिलकुल बन्द रखा गया उसे खोल दिया गया। अब आगे सुधारों के लिये रास्ता सुगम और साफ हो गया। काल-क्रम से सुधारों की प्रगति और मताधिकार के विस्तार के साथ जनता के हाथ में शक्ति सीमित होने लगी। इस तरह १८३२ ई० के सुधार नियम के द्वारा ही इंगलैंड में प्रजातंत्र का बीजारोपण

अन्त तक, व्यक्तिगत जीवन से सार्वजनिक जीवन तक, राजनीति से बाहर तथा भीतर, सर्वत्र, एक-एक बात में उनमें अन्तर था। पिट और फॉक्स के बाद पार्लियामेंट में समकालीन प्रतिद्वन्द्वियों का यह सर्वप्रथम महान् जोड़ा था। इंगलैंड के इतिहास में एक ही समय में शायद ही कभी असमान प्रकृति के दो इतने प्रभावशाली राजनीतिज्ञ उत्पन्न हुए हों।

डिसरैली का जन्म १८०४ ई० में इङ्गलैंड में हुआ था लेकिन वह इटली के एक यहूदी का पोता था। ग्लैडस्टन का जन्म १८०९ ई० में एक प्रतिष्ठित स्कॉटिश परिवार में हुआ था। डिसरैली का पिता एक लब्धप्रतिष्ठ साहित्यिक था लेकिन ग्लैडस्टन का पिता लिवरपूल का एक प्रसिद्ध व्यापारी था।

डिसरैली ने बचपन में १४ वर्ष की उम्र में ही स्कूल छोड़ दिया था और उसकी शिक्षा दीक्षा व्यवस्थित रूप से कहीं नहीं हुई परन्तु ग्लैडस्टन की शिक्षा ईटन तथा आक्सफोर्ड में सुव्यवस्थित रूप से हुई थी और विद्यार्थी जीवन में वह बहुत ही प्रखर और प्रतिभाशाली छात्र रह चुका था।

डिसरैली और ग्लैडस्टन—दोनों ही प्रसिद्ध साहित्यिक थे लेकिन उनके क्षेत्र भिन्न-भिन्न थे। डिसरैली राजनीतिक उपन्यास और रोमांचकारी कथा-कहानियों में अधिक सिद्धहस्त था। विवियन ग्रे, कुनिंग्सबी, सिबिल आदि उसके प्रसिद्ध उपन्यास थे जिन्हें अंग्रेज़ी समाज ने आदर के साथ अपनाया था लेकिन ग्लैडस्टन का क्षेत्र धर्म तथा ब्रह्म विद्या ( थियोसोफी ) था और इस विषय पर उसने भी प्रमुख पुस्तकें लिखकर ख्याति पायी थी।

डिसरैली के प्रारंभिक भाषण प्रभावपूर्ण नहीं होते थे और उसके प्रथम भाषण की तो इतनी हँसी उड़ाई गई कि उसे बैठ जाना पड़ा। बैठते समय उसने कहा था कि 'आज तो मैं बैठ जाता हूँ पर वह समय आयेगा जब आप लोग मेरी बातें सुनेंगे लेकिन ग्लैडस्टन प्रारंभ से ही एक असाधारण वक्ता था और उसके प्रारंभिक भाषण भी प्रभावशाली ही होते थे। डिसरैली के व्याख्यानों की भाषा लच्चर होती थी। वह व्यंग्य बोलने के लिये प्रसिद्ध था जो श्रोताओं को तीर से चुभते थे। ग्लैडस्टन को भाषा पर पूर्ण अधिकार था। वह बड़ा ही धारा-प्रवाह बोलता था और उसकी ख्याति उसकी भाषा की गति के लिये ही थी। डिसरैली को नये-नये मुहावरे गढ़ने का शौक था। चुने हुए शब्दों द्वारा वह श्रोताओं को मुग्ध कर देता था। उसकी बातें बहुत ऊँचे स्तर की होती थीं और साधारण जनता की समझ से परे थीं। वह एक कल्पना-प्रधान व्यक्ति था और उसकी सारी बातें रहस्यपूर्ण होती थीं। इसी कारण इसे अंग्रेज़ी राजनीति का रहस्यपूर्ण व्यक्ति कहा गया है पर ग्लैडस्टन की बात सहज ग्राह्य होती थी। उसे जन साधारण अच्छी तरह समझ सकते थे। अतः एक

लोग भी थे जो सुधार के समर्थक थे। ये सभी मिलकर अब लिबरल कहलाने लगे। अतः व्हिग सरकार ने गृह तथा वैदेशिक क्षेत्र में उदार नीति ही अपनायी।

सुधार कानून के बाद की यह पार्लियामेंट दो वर्षों तक रही लेकिन इतने कम अर्से में ही इसने अद्भुत और आश्चर्यजनक सुधार किया। ग्रे सरकार ने एक रायल कमीशन की नियुक्ति की थी। इसी की रिपोर्ट के आधार पर विभिन्न क्षेत्रों में सुधार किए गये।

दास प्रथा का अन्त (१८३३ ई०)—ब्रिटेन में तो १८०७ ई० में ही विलबरफोर्स तथा क्लार्कसन के प्रयत्नों के फलस्वरूप दास प्रथा का अन्त हो गया था लेकिन ब्रिटिश वेस्ट इंडीज तथा केप कोलोनी के उपनिवेशों में अब भी बहुत बड़ी संख्या में गुलाम थे। उनकी मुक्ति के लिये एक कानून पास हुआ जिसके द्वारा सारे ब्रिटिश साम्राज्य में दास प्रथा गैरकानूनी घोषित कर दी गयी और सभी दास मुक्त कर दिये गये। सरकार ने इनके स्वामियों को नगद २ करोड़ पौंड हरजाना दिया। ६ वर्ष के भीतर के जितने भी गुलाम थे उन्हें ७ वर्ष तक अपने मालिकों के अधीन रहने को बाध्य किया गया जिसके बाद वे पूर्णतः स्वतंत्र हो जाते।

इंगलैंड के साम्राज्यवाद के क्षेत्र में यह एक बड़ा ही उत्तम कार्य था। यह एक नयी भावना और नया बोध का द्योतक था। दलित लोगों के लिए अंग्रेजों का यह कदम निश्चय ही प्रशसनीय था। प्राचीन व्यापारिक साम्राज्य के अन्त का यह स्वाभाविक परिणाम था।

इस कानून से ब्रिटेन के पश्चिमी द्वीपसमूह तथा पश्चिमी अफ्रीका स्थित प्राचीन उपनिवेशों पर बहुत गहरा असर पड़ा। उनकी प्रगति गुलामों के कारण ही हो रही थी। पश्चिमी द्वीपसमूह में गुलाम ही ऊख तथा तम्बाकू की खेती में काम करते थे। पश्चिमी अफ्रीका के किनारों पर गुलामों के व्यापार करने वाले केन्द्र थे जहाँ से पश्चिमी द्वीपसमूह में खेती करने के लिये गुलाम खरीदे जाते थे। इस अमानुषिक व्यापार से व्यापारियों को बड़ा ही लाभ होता था। १८०७ ई० में दास व्यापार के अन्त हो जाने के कारण पश्चिमी अफ्रीका के रोजगार का अन्त हो गया था। १८३३ ई० में दास प्रथा के अन्त होने से पश्चिमी द्वीप की अवनति निश्चित हो गई। इसके पूर्व ब्रिटिश पश्चिमी द्वीपसमूह का स्थान संसार के समृद्धशाली उपनिवेशों में था और यह साम्राज्य का महान् गौरव समझा जाता था किन्तु एक ही पीढ़ी के अन्दर इसकी महत्ता समाप्त हो चली।

२ फैक्टरी ऐक्ट (१८३३ ई०)—छोटे छोटे बच्चों से बहुत कठिन काम कराना और इस तरह उनका हृदयहीन शोषण व्यावसायिक क्रांति की प्रमुख घृणित विशेषता थी। बहुत छोटे छोटे बच्चे भी मिल मालिकों द्वारा कठोर कार्यों में नियुक्त

थी। लेकिन ग्लैडस्टन की नीति उससे सर्वथा भिन्न थी। उसे उपनिवेशों या साम्राज्य-वाद के विकास में कोई दिलचस्पी नहीं थी। अतः उसकी वैदेशिक नीति बड़ी ही शिथिल थी।

आयरिश नीति में भी दोनों ही एक दूसरे के प्रतिकूल थे। आयरलैंड को सन्तुष्ट करना ग्लैडस्टन के जीवन का प्रधान उद्देश्य था और इसके लिये उसने दमन तथा समझौते दोनों नीतियों से काम लिया। जब उसकी ये दोनों नीतियाँ विफल हो गयीं तब वह स्वायत्त शासन* का समर्थक बन गया। डिसरैली के जीवन में आयरलैंड के सम्बन्ध में ऐसा कोई उद्देश्य नहीं था। आयरलैंड में जब कभी अशान्ति होती थी तो वह दमन नीति का आश्रय लेता था। इस तरह ये दोनों ही महान् राजनीतिज्ञ एक युग के होकर भी एक दूसरे के विपरीत थे।

अब हम दोनों राजनैतिक प्रतिद्वंद्वियों के कार्यों पर दृष्टिपात करेंगे।

२. डिसरैली का प्रथम मंत्रिमंडल ( १८६८ ई० )—१८६८ ई० में लार्ड डर्बी ने जब राजनीति से अवकाश ग्रहण कर लिया तो डिसरैली उसका उत्तराधिकारी हुआ। किन्तु शीघ्र ही द्वितीय सुधार नियम के अनुसार पालियामेंट का साधारण चुनाव हुआ। इसमें नये निर्वाचकों ने लिबरलों का ही पक्ष लिया। अतः वे ही बहुमत में निर्वाचित हुए। अब डिसरैली ने पद-त्याग कर दिया और ग्लैडस्टन ने अपना पहला लिबरल मंत्रिमंडल कायम किया।

३. ग्लैडस्टन का प्रथम मंत्रिमंडल ( १८६८-७४ ई० )—इस प्रकार १८६८ ई० में ग्लैडस्टन के हाथ में सत्ता हस्तान्तरित हुई। वह उसके बाद तीन बार और प्रधान मंत्री हुआ, किन्तु उसका यह प्रथम मंत्रिमंडल ही सर्वाधिक प्रिय और लाभप्रद है। यह मिश्रित मंत्रिमंडल था, जिसमें ग्लैडस्टन जैसे पोलाईट, लो जैसे ह्विग और ब्रॉन ब्राइट जैसे उग्रपन्थी सम्मिलित थे। किन्तु ग्लैडस्टन ने इन सबको मिलाकर लिबरल पार्टी का निर्माण किया जो प्रथम महायुद्ध के समय तक बड़ी ही प्रगतिशील शक्ति बनी रही। ग्रे सरकार के बाद इसी सरकार ने रचनात्मक, व्यवस्थापन तथा शासन सम्बन्धी सुधार में पर्याप्त तत्परता एवं कार्य-शीलता दिखलाई। एक बार पार्मस्टन ने यह कहा था—वह समय शीघ्र ही आयेगा जब ग्लैडस्टन स्वेच्छानुसार कार्य करेगा। और जब कभी वह मेरा स्थान ग्रहण करेगा तभी अद्भुत कार्य होंगे। यह कथन सत्य निकला। उसका प्रथम मंत्रित्वकाल सुधारों का युग साबित हुआ।

नये श्रमिक मतादाताओं के समर्थन के ही कारण लिबरलों को बहुमत प्राप्त हो सका और वे मंत्रिमंडल बनाने में समर्थ हुए। डिसरैली के एक सहयोगी लो ने एक

* होमरूल

की। कमीशन की रिपोर्ट के आधार पर १८४२ ई० में एक माइन्स ऐक्ट पास हुआ जिसके द्वारा १० वर्ष से कम उम्र के लड़कों तथा स्त्रियों को खानों में काम करने की मनाही कर दी गई।

३ शिक्षा नियम *१८३३ ई०—इस कानून के द्वारा शिक्षा में सरकारी मदद का आरंभ हुआ। सरकार की तरफ से नागरिकों की शिक्षा के लिये देखभाल का यह प्रारंभ था। अब तक प्राथमिक शिक्षा के लिए दो प्राइवेट समितियों द्वारा स्कूल चलाये जा रहे थे। इन दोनों समितियों को दस दस हजार पौंड वार्षिक सहायता दी गयी। जैसे बच्चों के लिए जो कुछ समय ही कारखानों में काम करते थे कम से कम दो घंटे नित्य स्कूल जाना अनिवार्य कर दिया गया।

१८३६ ई० में सरकारी सहायता बढ़ा दी गयी और प्रिवी कौंसिल की एक समिति का निर्माण हुआ। सरकारी सहायता प्राप्त शिक्षालयों की देखभाल का अधिकार इसी समिति के हाथों में सौंपा गया। ऐसे शिक्षालयों की नियमित रूप से जाँच करने के लिए समिति ने इन्स्पेक्टरों की नियुक्ति की और इनकी रिपोर्ट के आधार पर ही शिक्षा का क्रमशः विकास होता गया। आधुनिक शिक्षा बोर्ड का मूल इसी समिति में निहित था।

४ इन्डिया चार्टर ऐक्ट १८३३—हिंदुस्तान की शासन प्रणाली की जाँच की गई और उसी आधार पर इन्डिया ऐक्ट पास हुआ। इस्ट इंडिया कम्पनी के हाथ से तिजारत हटा लिया गया। धर्म प्रचारक, शिक्षक तथा अन्य व्यापारियों के ऊपर हिंदुस्तान जाने के लिए जो प्रतिबंध था उसे हटा दिया गया। अब पाश्चात्य ख्यालों के लिये भारत का दरवाजा खोल दिया गया। नये नये सिद्धान्त कायम किये गये। सवर्ष होने पर भारतीय प्रजा के स्वार्थ का भी यूरोपियन प्रजा के स्वार्थ की तरह ही महत्व दिया गया। ऐसी घोषणा की गई कि जाति या धर्म के कारण किसी की नौकरी नहीं रोकी जायगी। इस प्रकार लार्ड कार्नवालिस की महान् भूल को दूर कर दिया गया।

५ दरिद्र विधान† ( १८३४ ई० )—सन् १६०१ ई० में ही रानी एलिजाबेथ के समय एक पुअर लॉ या दरिद्र विधान पास हुआ था। इसके अनुसार हर पैरिश को अपने इलाके के दरिद्रों की देख भाल की जिम्मेवारी मिली थी। इस कार्य के लिए निरीक्षक भी नियुक्त किये गये थे सभी दरिद्रों के खाने का प्रबन्ध कर दिया जाता था। कमजोर और निकम्मे लोगों से तो कोई काम नहीं लिया जाता था, परन्तु मजबूत और काम करने वाले लोगों से काम कराया जाता था। बच्चों को पहले काम

* एजुकेशन ऐक्ट

† पुअर लॉ

भी घोषणा की कि कन्जर्वेटिव पार्टी की नीति है—अंग्रेजी संस्थाओं को स्थायी रखना, अंग्रेजी साम्राज्य को सुरक्षित बनाना और जनसाधारण की स्थिति में सुधार लाना।

अतः १८७४ ई० में जब साधारण चुनाव हुआ तो उसमें ग्लैडस्टन की हार हो गई और कन्जर्वेटिव पार्टी विजयी हुई। डिसरैली प्रधान मन्त्री हुआ। १८४६ ई० के बाद पूरे २८ वर्षों के पश्चात् कन्जर्वेटिव पार्टी को वास्तविक अर्थ में सत्ता प्राप्त हुई। इसके सिवा डिसरैली को एक सुविधा और थी। वह महारानी का प्रियपात्र था और यह निश्चित था कि महारानी उसकी नीति का समर्थन करती।

४. डिसरैली का द्वितीय मंत्रिमंडल ( १८७४-८० ई० )—कन्जर्वेटिव पार्टी ने जन साधारण की स्थिति को सुधारने की अपनी प्रतिज्ञा पर पुनः आकृष्ट हुई। लिबरल लोग भी यही चाहते थे। डिसरैली ने अपनी गृहनीति को टोरी जनतंत्र कहा। वह टोरियों को सुधार का पक्षपाती बनाना चाहता था लेकिन टोरी लोगों का स्वाभाविक आकर्षण सुधार की ओर नहीं था। अतः इस काल में जो सुधार हुए वे लाभदायक होने पर भी डिसरैली की महत्ता नहीं प्रदर्शित कर सके। इसके सिवा उसके बहुत से सुधार अनिवार्य न होकर आज्ञाप्रद ही थे और लोग स्वेच्छानुसार उनका पालन करते या नहीं भी करते थे फिर भी उन सुधारों से मजदूरों की दशा में पर्याप्त परिवर्तन हुआ और जैसा कि १८७६ ई० में कामन्स सभा के एक श्रमिक सदस्य ने कहा था कि 'श्रमिक वर्ग के लिये कन्जर्वेटिव पार्टी ने पाँच वर्षों में ही उतना कार्य किया है जितना लिबरल पार्टी ५० वर्षों में कर पाती।'

१. संयुक्त नियम—१८७५ ई० में सर्वप्रथम एक संयुक्त नियम या कम्बिनेशन ऐक्ट पास किया गया। इसे श्रमिक वर्गों के लिये व्यावसायिक स्वतंत्रता का चार्टर भी कहा जाता है। इसके द्वारा व्यावसायिक संघों को पूर्णतया वैध करार दिया गया, हड़तालों को भी पूर्णतः कानूनी ठहराया गया तथा शांतिपूर्वक पिकेटिंग करना भी कानूनी घोषित कर दिया गया। यह कानून १८०० ई० के नियम का जिसमें व्यावसायिक संघ अवैध घोषित किया गया था तथा हड़ताल को षड्यन्त्र की संज्ञा दी गई थी, बिल्कुल उलटा रूप था।

२. सार्वजनिक स्वास्थ्य नियम—उसी साल एक सार्वजनिक स्वास्थ्य नियम या पब्लिक हेल्थ ऐक्ट पास हुआ। यह नियम आधुनिक निरोधात्मक औषधियों की प्रगति में बड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। बौरो तथा काउन्टी की समितियों को सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिये योजनायें बनाने का अधिकार दिया गया। प्रत्येक जिले में स्वास्थ्य-रक्षा के लिये एक-एक चिकित्सक-अफसर रखे गये। स्वास्थ्य सम्बन्धी कुछ नियम प्रचलित किये गये जिन्हें नियमित रूप से प्रत्येक गृह-स्वामी को मानना पड़ता

पर प्रिवी काउन्सिल के नियन्त्रण का अन्त हो गया था और उस समय से वे स्वतन्त्र ही थे। इसके बाद स्थानीय अधिकारियों के कार्यों पर नियन्त्रण रखने का राष्ट्रीय सरकार द्वारा यह प्रथम प्रयास था।

६ म्युनिसिपल-कारपोरेशन्स ऐक्ट (१८३४ ई०)—मेलबोर्न मंत्रिमंडल का सबसे महत्वपूर्ण कार्य म्युनिसिपल कारपोरेशन्स ऐक्ट पास करना ही था। शासकों के प्राचीन राजनैतिक एकाधिकार का अन्त कर देने की प्रवृति का प्रवेश स्थानीय सरकारों में भी हुआ। १८३५ ई० तक ब्रिटेन के शहर दो तरह के थे। जिन शहरों को प्राचीन चार्टर प्राप्त थे वे बोरो कहलाते थे। फिर बहुत से शहर ऐसे भी थे जिनका विकास औद्योगिक क्रांति के बाद हुआ था। बोरो का प्रबन्ध कारपोरेशनों के हाथ में था। इनमें भ्रष्टाचारी और अनुत्तरदायी एल्डरमैनों का प्रभुत्व था। कहीं-कहीं तो मध्ययुग के मेनर स्वामियों के उत्तराधिकारियों को ही असीम अधिकार प्राप्त थे। उनके सिवा कारपोरेशनों में थोड़े से विशेषाधिकार प्राप्त वर्गों का ही प्रतिनिधित्व होता था। इस कारण जनहित के कार्यों की प्रगति के लिये शायद ही कभी कोई योजना बनती थी। जिन शहरों का विकास आधुनिक युग में हुआ था उनमें कोई संगठित शासन प्रणाली नहीं थी। इनमें भी कहीं-कहीं मध्य युग वाली मेनर अदालतें ही स्थापित हो गयी थीं। शहरों में नालियों की सफाई तथा प्रकाश के प्रबन्ध जैसे जनहित के आवश्यक कार्य तो कभी होते ही नहीं थे। पार्लियामेंट ने स्थानीय कानूनों द्वारा कुछ खास-खास संस्थाओं को कहीं कहीं यह अधिकार भी दिया हुआ था। पर ये अधिकारी भी सुरचाप कान में तेल डाले बैठे रहते थे। इस तरह अधिकांश शहरों की स्थिति बड़ी ही खराब थी। सभी घरों का निर्माण अस्वास्थ्यकर तरीकों से हुआ था। जल पहुँचाने तथा सुरक्षा के लिये पुलिस का प्रबन्ध बिलकुल ही नैराश्यपूर्ण था। कहीं भी अच्छी नालियाँ नहीं थीं और जनता में स्वास्थ्य तथा नैतिकता का किसी को फिक्र नहीं था।

१८३५ ई० के इस कानून के द्वारा बोरो का शासन नगर समितियों या म्युनिसिपैलिटियों द्वारा होना निश्चित हुआ। इनके सदस्य प्रतिवर्ष किसी बोरो के निवासी या उसके ७ मील आसपास के रहने वाले सभी रेट देने वाले मर्दों द्वारा निर्वाचित कौन्सिलर होते थे। इन्हीं नगर-समितियों के द्वारा अब मेयर तथा एल्डरमैन चुने जाने लगे। अब नियमित रूप से कर्मचारियों की नियुक्ति होने लगी और बोरो के हिसाब किताब की सिलसिलेवार जाँच भी नियमित रूप से समय समय पर होने लगी। नगर-समितियों को शहरों में सफाई, प्रकाश आदि जनोपयोगी कार्यों के कराने और रेट वसूलने का अधिकार मिला।

इस तरह हम देखते हैं कि इस कानून के द्वारा नगर व्यवस्था की आधुनि

**ग्लैडस्टन का पद-त्याग**—अब १८८५ ई० तक ग्लैडस्टन मंत्रिमंडल की पूरी बदनामी होने लगी थी। वैदेशिक क्षेत्र में असफलता ही प्राप्त हो रही थी। मंत्रियों के बीच मतभेद फैला हुआ था। इसी साल जून में कामन्स सभा में बजट के सम्बन्ध में मंत्रिमंडल की हार हो गई जिससे ग्लैडस्टन को त्याग-पत्र देने के लिये बाध्य होना पड़ा। इसके बाद कन्जर्वेटिव नेता लार्ड सेलिसबरी ने अपना प्रथम मंत्रिमंडल कायम किया।

## ६. ग्लैडस्टन के उत्तरकालीन तथा अन्य मंत्रिमंडल ( १८८६—६४ ई० )

**ग्लैडस्टन का तीसरा मंत्रिमंडल (१८८६ ई०)**—हम देख चुके हैं कि वैदेशिक क्षेत्र में बदनामी एवं मंत्रिमंडल के सदस्यों में फूट हो जाने के बाद बजट के प्रश्न पर १८८५ ई० में ग्लैडस्टन को पदत्याग कर देना पड़ा था। तब कन्जर्वेटिव नेता मार्क्विस आफ सैलिसबरी प्रधान मंत्री हुआ लेकिन कुछ ही महीने के बाद नवम्बर में एक साधारण चुनाव हुआ। इसमें सैलिसबरी की हार हुई और ग्लैडस्टन के नेतृत्व में लिबरल ही विजयी हुए। अतः १८८६ के फरवरी में ग्लैडस्टन ने अपने तृतीय मंत्रिमंडल का निर्माण किया। शुरू में ही आयरिशों की समस्या को सुलझाने के लिये उसने अप्रैल में प्रथम होमरूल बिल पेश किया लेकिन इस प्रश्न पर लिबरलों में आपस में फूट हो गई। कई प्रसिद्ध ह्विग तथा रेडिकल नेताओं ने इसका विरोध किया। विरोधी पक्ष को ३० मत अधिक थे। अतः यह बिल अस्वीकृत हो गया। तब जुलाई में जनमत जानने के लिये एक नया चुनाव हुआ जिसमें ग्लैडस्टन के पक्षवाले लिबरलों की पराजय हो गई तथा १८८६ ई० में ही उसे पद-त्याग कर देना पड़ा।

तब लार्ड सैलिसबरी दूसरी बार प्रधान मंत्री हुआ और १८६२ ई० तक रहा। यह मंत्रिमंडल यूनियनिस्ट* मंत्रिमंडल कहलाता है।† आयरिश समस्या दिनों दिन प्रबल होती गई और यूनियनिस्ट मंत्रिमंडल इस मामले को सुलझाने में असफल रहा। उनकी माँगें उग्र रूप पकड़ती गईं तथा इधर ग्लैडस्टनपक्षी लिबरल दल ने भी पुनः शक्ति संचय कर लिया था। १८६२ ई० के नये साधारण चुनाव में यूनियनिस्ट लोग हार गये तथा आयरिशों की सहायता से ग्लैडस्टन की पुनः विजय हुई।

* कन्जर्वेटिव तथा रेडिकल पार्टी और कुछ अन्य लिबरल नेता ग्लैडस्टन के आयरिश होमरूल बिल के विरुद्ध थे। ये इंगलैंड और आयरलैंड का संयोग (यूनियन) कायम रखना चाहते थे। अतः ये सभी लोग मिलकर यूनियनिस्ट कहलाने लगे।

† इस मंत्रिमंडल के कार्यों पर अगले अध्याय में दृष्टिपात किया जायगा।

भाग में भेजी जाने लगी। अब गरीबों और मजदूरों को भी चिट्ठियाँ भेजने में आसानी हो गई और बहुत सी चिट्ठियाँ आने-जाने लगीं जिससे डाक की आमदनी बढ़ गई।

१२. कनाडा ऐक्ट १८४० ई०—सन् १८३६ ई० में कनाडा की स्थिति की जाँच करने के लिये डुरहम वहाँ भेजा गया। १८३६ ई० में उसने अपनी रिपोर्ट दी जिसके आधार पर १८४० ई० में कनाडा ऐक्ट पास हुआ। अपर और लोअर कनाडा को मिला दिया गया और वहाँ दो धारा सभाएँ कायम हुईं।

इसी युग में आस्ट्रेलिया में आन्तरिक हिस्से का पता लगाया गया और वहाँ उपनिवेश बसाये जाने लगे।

लार्ड ग्रे और मेलबोर्न की ह्विग सरकारों द्वारा ये ही सुधार किये गये। ग्रे सरकार से जिस सुधार युग का प्रारंभ हुआ वह आज तक वर्तमान है और इस बीच फैक्ट्री ऐक्ट, हेल्थ ऐक्ट तथा हाउसिंग ऐक्ट बने हैं। इनके द्वारा मूल कानूनों में भी बहुत से परिवर्तन हो गये हैं तथा सुधार की प्रगति हुई है। एक अंगरेज इतिहासकार के शब्दों में कहा जा सकता है कि 'जिस मंत्रिमंडल ने सुधार बिल पास किया, दास प्रथा का अन्त किया तथा स्थानीय सरकारों में सुधार प्रारंभ किया उसका स्थान हमारे इतिहास में बड़े से बड़े मंत्रिमंडलों में अवश्य ही होना चाहिये।'*

* कार्टर और मोयर्स

रहस्यमय नहीं बनने देता था और खुलेआम उनको प्रकट कर दिया करता था। इससे यदि उसे विरोध का भी सामना करना होता तो वह डरता नहीं था लेकिन फिर भी वह निरंकुश स्वभाव का नहीं था। अपने विरोधियों की नाड़ी पहचानने की उसमें शक्ति तथा उन्हें मिलाने की कोशिश करने में वह बाज नहीं आता था। कन्जर्वेटिव होते हुए भी वह अपनी नीति में सामयिक परिवर्तन करने को प्रस्तुत रहता था। देश की आवश्यकताओं को वह भली-भाँति समझता था तथा बड़ी ही बुद्धिमानी से कितनी ही समस्याओं को सुलझा सका।

३. सैलिसबरी का प्रथम एवं द्वितीय मंत्रिमंडल—हम देख चुके हैं कि १८८५ ई० में सैलिसबरी कुछ महीनों के लिये प्रधान मंत्री हुआ था और नवम्बर महीने के साधारण चुनाव में अल्पमत में हो जाने के कारण उसी साल पदत्याग कर दिया था। १८८६ ई० के नये निर्वाचन में ग्लैडस्टन के विपक्ष में उसे ११८ सदस्यों का प्रबल बहुमत प्राप्त हुआ और दूसरी बार प्रधान मंत्री बनाया गया। कन्जर्वेटिव पार्टी तथा कुछ अन्य लिबरल सदस्य आयरिश होमरूल के पक्ष में नहीं थे और वे इङ्गलैंड तथा आयरलैंड के संयोग को कायम रखना चाहते थे। ये यूनियनिस्ट कहलाते थे। यद्यपि इस समय कन्जर्वेटिव पार्टी तथा लिबरल यूनियनिस्टों में कटुता का भाव आ गया था तथापि सैलिसबरी को वैसे लिबरलों का सहयोग भी प्राप्त था। अतः यह प्रथम यूनियनिस्ट मंत्रिमंडल के नाम से मशहूर है। इसमें जार्ज जे० गोशेन, विलियम हेनरी स्मिथ, आर्थर जे० बाल्फोर जैसे तत्कालीन प्रमुख कंजर्वेटिव नेताओं की ही प्रधानता थी फिर भी इस मंत्रिमंडल ने कई बड़े महत्त्वपूर्ण सुधार किये।

( क ) आयरिश समस्या का समाधान—इस समय आयरिश समस्या प्रबल हो गई थी। वहाँ के किसान जमींदारों द्वारा बेदखल किये जाने पर दंगा करने लगे थे। परिस्थिति दिनों-दिन भयावह होती जा रही थी। सरकार ने इसे सुलझाने की कोशिश की। उसने सुधार और दमन दोनों ही नीतियों का आश्रय लिया। अराजकता फैलाने वाले लोगों को पकड़कर कैद किया जाने लगा और कठोर सजाओं के द्वारा उन्हें दबाने का प्रयत्न किया गया। लेकिन सैलिसबरी ने केवल निरोधात्मक मार्ग का ही अनुसरण नहीं किया। शान्तिस्थापना के लिये उसने रचनात्मक कार्य भी किया। आयरिशों के लाभ के लिये भूमि सम्बन्धी कानून बनाये गये। खेती में उन्नति की गई। सड़क तथा रेलों का निर्माण हुआ। इस प्रकार सरकार शान्ति स्थापित करने में सफल हुई।

( ख ) रानी विक्टोरिया की स्वर्ण जयन्ती—१८८७ ई० में महारानी विक्टोरिया को शासन करते ५० वर्ष हो चुका था। अतः इस साल अंग्रेजों ने बड़े ही धूमधाम से महारानी की स्वर्ण जयन्ती मनाई।

१ बेल्जियम की स्वतंत्रता—१८१५ ई० की वियना सन्धि के अनुसार बेल्जियम और हालैंड को मिलाकर नीदरलैंड का एक संयुक्त राज्य कायम हुआ। किन्तु दोनों के बीच जातीय तथा सांस्कृतिक भेद था और बेल्जियम इस संयोग से संतुष्ट न था क्योंकि इसमें हालैंड का ही प्रधानता थी। १८३० ई० की क्रांति के फलस्वरूप बेल्जियमों ने अपनी स्वतंत्रता घोषित कर ली। उन्हें फ्रांसीसियों की सहानुभूति प्राप्त थी। इससे इंगलैंड को यह आशंका थी कि स्वतंत्र बेल्जियम में फ्रांस की प्रधानता हो जायगी जिससे उसका पूर्वी तट सुरक्षित न रह जायगा। अतः पामर्स्टन ने इस अवसर पर अपनी बड़ी बुद्धिमानी दिखलाई। उसने बेल्जियम की स्वतंत्रता स्वीकार कर ली और वहाँ फ्रांस का प्रभाव भी नहीं जमने दिया। १८३१ ई० में उसने लंदन में एक सभा की जिसमें यूरोप के सभी प्रमुख राष्ट्र सम्मिलित थे। इस सभा में बेल्जियम की स्वतंत्रता स्वीकृत कर ली गई और वहाँ की गद्दी पर सेक्सकों वर्ग कालगौरोल्ड बैठाया गया जो रानी विक्टोरिया का चाचा और लुई फिलिप का दामाद होता था। डचों ने इसका विरोध करना चाहा किन्तु फ्रांस ने उन्हें ऐसा नहीं करने के लिये प्रभावित किया। १८३६ ई० में लंदन में यूरोपियन राष्ट्रों की पुनः एक सभा की गई। इसमें बेल्जियम के राज्य की नई सीमा निश्चित की गई और उसकी तटस्थता स्वीकार की गई। इस तरह बेल्जियम में एक स्वतंत्र राज्य का निर्माण हुआ, और फ्रांस का वहाँ इंच भर जमीन भी न मिली। यह स्थिति १९१४ ई० तक कायम रही। इस प्रकार वियना समझौते के एक प्रमुख भाग का सर्वप्रथम अंत हुआ।

२ स्पेन तथा पुर्त्तगाल की समस्याएँ—अब पामर्स्टन का ध्यान स्पेन तथा पुर्त्तगाल की समस्याओं की ओर आकृष्ट हुआ। स्पेन में इसाबेला और पुर्त्तगाल में मेरिया शासन कर रही थीं। ये दोनों रानियाँ सुधारवाद और वैधानिकता के पक्ष में थीं और सुधारवादी नरम दल के लोगों का इन्हें समर्थन भी प्राप्त था। दोनों रानियों के चाचा इनका विरोध कर रहे थे। इसाबेला का चाचा डौन कार्लो और मेरिया का डौनमिगुइल था। दोनों ही प्रतिक्रियावादी थे और इन्हें प्रतिक्रियावादियों का समर्थन भी प्राप्त था। पामर्स्टन ने दोनों चाचाओं के विरुद्ध दोनों रानियों की सहायता की। मिगुइल के विरुद्ध एक सेना भेजी गयी और उसे पुर्त्तगाल से भागना पड़ा। इस प्रकार रानी मेरिया का राज्याधिकार सुरक्षित हुआ। स्पेन में भी पामर्स्टन को अपनी नीति में सफलता मिली। १८३३ ई० में स्पेनी पार्लियामेंट कोर्टेज ने इसाबेला को रानी और उसकी माता क्रिश्चियनियाँ को संरक्षक नियुक्त किया। अब डौन कार्लो भाग कर पुर्त्तगाल चला गया किन्तु उसका उत्पात जारी रहा। १८३६ ई० में उसके राज्याधिकार का अन्त कर दिया गया और इसके तीन वर्षों के बाद उसके समर्थकों की हार हो गई। १८४३ ई० में इसाबेला का राज्याधिकार भी सुरक्षित हो गया।

विस्तार की उत्कट आकांक्षा नहीं थी। अतः पील सरकार की नीति शांति, संयम तथा न्याय की ही नीति रही। इससे इङ्गलैंड यूरोप में सम्मान तथा प्रशंसा का पात्र बन गया।

**चीनी युद्ध ( १८४०-४२ ई० )**—चीन के साथ जो युद्ध चल रहा था उसका अब अन्त कर दिया गया। १८४२ ई० में नानकिंग की सन्धि हुई। इसके द्वारा इङ्गलैंड को हांगकांग का प्रदेश प्राप्त हुआ। चीनियों ने अंग्रेजों को पाँच बन्दरगाहों में व्यापार करने की अनुमति दे दी और युद्ध की क्षतिपूर्ति के लिये वे कुछ रकम भी देने के लिये बाध्य हुए।

**अफगानिस्तान में शान्ति स्थापना**—अफगानिस्तान की भयंकर स्थिति में भी सुधार हुआ। वहाँ अंग्रेजों की प्रतिष्ठा में बड़ा ही धक्का लग रहा था। अफगानों ने उनके कई सैनिकों को मार डाला था। अंग्रेजी राजदूत की भी हत्या कर दी गई थी। इसी समय १८४२ ई० में लार्ड एलेनबरा हिन्दुस्तान का गवर्नर जेनरल बनाकर भेजा गया। अफगानिस्तान में एक अंग्रेजी सेना भेजी गई जिसने कंधार और काबुल पर दखल जमा लिया लेकिन शीघ्र ही इन जगहों को खाली करना पड़ा। दोस्त मुहम्मद को जो अंग्रेजों का प्रतिनिधि नहीं था, अफगानिस्तान का अमीर मान लिया गया। इस तरह अफगानिस्तान में शान्ति की व्यवस्था कर दी गई।

**सिन्ध पर हमला**—१८४३ ई० में सिन्ध पर भी अंग्रेजों ने हमला कर दिया और वहाँ के अमीर को हटाकर उसे अंग्रेजी राज्य में मिला लिया। १८४५ ई० में प्रथम आंग्ल सिक्ख युद्ध हुआ जिसमें सिक्खों की हार हो गई। लेकिन पंजाब अंग्रेजी राज्य में नहीं मिलाया जा सका फिर भी वह अंग्रेजों का आश्रित बन गया।

**फ्रांस के साथ मित्रता**—पामर्स्टन के समय फ्रांस के साथ सम्बन्ध विच्छेद होने की नौबत पहुँच गई थी। किन्तु पील मंत्रिमंडल के समय दोनों देशों के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो गया। इसका परिचय इसी बात से मिल जाता है कि रानी विक्टोरिया फ्रांस गई थी और वहाँ का शासक लुई फिलिप इङ्गलैंड घूमने के लिये आया था लेकिन दोनों देशों का सम्बन्ध पूर्ण रूप से गहरा न था। कभी-कभी किसी न किसी बात को लेकर दोनों के बीच वाद-विवाद होने लगता था।

**नेटाल पर अधिकार**—इसी समय दक्षिणी अफ्रीका में नेटाल भी अंग्रेजी राज्य में मिला लिया गया था जो आगे चल कर अंग्रेजों के लिये बड़ा ही उपयोगी सिद्ध हुआ।

**अमेरिका के साथ सीमान्त झगड़ों का अन्त**—इसी समय अमेरिका के साथ झगड़े का भी सफलतापूर्वक अन्त कर दिया गया। अमेरिका के साथ तीन सीमाओंपर इङ्गलैंड का झगड़ा था। ( क ) कनाडा और मेन स्टेट के बीच, ( ख ) प्रशान्त

सशंकित हो वहाँ के अमीर दोस्त मुहम्मद को गद्दी से हटाकर शाहशुजा को अमीर बनाना चाहा जो उसके पक्ष का था तथा भारत में ही निर्वासित कर दिया गया था। १८३६ ई० में ऑकलैंड को इसमें सफलता भी मिली। लेकिन अफगान इससे असन्तुष्ट हो गये और विद्रोह कर दिया। पामर्स्टन इसको दबाने का प्रयत्न कर ही रहा था कि १८४१ ई० में मेलबोर्न मन्त्रिमंडल का पतन हो गया और पामर्स्टन को भी इस संकट पूर्ण स्थिति में ही विदेशी विभाग से अलग हो जाना पड़ा।

एक भयानक विद्रोह की आग भड़क उठी। पामर्स्टन की सरकार ने उसका भी सफलतापूर्वक सामना किया और उसे दबा कर भारत में अंग्रेजी साम्राज्य की नींव सुदृढ़ कर दी।

किन्तु १८५८ ई० में वह बड़ी ही कठिनाई में पड़ गया। इस साल ओर्सीनी नाम के एक इटालियन ने फ्रांसीसी सम्राट नेपोलियन तृतीय की हत्या करने के लिये एक षड्यन्त्र किया जिसका सूत्रपात इंगलैंड में ही हुआ था। फ्रांस ने इसका विरोध किया। अतः अपनी सफाई दिखलाने के लिये पामर्स्टन ने षड्यन्त्रकारियों के विरुद्ध एक 'हत्या का षड्यंत्र बिल' उपस्थित किया। कामन्स सभा ने बिल को स्वीकार नहीं किया जिसके फलस्वरूप पामर्स्टन को त्याग-पत्र दे देना पड़ा लेकिन कुछ ही समय के बाद १८५६ ई० में वह पुनः प्रधान मंत्री बनाया गया।

पुनः इटली—इस समय इटली का स्वातन्त्र्य संग्राम बड़े जोर के साथ चल रहा था। पामर्स्टन ने इस संग्राम का समर्थन किया। फ्रांस इसमें बाधा देना चाहता था लेकिन पामर्स्टन ने उसे सहयोग नहीं दिया। वह तो इटालियनों को सक्रिय सहायता देना चाहता था। लेकिन महारानी के रुख के कारण ऐसा नहीं कर सकता था। अतः वह नैतिक समर्थन ही दे सका और यूरोप के दूसरे राज्यों को इटली में हस्तक्षेप नहीं करने दिया। उसकी इस नीति से इटली के नेताओं को बड़ी ही मदद मिली। गैरीबाल्डी ने नेपुल्स पर अधिकार कर लिया और सार्डीनिया का राजा इटली का राजा घोषित कर दिया गया। अब १८६० ई० तक वेनिस तथा रोम को छोड़ कर इटली के अन्य सभी भाग सार्डीनिया के राजा के अधीन कर दिये गये।

अमेरिका के गृहयुद्ध ( १८६१-६५ ई० )—सन् १८६१ ई० में अमेरिका के उत्तरी एवं दक्षिणी रियासतों में गृह-युद्ध छिड़ गया। प्रश्न था कि दक्षिणी रियासतों को संघ से अलग होने एवं अपने यहाँ गुलामों का व्यापार जारी रखने का अधिकार है अथवा नहीं। पाँच वर्षों ( १८६५ ई० ) तक यह युद्ध चलता रहा। इसमें ग्रेट ब्रिटेन की सहानुभूति दक्षिणी रियासतों की तरफ थी। इसके कई कारण थे। दक्षिणी रियासतें कमजोर थीं फिर भी लड़ाई में उन्होंने साधारण बहादुरी दिखलायी। साथ ही अंग्रेजी स्वार्थ भी लगा हुआ था। उत्तरी रियासतों ने दक्षिणी रियासतों के बन्दरगाहों को घेर लिया था और लंकाशायर में रुई आना बन्द हो गया था। अतः व्यापारिक स्वार्थ ही सर्वप्रधान कारण था। इस युद्ध में दो घटनाएँ ऐसी घटीं जिनका ठीक से संचालन न हो सका।

एक बार दक्षिणी रियासतों के दो एजेन्ट ट्रेन्ट नाम के एक ब्रिटिश जहाज पर यूरोप या इंगलैंड में सहायता के लिये जा रहे थे। उत्तरी रियासत वालों ने ट्रेन्ट को रोक कर उस पर से इन एजेंटों को उतार कर कैद कर लिया। ब्रिटिश सरकार ने

१८४१ ई० में सर राबर्ट पील ने कन्जर्वेटिव मंत्रिमंडल कायम किया। यह मंत्रि-मंडल कॉर्न लॉ की समाप्ति तथा अन्य आर्थिक सुधारों के लिये प्रसिद्ध है। १८४६ ई० में इसका पतन हो गया। पील की नीति के कारण कन्जर्वेटिव पार्टी दो भागों में बँट गई थी। अतः अब लार्ड जॉन रसल के नेतृत्व में ह्विग मन्त्रिमंडल कायम हुआ। यह १८५२ ई० तक यानी ६ वर्षों तक कायम रहा। रसल का पामर्स्टन से मतभेद होने के कारण ही इस मन्त्रिमंडल का पतन हुआ था। १८५२ ई० में लार्ड एबरडीन के नेतृत्व में पील के समर्थकों और ह्विगों का संयुक्त मंत्रिमंडल कायम हुआ। जो तीन वर्षों तक चला। क्रीमिया के युद्ध में कुप्रबन्ध के कारण १८५५ ई० में यह मन्त्रिमंडल समाप्त हो गया और लार्ड पामर्स्टन प्रधान मंत्री बनाया गया। पामर्स्टन का यह कन्जर्वेटिव मन्त्रिमंडल दस वर्षों तक चलता रहा। यह क्रियाशील वैदेशिक नीति के लिये विशेष प्रसिद्ध रहा है। १८६५ ई० में पामर्स्टन की मृत्यु हो गई और लार्ड जॉन रसल दूसरी बार प्रधान मन्त्री हुआ। इसने दूसरा सुधार बिल पास करना चाहा किन्तु अपने ही दल में मतभेद हो जाने के कारण १८६६ में उसे पद त्याग कर देना पड़ा। तब लार्ड डर्बी ने अपना तृतीय कन्जर्वेटिव मंत्रिमंडल कायम किया। इसी समय १८६७ ई० में दूसरा सुधार बिल पास हुआ। इसी साल डर्बी की मृत्यु भी हो गई और डिसरैली प्रधान मंत्री हुआ। किन्तु दूसरे ही साल के साधारण चुनाव में कन्जर्वेटिव पार्टी की हार हो गई। लिबरल पार्टी बहुमत में आई और ग्लैडस्टोन ने प्रथम लिबरल मंत्रिमंडल कायम किया। इस समय तक अन्य सभी राजनीतिज्ञ इस संसार से चल बसे थे और डिसरैली तथा ग्लैडस्टोन नामक दो पारस्परिक विरोधी नेताओं के प्रभुत्व के लिये रास्ता खुल गया। १८७४ ई० के चुनाव में लिबरल पार्टी की हार हो गई और डिसरैली ने अपना द्वितीय कन्जर्वेटिव मंत्रिमंडल कायम किया जो ६ वर्षों तक चलता रहा। १८८० के चुनाव में कन्जर्वेटिव पार्टी की हार हो गई और ग्लैडस्टोन ने अपना द्वितीय लिबरल मंत्रिमंडल कायम किया जो पाँच वर्षों तक रहा। १८८६ ई० में ग्लैडस्टोन ने तृतीय लिबरल मन्त्रिमंडल कायम किया किन्तु होमरूल बिल के प्रश्न पर उसे शीघ्र ही पद त्याग करना पड़ा और लार्ड सेलिसबरी ने कन्जर्वेटिव मन्त्रिमंडल कायम किया जो ६ वर्षों तक चलता रहा। १८९२ ई० में ग्लैडस्टोन ने अपना चतुर्थ लिबरल मन्त्रिमंडल कायम किया किन्तु होमरूल बिल के प्रश्न पर ही फिर १८९५ ई० में पद त्याग करना पड़ा। इसके बाद पुनः कन्जर्वेटिव मन्त्रिमंडल कायम हुआ जो दस वर्षों तक चलता रहा। प्रथम सात वर्षों तक ( १८९५ १९०२ ई० ) लार्ड सेलिसबरी और उसके बाद ३ वर्षों तक ( १९०२ ०५ ई० ) लार्ड बाल्फर प्रधान मंत्री रहे थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विक्टोरिया पूर्णतया वैधानिक शासिका थी। इस

शक्तियों का एक सम्मेलन बुलाया गया और इस झगड़े का अन्त करने के लिये यह तय किया गया कि लक्जेम्बर्ग हालैंड के अधिकार में रहे। इस समय युद्ध तो टल गया था—लेकिन इससे समस्या का समाधान नहीं हुआ। १८७० ई० में स्पेन का सिंहासन खाली पड़ गया। वहाँ की सरकार ने प्रशन राजा विलियम के एक सम्बन्धी ल्योपोल्ड को अपना राजा चुना। इसपर फ्रांस ने हस्तक्षेप किया। प्रशन बादशाह विलियम ने ल्योपोल्ड को स्पेन का राजत्व स्वीकार करने से मना कर दिया लेकिन फ्रांस इतने से ही शांत नहीं हुआ। उसने प्रशा पर दबाव दिया कि वह यह प्रतिज्ञा करे कि प्रशन सरकार कभी भी ल्योपोल्ड का साथ नहीं देगी। प्रशा के बादशाह ने ऐसी प्रतिज्ञा नहीं की तब फ्रांस ने जुलाई १८७० ई० में युद्ध घोषित कर दिया। बिस्मार्क तो यह चाहता ही था लेकिन उसने ऐसी धूर्त्तता की ताकि दुनिया की आँखों में फ्रांस ही आक्रमणकारी दीख पड़े।

इस युद्ध में फ्रांसीसी सेना की स्थिति अच्छी नहीं थी। प्रशा की सेना सुव्यवस्थित एवं अधिक संख्या में थी। अतः फ्रांस अपनी योजना के अनुसार बर्लिन पर आक्रमण नहीं कर सका और उसके सैनिकों को आल्सस लोरेन में ही लड़ने को बाध्य होना पड़ा। अगस्त में सारब्रुकेन की एक छोटी लड़ाई में फ्रांसीसी विजयी हुए लेकिन उसके बाद विजिनबर्ग, वौर्थ और स्पीक्रेन के युद्धों में उनकी पराजय हुई। जर्मन सेना की प्रगति को फ्रांसीसी रोक नहीं सके और सेडान की लड़ाई में महान् सफलता मिली। फ्रांसीसी सेनापति वेजेन घेर लिया गया। वेजेन को छुड़ाने के प्रयास में नेपोलियन स्वयं घिर गया और उसे आत्मसमर्पण करने को बाध्य होना पड़ा। कुछ महीनों के बाद १८७१ ई० में पेरिस का पतन हो गया। मई महीने में फ्रैंकफर्ट की सन्धि हुई जिसमें फ्रांस को २० करोड़ पौंड हरजाना तथा आल्सस एवं लोरेन जर्मनी को दे देने के लिये बाध्य होना पड़ा।

**युद्ध का परिणाम**—( क ) अब फ्रांस को प्रजातंत्र राज्य घोषित किया गया। ( ख ) जर्मनी की सारी रियासतें एक सूत्र में आबद्ध हो गयीं और प्रशा के राजा को जर्मनी का सम्राट घोषित किया गया। ( ग ) इसी समय फ्रांसीसी सेना के हार जाने पर इटली की सेना ने रोम पर अपना अधिकार कर लिया था और इटली का संयुक्त राज्य कायम हो गया।

इस तरह हम देखते हैं कि इस युद्ध के परिणाम बड़े ही महत्त्वपूर्ण साबित हुए। इस काल में इंगलैंड में ग्लैडस्टन का मंत्रिमंडल काम कर रहा था। उपर्युक्त युद्धों के सिवा उसके समय में विदेशों में और भी कई ऐसी घटनाएँ घटी जिसका इङ्गलैंड से सीधा सम्बन्ध था।

**रूस द्वारा पेरिस की संधि का भंग**—सन् १८७१ ई० में रूस ने १८५६ ई०

## अध्याय ३६

# सर राबर्ट पील का कन्जर्वेटिव मन्त्रिमंडल (१८४१—४६ ई०)

राजनीतिक जीवनी—पील एक धनी व्यापारी का लड़का था जो लंकाशायर का निवासी था। उसका जन्म १७८८ ई० में हुआ था। उसने हैरो और आक्सफोर्ड में अच्छी शिक्षा प्राप्त की। उसका विद्यार्थी जीवन बड़ा ही प्रतिभाशाली था। छोटे पिट के जैसा लड़कपन से ही उसे राजनीतिक जीवन के लिये प्रवृत्ति थी। उसका सम्पूर्ण वयस्क जीवन राजनीति में ही बीता और वह अधिक समय तक शासन क्षेत्र में ही रहा। १८०६ ई० में उसके पिता ने उसके लिये आयरलैंड में एक रौटेन बौरो खरीद लिया। तभी समय वह पार्लियामेंट का सदस्य हुआ। उसके भाषण जोरदार होते थे। उसका प्रथम भाषण ही बड़े पिट के भाषण के बाद सर्वोत्तम माना गया। एक ही साल में वह अंडर सेक्रेटरी और स्टेट के पद पर पहुँच गया। १८१२ ई० में वह आयरलैंड का चीफ सेक्रेटरी नियुक्त हुआ जबकि संयोग से वहाँ बड़ा ही असन्तोष फैला हुआ था। फिर भी पील ने ६ वर्षों तक इस पद पर रहकर वहाँ अच्छी ख्याति प्राप्त की। १८१६ ई० में उसने इंगलैंड के बैंक को नकदी चुक्ती के लिये विवश कर प्रसिद्धि प्राप्त की। १८२२ ई० में लिवरपूल के पुनर्संगठित मन्त्रिमंडल में वह गृह-मन्त्री नियुक्त हुआ और इसी समय उसने दंड विधान में महत्वपूर्ण सुधार किया। अपने बुद्धिमत्तापूर्ण शासन से उसने सरकार में जनता का विश्वास स्थापित किया। १८२८ ई० में वेलिंगटन मन्त्रिमंडल में वह कामन्स सभा का नेता चुना गया और इस समय इसने मेट्रोपोलिटन पुलिस का निर्माण किया। १८२६ ई० में कैथो लिक मुक्ति नियम के पास होने में भी इसने हाथ बँटाया। १८३० ई० से वह सर-राबर्ट पील कहा जाने लगा। १८३०-४१ ई० के ह्विग आधिपत्य के समय उसने टोरी पार्टी को संगठित किया। इस पार्टी की नीति परिवर्तित हो गई और अब यह निश्चित रूप से कन्जर्वेटिव पार्टी कहलाने लगी। उसने सुशासन और सुदृढ़ राजस्व की स्थापना सामान्य सुधार तथा चर्च और राज्य में प्रचलित विधान की सुरक्षा के लिये अपनी पार्टी की नीति निर्धारित की। उसके विरोधियों ने उसे बदनाम करना चाहा लेकिन वह क्रमश लोकप्रिय होता गया। ग्लैडस्टोन और डिसरैली जैसे होनहार व्यक्तियों की सेवाएँ भी इसे प्राप्त थीं। १८३४-३५ ई० में चार महीनों के लिये वह प्रधान मन्त्री हुआ था। किन्तु कॉमंस सभा में बहुमत न रहने के कारण उसे पद-त्याग करना पड़ा। १८३६ में वह पुन प्रधान मन्त्री हुआ था लेकिन बेड चेम्बर समस्या के कारण

हुआ और तुर्की-साम्राज्य छिन्न-भिन्न होने से बच गया। इस कांग्रेस में डिसरैली की नीति सफल रही, उसने इसे 'सम्मानपूर्ण सन्धि' कहा और इस पर उसने बड़ा हर्ष प्रकट किया।

द्वितीय अफगान युद्ध—१८७८-८० ई० के निकट पूर्व में रूस की प्रगति में बाधा पड़ने पर मध्य और सुदूर पूर्व की ओर उसका ध्यान आकृष्ट हुआ। अफगानिस्तान का अमीर रूस का समर्थक था। अतः तत्कालीन वायसराय लार्ड लिटन ने द्वितीय अफगान युद्ध शुरू कर दिया। अफगान हार गये और अंग्रेजों ने अपने पक्ष के अमीर को गद्दी पर बैठाया किन्तु अफगानों ने शीघ्र विद्रोह कर दिया और अंग्रेजों को वहाँ से अपनी जान बचाकर हटना पड़ा।

दक्षिण अफ्रीका में युद्ध—दक्षिण अफ्रीका में जुलुओं और बोअरों के बीच कटु-भावना फैल रही थी। इससे भयभीत हो बोअर रिपब्लिक ट्रान्सवाल अंग्रेजी राज्य में मिला लिया गया। इसके फलस्वरूप १८७९-८० ई० में आंग्ल-जुलु युद्ध हुआ जिसमें जुलु पराजित हुए और उनका राज्य ब्रिटिश राज्य में मिला लिया गया लेकिन जुलुओं की पराजय से स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए बोअरों को प्रोत्साहन मिल गया।

प्रशान्त समुद्र पर अंग्रेजी धाक—इसी समय पहले-पहल प्रशान्त समुद्र पर भी अंग्रेजों के आधिपत्य का प्रारंभ हुआ।

इस तरह डिसरैली का मंत्रित्व-काल वैदेशिक-क्षेत्र में बड़ा ही महत्वपूर्ण रहा। ग्रेट ब्रिटेन को भौतिक लाभ हुए और उसकी मान प्रतिष्ठा में बड़ी ही वृद्धि हुई फिर भी उसकी दुस्साहसपूर्ण वैदेशिक तथा साम्राज्यवादी नीति से उसकी बदनामी भी होने लगी थी और ग्लैडस्टन ने उसके विरुद्ध खूब प्रचार किया। अतः १८८० ई० के चुनाव में उसकी हार हो गयी और ग्लैडस्टन प्रधान मन्त्री हुआ।

ग्लैडस्टन का द्वितीय मंत्रिमंडल १८८०-८५ ई०—ग्लैडस्टन को दूसरे मंत्रिमंडल के समय बड़ी ही भयानक परिस्थिति का सामना करना पड़ा। इस काल में वह प्रायः असफल ही रहा। दक्षिण अफ्रीका और मिश्र में डिसरैली की नीति का फल ग्लैडस्टन को भोगना पड़ा।

दक्षिण अफ्रीका—दक्षिण अफ्रीका में बोअरों ने ट्रान्सवाल की स्वतंत्रता की माँग उपस्थित की। उनकी माँग की पूर्ति में विलम्ब होने पर उन्होंने विद्रोह कर डाला और एक अंगरेजी सेना को मंजूबा की पहाड़ी पर १८८१ ई० में परास्त कर डाला। इस पर ग्लैडस्टन ने रॉबर्टस के अधीन एक सेना भेजी लेकिन यह सेना अभी रास्ते में ही थी कि ग्लैडस्टन ने सन्धि कर लेने की बात सोची। अतः १८८१ ई० में ही प्रिटोरिया की सन्धि हो गई जिसके द्वारा ट्रान्सवाल स्वतन्त्र कर दिया गया लेकिन

की जनसंख्या का ,¹⁄₈ भिखमगा हो गया था। राष्ट्रीय लगान में घाटा हो रहा था। केवल मैनचेस्टर में ही ११६ मिल बन्द हो गये थे। कृषि तथा व्यवसाय में मंदी के कारण बेकारी की समस्या भीषण हो गई थी। सर्वत्र दंगे और विद्रोह हो रहे थे। उसके अपने ही शब्दों में अथल अभाव के तट पर रिक्त कोष पर बैठे हुए वह बजट रूपी मछली का शिकार करने के लिये चिन्तित था।*

इन समस्याओं को हल करने के लिये एक सुयोग्य और निपुण व्यक्ति की आवश्यकता थी। पील ने इसके लिये अपने को उपयुक्त व्यक्ति साबित किया। उसका यह दृढ़ विश्वास था कि वाणिज्य व्यवसाय के द्वारा ही ग्रेट ब्रिटेन एक महान् राष्ट्र बन सकता है। अत उसने सर्वप्रथम आर्थिक सुधारों पर ही अधिक जोर दिया और इसी दिशा में उसे पर्याप्त सफलता भी मिली।

आर्थिक सुधार—पील प्रधान मंत्री तो था ही, अर्थ सचिव भी वही था। वह अर्थशास्त्र का अच्छा ज्ञाता था। वह आडम स्मिथ का शिष्य था। प्रारंभ में तो वह संरक्षण नीति का ही समर्थक था किन्तु बाद में स्वतन्त्र व्यापार की नीति को मानने लगा। तत्कालीन शुल्क सूची बड़ी ही दूषित थी। १८४० ई० में आयात की प्राय प्रत्येक वस्तु पर टैक्स लगता था और सूची में ऐसे १२०० वस्तुओं के नाम थे। चीजों की महँगी के कारण माँग कम हो गयी थी और पूर्ति माँग से अधिक थी। इन सभी दोषों के निराकरण का उनकी समझ में एक ही उपाय था और वह था स्वतन्त्र व्यापार का प्रचलन। अपने मंत्रित्व काल में उसने लगभग १००० वस्तुओं पर की चुंगी को कम कर दिया तथा ६०० के लगभग चुंगियों को एक दम हटा दिया। फलस्वरूप अब उत्कर्ष की लम्बी अवधि का प्रारम्भ हुआ। स्वदेश तथा विदेशों में सर्वत्र अंग्रेजी माल सस्ते हो गये और अधिक आसानी से इनकी बिक्री बढ़ गई। आयात और निर्यात में असीम वृद्धि होने लगी। इस तरह संकट और बेकारी की समस्या का बहुत कुछ समाधान होने लगा। बाहरी दृष्टि से तो ये परिवर्त्तन साधारण दीख पड़ते थे पर वास्तव में इन परिवर्त्तनों ने ही एक ऐसी क्रांति का श्रीगणेश किया जिसके परिणाम के विषय में कोई अनुमान ही नहीं कर सकता। हसकिसन और पील द्वारा प्रारंभ किये गये कार्य को ग्लैडस्टोन ने पूरा किया और इंगलैंड एक स्वतन्त्र व्यापार वाला देश हो गया।

चुंगी को कम करने तथा हटाने के कारण राष्ट्रीय आय में जो कमी हुई उसकी पूर्ति के लिये पील ने एक दूसरा तरीका अपनाया। साथ ही सबों पर टैक्स का बोझ समान करने के खयाल से भी यह तरीका उपयुक्त था। जिन व्यक्तियों की वार्षिक आमदनी १५० पौंड या इससे अधिक थी उनकी आय पर ७ पेंस प्रति पौंड के हिसाब से

* विदेशी समस्याओं के लिये देखिये, वैदेशिक नीति

लियन शामिल थे और यूनान का राजकुमार वहाँ का एक गवर्नर नियुक्त कर दिया गया। अब सुल्तान के अत्याचारी शासन से क्रीट स्वतन्त्र हो गया।

**ब्रिटिश गिनी की सीमा पर अमेरिका से मतभेद**—ब्रिटिश गिनी की सीमा पर अमेरिका से ब्रिटेन का मतभेद हो गया। अमेरिका ने ब्रिटिश गिनी से ही सब अंग्रेजों को हटा देना चाहा। इसे अंग्रेजों ने अपमानसूचक समझा और इसका विरोध किया। इस झगड़े का पंचायत के द्वारा निर्णय कर दिया गया और दोनों देश सन्तुष्ट हो गये।

**मिश्र और सूडान के प्रश्न**—मिश्र तथा सूडान का प्रश्न फिर से उपस्थित हो गया था। मिश्र की प्रगति हो रही थी और किचनर ने एक सुव्यवस्थित सेना स्थापित करली थी। महदी के आधिपत्य काल में मिश्र में संघर्ष चलता रहा। उसके मरने पर एक खलीफा उसकी जगह पर कार्य करने लगा। १८६८ ई० में किचनर ने सूडान पर आक्रमण कर दिया और सूडानियों को हराकर १८६६ ई० में इंगलैंड तथा मिश्र का संयुक्त शासन पुनः स्थापित कर लिया।

**अंग्रेजों की सफलता से फ्रांसीसियों की डाह**—मिश्र तथा सूडान में अंग्रेजों की सफलता से फ्रांसीसी जलने लगे थे। उनकी प्रगति रोकने के लिये फ्रांसीसियों ने फ्रांसीसी काँगो से अपने सेनापति मार्चैंड को भेजा। मार्चैंड ने खार्तूम से दक्षिण फैशोडा पर धावा बोल कब्जे में कर लिया। किचनर ने उसका सामना किया। फ्रांस में बड़ी हलचल मच गई किन्तु १८६६ ई० में फ्रांस को ही झुकना पड़ा। उसने अपनी सेना वापस बुला ली और सम्पूर्ण नील-प्रदेश अंग्रेजों का प्रभाव क्षेत्र मान लिया गया।

**बोअर युद्ध ( १८६६-१६०२ ई० )**—दक्षिण अफ्रीका में भी भीषण स्थिति का प्रादुर्भाव हुआ। ट्रान्सवाल में सोने की खान मिलने से वहाँ विदेशियों का ताँता लग गया। वहाँ के बोअर उनसे भयभीत होने लगे और उन्हें किसी प्रकार की सुविधा देना नहीं चाहते थे। अतः विदेशियों ( आउटलैंडरों ) और बोअरों में युद्ध निश्चित हो गया। डा० जेम्सन ने ट्रान्सवाल पर आक्रमण कर दिया किन्तु सफलता नहीं मिली।

बोअरों को यह सन्देह हो गया कि इसमें अंग्रेजों की चाल है। अतः वे दक्षिण अफ्रीका से अंग्रेजों को निकालने की चेष्टा करने लगे। ट्रान्सवाल और औरेंज फ्री स्टेट के बोअर एक साथ मिलकर काम करने लगे। १८६६ ई० में आंग्ल-बोअर युद्ध शुरू हो गया। प्रारंभ में अंग्रेज ही पराजित हुए, लेकिन अंत में बहुत ही क्षति और परेशानी के बाद उनकी विजय हुई। १६०२ ई० युद्ध का खात्मा हुआ। बोअरों के दोनों राज्य अंग्रेजी साम्राज्य में मिला लिये गये।

१८३६ ई० में मैन्चेस्टर के कुछ व्यापारियों ने एक कार्न-लॉ विरोधी संघ स्थापित किया। इस संघ के पास काफी कोष था और समर्थक भी अनेक थे। इसके द्वारा अविराम आन्दोलन शुरू हो गया। रिचार्ड कॉब्डन और जान ब्राइट जैसे वक्ताओं और तार्किकों की सहायता से आन्दोलन का जोर दिनदूना रात चौगुना बढ़ता गया। ये लोग आर्थिक बुराइयों को दूर करने तथा अन्तर्राष्ट्रीय शांति कायम रखने के लिये स्वतंत्र व्यापार को ही एकमात्र उपाय समझते थे। अत कार्न-लॉ का अन्त करने के लिये वे प्रचार करते थे। उपर्युक्त दोनों व्यक्ति पार्लियामेंट के सदस्य हो गये और उन्हें काफी लोकप्रियता भी प्राप्त थी। संघ की महत्ता इतनी बढ़ी कि पील स्वयं क्रमशः उसके सिद्धान्तों को मानने लगा।

१८४५-४६ में आयरलैंड में अकाल पड़ा। आयरलैंड में कृषि पर बहुत से प्रतिबन्ध रहने के कारण ६० लोग आलू पर ही जीवन निर्वाह करते थे। इस साल आलू की फसल मारी गई। ग्रेट ब्रिटेन में वृष्टि के कारण अन्न की फसल खराब हो गई थी और इस कारण वह आयरलैंड को अन्न नहीं दे सकता था। विदेशी अन्न पर बहुत कड़ा चुंगी लगी हुई थी। इस कारण आयरिश लोग हजारों की संख्या में मौत के शिकार हो रहे थे। अत बहुत से आयरिश दूसरे देशों में चले गये और उनकी आबादी लगभग आधी हो गई।

प्रधान मंत्री होने के समय पील संरक्षणवादी तथा कार्न-लॉ विरोधी संघ के खिलाफ था। लेकिन परिस्थिति की कठोर वास्तविकता तथा राष्ट्रीय स्वार्थ की वह अवहेलना नहीं कर सका। अब संघ का वह एक समर्थक बना और किसी तरह कार्न ला को रद्द कर देना चाहता था। २ वर्ष पूर्व के अनुभव ने उसे दिखला दिया था कि चुंगियों की कमी से मूल्य में कमी आ जाती है तथा बिक्री की वृद्धि होती है। अत उसे इस बात का पूरा विश्वास हो गया कि चुंगी को अस्थायी तौर पर तो शीघ्र स्थगित कर देना चाहिये और अन्त में इसे उठा ही देना चाहिये। किन्तु मंत्रिमंडल का बहुमत उसके साथ नहीं था। अत वह ह्विगों के पक्ष में पद त्याग कर गया। किन्तु ह्विग नेता जॉन रसल मंत्रिमंडल बनाने में असफल रहा। अत पील को पुन मंत्रिमंडल बनाना पड़ा। अनाज विधान का अन्त करने के लिये उसने एक बिल पेश किया। इस पर संरक्षणवादी बड़े ही क्रुद्ध हुए। वे पील को बहुत पहले से ही शंका की दृष्टि से देखते थे। अब उनकी शंका पक्की हो गई। ये लोग अपने को 'यंग इंगलैंड' के नाम से पुकारते थे। इन्हें डिसरैली के व्यक्तित्व में एक उपयुक्त नेता भी मिल गया। डिसरैली अब पील का कट्टर विरोधी बन गया और उसकी कटु आलोचना करने लगा। उसने पील पर ह्विगों के साथ पक्षपात करने का दोषारोपण किया। उसी ने पार्लियामेंट में यह भी घोषणा की कि संरक्षण की नीति अब उसी तरह

हुआ। अब एक पेनी के टिकट पर १½ औंस का पत्र ब्रिटेन के किसी भाग में आ-जा सकता था। तत्कालीन पोस्ट मास्टर जेनरल ने इस सुधार को पसन्द नहीं किया था क्योंकि वह समझता था कि इससे डाकखाने में पत्रों का ढेर हो जायगा। बात भी वैसी ही हुई। अब सर्वसाधारण भी डाक के द्वारा पत्र भेजने लगे और पत्रों की संख्या में कई गुनी अधिक वृद्धि हो गई। इस वृद्धि का कारण केवल खर्च में कमी होना ही नहीं था बल्कि वाष्पचालित जहाज तथा रेल के हो जाने से भी पत्रों तथा पार्सलों के भेजने में विशेष सुविधा हो गयी थी। इससे डाकखाने की आय में अब उत्तरोत्तर वृद्धि ही होने लगी।

तार तथा टेलीफोन के आविष्कार ने तो यातायात में चार चाँद ही लगा दिया। इनके संचालन में बिजली से बड़ी सहायता मिलती है। बिजली के आविष्कार में अंगरेज विद्वान फैरेडो को अधिक श्रेय प्राप्त है। सर्वप्रथम १८३७ ई० में सरश्री ह्वीटस्टोन ने तार का उपयोग किया। ७ वर्ष के बाद पैडिंग्टन से स्लफ तक तार की लाइन निर्मित हुई और उसी तार का उपयोग कर स्लफ में एक हत्यारा पकड़ा गया। अब तार की भी उपयोगिता लोगों को स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगी और इसका प्रचार उत्तरोत्तर बढ़ने लगा। देश में तार का विकास हो जाने पर विदेशों से सम्पर्क स्थापित करने के लिए समुद्र में भी तार (केबुल) का निर्माण होने लगा। १८५१ ई० में अटलांटिक में डोवर से कैलै तक केबुल लगाया गया। १५ वर्ष के पश्चात् वह ब्रिटेन तथा अमेरिका के बीच भी लगाया गया। १८८८ ई० तक तार पर प्राइवेट लोगों का ही अधिकार रहा किन्तु उसके बाद वह सरकार के ही अधिकार में आ गया।

१८७६ ई० में बेल नामक एक स्कॉच ने टेलिफोन का आविष्कार किया जिसके सहारे दो व्यक्ति कहीं भी रहकर आपस में बातचीत कर सकते हैं।

समाचार-पत्र के प्रकाशन में भी सुधार हुआ। इङ्गलैंड में इसका प्रारंभ १७वीं सदी में हुआ था। जेम्स प्रथम के समय में प्रथम समाचार-पत्र और रानी एन के समय में प्रथम दैनिक का प्रकाशन हुआ था। १८वीं सदी में समाचार-पत्रों के प्रचार में वृद्धि अवश्य हुई किन्तु पर्याप्त रूप से नहीं, क्योंकि उन पर भारी कर लगे हुए थे। एक प्रति भेजने में ४ पेंस का टिकट लगता था और लाभ का दस प्रतिशत आयकर के रूप में देना पड़ता था। अखबार वाले कागज पर भी कर लगता था और विज्ञापनों के लिए भी अधिक कर देना पड़ता था। छपाई के अन्य साधन भी अभी सस्ते और सुलभ नहीं थे। अतः समाचार-पत्र बहुत मँहगे पड़ते थे और उन्हें सर्वसाधारण में लोकप्रियता नहीं प्राप्त हो सकी थी। लंदन में अभी तक छः ही दैनिक पत्र निकल सके थे।

प्रतिमा के बल पर ही उसने राष्ट्रीय राजस्व को सुदृढ़ और सुरक्षित बना दिया। स्वदेश में तो प्रगति हुई ही, उसने आयरलैंड में भी असन्तोष की आग को शान्त करने का भरपूर प्रयत्न किया। इसके लिये उसने दमन तथा सुधार दोनों उपायों का आश्रय लिया था। वैदेशिक क्षेत्र में वह पूर्ण शांति बनाये रखा। चीन तथा अफगानिस्तान से युद्धों का अन्त किया, फ्रांस के साथ मित्रता पुनर्स्थापित की और अमेरिका के साथ सीमा सम्बन्धी झगड़ों का समाधान किया। इस तरह वह युग के सर्वोत्तम शासकों में अपना नाम स्थापित कर गया।

कहा जाता है कि पील ने अपने दल के साथ दो बार विश्वासघात किया। पहली बार १८२६ ई० में कैथोलिक मुक्ति नियम पास करने के समय तथा दूसरी बार १८४६ ई० में कार्न लॉ का अन्त करने के समय। हमें यह देखना है कि इस कथन में कितनी सत्यता है। जहाँ तक दलगत सूक्ष्म सिद्धान्तों का प्रश्न है, हो सकता है कि पील ने अपने दल के साथ विश्वासघात किया हो, लेकिन यह कहना कठिन है कि सामान्य और प्रचलित अर्थ में उसने ऐसा किया था नहीं। असल में वह व्यापक बुद्धिवाला एक व्यावहारिक राजनीतिज्ञ था जिसने परिवर्तित परिस्थिति और समय के अनुसार अपनी नीति में भी परिवर्तन किया। उसके नीति परिवर्तन में कोई खास रहस्य न था, बल्कि वह बिल्कुल ठीक था। समूचे राष्ट्र के स्वार्थों की रक्षा के लिये उसने जब जो उचित समझा वही किया। विस्तृत राष्ट्रीय स्वार्थ को उसने संकुचित दलीय स्वार्थ से अच्छा समझा और उसे ही अपनाया। जनता के प्रति अपने कर्तव्य को वह दल के प्रति कर्त्तव्य से ऊँचा समझता था। संकीर्ण चीजों की अपेक्षा व्यापक चीजों को ही वह अधिक महत्व देता था। ह्विग लोग भी जो उसके बाद शक्तिशाली हुए उसकी निःस्वार्थ देशभक्ति में पूर्ण विश्वास करते थे और यदाकदा उससे सलाह लिया करते थे। परिवर्तित परिस्थितियों में वह अपने विचारों पर ठीक से सोचने के लिये जिन कार्यों को वह उपयोगी समझता था उन्हें ही करता था। यह एक ऐसी बात है जिसके लिये उसकी प्रशंसा ही की जानी चाहिये। इस तरह हो सकता है कि दल के सदस्य की हैसियत से वह एक असफल और बुरा व्यक्ति हो, पर वह एक अच्छा और सफल व्यावहारिक राजनीतिज्ञ था। वह सर्वप्रथम एक अंग्रेज नागरिक था, उसके बाद टोरी पार्टी का एक सदस्य। इसमें कोई संदेह नहीं किया जा सकता था।

असल में वह उदार तथा अनुदार दोनों दलों के बीच की सीमा पंक्ति पर रहने वाला था। इसी कारण उसे 'अनुदारों में प्रबल उदार और उदारों में प्रबल अनुदार' कहा जाता है। उसका जन्म मध्यवर्ग में हुआ था और इस कारण उसके विचार भी मध्यवर्ग के ही थे। अनुदार दल में बड़े बड़े भूमिपतियों का प्राबल्य रहता था

अन्त में फ्रांस के साथ युद्ध घोषित हो चुका था। ऐसी स्थिति में मजदूरों का विरोधी रुख अच्छा नहीं समझा गया और छोटे पिट की सरकार ने १७६६ और १८०० ई० में कानून पास कर संघों पर कई प्रतिबन्ध लगा दिए। मजदूरों के संगठन को देखकर मालिक भी अपना संघ बनाने लगे लेकिन उनके संघ पर भी कानूनी नियंत्रण था। फिर भी अधिकारियों द्वारा जहाँ मजदूरों पर काफी निगरानी रखी जाती थी वहाँ मालिकों पर कोई विशेष निगरानी नहीं थी।

१८२४ ई० में उपर्युक्त कानून रद्द कर दिए गए। अब मजदूरों को हड़ताल करने की पुनः छूट मिल गई और वे इसका दुरुपयोग भी करने लगे। अतः १८२५ ई० में एक कानून के द्वारा उचित माँगों की पूर्ति के लिए ही संघ बनाने तथा हड़ताल करने का अधिकार मिला।

इसके बाद मजदूरों ने एक महान् राष्ट्रीय संघ ( ग्रैंड नेशनल यूनियन ) कायम करना चाहा लेकिन इसमें उन्हें सफलता नहीं मिली। १८५७ ई० के कम्बिनेशन ऐक्ट के पास होने से संघ की स्थिति अधिक सुरक्षित हो गई। १८८६ ई० में संघ को अधिक व्यापक बनाने का प्रयत्न हुआ। इसमें किसी व्यवसाय से सम्बन्ध रखने वाले सभी लोग पुरुष या स्त्री सम्मिलित होने लगे। इससे संघ की शक्ति में उत्तरोत्तर वृद्धि होने लगी। १६०६ ई० के ट्रेड डिस्प्यूट्स ऐक्ट और १६२७ ई० के ट्रेड डिस्प्यूट्स ऐक्ट तथा ट्रेड यूनियन ऐक्ट के द्वारा संघ की स्थिति में महान् परिवर्तन हुए।

व्यवसाय संघ के अतिरिक्त मजदूरों की दशा में सुधार लाने के लिए अन्य संस्थायें भी कायम हुईं जैसे :—सहयोग-समिति, मित्र-मंडली, समाजवादी सोसाइटी, फेबियन सोसाइटी, समाजवादी लीग और डेमोक्रेटिक फेडरेशन। १८६३ ई० में स्वतंत्र मजदूर दल के निर्माण की नींव पड़ गयी।

## ३. सामाजिक दशा

**राज्य-हस्तक्षेप की नीति**—१८वीं सदी तक सरकार सामाजिक सुधारों की ओर उदासीन थी। शान्ति एवं सुरक्षा बनाये रखना ही सरकार का प्रधान उत्तरदायित्व समझा जाता था किन्तु वैज्ञानिक प्रगति और औद्योगिक क्रांति ने इंगलैंड की सारी आकृति ही बदल डाली थी और समाज का ढाँचा ही परिवर्तित हो गया था। हम देख चुके हैं कि कारखाना प्रणाली में अनेक भयंकर बुराइयाँ घर कर गई थीं और मजदूरों की जीवन दायिनी शक्ति का ह्रास होता जा रहा था। स्वस्थ वातावरण का सर्वथा अभाव था। अब सरकार का ध्यान भी इन बुराइयों तथा अस्वस्थ वातावरण की ओर आकृष्ट हुआ। सरकार ने उदारवादी नीति अख्तियार की और उन्नीसवीं सदी में महत्त्वपूर्ण सामाजिक सुधार हुये।

## अध्याय ४०

# लार्ड जॉन रसल और लार्ड एबर्डीन के मंत्रिमंडल

## ( १८४६–५५ ई० )

( १ ) जॉन रसल का मन्त्रिमंडल ( १८४६-५० ई० )—हम लोग देख चुके हैं कि पील ने अनाज विधान तथा संरक्षणवाद का अन्त कर अनुदार दल (कन्ज़र्वेटिव) में फूट पैदा कर दी थी। इस कारण अब उदारवादियों ( लिबरल ) का बहुमत हो गया और लार्ड जॉन रसल प्रधान मंत्री बना। उसमें निपुणता का अभाव न था, पर महान् राजनीतिज्ञ बनाने की योग्यता नहीं थी। इस मन्त्रिमंडल में कॉब्डन तथा स्वतन्त्र व्यापारियों का प्रभुत्व था। लार्डों एवं पीयरों तथा उनके सम्बन्धियों की भरमार थी लेकिन उनमें कितने ही उग्र उदारवादी ही थे।

दुर्भिक्ष के बाद आयरलैंड में अशांति एवं अव्यवस्था फैल गई थी। इस अवस्था को सुधारने का प्रयत्न करना इस मन्त्रिमंडल का प्रथम कार्य था। लोगों को मदद पहुँचाने के लिये कर्मचारी नियुक्त हुए और अन्न का वितरण अब राज्य के द्वारा ही किया जाने लगा। लेकिन इससे समस्या का समाधान नहीं हुआ। आयरिश ज़मींदारों का अत्याचार ज्यों का त्यों था। उनकी स्वेच्छाचारिता एवं धाँधली से लोगों के बीच गहरा असन्तोष व्याप्त हो रहा था। इस समय चार्टिस्ट* आन्दोलन फिर ज़ोरों से साथ चल पड़ा। यह आन्दोलन पहले भी कई बार उठा था पर शान्त हो गया था। रसल की सरकार ने इस आन्दोलन को पूर्णतया कुचल देने की तत्परता दिखलाई, यद्यपि आगे चलकर क्रमशः चार्टिस्टों की सभी माँगें पूरी हो गयीं।

इस मन्त्रिमंडल में पामर्स्टन वैदेशिक मंत्री था। इस क्षेत्र में वह इतनी स्वतंत्रता से अपनी नीति बरतता था कि सभी उससे ईर्ष्या करने लगे थे। लेकिन वह सभी की अवहेलना करता रहा। तब स्वयं रानी ने उसका घोर विरोध किया। इस पर १८५१ ई० में रसल ने उसे पद त्याग करने को बाध्य किया। इसके कुछ समय बाद पामर्स्टन के प्रयत्नों के फलस्वरूप एक मिलिशिया बिल के प्रश्न पर रसल का बहुमत समाप्त हो गया और १८५२ ई० में उसने पद-त्याग कर दिया।

डर्बी का मन्त्रिमंडल ( १८५२ ई० )—इस समय तक संरक्षणवादी पुनः शक्तिशाली हो गये थे और लार्ड स्टैनली ने, जो अर्ल आफ डर्बी हो गया था अपने

* इसका पूर्ण विवरण अगले अध्याय ४१ में देखिये।

इनसे भी गद्य साहित्य के विकास को बहुत प्रोत्साहन मिला। पाक्षिक, मासिक तथा चतुर्मासिक मैगजीन तथा कई दैनिक समाचार-पत्र प्रकाशित होने लगे। प्रमुख नगरों में अनेक प्रेस खोले गये। कागज तथा अखबारों पर से करके हट जाने से वे सस्ते भी हो गये थे। अतः सर्वसाधारण में उनकी माँग बढ़ने लगी थी।

(ग) कला—कला के क्षेत्र में भी उन्नति हुई। जॉन कॉन्स्टेबुल और टर्नर दो महान् चित्रकार हुए। कॉन्स्टेबुल रंगीन चित्रों के बनाने में बहुत ही कुशल था और टर्नर भूमि चित्र के चित्रण में दक्ष था। टर्नर को तैल-चित्र और जल-चित्र दोनों ही की अच्छी जानकारी प्राप्त थी। उसके पथ-प्रदर्शन में ब्रिटिश-भूमि चित्रकारों का एक स्कूल ही कायम हो गया। ये लोग जल-चित्र में ही अधिक दीक्षित थे। १९वीं सदी के मध्य में प्री रैफे लाइट ब्रदरहुड नामक एक संस्था की स्थापना हुई। इस संस्था ने प्रकृति के सरल चित्र पर विशेष जोर दिया। कला की शिक्षा के लिए १८४२ ई० में ही लन्दन में एक नेशनल गैलरी का निर्माण भी हो चुका था और तब से चित्रकारी के क्षेत्र में उन्नति होती रही थी।

इस युग में संगीत-कला का भी विकास हुआ किन्तु वास्तु या भवन निर्माण कला के क्षेत्र में विशेष प्रगति नहीं हुई। इस सदी के प्रारंभ में चर्च तथा सार्वजनिक इमारतों के निर्माण में यूनानी कला की नकल दीख पड़ती थी। इसके बाद गोथिक शैली के भवन बनने लगे और मध्ययुगीन इमारतों की भरमार होने लगी। अन्त में पुनर्जागरण युग की शैली का अध्ययन तथा व्यवहार होने लगा।

(घ) धर्म—१८वीं सदी से ही धर्म एवं चर्च में लोगों की अभिरुचि कम हो रही थी। इस धार्मिक उदासीनता के विरुद्ध प्रतिक्रिया भी शुरू हो गई थी। धर्म सुधारकों का एक दल उठ खड़ा हुआ जो इवांजेलिकल कहलाता था। १९वीं सदी के प्रारंभ में इस दल की प्रधानता थी। इसके सदस्य इंजील के सिद्धान्तों का प्रचार करना चाहते थे लेकिन यह दल लोकप्रिय नहीं बन सका और इसके सदस्यों की संख्या में बहुत वृद्धि नहीं हो सकी धीरे-धीरे इसका ह्रास ही होता गया।

१९वीं सदी में धार्मिक क्षेत्र में एक और नया आन्दोलन चला। इसे ऑक्सफोर्ड आन्दोलन या ऐंग्लो-कैथोलिक आन्दोलन कहते हैं। इसे ट्रैक्टेरियन आन्दोलन भी कहते हैं क्योंकि इसके सदस्यों के लेखों को ट्रैक्ट्स ऑफ दी टाइम्स कहा जाता था। न्यूमैन, पूसी आदि इसके प्रमुख सदस्य थे। आगे इन्हीं दोनों पादरियों के अधीन दो दल कायम हो गए। ऑक्सफोर्ड आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य यह था कि चर्च की प्रचलित-बुराइयों को दूर किया जाय और लौड के उपदेशों का प्रचार किया जाय। १८४५ ई० में न्यूमैन कैथोलिक बन गये और इससे आन्दोलन को गहरा धक्का लगा। बहुत से लोग पूसी के अनुयायी बने रहे जो पूसेआइट कहलाने लगे।

## अध्याय ४१

# चार्टिस्ट आन्दोलन ( १८३८–४२ ई० )

१ परिचय—हम लोग देख चुके हैं कि १८१५ और १८२० ई० के बीच का काल भीषण सकट, असीम दुख और भयंकर निर्धनता का काल था। १८४० ई० तक जनसंख्या में निरन्तर परिवर्तन होता रहा। इंगलैंड का राष्ट्रीय जीवन अब शहरों में ही सीमित रहने लगा। अत उसकी समस्या भी अब शहर के निवासियों और मजदूरों की समस्या हो गई। मध्यवर्ग की स्थिति दिनों दिन अच्छी होती जा रही थी और वे धनी होते जा रहे थे, लेकिन श्रमिक वर्ग की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं था। धन पैदा तो वे ही करते थे। इस आर्थिक असमानता के सिवा धनी और गरीबों के बीच सामाजिक खाँई भी दिनों दिन गहरी होती जा रही थी। १८३२ ई० में सुधार कानून भी पास हुआ था। लेकिन उससे सिर्फ मध्यवर्ग को ही लाभ पहुँचा। इससे मजदूर वर्ग में बड़ा असन्तोष फैला क्योंकि उन लोगों ने भी सुधारों के लिये आन्दोलन किया था और उन्हें ही कोई सुविधा नहीं मिली। उत्तर के औद्योगिक केन्द्र में लोग भूख से पीड़ित थे और विद्रोह करने के लिये प्रेरित हो रहे थे। अत अब सरकारी प्रयत्नों में बहुत से लोगों का विश्वास उठ गया और वे इसे बदल डालने के लिये उत्सुक हो रहे थे। इन सब कारणों से विभिन्न सामाजिक और राजनीतिक आन्दोलनों का प्रादुर्भाव हुआ।

इनमें एक समाजवाद था जो मुख्यत आर्थिक आन्दोलन था और व्यावसायिक स्थिति में परिवर्तन लाना इसका ध्येय था। १६वीं सदी के आरम से ही इसका विकास हो रहा था। इसका प्रमुख प्रवर्तक रावर्ट ओवेन था। प्रारम्भ में लोग सुधार बिल की माँग पर अधिक आकृष्ट थे और समाजवाद की तरफ से लोगों का ध्यान अलग रहा। लेकिन सुधार बिल पास होने पर भी सबों को निराश होना पड़ा और लोग इधर आकृष्ट हुए। १८३२ ई० के बाद प्रचलित समस्याओं के समाधान के लिये राष्ट्रीय हड़तालें हुईं। १८३४ ई० में ओवेन ने सभी मजदूरों को सगठित करने के एक वृहद् राष्ट्रीय मजदूर सघ की स्थापना की। लेकिन इसकी सन्तोषजनक प्रगति नहीं हुई और यह फेल कर गया। लेकिन इसी बीच सरकार ने ६ मजदूरों को १७६७ ई० के कानून के अनुसार राजद्रोही साबित किया और ७ वर्ष के लिये उन्हें देश निर्वासन की सजा मिली। वे आस्ट्रेलिया भेज दिये गये। वैसे तो दो वर्षों के बाद सरकार ने उन्हें क्षमा कर दिया। लेकिन इस घटना से ह्विग सरकार के खिलाफ श्रमिक

# अध्याय ४६

# गृहनीति ( १९०१–१९१४ ई० )

## १. यूनियनिस्टों का युग ( १९०१-०५ ई० )

**सप्तम एडवर्ड का राज्याभिषेक और उसका चरित्र**—१९०१ ई० में महारानी विक्टोरिया की मृत्यु हो गई और उसके बाद उसका लड़का एलबर्ट एडवर्ड सप्तम एडवर्ड के नाम से गद्दी पर बैठा। गद्दी पर बैठने के समय उसकी उम्र ६० वर्ष की हो चुकी थी। अतः उसमें अनुभव और व्यावहारिकता की कमी नहीं थी। २० वर्ष की ही अवस्था से वह विभिन्न उत्सवों में रानी के साथ या उसके प्रतिनिधि की हैसियत से भाग लेता रहा था। उसे भ्रमण में पूरी दिलचस्पी थी और साम्राज्य के करीब सभी हिस्से को वह अच्छी तरह जानता था। मामलों और मनुष्यों को भी समझने के लिये उसमें बड़ी निपुणता थी। वह सज्जन, दूरदर्शी और बुद्धिमान् था। उसमें सहानुभूति, सहिष्णुता और उदारता की भावना भरी हुई थी। वह किसी व्यक्ति या पार्टी के साथ मिलकर कार्य कर सकता था। वह वैधानिक शासक जैसा बर्त्ताव करता था लेकिन सभी जगह खासकर वैदेशिक क्षेत्र में उसका गहरा प्रभाव दीख पड़ता था। इन्हीं सब गुणों के कारण वह प्रजा का प्रिय-पात्र बन गया था।

**जार्ज पंचम का राज्याभिषेक और उसका चरित्र**—६ मई १९१० ई० को सप्तम एडवर्ड की मृत्यु हो गयी और उसका लड़का जार्ज पंचम के नाम से गद्दी पर आसीन हुआ। उसने १९१० से १९३६ ई० तक राज्य किया। वह राज्याभिषेक के समय ४५ वर्ष का था और वह एडवर्ड का द्वितीय पुत्र था। १८९२ ई० में उसके बड़े भाई की मृत्यु हो गयी थी। दूसरे साल उसने जार्ज तृतीय की परपोती मेरी से ब्याह किया। यद्यपि मेरी का पिता एक जर्मन था और वह ब्रिटेन में ही पाली-पोसी गई थी और ट्यूडर राजाओं के बाद पहले-पहल दोनों ही राजा तथा रानी पूर्ण रूप से अंग्रेज कहे जा सकते थे। जार्ज एक कुशल नाविक, भ्रमणकारी और वक्ता था। १९१४ ई० में महायुद्ध के शुरू होने पर उसने विदेशी पदवियों का परित्याग कर दिया और अपने घराने को विन्डसर का घराना कहने लगा। उसके समय में साम्राज्य की एकता के केन्द्र के रूप में सम्राट का महत्व विशेष बढ़ गया।

इस समय यूनियनिस्ट मंत्रिमंडल स्थापित था। जुलाई १९०२ ई० में लार्ड सैलिसबरी ने पदत्याग कर डाला और उसका भतीजा लार्ड बाल्फर प्रधान मंत्री हुआ।

उत्तर के कई व्यावसायिक क्षेत्रों में दंगा फसाद होने लगे। मन्मथशायर के कुलियों ने जॉन फ्रॉस्ट के नेतृत्व में एक बड़ा ही भयंकर विद्रोह कर डाला। न्यू पोर्ट के जेल पर हमला करने की चेष्टा की गई क्योंकि उसी जेल में हेनरी विन्सेन्ट आदि जैसे कुछ प्रमुख चार्टिस्ट बन्द किये गये थे। सैनिकों से उनकी मुठभेड़ हो गई जिसमें ३० चार्टिस्ट मारे गये और बहुत से घायल हुए। सर्वत्र दंगे दबा दिये गये और प्रमुख नेता कैद कर लिये गये। फ्रॉस्ट को देश निर्वासित कर दिया गया। फिजिकल फोर्स पार्टी भंग कर दी गई। कुछ समय के बाद नेताओं को छोड़ दिया गया। किन्तु कारावास के दण्ड से उनके स्वास्थ्य खराब हो गये और जेल से मुक्त होने के बाद लॉविट राजनीति से विरक्त हो गया। उसके द्वारा स्थापित श्रमिक संघ क्रमशः विलीन हो गया।

१८४० ई० के बाद भी एक शताब्दी तक चार्टिस्टों का आंदोलन उठता ही रहा। १८४० ई० में ही एक राष्ट्रीय चार्टर संघ की स्थापना हुई थी। मौरल फोर्स पार्टी भी कार्न लॉ विरोधी संघ का समर्थन कर रही थी। यह आर्थिक संकट का युग था। द्वितीय आवेदन पत्र तैयार किया गया। जिस पर ३० लाख व्यक्तियों के हस्ताक्षर थे। १८४२ ई० में आवेदन पत्र पार्लियामेंट में पेश किया गया। लेकिन यह अस्वीकृत हो गया। देश भर में आम हड़ताल की घोषणा की गई। लेकिन मेलबोर्न की सरकार की भाँति ही पील की सरकार ने बहुत संख्या में चार्टिस्टों को कैद कर जेल-में भर दिया। कुछ तो देश निर्वासित कर दिये गये और बाकी सभी दबा दिये गये।

१८४८ ई० यूरोप के इतिहास में क्रांतियों का साल था। इस वर्ष सर्वत्र लुप्त प्राय दीप शिखा की अन्तिम ज्वाला भी प्रज्वलित हो उठी। यूरोप के सभी उदारवादी और प्रजातांत्रिक संस्थाओं ने विद्रोह का झंडा ऊँचा किया और क्रान्तिकारी सुधारों की माँग की। इससे ओकोनर भी अपनी शक्ति का आखिरी आजमाइश करने को प्रोत्साहित हुआ। उसने वेस्टमिनस्टर में प्रदर्शन के लिये बहुत बड़ी संख्या में चार्टिस्टों को संगठित किया। वहीं वह तृतीय आवेदन पत्र उपस्थित करने वाला था। जिसमें ५० या ६० लाख व्यक्तियों के हस्ताक्षर थे। लेकिन अधिकारियों ने कॉमन्स सभा के नजदीक प्रदर्शन करने से मनाही कर दी। प्रधान सेनापति वेलिंगटन का ड्यूक हजारों सैनिकों और उच्च तथा मध्य वर्ग के लोगों से निर्मित १ लाख ७ हजार स्पेशल कान्सटेबुलों के साथ किसी भी अशान्ति का सामना करने के लिये डटा हुआ था। प्रदर्शन के साथ ओकोनर वेस्टमिनस्टर ब्रिज से आगे नहीं बढ़ सका और पानी बरसने और मौसम की खराबी के कारण उसके समर्थक यत्र-तत्र भाग चले। फिर भी आवेदन-पत्र एक गाड़ी के द्वारा कॉमन्स सभा में लाया गया तथा उसकी जाँच की गई। आवेदन पत्र के बहुत-से हस्ताक्षर यहाँ तक कि रानी तथा वेलिंगटन

**लिबरल सरकार के सुधार कार्य**—लिबरल पार्टी का तो सिद्धान्त ही सुधार करना रहा है। अतः लिबरल सरकार ने कई महत्वपूर्ण सुधारों को किया। सुधार का कार्य किसी एक क्षेत्र में सीमित नहीं था बल्कि यह कई क्षेत्रों में फैला हुआ था। कैम्पबेल सरकार ने सुधार के कार्यक्रम को प्रारंभ किया और ऐस्क्विथ सरकार ने उसे जारी रखा।

**१. शिक्षा में सुधार की चेष्टायें**—१६०६ से १६०८ ई० के बीच शिक्षा में सुधार करने के लिये चेष्टायें की गई। इसके लिये कई प्रस्ताव उपस्थित किये गये किन्तु वे पास नहीं हुये। ऐसे ही १६०६ ई० में एक प्लुरल वोटिंग बिल उपस्थित किया गया जिसके द्वारा एक व्यक्ति को एक ही मत देने का अधिकार होता लेकिन लार्डों के विरोध से यह बिल भी पास न हो सका।

**२. व्यवसाय संघर्ष नियम ( ट्रेड डिस्प्यूट्स ऐक्ट ) ( १६०६ ई० )**—१६०१ ई० में टैफवेल मामले में यह कोर्ट के द्वारा निर्णय हुआ था कि यदि कोई व्यक्ति अवैध कार्य कर क्षति पहुँचावे तो व्यवसाय संघ के कोष से क्षति पूर्ति की जा सकती थी। इससे व्यवसाय संघ की सुरक्षा खतरे में पड़ जाती थी। अतः १६०६ ई० में एक व्यवसाय संघर्ष नियम पास हुआ जिसके द्वारा यह तय कर दिया गया कि न्यायालय में अवैध कार्य करने वाले व्यक्ति पर ही अभियोग लगाया जा सकता है और व्यवसाय संघ इसके लिये उत्तरदायी नहीं हो सकता। इससे व्यवसाय संघ की स्थिति सुरक्षित हो गयी।

**३. मजदूर क्षतिपूर्ति नियम (वर्कमेन्स कम्पेन्सेशन ऐक्ट) (१६०६ ई०)**—१८६७ ई० में प्रथम मजदूर क्षति पूर्ति नियम पास हुआ था। इसके द्वारा यह तय हुआ कि यदि काम करते समय दुर्घटना हो जाय जिससे मजदूर आगे कार्य करने में असमर्थ हो जाय तो उसे क्षतिपूर्ति मिलनी चाहिये लेकिन यह कुछ थोड़े से ही व्यवसायों में लागू किया गया। १६०६ ई० में यह नियम सभी व्यवसायों में लागू कर दिया गया। २५० पौंड वार्षिक आमदनी वाले मजदूर को यदि कार्य करते समय किसी दुर्घटना से शारीरिक दुर्बलता होती तो उसे क्षति पूर्ति मिलती।

**४. फौजदारी अपील नियम (१६०६ ई०)**—इस नियम के द्वारा किसी अपराधी को अपील करने का अधिकार दिया गया।

**५. सार्वजनिक धरोहर नियम ( पब्लिक ट्रस्टी ऐक्ट ) (१६०६ ई०)**—इस नियम के द्वारा कोई व्यक्ति अपनी जायदाद की देखभाल का उत्तरदायित्व किसी सार्वजनिक अफसर को सौंप सकता था।

**६. छोटा भूभाग और वितरण नियम ( स्माल होल्डिंग्स ऐंड एलाटमेंट ऐक्ट्स ) (१६०७ ई०)**—इस नियम के द्वारा छोटे किसानों में जमीन बाँटने के लिये स्थानीय कर्मचारियों को जमीन खरीदने का अधिकार दिया गया।

हों और आज या कल समाप्त हो जायें।' आन्दोलन के रूप में तो यह समाप्त हो गया। पर इसकी भावना जारी रही।

इस तरह उनके आन्दोलन का कोई तात्कालिक परिणाम न होने पर भी भविष्य में बहुत से अप्रत्यक्ष परिणाम हुए—(क) इंगलैंड के आधुनिक इतिहास में श्रमिकों का यह प्रथम संगठित आन्दोलन था। उस समय असफल हो जाने पर भी इसने मजदूरों में सहयोग एवं एकता की भावना का संचार किया। (ख) इसने सभी वर्गों का ध्यान देश में प्रचलित दोषों की ओर आकृष्ट किया और उनके निराकरण के लिये सुधारों की आवश्यकता को महसूस कराया। (ग) उसी समय के साहित्य पर इसका असर पड़ा। (घ) इनकी माँगें भविष्य में लोकप्रिय हो गईं और धीरे-धीरे उनकी पूर्ति का प्रयास किया गया। एक के सिवा उनकी ५ माँगें अब तक पूरी हो चुकी हैं। तीन कानूनों ( १८६७, १८८४ और १९१८ ) के द्वारा बालिग पुरुषों को मताधिकार मिल गया है। १८६७ ई० में नगरों के सभी मकान मालिकों को, १८८४ ई० में गाँवों के भी सभी मकान मालिकों को तथा १९१८ ई० में २१ वर्ष तक की उम्र के सभी पुरुषों को मत देने का अधिकार प्राप्त हो गया। गुप्त मतदान भी ग्लैड-स्टोन के १८७२ ई० के बैलट ऐक्ट के द्वारा मिल गया। १७१० ई० में पार्लियामेंट के सदस्यों के लिये जो साम्पत्तिक योग्यता निर्धारित की गई थी, उन सब का १८५८ ई० में ही अन्त हो चुका है। १८८५ ई० में सभी निर्वाचन क्षेत्र समान कर दिये गये हैं। १९११ ई० के पार्लियामेंट ऐक्ट के द्वारा पार्लियामेंट के सदस्यों का वेतन भी ४०० पौंड सालाना निश्चित कर दिया गया है। पार्लियामेंट के वार्षिक निर्वाचन की जो माँग थी वही नहीं पूरी हो सकी है क्योंकि वोटरों की संख्या को देखते हुए अनिवार्य निर्वाचन कराना असम्भव सा है।

## अध्याय ५०

# वैदेशिक नीति ( १९०१—१४ ई० )

(क) पृथकत्व नीति का परित्याग ( १९०१-०५ ई० )—१९ वीं सदी के अन्तिम चरण में यूरोप के सम्बन्ध में इंगलैंड ने पृथकत्व की नीति अपना रखी थी। इस युग के इतिहास में यह नीति चमत्कारपूर्ण पृथकत्व के नाम से विख्यात है। ऐसी नीति अपनाये जाने के कई कारण थे।

(क) १८७५ ई० तक यूरोप की जो समस्यायें थीं वे हल हो चुकी थीं। अब बहुत समय तक महादेश में ऐसी कोई समस्या नहीं उठ खड़ी हुई जिसमें हस्तक्षेप करने की जरूरत हो।

(ख) उसी साल बर्लिन कांग्रेस में पूर्वी समस्या को भी हल किया गया था और उसके बाद कई वर्षों तक यह समस्या भी दबी रही।

(ग) १८७८ ई० तक शक्ति प्रसार और औपनिवेशिक विस्तार में बहुत कम लोगों की रुचि थी। १८५२ ई० में डिसरैली नें उपनिवेशों को गले का पत्थर बतलाया था और बिस्मार्क ने भी इस ओर अपनी उदासीनता ही दिखलायी थी किन्तु अब यूरोप के राजनीतिज्ञों की प्रवृत्ति में परिवर्तन होने लगा था। विश्व राजनीति में १८७० ई० से नये साम्राज्यवाद का उदय हो चुका था। अब यूरोप के प्रत्येक बड़े राज्य को कच्चे और पक्के माल तथा बढ़ती हुई आबादी के लिये उपनिवेशों की आवश्यकता अनुभव होने लगी। वैज्ञानिक उन्नति के कारण यातायात के साधन भी उन्नत होते जा रहे थे और साथ ही राष्ट्रीय गौरव की भावना भी बलवती हो रही थी। स्वाभाविक ही उपनिवेश-स्थापना के लिये बड़े राज्यों में होड़-सी मच गयी और इसके लिये एशिया तथा अफ्रीका के महादेश ही उपयुक्त क्षेत्र मिले। अतः १९वीं सदी के चतुर्थ चरण में राजनीतिक केन्द्र यूरोप से हटकर इन महादेशों में चला आया था।

लेकिन १९वीं सदी के अन्त तक पृथकत्व की नीति चमत्कारपूर्ण के बदले खतरनाक मालूम पड़ने लगी और परिस्थिति से बाध्य होकर इंगलैंड को अपनी यह नीति त्यागनी पड़ी। हम देख चुके हैं कि जुलाई १९०२ ई० में सैलिसबरी के पद-त्याग के बाद लार्ड बालफर प्रधान मंत्री हुआ था। उसके आगमन के साथ ही बीसवीं सदी के प्रारंभ में इंगलैंड की वैदेशिक नीति में महान् परिवर्तन हुआ। पृथकत्व की नीति को तिलांजलि दे दी गई। इसके कई कारण थे। सर्वप्रथम, जर्मनी के हौसले और कार्य

२ पामर्स्टन का चरित्र—उसका शरीर कुछ मोटा था, लेकिन उसका स्वभाव बड़ा हँसमुख और सरल था। उदारता, सहृदयता उसमें पर्याप्त मात्रा में थी। वह शिकार खेलने का बड़ा शौकीन था तथा घोड़े की सवारी उसे विशेष प्रिय थी। यहाँ तक कि बूढ़े हो जाने पर भी वह नियमित रूप से घोड़े की सवारी करता था। वर्षा होने या बर्फ गिरते रहने पर भी इस कार्य में वह कभी चूकता नहीं था। उसमें प्राकृतिक बुद्धि, आत्मविश्वास और साहस आदि गुण पर्याप्त मात्रा में थे और इस पर उसके देश को गौरव था। कर्त्तव्यशीलता और देशभक्ति की भावना उसमें अगाध थी और वह अपने विचारों का पक्का था। वह दृढ और स्पष्ट वक्ता था। लेकिन खीझने वाला और जिद्दी भी हो गया था। अपनी बातों के सिवा वह किसी भी अन्य व्यक्ति की परवाह नहीं करता था। उसने खुलेआम रानी की बातों की ही अवहेलना की, अन्य मन्त्रियों की बात तो अलग रही। इसका कारण था कि वह एक आशावादी व्यक्ति था और उसे यह दृढ निश्चय रहता था कि उसकी नीति एव कार्य कभी भी गलत नहीं हो सकते।

यह बात ठीक भी थी। उसके जीवन के आखिरी दिनों में उसके विरोधी तथा प्रतिद्वन्द्वी भी उससे कायल रहते और उसका लोहा मानने को सदा तैयार रहते थे। पामर्स्टन ने अपनी प्रबल नीति के फलस्वरूप इगलैंड का यश देश देशान्तरों में फैला दिया और अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उसका जितना प्रभाव कायम हो गया उतना पहले या बाद के किसी भी राजनीतिज्ञ के समय शायद ही हुआ हो।

३ पामर्स्टन की गृह नीति—एबर्डीन मन्त्रिमडल के पतन के बाद सन् १८५५ ई० में पामर्स्टन प्रधान मन्त्री हुआ। उसके सहयोगी रसल से उसका मतभेद हो गया और रसल ने पद-त्याग कर दिया। १८५७ ई० में कॉब्डेन ने चीनी युद्ध के सम्बन्ध में पार्लियामेंट में उसके खिलाफ एक प्रस्ताव स्वीकृत कर दिया इस पर पामर्स्टन ने पद त्याग कर दिया लेकिन नये निर्वाचन में फिर वही बड़े बहुमत से निर्वाचित हुआ। १८५८ ई० में फ्रास के राजा नेपोलियन तृतीय की हत्या का एक षड्यन्त्र इगलैंड में रचा गया पर पामर्स्टन ने 'हत्या का षड्यन्त्र' नामक एक बिल उपस्थित कर ऐसे षड्यन्त्रों को अवैध घोषित किया तथा षड्यन्त्रकारियों के लिये फाँसी की सजा निश्चित की गई लेकिन इस पर सभी लोग उसके खिलाफ हो गये क्योंकि उसका यह कार्य फ्रांसीसी प्रभाव का ही परिणाम समझा जाने लगा। अत उसने पद-त्याग कर दिया। लार्ड डर्बी का मन्त्रिमडल कायम तो हुआ पर शीघ्र ही उसे पद त्याग करना पड़ा क्योंकि पार्लियामेंट में उसका बहुमत नहीं था। १८५९ ई० में पामर्स्टन पुन प्रधानमन्त्री हुआ। इस बार रसल वैदेशिक सचिव तथा ग्लैडस्टन चासलर आफ एक्स चेकर था। उसने १८६० ई० में फ्रास के साथ एक व्यावसायिक सन्धि की जिसके

लाभ हुआ। मोरक्को में शांति स्थापना तथा चुंगी के प्रबन्ध का भार फ्रांस और स्पेन पर ही सौंपा गया।

इस मौके पर इंगलैंड फ्रांस के ही पीठ पर था। अतः दोनों में और भी अधिक निकटता स्थापित हो गयी। अब दोनों देशों के बीच सैनिक सम्बन्धी बातचीत होने लगी। दोनों में फूट डालने का जर्मन उद्देश्य विफल रहा।

**आंग्ल-रूसी समझौता**—फ्रांस इंगलैंड तथा रूस दोनों का मित्र था। अतः उसके माध्यम से दोनों एक दूसरे के निकट आने लगे। रूस का ज़ार सप्तम एडवर्ड की पत्नी का भतीजा भी लगता था। एडवर्ड स्वयं शांति, सहयोग तथा मित्रता को प्रोत्साहित करता था। इस तरह १६०७ ई० में इंगलैंड तथा रूस में भी समझौता हो गया। तिब्बत, अफ़ग़ानिस्तान तथा फारस में जो मतभेद था वह दूर हो गया। तिब्बत में दोनों ने अहस्तक्षेप की नीति अख्तियार की। अफ़ग़ानिस्तान में ब्रिटिश स्वार्थ स्वीकार कर लिया गया। फारस के उत्तरी भाग में रूस का और दक्षिण पूर्वी भाग में ब्रिटेन का प्रभाव क्षेत्र मान लिया गया। इस तरह फ्रांस, रूस तथा इंगलैंड को मिला कर त्रिदलीय आंतात का निर्माण हुआ। यह स्मरणीय है कि इसके पहले जर्मनी, आस्ट्रिया तथा इटली को मिलाकर त्रिदलीय गुट का भी निर्माण हो चुका था।

**जर्मनी से तनाव में कमी**—सम्राट एडवर्ड सप्तम के प्रयास से जर्मनी के साथ भी तनाव कुछ कम हो गया था। जर्मन सम्राट उसका भतीजा लगता था और एडवर्ड ने उसके साथ व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित किया था किन्तु यह सम्पर्क अस्थायी ही सिद्ध हुआ।

**प्रथम बाल्कन संकट ( १६०८ ई० )**—१६०८ ई० में पुनः एक संकट पैदा हुआ जो प्रथम बाल्कन संकट कहलाता है। १८७८ ई० की बर्लिन सन्धि के अनुसार बोस्निया तथा हर्जेगोविना नामक प्रदेशों का शासन-भार आस्ट्रिया को सौंपा गया था लेकिन उसे इन प्रदेशों को अपने साम्राज्य में मिलाने का आदेश नहीं था। जब १६०८ ई० में युवक तुर्कों ने निरंकुश शासन के खिलाफ विद्रोह किया तो आस्ट्रिया ने इसे सुल्तान की कमजोरी का चिन्ह समझा और बोस्निया तथा हर्जेगोविना को अपने साम्राज्य में मिला लिया। घरेलू झंझट के कारण तुर्क विरोध करने में लाचार थे और उन्हें चुप ही रह जाना पड़ा। सर्बिया भी आस्ट्रिया के कार्य से बड़ा क्षुब्ध हुआ। उन प्रान्तों में स्लाव जाति के लोग थे और सर्बिया उन्हें स्वयं लेकर वृहत्तर सर्बिया कायम करना चाहता था लेकिन वह भी कुछ करने में असमर्थ ही था क्योंकि उसका समर्थक रूस युद्ध करने की स्थिति में नहीं था।

**द्वितीय मोरक्को संकट ( १६११ ई० )**—मोरक्को में अभी तक शांति व्यवस्था का अभाव ही था। फ्रांस इससे अधिक चिन्तित था और वह इस स्थिति में सुधार

चाहते हुए भी कुछ नहीं कर सके। इस तरह हम देखते हैं कि गृहनीति में पामर्स्टन को अनुदार या इस तरह का जो भी कहा जाय वह सत्य ही होगा।

लेकिन पामर्स्टन की यह संकीर्णता वैदेशिक क्षेत्र में नहीं रही। उसकी वैदेशिक नीति उदार और उच्चकोटि की थी। विदेशों में वह जातीय आन्दोलनों का सहायक था और स्वतन्त्र विचारों का पोषक लेकिन इस क्षेत्र में भी हमें उसकी कुछ त्रुटियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। विदेशों में उसने अपने हस्तक्षेप और प्रमादपूर्ण नीति के कारण कितनी ही व्यर्थ उलझनें पैदा कर दी थीं। इसके सिवा कितनी ही अन्य बातें थीं, जहाँ उसकी नीति एवं कार्य परस्पर विरोधी होते थे। अपनी नीति के खिलाफ उसने फ्रांसीसी प्रजातन्त्र को उखाड़ फेंकने वाले लुई नेपोलियन का स्वागत किया। अमेरिकन गृह युद्ध में दास प्रथा के अन्त का विरोध करने वाले दक्षिण के निवासियों की सहायता की और रूस के भय से बाल्कन प्रदेशों में ईसाई प्रजा का शोषण करने वाले तुर्की सुल्तान के खिलाफ आवाज नहीं उठा सका। यहाँ उसकी सारी बहादुरी हवा हो गई थी। अपने आखिरी दिनों में बिस्मार्क के आगे उसकी दाल न गली और उसकी सारी नीतिज्ञता हवा हो चली लेकिन इन स्थलों को छोड़ कर उसने विदेशों में ऐसे कई महत्वपूर्ण कार्य किये जिन्हें कोई भूल नहीं सकता। वैदेशिक क्षेत्र में वह सदा सुधार तथा राष्ट्रीयता का पक्षपाती रहा और वैधानिकता के विरोधियों की खबर ली। अपनी स्वतन्त्रता के लिये आन्दोलन करने और लड़ने वाली जातियों के प्रति उसकी पूर्ण सहानुभूति थी। ग्रीस के स्वतन्त्रता संग्राम को उससे प्रोत्साहन मिला और बेल्जियम वालों को अपने यहाँ से हालैंड का आधिपत्य हटाने में सहायता दी। स्पेन और पुर्तगाल की नियमानुमोदित रानियों की उनके निरंकुश चाचाओं के विरुद्ध सहायता की। यूरोप के निरंकुश शासकों को वह सन्देह की दृष्टि से देखता था और उनके विरुद्ध फ्रांस, स्पेन और पुर्तगाल के साथ सन्धि कर एक चतुर्मुख मंत्रिमंडल का निर्माण किया था। इटली के स्वातन्त्र्य युद्ध में वह प्रत्यक्ष सहायता न कर सका, पर अप्रत्यक्ष रूप से उसका नैतिक समर्थन किया और वहाँ पर अन्य राष्ट्रों के हस्तक्षेप को रोक कर उसे मदद की। स्विट्जरलैंड में सुधारवादी और प्रगतिवादी ताकतें उसी के समर्थन के कारण विजयी हुईं। पूरब में वह रूस के प्रभाव को सफलतापूर्वक रोक सका और तुर्की साम्राज्य की उसने रक्षा की। फ्रांस को अपनी सीमा के अन्दर रहने को विवश किया। इस तरह हम देखते हैं कि एकाध स्थलों को छोड़ कर उसने सर्वत्र उदारता दिखलाई। उसने उत्साहपूर्वक अंग्रेजी सम्मान एवं प्रतिष्ठा को आगे बढ़ाया और इङ्गलैंड का यश देश देशान्तरों में फैला दिया। घरेलू नीति में उसके विचार जितने सङ्कुचित और संकीर्ण थे उतने ही वैदेशिक क्षेत्र में वे प्रबल एवं उदार थे।

जो महत्व है वही महत्व इङ्गलैंड के लिये बेल्जियम का है। इङ्गलैंड की बहुत दिनों से यह नीति थी कि बेल्जियम एक तटस्थ देश के रूप में रहे और वहाँ किसी विदेशी का आधिपत्य न हो। बेल्जियम में किसी अन्य राष्ट्र का आधिपत्य इङ्गलैंड की सुरक्षा के लिये खतरनाक समझा जाता था। अतः जर्मनी की माँग को इङ्गलैंड ने भी पसन्द नहीं किया। ७५ वर्ष पहले १८३६ ई० में ही इङ्गलैंड फ्रांस, प्रशा, आस्ट्रिया तथा रूस ने बेल्जियम की तटस्थता एवं सुरक्षा को स्वीकार कर लिया था। अतः जर्मनी की माँग इस अंतर्राष्ट्रीय सन्धि की भी उपेक्षा थी। १८७१ ई० में भी फ्रांस और प्रशा ने बेल्जियम की तटस्थता की रक्षा के लिये इङ्गलैंड को आश्वासन दिया था। जब जर्मन चांसलर को इन सन्धियों की याद दिलायी गयी तो वह कहने लगा कि सन्धि-पत्र तो कागज के टुकड़े मात्र हैं—आवश्यकता पड़ने पर उन्हें तोड़ा भी जा सकता है। जर्मनी ने सन्धि-पत्र इङ्गलैंड या बेल्जियम, किसी का भी परवाह नहीं किया और ४ अगस्त से हठी जर्मनी ने तटस्थ बेल्जियम में अपनी लड़ाकू सेना को भेज ही दिया और इसके साथ ही ब्रिटिश जनमत भी उत्तेजित हो उठा। ब्रिटिश राजनीतिज्ञ सोचने लगे कि यदि जर्मनी को रोका नहीं जायगा तो वह अन्य अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियों को भी महत्वहीन समझ कर तोड़ने के लिये प्रोत्साहित होगा। अतः इङ्गलैंड ने बेल्जियम से सेना हटा लेने के लिये जर्मनी को आदेश दिया। जर्मनी ने कोई ध्यान नहीं दिया और उसी दिन शीघ्र ही इङ्गलैंड ने भी जर्मनी के विरुद्ध युद्ध घोषणा कर दी। इङ्गलैंड ने इस युद्ध में क्यों भाग लिया—इसके सम्बन्ध में लार्ड ऐसक्विथ ने अपने भाषण में दो कारणों को बतलाया था—( क ) पवित्र अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिज्ञा की रक्षा के लिये और (ख) स्वेच्छाचारी शक्तिशाली राज्य अन्तर्राष्ट्रीय विश्वास का हनन कर छोटे-छोटे राष्ट्रों को न कुचल सकें—इस सिद्धान्त की रक्षा के लिये।

इस तरह अगस्त १६१४ ई० में प्रथम महायुद्ध प्रारम्भ हो गया जिसकी लपट धीरे-धीरे समस्त संसार में फैल गयी।

योगी बनाया गया था। डिसरैली ने डर्बी, सैलिसबरी आदि अपने अनुदार सहयोगियों को भी समझा-बुझाकर इसके पक्ष में कर लिया। उदारवादी तो इसके पक्ष में थे ही। अतः यह बिल ग्लैडस्टन के कुछ संशोधनों के साथ पास हो गया। इस मंत्रिमंडल का यह महत्वपूर्ण कार्य था, जिससे अंग्रेजी प्रतिनिधित्व प्रणाली तथा मताधिकार में बहुत परिवर्तन हो गये।

सुधार बिल की शर्तें—(क) प्रतिनिधित्व प्रणाली—इस बिल के द्वारा ११ छोटे छोटे बौरों से प्रतिनिधि भेजने का अधिकार छीन लिया गया। ३५ ऐसे बौरों को जिनकी आबादी १० हजार से कम थी—एक से अधिक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार नहीं मिला। इन परिवर्तनों के द्वारा ५२ स्थान रिक्त हुए थे। उन्हें बड़ी-बड़ी काउन्टियों तथा नये बौरों में बाँट दिया गया। १२ नये बौरे बनाये गये। बरमिंघम मैन्चेस्टर, ग्लासगो, लीड्स, लिवरपूल जैसे ५ बड़े-बड़े शहरों को तीन-तीन प्रतिनिधि भेजने का अधिकार मिला। लंदन तथा स्कॉटलैंड की यूनिवर्सिटियों को भी प्रतिनिधि भेजने का अधिकार दिया गया।

इन परिवर्तनों के बावजूद भी कॉमन्स सभा के सदस्यों की कुल संख्या पूर्ववत् ६५८ ही कायम रही।

(ग) मताधिकार—बहुत पहले से ही काउंटियों में २ पौंड लगान देने वाले स्वतन्त्र भू स्वामियों का मताधिकार प्राप्त था। उसे ज्यों का त्यों छोड़ दिया गया लेकिन कापी होल्डरों और पट्टेदारों के मताधिकार की योग्यता आधी कर दी गई। १२ पौंड वार्षिक लगान देने वाले किसानों को भी मताधिकार दे दिया गया। ये किसान भूमि के मालिक नहीं बल्कि केवल जोतने वाले थे। बौरों में सभी मकान मालिकों और १० पौंड वार्षिक किराया देने वाले सभी व्यक्तियों को मताधिकार मिल गया और अब १० पौंड वार्षिक लगान देने की योग्यता समाप्त कर दी गई। आयरलैंड वालों के लिये कम से कम ४ पौंड कर देने वालों को मताधिकार मिला और स्कॉटलैंड में सभी कर देने वालों को मताधिकार मिल गया। पर उसकी कोई रकम नहीं निश्चित की गई।

सुधार बिल का प्रभाव—इससे इंगलैंड में प्रचलित मताधिकार प्रणाली में महान् परिवर्तन हुए और अब इंगलैंड में यह प्रणाली बहुत अंश तक प्रजातान्त्रिक हो गई। मतदाताओं की संख्या में १० लाख की वृद्धि हुई और इस तरह विशाल जनसमूह को मताधिकार प्राप्त हो गया। अब १२ व्यक्तियों में एक व्यक्ति मत देने का अधिकारी हो गया। शासन से अब जमींन्दारों और पूँजीपतियों का प्रभुत्व समाप्त हो गया। प्रथम सुधार बिल से मध्य वर्ग को मताधिकार प्राप्त तो हो गया था लेकिन शासन में उनका अभी कोई महत्व न था और उच्च वर्ग वाले ही अब भी शक्ति-

ई० में इंगलैंड, रूस, प्रशा तथा आस्ट्रिया के बीच लन्दन में एक समझौता हुआ और मुहम्मदअली की प्रगति को रोकने के लिये एक संघ कायम हुआ। सीरिया पर हमला हुआ और एकर पर बम गिरा। अब सीरिया मुहम्मदअली के हाथ से निकल गया लेकिन मिश्र पर उसका अधिकार दृढ़ हो गया।

१८४१ ई० में लन्दन की सन्धि हुई। मिश्र पर में मुहम्मदअली का वंशानुगत अधिकार स्वीकार कर लिया गया और बास्फोरस तथा डार्डनेल्स सभी राष्ट्रों के जंगी जहाजों के लिये बन्द कर दिये गये लेकिन इन सारी व्यवस्था में फ्रांस ने कोई भाग नहीं लिया और वह उपेक्षित रहा। इसे अपमानजनक समझकर लुई फिलिप युद्ध करने पर उतारू हो गया लेकिन वह भूँकता ही रहा, कुछ कर नहीं सका। पामर्स्टन की नीति ने फ्रांस या रूस को पूर्वी भूमध्य सागर में बढ़ने से रोक दिया। फ्रांस अकेला हो गया और कुछ समय के लिये इंगलैंड से उसका मनमुटाव हो गया। सुल्तान भी अंग्रेजी सहायता पर विशेष निर्भर रहने लगा।

## क्रीमिया का युद्ध १८५४-५६ ई०

कारण—( १ ) १८४१ ई० की लंदन की सन्धि ने रूस के लिये १८३३ ई० की उंकियारस्केसी की संधि को महत्वहीन बना दिया। रूस पहले के लाभों से वंचित कर दिया गया किन्तु वह निराश नहीं हुआ। दुर्बल तुर्की साम्राज्य को रूस लालच भरी निगाह से देखता रहा। वह इंगलैंड से मिलकर पूर्वी सवाल को स्थायी रूप से हल कर देना चाहता था। ज़ार के ख्याल से रूस तथा इंगलैंड ही मिलकर ऐसा कर सकते थे क्योंकि दोनों की शक्ति बहुत थी। एक प्रधान स्थलशक्ति था तो दूसरा जलशक्ति। ज़ार निकोलस प्रथम की दृष्टि में तुर्की साम्राज्य लड़खड़ा रहा था और वह इस साम्राज्य का बँटवारा कर देना चाहता था। वह स्वयं १८४४ ई० में इंगलैंड गया और इसके सम्बन्ध में उसने चर्चा भी की। उसने ब्रिटिश राजदूत से भी कहा था कि "हम लोगों के हाथ में एक रोगी है जिसकी अन्त्येष्टि क्रिया की तैयारी होनी चाहिये।" उसके कहने का आशय यह था कि तुर्की साम्राज्य का विभाजन कर लेना चाहिये। प्रस्ताव में मिश्र और क्रीट पर अंग्रेजी अधिकार स्थापित कर लेने के लिये इशारा किया गया। ब्रिटिश सरकार ने रूसी प्रस्ताव का समर्थन नहीं किया, क्योंकि उसे विश्वास था कि तुर्की साम्राज्य में सुधार कर उसे सुरक्षित रखा जा सकता है। अब रूस की नियत में इंगलैंड का सन्देह बढ़ने लगा।

( २ ) कुस्तुनतुनिया में स्थित ब्रिटिश तथा रूसी राजदूत भी अपने-अपने स्वार्थ की रक्षा के लिये युद्ध आवश्यक ही समझते थे। ( ३ ) नेपोलियन तृतीय फ्रांस का सम्राट था। गद्दी पर उसका अधिकार कमजोर था। अतः वह फ्रांसीसियों का ध्यान

## अध्याय ४४

# डिसरैली और ग्लैडस्टन ( १८६८–९४ ई० )

१ दोनों व्यक्तियों की तुलना—लार्ड पामर्स्टन की मृत्यु और द्वितीय सुधार-बिल पास होने के बाद एक नवीन युग का प्रादुर्भाव हुआ। सभी पुराने नेता राजनीतिक मंच से बिदा हो चले थे। लार्ड जार्ज बेन्टिक, राबर्ट पील, ड्यूक आफ वेलिंगटन, लार्ड एबर्डीन आदि सभी का स्वर्गवास हो चुका था और जॉन रसल तथा लार्ड डर्बी ने राजनीति से विरक्ति ले ली थी अतः अब राजनीतिक रंग-मंच सिर्फ दो समकालीन प्रतिद्वंद्वी व्यक्तियों के लिये खुला पड़ा था जो मध्यकालीन विक्टोरियन राजनीति में लोगों के आकर्षण के केन्द्रबिन्दु थे। ये थे लार्ड बेकन्स फील्ड, बेंजामिन डिसरैली और विलियम इवर्ट ग्लैडस्टन।

समतायें—दोनों ही व्यक्ति योग्य तथा अनुभवी और प्रभावशाली थे तथा राजनीतिक क्षेत्र में काफी ख्याति प्राप्त कर चुके थे। दोनों ही १८६८ ई० तक अपने-अपने दल के प्रतिष्ठित नेता बन चुके थे। डिसरैली लार्ड डर्बी के बाद अनुदार दल का नेता हुआ था तथा ग्लैडस्टन लार्ड रसल के बाद उदार दल का। दोनों की उम्र में भी बहुत अन्तर न था। १८६८ ई० में डिसरैली ६३ वर्ष का था और ग्लैडस्टन ५६ वर्ष का। दोनों ने ही अपना सारा जीवन राजनीति में व्यतीत किया था और १८३२ ई० के बाद से दोनों ही लगातार कामन्स सभा के सदस्य रहते चले आये थे। दोनों ने ही अपना मत परिवर्तन कर लिया था। डिसरैली एक उग्रवादी से अनुदार बना था और ग्लैडस्टन एक टोरी से उदार। दोनों ही साहसी थे और अपने अपने दल के कट्टर सदस्यों के प्रिय नहीं थे तथा दोनों ही अपने विपरीत दलों के द्वारा घृणास्पद समझे जाते थे। दोनों व्यक्ति बड़े प्रतिभाशाली थे और राजनीति से बाहर भी काफी दिलचस्पी रखते थे। साहित्य से दोनों की अभिरुचि थी। डिसरैली एक ख्याति प्राप्त औपन्यासिक था और ग्लैडस्टन ने भी होमर, दान्टे आदि का विस्तृत अध्ययन किया था और प्रचुर योग्यता रखने वाला एक प्रसिद्ध लेखक था। दोनों की गृहनीतियों में बहुत समता थी और अपने व्यक्तिगत जीवन में दोनों ही असीम आनन्द का अनुभव करते थे।

विभिन्नतायें—लेकिन इन समानताओं के बावजूद भी दोनों एक दूसरे के विपरीत थे। उनकी असीम विभिन्नताओं के सामने ये समतायें नगण्य हैं। उत्पत्ति से

उठाया। उसने सेवेस्टोपोल की किलाबन्दी शुरू कर दी और काले सागर में जंगी जहाज रख दिया।

१८७५ ई० से स्थिति और भी बिगड़ने लगी साथ-साथ गंभीर भी होने लगी। सुल्तान ने सुधार सम्बन्धी अपने वादों को पूरा नहीं किया। अतः बाल्कन जातियों की दशा में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। उधर यूनान, सर्विया तथा रूमानिया के उदाहरण से भी वे बहुत प्रभावित हुये थे। साथ ही उन्हें रूस तथा आस्ट्रिया के स्लावों से भी सहायता का आश्वासन मिल रहा था। अतः १८७५ ई० में बोस्निया हर्जेगोविना के निवासियों ने विद्रोह कर दिया। सर्विया तथा मौन्टिनिग्रो ने भी उनकी मदद की। विद्रोह की लपट बढ़ने लगी और बल्गेरिया के लोगों ने भी बगावत कर डाली। इस बगावत के दबाने में तुर्कों ने बड़ी ही अमानुषिक कठोरता एवं बर्बरता का परिचय दिया। प्रतिहिंसा की भावना से ओत-प्रोत होकर तुर्कों ने विद्रोहियों को पाशविक ढंग से तलवार के घाट उतार दिया। भीषण रक्तपात हुआ और स्त्रियों तथा बच्चों तक की भी हत्या हुई।

तुर्कों के इस अमानुषिक व्यवहार का समाचार सुनकर समस्त यूरोप क्षुब्ध हो हो गया। इंगलैंड का सुप्रसिद्ध शान्तिवादी लिबरल नेता ग्लैडस्टन बिगड़ उठा। उसने इसके सम्बन्ध में अनेक भाषण दिया और लेख भी लिखा। उसने इस बात की अपील की कि तुर्क बाल्कन प्रान्तों से बोरिया-बस्ता के साथ निकाल दिये जायँ लेकिन इसके सिवा ग्लैडस्टन तो कुछ सक्रिय कर नहीं सकता था क्योंकि साम्राज्यवादी कन्जर्वेटिव नेता डिसरैली के हाथ में शासन-सूत्र था। वह रूसी कूटनीति से सशंकित था और उसने तुर्की साम्राज्य के पक्ष में पुरानी ब्रिटिश नीति का ही अनुसरण किया। उसने तुर्कों के विरुद्ध कोई कदम नहीं उठाया।

रूसी-तुर्की युद्ध—लेकिन रूस तो चुपचाप बैठने वाला नहीं था। बाल्कन में तुर्कों के अन्याय एवं अत्याचार के कारण रूस के हृदय में भी गहरी चोट पहुँची थी। अतः इंगलैंड ने जब तुर्की को सजा देने के लिये कुछ नहीं किया तो रूस १८७७ ई० में तुर्की के साथ युद्ध ही छेड़ दिया। रूस तुर्की प्रदेश पर हमला करने लगा और उसे विजयश्री भी मिलने लगी। अन्त में रूसियों ने तुर्कों के प्रसिद्ध गढ़ प्लेवना को घेरा। इसकी अजेयता पर तुर्कों को गर्व था, किन्तु इसका भी पतन हो गया। शीघ्र ही एड्रियानोपुल भी रूसियों के हाथ में चला गया। अब सुल्तान रूस से सन्धि करने के लिये बाध्य हुआ।

१८७८ ई० में रूस और टर्की में सैनस्टेफानो की सन्धि हुई। इसकी शर्तें पराजित टर्की के लिये बड़ी ही कठोर थीं। इसके अनुसार कुछ राज्यों को स्वतंत्रता मिली और कुछ राज्यों में रूस का संरक्षण स्थापित हुआ। रूस के अधीन एक महान्

इतिहासकार ने लिखा है कि यदि लोग इससे आकृष्ट होते कि ग्लैडस्टन किसी विषय में क्या कहता है, तो वे यह जानने की चेष्टा में रहते कि डिसरैली के उस विषय में क्या विचार हैं।

डिसरैली प्रधानतया एक राजनीतिज्ञ था फिर भी उसमें व्यवहार कुशलता का अभाव न था। वह आत्मसयमी व्यक्ति था। उसमें आत्मविश्वास की कमी नहीं थी और उसे अपनी योग्यता और ज्ञान का दृढ़ भरोसा था। वह उद्दत और निरंकुश स्वभाव का था। उसे विश्वास था कि लोगों का नेतृत्व करने के लिये ही उसका प्रादुर्भाव हुआ था तथा उसे सफलता भी मिलेगी। प्रारम्भिक असफलताओं से वह विचलित न हुआ और अपने स्थान पर डटा रहा। वह बहुत फैशनेबुल भी था। अपने घुँघराले और चमकीले बालों तथा बहुमूल्य भड़कदार कपड़ों एवं जवाहरातों पर उसे नाज़ था, यद्यपि उससे लोग उसकी हँसी भी उड़ाते थे लेकिन वह कभी इस फ़िक्र में नहीं रहा कि —दूसरे इसके बारे में क्या कहते हैं। अपना बुद्धि एवं योग्यता पर ही वह विशेष सोचता था और उन्हीं के बल पर वह ब्रिटेन में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर सका। उसकी मीठी चुटकियों पर उसके विरोधी डर जाते और उसकी व्यग्यपूर्ण हृदय वेधी बातें अद्भुत असर दिखलातीं। राजनीतिक समस्याओं का समाधान भी विनवाड़ की भाँति चुटकी बजाते वह कर लेता। इसके बावजूद भी उसकी अद्भुत शान्ति, स्थिरता, दृढ़ता और गम्भीरता से उसके विरोधी परेशान रहते थे। उसकी दूरदर्शिता सराहनीय है। उसमें कल्पना की प्रधानता थी और वह लोगों की कल्पना-शक्ति पर ही अपील करता था। लोगों को परखने की उसमें अद्भुत क्षमता थी और इसी के कारण वह रानी पर पूर्ण अधिकार कर सका था। उसकी मृत्यु के बाद रानी ने स्वय उसे एक बहुत बड़ा और प्रिय मित्र कहा था क्योंकि वह रानी के साथ सदा एक मनुष्य की भाँति व्यवहार करता था। इस तरह डिसरैली का चरित्र उसकी सफलता का बहुत बड़ा कारण था।

ग्लैडस्टन एक धार्मिक विचार का भाव प्रधान व्यक्ति था। वह गम्भीर और मनस्वी था, तथा एक साहित्यिक और लेखक होकर भी अपने देश का सर्वश्रेष्ठ राजनीतिज्ञ था। उसमें दृढ़ विश्वास और अदम्य साहस भरा हुआ था। अपने भाषणों द्वारा वह श्रोताओं के दिल पर पूर्ण अधिकार कर लेता था। राजनीतिक विषयों पर वह बहुत गम्भीरतापूर्वक विचार करता और उसके निष्कर्ष बड़े ही उपयुक्त और समयोपयोगी होते थे। नैतिकता में वह बहुत विश्वास रखता था और नैतिक प्रश्नों के सामने वह अपनी बदनामी एवं पराजय की भी परवाह नहीं करता था। उसका स्वभाव उदार था और उसमें डिसरैली की निरंकुशता तथा अक्खड़ता नहीं थी। उसमें डिसरैली की कल्पना का अभाव था और वह लोगों की आत्मा एवं मन पर प्रभाव डालता था।

झील के दक्षिणी भाग की खोज की और सर्वप्रथम इसे नील नदी का उद्गम स्थान बतलाया।

अफ्रीका का विभाजन—बेल्जियम के राजा लियोपोल्ड द्वितीय ने १८७६ ई० में यूरोप के राष्ट्रों की ब्रूसेल्स में एक सभा बुलाई। उसने अफ्रीका की महत्ता बतलाई। लगभग एक दशाब्दी बाद उसने स्वतन्त्र कांगो राज्य को अपने अधीन स्थापित किया। रबर का व्यापार भी होने लगा लेकिन उसने ईसाई धर्म के प्रचार में कोई दिलचस्पी नहीं दिखलाई। १६०८ ई० में उसने कांगो-राज्य को बेल्जियम सरकार के हाथ बेच दिया और यह बेल्जियम राज्य का एक अंग बन गया।

यूरोप के अन्य देश भी पीछे नहीं रहे। इंगलैंड, जर्मनी फ्रांस, इटली आदि देशों ने बेल्जियम का अनुसरण किया। कुछ लोगों ने अफ्रीका को सभ्य बनाने या ईसाई धर्म का प्रचार करने का स्वाँग रचा किन्तु अधिकांश लोग तो कल-कारखानों के लिये कच्चे माल और उनसे बने माल की खपत के लिये बाजार की खोज में थे। बड़े-बड़े पूँजीपति अपनी पूँजी के सदुपयोग के लिये विशाल क्षेत्र चाहते थे। अतः इन राज्यों ने अफ्रीका में व्यापार के लिये अपनी-अपनी कंपनियाँ खोल दीं। सेसील रोड्स नामक एक अंग्रेज ने बेचुआनालैंड और रोडेशिया पर अधिकार स्थापित किया और व्यापार के द्वारा अकूल धन प्राप्त किया। लुडरीज नाम का एक जर्मन व्यापारी दक्षिण-पश्चिम में तटीय भागों में व्यापार करने लगा। इस प्रकार यूरोप के राष्ट्रों द्वारा अफ्रीका की नोच-खसोट शुरू हुई जिससे विभिन्न राज्यों में संघर्ष छिड़ गया। कई मौकों पर तो युद्ध की नौबत आ पहुँची। इंगलैंड दक्षिण में उत्तमाशा अन्तरीप से लेकर उत्तर में कैरो तक साम्राज्य फैलाना चाहता था और दोनों छोर को रेल द्वारा मिला देना चाहता था। फ्रांस सहारा की मरुभूमि से होते हुये पूर्वीय तथा पश्चिमी तट को मिलाना चाहता था। अंत में उन्होंने आपस में कई सम्मेलन और संधियाँ कीं और अफ्रीका का विभाजन कर लिया। प्रथम युद्ध १६१४ ई० के प्रारंभ के समय तक सम्पूर्ण महादेश यूरोपियनों के हाथ में आ गया। १८८५ ई० में बर्लिन में यूरोपीय राज्यों का विशाल सम्मेलन हुआ। इसमें ब्रिटिश, जर्मन तथा फ्रांसीसी राज्यों की सीमायें निर्धारित की गईं। १८६० ई० में इंगलैंड ने जर्मनी तथा फ्रांस के साथ पुनः संधि की।

अफ्रीका के विभाजन में अंग्रेजों को सबसे अधिक हिस्सा मिला। उन्हें दक्षिणी अफ्रीका जिसमें उत्तमाशा प्रान्त, नेटाल, ट्रान्सवाल और ऑरेंज नदी के भू-भाग सम्मिलित हैं, बेचुआनालैंड, रोडेशिया, मिश्र, सूडान का कुछ भाग, उगैंडा, ब्रिटिश सुमालीलैंड, नाईजीरिया तथा गेम्बिया मिले। फ्रांस का ध्यान अफ्रीका की तरफ बहुत पहले से आकृष्ट हुआ था और बिस्मार्क भी इसके लिये उसे उत्साहित करता

पील से मतभेद हो गया और पद-त्याग कर दिया। १८४७ ई० में वह पुन. रसल के मंत्रिमंडल में शामिल हुआ और तब से लगातार १८६६ ई० तक यह चांसलर आफ एक्सचेकर रहा। अब वह उदारवादी हो गया था। इस काल में उसने अद्भुत ख्याति प्राप्त की। १८६८ ई० में डिसरैली के विरोध में वह प्रथम बार प्रधान मंत्री हुआ और १८७४ ई० तक इस पद पर रहा। १८८० ई० में वह दूसरी बार इस पद पर आया और १८८५ ई० तक रहा। दूसरे साल वह पुन प्रधान मंत्री हुआ लेकिन होमरूल बिल के प्रश्न पर उसी साल पद-त्याग कर दिया। १८९२ ई० में वह चौथी बार प्रधान मंत्री हुआ और १८९४ ई० तक रहा। इसके बाद वह राजनीतिक क्षेत्र से विरक्त हो गया और १८९७ ई० में उसकी लाश इस ससार से उठ गई।

पहले हम देख चुके हैं कि गृह-नीति में दोनों में कुछ समतायें दीख पड़ती हैं लेकिन वे महत्वपूर्ण नहीं हैं। इस क्षेत्र में भी विषमताओं की ही प्रधानता है।

डिसरैली की अपनी स्वतन्त्र गृहनीति थी। उसने किसी का अनुकरण नहीं किया था। यों तो वह अनुदार दल का था पर उसके विचार एकदम अनुदार नहीं थे। वह एक नये ढंग का अनुदार था। जनता से उसे सहानुभूति थी। असल में अपने प्रारंभिक जीवन में वह रेडिकल रह चुका था। अत. उस तरह की कुछ भावनाएँ उसके मस्तिष्क में अब भी विद्यमान थीं। उसकी नीति को टोरी जनतन्त्र कहा जाता है। जनता की माँगों का उसने स्वागत किया और द्वितीय सुधार बिल को पास कराया। जनहित के लिये और भी कई कानून पास हुये जिनसे सामाजिक उत्थान हुआ लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि वह गृहनीति में संकीर्ण नहीं था। उसकी गृहनीति ग्लैडस्टन के जैसी उदार नहीं थी। यह ठीक है कि ग्लैडस्टन की नीति स्वतन्त्र नहीं थी। वह पील का पक्का समर्थक था और उसमें जनहित की भावना अधिक थी। जनता की आर्थिक एवं सामाजिक उन्नति के लिये उसके समय में बहुत से महत्व-पूर्ण नियम पास हुए।

फिर भी यह निर्विवाद है कि अन्य बातों की अपेक्षा गृहनीति में दोनों के बीच कुछ समता पाई जाती है। औपनिवेशिक और वैदेशिक नीति में तो दोनों के बीच जमीन आसमान का अन्तर था। डिसरैली साम्राज्यवाद का कट्टर समर्थक था। वह किसी चीज को व्यापक दृष्टि से देखता था और उसका विश्वास था कि इङ्गलैंड विश्व में एक महान् देश बनकर रहेगा। शुरू में वह उपनिवेशों के विकास में दिलचस्पी नहीं रखता था क्योंकि वह इन्हें अंग्रेजों के गले की चक्कियाँ समझता था। किन्तु बाद में उसका यह ख्याल हट गया और वह उपनिवेशों के विकास में दिलचस्पी लेने लगा। वह इंगलैंड के गौरव को बढ़ाने के लिये इसके राज्यों में हस्तक्षेप या युद्ध करने से बाज नहीं आता था। इस तरह उसकी वैदेशिक नीति बड़ी ही क्रियाशील

ई० तक मिश्र तुर्की साम्राज्य का अंग बना रहा और खदीव वहाँ के शासन का प्रधान रहा परन्तु वास्तविक शासन-सूत्र ब्रिटिश कौंसल जेनरल के ही हाथ में चला आया। इस प्रकार इस युग में मिश्र में दोहरा शासन कायम रहा लेकिन इतना स्वीकार करना पड़ेगा कि अंग्रेजों की देख-रेख में मिश्र की दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति होने लगी। इसका अधिकांश श्रेय लार्ड क्रोमर को ही प्राप्त है।

लार्ड क्रोमर के सुधार—यदि लार्ड क्रोमर को आधुनिक मिश्र का निर्माता कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं। वह एक बहुत बड़ा सुधारक था। उसके पदारूढ़ होने के समय मिश्र की दशा बहुत ही गिरी हुई थी। शासन अत्याचारपूर्ण था। वहाँ तीन भयंकर बुराइयाँ प्रचलित थीं—बेगार, घूसखोरी और अमानुषिक दण्ड विधान। कृषि, वाणिज्य-व्यवसाय आदि भी पिछड़े हुये थे। नहर, सिंचाई आदि की समुचित व्यवस्था नहीं थी। जनता पर टैक्स का बोझ था। फिर भी आय-व्यय पत्रक में संतुलन नहीं था। क्रोमर ने महत्त्वपूर्ण सुधारों के द्वारा एक क्रान्ति पैदा कर दी। दण्ड विधान में परिवर्तन कर कानून की कठोरता में नरमी लायी गयी। बेगार का अन्त कर उचित पारिश्रमिक देने की व्यवस्था हुई। समुचित वेतन देने का प्रबन्ध कर घूसखोरी मिटाने का प्रयत्न किया गया। नहरें निकाल कर और बाँधें बाँध कर सिंचाई की व्यवस्था कर दी गयी। कृषि और उद्योग-धन्धों की उन्नति हुई। वाणिज्य-व्यापार को प्रोत्साहन मिला। प्रजा का टैक्स घटा और बजट भी संतुलित हो गया। आबादी में भी वृद्धि हुई। इस तरह २५ वर्ष के बाद १९०७ ई० में जब क्रोमर ने पद-त्याग किया तो मिश्र एक सुखी तथा प्रगतिशील राष्ट्र के पथ पर अग्रसर हो चुका था।

क्रोमर ने उपर्युक्त सुधारों को कर अपनी अद्भुत प्रतिभा का परिचय दिया किन्तु सबसे बढ़कर तो यह बात है कि उसने अनेक विरोधों तथा कठिनाइयों के बीच रह कर इन महत्वपूर्ण सुधारों को किया और मिश्र का कायापलट कर दिया।

सूडान की पुनर्विजय—हम देख चुके हैं कि सूडान में किस तरह अंगरेजों की अपमानजनक पराजय हुई। उनके दिल में यह बात बड़ी बुरी तरह खटक रही थी और वे इस कलंक को मिटा देने के लिये उतावले हो रहे थे। दरवेशों की प्रधानता से मिश्र की सुरक्षा भी खतरे में थी। उनके हमले की आशंका बनी रहती थी। इतना ही नहीं मिश्र पर ब्रिटिश अधिकार हो जाने से सूडान पर भी उनका अधिकार होना आवश्यक था क्योंकि मिश्र की उन्नति नील नदी पर निर्भर करती रही है और यह नदी सूडान होकर ही बहती थी। अब सूडान पर अंगरेजी आधिपत्य जमाने के लिये सुअवसर भी प्राप्त हुआ। मिश्र अँगरेजों के प्रभाव में आ गया था और वहाँ की सेना सुव्यवस्थित होने लगी थी। उधर सूडान में मेहदी के अनियन्त्रित शासन से दुर्व्य-

बार कहा था कि 'हम लोगों को नये स्वामियों को शिक्षा देनी चाहिये।' इसका अर्थ था नवीन मतदाताओं के लिये शिक्षा का प्रबन्ध करना। ग्लैडस्टन ने भी इस बात की उपेक्षा नहीं की और उसने सुधारों का सिलसिला शिक्षा के ही क्षेत्र से प्रारम्भ किया।

शिक्षा सुधार—१८७० ई० के पहले इङ्गलैंड में राष्ट्रीय शिक्षा की कोई व्यवस्था न थी। बहुत से लोग निरक्षर थे। स्कूलों का अभाव था जो सार्वजनिक स्कूल थे भी उनमें कुलीनों और अमीरों का ही प्रवेश था। प्राइवेट संस्थाओं का प्रबन्ध बड़ा ही दूषित था। कुछ थोड़े से चर्च स्कूलों में ही गरीबों की पहुँच हो सकती थी। इन स्कूलों का नियन्त्रण स्थानीय पादरी किया करते थे। इनमें प्राचीन धार्मिक ढंग की ही शिक्षा दी जाती थी।

अत १८६८ और १८६६ ई० में क्रमश पब्लिक स्कूल ऐक्ट और एन्डाउड स्कूल ऐक्ट पास किये गये। इन दोनों कानूनों के द्वारा यह सिद्धान्त स्थापित किया गया कि शिक्षण संस्थाओं की देखभाल करना और उनमें आधुनिकता का प्रचार करना सरकार का काम है। दूसरे साल प्राथमिक शिक्षा विधान* पास हुआ। यह प्रिवी काउन्सिल के उपाध्यक्ष फौस्टर के नाम पर फौस्टर नियम भी कहा जाता है। इसके द्वारा इङ्गलैंड में आधुनिक सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली की नींव पड़ी। पहले-पहल इङ्गलैंड और वेल्स को कई जिलों में बाँट दिया गया और प्रत्येक जिले में जनता द्वारा निर्वाचित एक एक स्कूल बोर्ड की स्थापना हुई। इस बोर्ड को यह अधिकार दिया गया कि जिस जिले में स्कूल न हो वहाँ एक स्कूल स्थापित करे। स्कूलों का प्रबन्ध करने के लिये बोर्ड को कर लगाने का भी अधिकार दिया गया। चर्च स्कूल भी कायम रखे गये और उनकी सरकारी आर्थिक सहायता की रकम बढ़ा दी गई। १३ वर्ष तक के लड़कों के लिये स्कूल जाना अनिवार्य कर दिया गया। इन स्कूलों का निरीक्षण करने के लिये निरीक्षक नियुक्त किये गये।

इस तरह अब दो प्रकार के स्कूलों का सचालन होने लगा—बोर्ड स्कूल और चर्च स्कूल लेकिन बोर्ड स्कूल को चर्च वाले और चर्च स्कूलों को नान-कन्फर्मिस्ट नापसन्द करते थे और एक दूसरे के मार्ग में बाधा उपस्थित करने की कोशिश करते थे फिर भी सरकार अपनी योजना को कार्यान्वित करती ही गई और शिक्षा की क्रमश प्रगति होने लगी। जितने भी सुधार के कार्य हुए उनमें यह नियम सर्वश्रेष्ठ साबित हुआ क्योंकि इङ्गलैंड के भविष्य का निर्माण करने में इसका बहुत बड़ा हाथ रहा।

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भी सुधार हुआ। अब तक अंग्रेजी चर्च का सदस्य ही

* एलिमेंटरी एजुकेशन ऐक्ट

अन्त में विजय अंग्रेजों की ही हुई। जुलू नेता पकड़ा गया और जुलूलैंड अंग्रेजी राज्य में मिला लिया गया।

**बोअर युद्ध**—ट्रान्सवाल को अधिकृत करने से बोअर भी नाराज थे। अब तो जुलुओं के हमले का भी भय नहीं रहा। ब्रिटिश अफसर बोअरों के साथ अनुचित व्यवहार करते थे। अतः १८८१ ई० में बोअरों ने विद्रोह कर दिया। अंग्रेजों और बोअरों में युद्ध छिड़ गया। मजुबा पहाड़ी पर अंग्रेजों की करारी हार हुई। अब वे बोअरों की स्वाधीनता मान लेने के लिये बाध्य हुये और ३ वर्ष के बाद उन्होंने ट्रान्सवाल को स्वतन्त्र कर दिया।

**पाल क्रुगर और सेसिल रोड्स**—इसी समय दक्षिणी अफ्रीका के रंग-मंच पर महान नेताओं का प्रादुर्भाव हुआ—पाल क्रुगर और सेसिल रोड्स।

पाल क्रुगर का जन्म १८२५ ई० में केप कालोनी में हुआ था। वह बड़ा ही साहसी और प्रतिभाशाली व्यक्ति था। वह बोअर था और १० वर्ष की उम्र में उसे भी अपने माता-पिता के साथ देश परित्याग करना पड़ा था। १४ वर्ष की उम्र में उसने जुलू प्रजा के खिलाफ एक युद्ध में भाग लिया था। शिक्षा के क्षेत्र में उसे बहुत पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हो सका लेकिन बाइबल के अध्ययन में उसे विशेष अभिरुचि थी। १८८१ ई० में बोअरों ने उसे अपना नायक बनाया और दो वर्ष के बाद वह ट्रान्सवाल प्रजातन्त्र का राष्ट्रपति निर्वाचित हुआ। वह कई वर्षों तक इस पद को सुशोभित करता रहा। १८६६ ई० में उसने इंगलैंड के विरुद्ध युद्ध की भी घोषणा की और यूरोप के कुछ राज्यों से भी सहायता पाने के लिये प्रयत्न किया। १६०२ ई० तक यह आंग्ल-बोअर युद्ध चलता रहा और १६०४ ई० में स्वीटजरलैंड में क्रुगर का देहान्त हो गया।

सेसिल रोड्स अंग्रेज था। एक पादरी के कुल में उसका जन्म हुआ था। लड़कपन से ही वह दक्षिणी अफ्रीका का भ्रमण करता था। उसने आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में शिक्षा भी प्राप्त की। अफ्रीका में वह किम्बरले में हीरे की खानों में काम करने लगा और उसके धन में वृद्धि होने लगी। वह धनी था तो दिल का भी उदार था। १८६० ई० में वह केप कालोनी का प्रधान मंत्री निर्वाचित हुआ और ६ वर्षों तक अपने इस पद पर कायम रहा। वह ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार चाहता था। उसी की प्रेरणा से बेचुआनालैंड में ब्रिटिश संरक्षण कायम हुआ, जुलूलैंड अंग्रेजी राज्य में मिलाया गया और ब्रिटिश दक्षिणी अफ्रीकी कम्पनी की देख-रेख में रोडेशिया पर ब्रिटिश अधिकार कायम हुआ।

**ट्रान्सवाल में स्वर्ण क्षेत्र**—१८८१ ई० में ट्रान्सवाल में स्वर्ण क्षेत्र का पता

सदस्या के दो रेजिमेंट में बाँट दिया जाने लगा। उसमें यदि एक बटालियन विदेश में रहता था तो दूसरा देश के अन्दर।

७ आयरिश समस्या का समाधान—ग्लैडस्टन ने आयरलैंड की समस्या भी सुलझाने की कोशिश की। इसी समय उसने आयरिश चर्च ऐक्ट तथा लैंड ऐक्ट पास किया।*

ग्लैडस्टन का पतन और उसके कारण—(क) कहा जाता है कि सुधारों से जब लोग सन्तुष्ट हो जाते हैं तो सुधारकों का महत्व कम हो जाता है। ग्लैडस्टन ने अपने देश की उपयुक्त सुधारों के द्वारा अकथनीय सेवा की तथा वह कुछ और भी करना चाहता था लेकिन प्रत्येक देश में कुछ-कुछ सुधार विरोधी लोग रहते ही हैं। ऐसे कायर लोगों ने इसे नापसन्द किया और वे सोचने लगे कि अब काफी सुधार हो चुके हैं अब उसे रोकना आवश्यक है। इस मन्त्रिमंडल के कार्य १८३०-३४ ई० के ग्रे मन्त्रिमंडल के कार्य के समान थे और जिस तरह ग्रे के सुधारों के बाद देश में प्रतिक्रिया उठी थी जिससे ह्विग शक्तिहीन बनने लगे थे, उसी तरह अन्त में ग्लैडस्टन को भी प्रतिक्रिया का सामना करना पड़ा।

(ख) ग्लैडस्टन अभी और सुधार करने के लिये उत्सुक था। वह दियासलाई पर कर लगाना चाहता था। मादक द्रव्यों के व्यापार को नियन्त्रित करना चाहता था और वह आयरलैंड में एक ऐसे विश्वविद्यालय की स्थापना करना चाहता था जिसमें इतिहास, दर्शनशास्त्र और धर्म शास्त्र की पढ़ाई होती। इन सभी सुधार योजनाओं से उसकी लोकप्रियता जाती रही।

(ग) उसके कई सुधारों से कुछ लोग असंतुष्ट थे। नन-कन्फर्मिस्ट लोग चर्च स्कूल के लिये कर देना नहीं चाहते थे। आयरिश चर्च के अव्यवस्थित होने से चर्च वाले, भू विनियम के पास होने से जमींदार और सैन्य सुधार के कारण अफसर वर्ग उससे असन्तुष्ट हो गये थे।

(घ) मन्त्रिमंडल के कुछ सदस्य भी अदूरदर्शी और कमजोर थे। वे कई नियुक्तियों में पक्षपात करने लगे थे।

(ङ) ग्लैडस्टन की वैदेशिक नीति कमजोर, क्रियाहीन और दीर्घसूत्री थी अतः यह अनुपयोगी सिद्ध होने लगी।

(च) डिसरैली के नेतृत्व में कनजर्वेटिव पार्टी ने ग्लैडस्टन की अप्रियता से बड़ा ही लाभ उठाया। उसने कैबिनेट के सदस्यों की बुझी हुई ज्वालामुखियों से तुलना की और उनकी नीति को 'लूट तथा भूल' की नीति कहा। इसके सिवा उसने यह

* आयरलैंड सम्बन्धी अध्याय देखें।

## अध्याय ५३

# आयरलैंड ( १८१५–१९१४ ई० )

भूमिका—१९वीं और प्रारंभिक २०वीं सदी में आयरलैंड ने ब्रिटिश दलीय राजनीति में बहुत बड़ा भाग लिया है। इस युग में आयरलैंड ही ब्रिटिश राजनीति का केन्द्र बिन्दु था। लार्ड सैलिसबरी के शब्दों में कभी-कभी तो राजनीति का मतलब ही था केवल आयरलैंड और कुछ नहीं। १९वीं सदी में आयरलैंड ने इंगलैंड से निरंतर बदला ही चुकाया। जार्ज पील नामक अंग्रेज का कहना था कि १८वीं सदी में हम लोगों ने उसके उद्योग-धन्धों को नष्ट किया और उसने १९वीं सदी में हम लोगों के मंत्रिमंडल को ही तोड़ दिया। वास्तव में आयरी समस्या के कारण ब्रिटिश राजनीतिज्ञों के सिर में दर्द हो जाया करता था और वे इसे हल कर वहाँ शान्ति-व्यवस्था स्थापित करने में ही व्यस्त थे।

हम देख चुके हैं कि १८०० ई० में संयोग से आयरी समस्याओं का निराकरण नहीं हुआ। उनकी अनेक शिकायतें अभी भी मौजूद रहीं और बहुत अंशों में उनकी शिकायतें उचित भी थीं। राजनीतिक दृष्टि से कैथोलिकों का उद्धार नहीं हुआ और उन पर अभी भी कई प्रतिबन्ध लगे रहे। आर्थिक दृष्टि से आयरलैंड में विदेशी जमींदारों की प्रधानता थी और किसानों को मनमाने ढंग से जमीन से हटाया जा सकता था। धार्मिक दृष्टि से बहुमत में रहने पर भी कैथोलिक धर्म राज-धर्म नहीं था और कैथोलिकों को प्रोटेस्टेंट चर्च के लिये दशांश देना पड़ता था। सांस्कृतिक दृष्टि से शिक्षा-व्यवस्था में भी कैथोलिकों का हाथ नहीं था।

**ओकौनेल का उदय**—१९वीं सदी के पूर्वार्द्ध में आयरियों को एक सुयोग्य नेता मिल गया। उसका नाम था डेनियल ओकौनेल। वह एक कैथोलिक वकील था जिसमें कई गुण थे। वह मिलनसार एवं उदार व्यक्ति था। वह बहुत बड़ा वक्ता था जो अपने भाषण से श्रोताओं को मुग्ध कर किसी भी दिशा में प्रभावित कर लेता था। वह संयोग का विरोधी था और इसे नष्ट करना चाहता था किन्तु वह हिंसात्मक तरीकों का नहीं बल्कि वैधानिक तरीकों का ही प्रबल समर्थक था। ताज के प्रति उसकी सहानुभूति थी। ३० वर्षों तक वह आयरियों का सफल नेतृत्व करता रहा।

ओकौनेल ने मतदाताओं से अनुरोध किया कि वे उन्हीं उम्मीदवारों को अपना मत दें जो कैथोलिकों का उद्धार करने के लिए प्रतिज्ञा करें। १८२३ ई० में उसने आयरी पादरियों के सहयोग से कैथोलिक संघ (एसोसियेशन) नामक एक संस्था

था। ये नियम पानी का प्रबन्ध, शौच गृहों एवं नालियों की सफाई तथा संक्रामक रोगों से बचाव से सम्बन्ध रखते थे।

३ श्रमजीवी निवास नियम*—उसी साल (१८७५ ई०) इस कानून के द्वारा गन्दे और अस्वास्थ्यकर मकानों को तोड़कर उनका पुनः निर्माण करने की आज्ञा दी गई।

४ इन्क्लोज़र आफ़ कामन्स ऐक्ट—१८७५ ई० में सार्वजनिक ज़मीनों को घेरे से बचाने के लिये यह नियम स्वीकृत हुआ।

५ जहाज़ी व्यापार नियम†—सन् १८७६ ई० में यह नियम पास हुआ, जिसके द्वारा बोर्ड आफ़ ट्रेड को सभी जहाज़ों का जमानतरण करने के पूर्वनिरीक्षण करने का आदेश दिया गया। व्यापारिक जहाज़ों के नाविकों की सुरक्षा के लिये यह नियम एक चार्टर ही था।

६ १८७७ ई० में कैम्ब्रिज और आक्सफोर्ड के कालेजों में सुधार के लिये एक कमीशन बैठाई गई।

७ १८७४ ई० में ४५ कानूनों के सार को लेकर एक कानून पास किया गया जिसे मॉसेज़ कान्सोलिडेटिंग ऐक्ट कहते हैं।

८ पारस्परिक सद्भावों की वृद्धि के लिये एक फ्रेन्डली सोसाइटीज़ ऐक्ट पास किया गया।

९ १८८० ई० में एक एम्प्लायर्स लाइबिलिटी ऐक्ट पास हुआ जिसके अनुसार काम करते समय किसी घटना से मज़दूरों की नुकसानी के लिये मालिक ज़िम्मेदार हुए। उन्हें हरजाना देने के लिये मज़बूर होना पड़ा।

डिज़रैली का पतन—१८८० ई० में साधारण चुनाव हुआ जिसमें कन्ज़र्वेटिव पार्टी की हार हो गई और लिबरल पार्टी की विजय हुई। अतः डिज़रैली को पद-त्याग कर देना पड़ा। डिज़रैली के पतन के कई कारण थे।

(क) उसकी वैदेशिक नीति इतनी दुस्साहसपूर्ण थी कि सरकार को सदा उसी क्षेत्र में लिप्त रहना पड़ा और घरेलू समस्याओं का ठीक समाधान नहीं हो सका। (ख) कन्ज़र्वेटिव पार्टी के खिलाफ़ लिबरलों ने निर्वाचन क्षेत्रों में ज़बर्दस्त प्रचार किया एवं अपना वैज्ञानिक संगठन किया। (ग) ग्लैडस्टन कुछ समय तक राजनीति से अलग हो गया था। किन्तु उसने पुनः राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश किया। इस बार उसने बड़ी ही सक्रियता दिखलाई और उत्तर तथा मध्य प्रदेशों में कन्ज़र्वेटिव पार्टी के विरुद्ध ज़ोरदार प्रचार किया। उसने डिज़रैली की वैदेशिक तथा साम्राज्यवादी नीति की

---

* आर्टिज़न्स ड्वेलिंग्स ऐक्ट

† मर्चेन्ट शिपिंग ऐक्ट

भी अपने खेत से बेदखल किये जा सकते थे या उस खेत के लगान में वृद्धि की जा सकती थी।

खेती की उर्वरा शक्ति बढ़ाने, मेंड़ बनाने, टट्टी लगाने आदि सुधारों के लिये किसानों को कहाँ तक पुरस्कृत कर प्रोत्साहित किया जाता तो उल्टे जमीन से अचानक निकाल कर या लगान बढ़ाकर उन्हें दण्डित किया जाता था। ऐसी स्थिति में कोई किसान जमीन में दिल से सुधार ही करना नहीं चाहता था। दूसरे धर्म सम्बन्धी समस्या थी। आयरी जनसंख्या में कैथोलिकों की अधिकता थी फिर भी वहाँ का स्थापित चर्च प्रोटेस्टेंट चर्च ही था। इस तरह धार्मिक क्षेत्र में अल्पसंख्यकों का ही बोलबाला था। इतना ही नहीं, कैथोलिकों को अपने चर्च के अलावे इस चर्च के खर्च में भी हाथ बँटाना पड़ता था। यह व्यवस्था कैथोलिकों के लिए अन्यायपूर्ण तथा अपमानजनक थी। तीसरी समस्या संस्कृति सम्बन्धी थी। शिक्षा के क्षेत्र में भी कैथोलिकों की प्रधानता नहीं थी। कोई ऐसा विश्वविद्यालय नहीं था जहाँ कि कैथोलिक अपने ढंग से शिक्षा का प्रबन्ध कर सकते थे।

ग्लैडस्टन एक समझदार और व्यावहारिक प्रधान मंत्री था। वह जानता था कि बल एवं दमन के ही द्वारा आयरियों को शान्त नहीं किया जा सकता बल्कि उनकी समस्याओं का समुचित निराकरण होना चाहिये। आयरियों को सन्तुष्ट एवं शान्त करने के लिये उसने अपने जीवन का एक प्रधान लक्ष्य ही बना रखा और इसके लिये उसने भरपूर प्रयत्न भी किया। उसने अनेक सुधारों को कार्यान्वित किया।

ग्लैडस्टन ने १८६६ ई० में आयरी चर्च ( डिसस्टेब्लिशमेंट ऐक्ट ) उन्मूलन नियम पास किया और इसके लागू होते ही आयरी प्रोटेस्टेंट चर्च का उन्मूलन हो गया। अब राज्य से इसका कोई सम्बन्ध नहीं रहा। इस चर्च की सम्पत्ति का कुछ भाग इसके ही हाथ में रहा और बाकी सम्पत्ति को सार्वजनिक हितों के काम में खर्च किया जाने लगा।

१८७० ई० में प्रथम भूमि विधान पास हुआ। इसके द्वारा भूमि पर जमींदारों के एकाधिकार का खात्मा हो गया। अब एक तरह से जमीन पर मालिक तथा किसान दोनों का अधिकार स्वीकार किया गया। यह तय हुआ कि यदि किसान लगान देता रहा है तो उसे भूमि से वंचित नहीं किया जा सकता। यदि लगान के अलावे किसी दूसरे कारण से किसान को जमीन से निकालने की नौबत आ गयी और यदि किसान ने उस जमीन में काफी प्रगति की है तो उसे क्षति पूर्ति देना आवश्यक कर दिया गया। यदि किसान ही उस खेत को खरीद लेना चाहे तो इसके लिये भी उसे कर्ज आदि की सुविधा दी गई। इससे किसानों को कुछ फायदा तो अवश्य हुआ किन्तु इस विधान में भयंकर त्रुटियाँ भी रह गयीं। अतः किसानों को वास्तविक लाभ नहीं दीख

की जनसख्या में १२ व्यक्तियों में एक व्यक्ति को *मताधिकार प्राप्त हुआ किन्तु* अभी भी ११ आदमी के हिसाब से लागों को मताधिकार नहीं मिला या अब १८८४ ई० में ग्लैडस्टन ने काउन्टियों में मताधिकार का विस्तार करने के लिये तीसरा सुधार नियम उपस्थित किया लेकिन सीटों के पुनर्वितरण के सम्बन्ध में कोई बात न देख कर लार्ड सभा ने इसका बड़ा ही विरोध किया। ग्लैडस्टन सीटों के वितरण के सम्बन्ध में एक दूसरा ही बिल अलग से उपस्थित करना चाहता था जिसे उसने प्रगट नहीं किया था। लार्डों ने पर्लियामेंट को भंग करने की माँग पेश की किन्तु ग्लैडस्टन ने इस माँग को अस्वीकार कर दिया। अन्त में महारानी के प्रयत्न से समझौता हो गया। ग्लैडस्टन ने पुनर्वितरण के प्रस्तावों के सिद्धान्त को प्रगट किया। तब १८८४ ई० में मताधिकार नियम और १८८५ ई० में स्थानों का पुनर्वितरण नियम पास किया गया।

परिवर्तनें—पहले नियम के अनुसार मताधिकर प्रणाली में परिवर्तन किया गया। अब बौरो और काउन्टी में मताधिकार को एक समान कर दिया गया। बौरो की तरह काउन्टी में भी सभी मकान मालिकों और १० पौंड वार्षिक किराया देने वालों को *मताधिकार दे दिया गया। द्वितीय नियम के द्वारा प्रतिनिधित्व प्रणाली में परिवर्तन* हुआ। जिन बौरों की जनसख्या १५,००० से कम थी उनसे प्रतिनिधित्व का अधिकार छीन लिया गया। ५०,००० तक की जनसख्या वाले बौरों को एक ही प्रतिनिधि भेजने का अधिकार मिला। इस तरह ५०,००० और १,६५,००० के बीच की जनसख्या वाले बौरे दो प्रतिनिधि भेज सकते थे। १,६५,००० से अधिक जनसख्या वाले बौरों की पूर्ति ५०,००० पर एक अतिरिक्त प्रतिनिधि भेजने का अधिकार मिला। निर्वाचन क्षेत्रों के निर्माण करने में जनसंख्या का ख्याल रखा गया और साधारणत एक सदस्य के आधार पर उनका विभाजन कर दिया गया। इस तरह १६० स्थान रिक्त हुए और १२ नये सीट बढ़ाये गये। इन सभी सीटों का पुनर्विभाजन किया गया। अब बड़े बड़े शहरों के प्रतिनिधियों की सख्या में और भी वृद्धि कर दी गई। अब लदन के प्रतिनिधियों की संख्या २२ से ६२ हो गई। कुछ दूसरे शहरों के प्रतिनिधियों की सख्या ३ से ७ और ६ तक बढ़ा दी गई। १२ नये सीटों के निर्माण होने से कॉमन्स-सभा के कुल सदस्यों की सख्या ६५८ से ६७० हो गई।

परिणाम—इन नियमों के पास हो जाने से कृषक मजदूरों और शहरों के लगभग सभी नागरिकों को *मताधिकार प्राप्त हो गया। अब यहाँ की जनसख्या में* ७ व्यक्तियों में १ व्यक्ति मतदाता बन गया। अब मतदाताओं की सख्या २०,००,००० से लगभग ५०,००,००० हो गई और इगलैंड पूर्ण जनतान्त्रिक राज्य के बहुत ही निकट पहुँच गया।

दबाने के लिये कठोर दमन नीति अपनायी। १८८८ ई० में एक फौजदारी कानून ( क्राइम ऐक्ट ) पास हुआ। इसके द्वारा आयरलैंड में मुकदमों में जूरी का प्रयोग स्थगित कर दिया गया और विशेष प्रकार के मैजिस्ट्रेटों द्वारा मुकदमों की सुनवायी होने लगी। उधर टाइम्स नामक अखबार में पार्नेल पर कई उपद्रवों का अभियोग लगाया गया और उसकी जाँच के लिये ३ जजों की कमीशन की नियुक्ति हुई। कमीशन ने उसे निर्दोष घोषित किया किन्तु शीघ्र ही पार्नेल एक तलाक सम्बन्धी मामले में फँस गया। पार्नेल ने अपनी सफाई नहीं दी और बहुत से लोगों का अब उसमें विश्वास नहीं रहा। यह घटना १८९० ई० में हुई। अब उसकी धाक मिट गयी। दूसरे ही साल ४६ वर्ष की उम्र में ही वह इस संसार से ही चल बसा।

सरकार ने दमन के साथ सुविधाओं को भी प्रदान किया। कई सुधार कार्यान्वित किये गये। १८८७ ई० में पुनः एक भूमि विधान पास हुआ। इसके अनुसार १८८१ ई० के भूमि विधान के सिद्धान्तों को स्वीकार कर उनके क्षेत्रों को विस्तृत किया गया। १८९१ ई० में भूमि-क्रय नियम ( लैंड पर्चेज ऐक्ट ) पास हुआ। इसके द्वारा किसानों को भूमि खरीदने के लिये सरकार की ओर से कम या नाम मात्र सूद पर कर्ज देने की व्यवस्था की गयी। लाइट रेलवे ऐक्ट, कनजेस्टेड डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ऐक्ट आदि जैसे नियमों के द्वारा भी पश्चिम के घनी आबादी वाले तथा अन्य क्षेत्रों में भी सुधार हुये। इस प्रकार ब्रिटिश सरकार ने सुधार तथा दमन-चुम्बन तथा लातमर्दन की नीति के द्वारा आयरियों को सन्तुष्ट कर होमरूल आन्दोलन को कमजोर कर देने का प्रयत्न किया। पार्नेल की मृत्यु के बाद उसकी पार्टी भी छिन्न-भिन्न हो गयी और इससे भी आयरी आन्दोलन में कमजोरी उत्पन्न हुई।

ग्लैडस्टन ने अपने चौथे मन्त्रिमंडल में १८९३ ई० में दूसरा होम रूल बिल उपस्थित किया। इसके अनुसार आयरलैंड में पार्लियामेंट स्थापित होती। उच्च सभा का सम्पत्तिक योग्यता के आधार पर कर-दाताओं के द्वारा निर्वाचन होता। आयरलैंड के ८० सदस्य ब्रिटिश पार्लियामेंट में भी भेजे जाते और वे साम्राज्य-नीति सम्बन्धी सभी मामलों में मत देने के अधिकारी होते। यह बिल कामन्स सभा में सकीर्ण बहुमत से पास हुआ किन्तु लार्ड सभा में बिलकुल ही अस्वीकृत हो गया। इस समय तक ग्लैडस्टन बहुत बूढ़ा भी हो चला था। अतः उसने शीघ्र ही पद-त्याग कर डाला।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि कन्जर्वेटिव और लिबरल दोनों ही दल आयरी समस्या की विकट स्थिति को स्वीकार करते थे और उन्हें सुलझाने के लिये प्रयत्नशील थे किन्तु दोनों के तरीके भिन्न थे। कन्जर्वेटिव दल का ख्याल था कि यदि भूमि सम्बन्धी समस्या हल हो जाय तो स्वराज्य आन्दोलन शिथिल पड़ जायगा अतः वह दल भूमि-समस्या के हल करने में ही व्यस्त रहा। लिबरलों का

ग्लैडस्टन का चतुर्थ मंत्रिमंडल (१८९२—९४ ई०)—इस बार ग्लैडस्टन ने पुनः आयरिश होमरूल बिल उपस्थित किया। कॉमन्स सभा में उसने बिल को स्वीकृत करा लिया पर लार्ड सभा ने अस्वीकार कर दिया। इस समय तक ग्लैडस्टन ८३ वर्ष का बूढ़ा हो चला था, लेकिन तो भी अपनी हार मानने को वह तैयार नहीं था। वह लार्डों से एक बार और लड़ना चाहता था लेकिन उसके समर्थकों ने उसे समझा-बुझा कर रोक दिया। इससे वह बड़ा निराश हुआ और १८९४ ई० में पद-त्याग कर दिया। बुढ़ापे की जर्जरता से बाध्य होकर उसने राजनीति से विरक्ति ले ली और ४ वर्ष के बाद इस असार संसार से चल बसा।

## डिसरैली और ग्लैडस्टन का आलोचनात्मक अध्ययन

डिसरैली—विक्टोरिया युगीन मन्त्रियों में डिसरैली सर्वश्रेष्ठ था। उसने घरेलू तथा वैदेशिक दोनों ही क्षेत्रों में अपूर्व दूरदर्शिता, बुद्धिमत्ता, व्यावहारिकता तथा महानता का परिचय दिया था। कितने प्रधान मंत्री हुए जिनमें किसी को या तो सिर्फ वैदेशिक क्षेत्र में या सिर्फ घरेलू क्षेत्र में ही पूरी सफलता प्राप्त हुई। शायद ही कोई ऐसा सौभाग्यशाली व्यक्ति था जिसने दोनों ही क्षेत्रों में एक साथ सफलता प्राप्त की हो। लेकिन डिसरैली को ऐसा सौभाग्य प्राप्त था। वह एक उच्चकोटि का सुधारक और साम्राज्यवादी दोनों ही था। सुधारक की दृष्टि से यदि उसकी तुलना पील और ग्लैडस्टन से की जा सकती है तो साम्राज्यवादी की दृष्टि से उसकी तुलना बड़े पिट तथा लार्ड पामर्स्टन से करना युक्तिसंगत है। पील के समान डिसरैली भी बड़ा ही व्यापक दृष्टिकोण रखता था। अतः दोनों ही पुराने किस्म के प्रतिक्रियावादी कन्जर्वेटिव नहीं थे। आवश्यकतानुसार दोनों ही अपनी नीति में परिवर्तन कर सकते थे। पील के समान डिसरैली ने भी कन्जर्वेटिव पार्टी को सुधार का पक्षपाती बना दिया था। वह दलितों तथा मजदूरों की उन्नति चाहता था। दूसरे सुधार नियम को १८६७ ई० में उसी ने उपस्थित तथा स्वीकृत किया था। उसके मन्त्रित्वकाल में अन्य कई महत्वपूर्ण सुधार हुए जिनके द्वारा निम्न श्रेणी के लोगों की दशा में पर्याप्त सुधार हुआ तथा सामाजिक धरातल ऊपर उठ गया।

वैदेशिक क्षेत्र में तो डिसरैली और भी अधिक सफल हुआ था। उसने निकट पूर्वी समस्या का समाधान कर रूसी मन्सूबे को मिट्टी में मिला दिया। साइप्रस को अंग्रेजी अधिकार में कर लिया जिससे ब्रिटिश साम्राज्य के एशियाई भाग की रक्षा हुई। इस्माईलपाशा से स्वेज कम्पनी के हिस्से को खरीद कर उसने मिश्र पर अंग्रेजी आधिपत्य की नींव डाली। अफ्रीका और अफगानिस्तान में निस्सन्देह अंग्रेजों को कुछ हानि उठानी पड़ी थी लेकिन युद्ध में कुछ हानियों का होना तो स्वाभाविक ही

उस भू-भाग को कनथ कहा करते थे जिसका अर्थ था ग्राम। इसी शब्द के आधार पर कार्टियर ने उत्तरी अमेरिका के उत्तरी भाग को कनाडा के नाम से पुकारा। १७वीं सदी के प्रारम्भ में फिर फ्रांसीसी नाविक वहाँ गया और १७६३ ई० तक कनाडा के अधिकांश भाग पर फ्रांसीसियों ने अपना अधिकार कायम कर लिया लेकिन वे ही निर्विरोध समस्त कनाडा के स्वामी नहीं रहे। १६७० ई० में हडसन बे नामक एक ब्रिटिश कम्पनी भी व्यापार में लगी हुई थी। अतः उत्तरी अमेरिका में भी अंग्रेज तथा फ्रांसीसी एक दूसरे के प्रतियोगी हो गये और दोनों में युद्ध तक होने लगा। इससे अंग्रेज ही अधिक लाभान्वित रहे। १७१३ ई० में युट्रेक्ट की सन्धि के द्वारा उन्हें नोवास्कोशिया तथा न्यूफाउन्डलैंड मिले और १७६३ ई० में पेरिस की सन्धि के द्वारा कनाडा तथा अन्य प्रदेश प्राप्त हुये। वहाँ एक अंग्रेज गवर्नर शासन करने लगा किन्तु फ्रांसीसी भाषा तथा विधि-विधानों को भी स्थान दिया गया लेकिन यह स्थिति स्थायी नहीं रह सकी।

फ्रांसीसियों की संख्या ७० हजार थी लेकिन १७६० ई० से अंग्रेज भी कनाडा में अधिक संख्या में आने लगे। वे फ्रांसीसियों से अधिक प्रगतिशील थे। अतः फ्रांसीसियों को अंग्रेजों के आगमन से भय होने लगा। उनके भय को ही दूर करने के लिये १७७४ ई० में ब्रिटिश पार्लियामेंट ने क्वेबेक ऐक्ट पास किया। इसके अनुसार क्वेबेक प्रान्त की सीमा बढ़ा दी गयी। शासन के लिये एक गवर्नर नियुक्त हुआ और उसे सलाह देने के लिये एक मनोनीत कौंसिल की व्यवस्था हुई। फ्रांसीसियों को धार्मिक स्वतन्त्रता प्रदान की गई यानी कैथोलिक धर्म स्वीकृत कर लिया गया। उनके रस्म-रिवाज तथा विधि-विधान भी सुरक्षित रखे गये।

इस ऐक्ट से फ्रांसीसी तो संतुष्ट थे किन्तु अंग्रेजों को खुशियाली नहीं हुई। क्वेबेक की सीमा विस्तृत करने से उनके विकास के मार्ग में रुकावट पैदा हो गई। साथ ही अभी उनको स्वशासन के अधिकार नहीं मिले। इस तरह कितने अंग्रेजों ने अमेरिका के संग्राम में ब्रिटेन का साथ नहीं दिया किन्तु फ्रांसीसियों ने उनकी सहायता की। अमेरिकी संग्राम के समय भी कुछ उपनिवेश वासी इंगलैंड के प्रति राजभक्त बने रहे। ऐसे लोगों का संयुक्त राज्य में रहना कठिन हो गया। अतः वे कनाडा में आकर बसने लगे। उन्होंने न्यूब्रन्सविक और ओन्टेरियो को आबाद किया। धार्मिक दृष्टि से भी उन्होंने अपने चर्च को अंग्रेजी चर्च के ही आधार पर संगठित किया। इस तरह फिर एक नयी समस्या उत्पन्न हो गई।

इस समस्या को हल करने के लिये १७९१ ई० में ब्रिटिश पार्लियामेंट ने एक कनाडा ऐक्ट पास किया। इसे 'कन्स्टीच्युशनल ऐक्ट' भी कहते हैं। इसके अनुसार कनाडा को दो भागों में बाँट दिया गया। (१) ऊपरी कनाडा ( ओन्टेरियो ) और

## अध्याय ४५

# लार्ड सैलिसबरी तथा अन्य मंत्रिमंडल (१८६४—१६०२ ई०)

१ सैलिसबरी की राजनीतिक जीवनी—मार्क्विस ऑफ सैलिसबरी का जन्म १८३० ई० में हुआ था। १८५४ ई० में २४ वर्ष की अवस्था में वह स्टैम्फोर्ड के निर्वाचन क्षेत्र से कामन्स सभा का सदस्य हुआ था। प्रारंभ से ही वह एक कन्जर्वेटिव था। १८६८ ई०में लार्ड सभा में प्रवेश किया। सन् १८७५ ई० में डिसरैली के मन्त्रिकाल में वह भारत सचिव बनाया गया तथा १८७८ ई० में परराष्ट्र सचिव हुआ। ग्लैडस्टन के लिबरल मंत्रिमंडल (१८८०-८५ ई०) के समय उसने लार्ड सभा में विरोधी पक्ष का सफल नेतृत्व किया। १८८५ ई० में वह प्रधान मंत्री हुआ लेकिन कुछ ही महीनों के बाद नवम्बर महीने में निर्वाचन हुआ जिसमें वह हार गया। लेकिन दूसरे ही साल आयरिश होमरूल बिल के प्रश्न पर ग्लैडस्टन ने पदत्याग कर दिया और वह दूसरी बार प्रधान मंत्री हुआ। १८६२ ई० के निर्वाचन में फिर उसकी पराजय हुई और उसे पद-त्याग करना पड़ा। १८६५ ई० में रोजबरी के पद-त्याग के बाद वह पुनः प्रधान मंत्री हुआ। सन् १६०२ ई० के जुलाई में अस्वस्थता के कारण उसने राजनीतिक झमेलों से अपने को अलग कर लिया। दूसरे ही महीने अगस्त में उसकी मृत्यु भी हो गई।

२ सैलिसबरी का चरित्र—सैलिसबरी विक्टोरिया युग के अन्य प्रसिद्ध राजनीतिज्ञों की भाँति ही एक कुशल और योग्य मंत्री था। वह प्रतिभाशाली एवं व्यापक दृष्टिकोण का व्यक्ति था। एक सफल राजनीतिज्ञ के सभी गुणों से वह विभूषित था। ज्ञान के क्षेत्र में उसकी प्रतिभा अद्भुत थी। राजनीति शास्त्र पर तो उसका अधिकार ही था, लेकिन विशेषता यह थी कि वह अन्य विषयों का भी पंडित था। कृषिशास्त्र, विज्ञान, कानून एवं इतिहास का उसे अच्छा ज्ञान था। इतिहास में उसकी विशेष दिलचस्पी थी। साथ ही वह एक अपूर्व साहित्यिक था। अंग्रेजी भाषा एवं साहित्य पर उसने पूर्ण अधिकार कर लिया था। 'क्वार्टरली रिव्यू' नामक पत्रिका में निकलने वाले उसके सामयिक लेख तत्कालीन राजनीतिज्ञों द्वारा बड़े चाव से पढ़े जाते थे तथा समस्त देश में उनकी बड़ी माँग थी। इसी तरह वह स्वयं वैज्ञानिक अनुसंधान भी किया करता था और इस कार्य के लिये उसने अपना एक स्वतन्त्र प्रयोगशाला भी खोल रखा था। इन सभी चीजों के परिणामस्वरूप सैलिसबरी को दुनिया का पूर्ण ज्ञान एवं अनुभव हो गया। वह बड़ा ही निर्भीक तथा स्पष्टवादी था। अपने विचारों को

## ( ३ ) आस्ट्रेलिया

**प्रारंभिक इतिहास**—आस्ट्रेलिया का क्षेत्रफल बहुत विस्तृत है। प्रारंभ में यहाँ आबादी बहुत ही कम थी। यहाँ कुछ आदिम निवासी थे जो बड़े ही असभ्य थे। टिरोरी नामक स्पेनी नाविक सर्वप्रथम यूरोपियन था जो १६०६ ई० में आस्ट्रेलिया के उत्तरी-पूर्वी छोर पर एक खाड़ी के निकट पहुँचा था। अब उसी के नाम से वह स्थान भी प्रसिद्ध है। १६१६ ई० में डचों ने पश्चिमी किनारे की खोज की और बाद में तसमानने दक्षिणी पूर्वी तट पर तसमानिया का पता लगाया। १७वीं सदी के चतुर्थ चरण में एक ब्रिटिश समुद्री डाकू डेम्पियर भी आस्ट्रेलिया के तट पर पहुँचा। इस महादेश का महत्व अंग्रेजों को तब समझ में आने लगा। १७६८ और १७७९ ई० के बीच कप्तान कुक ने आस्ट्रेलिया के उपजाऊ एवं विस्तृत पूर्वी तट की खोज की। उसने इंगलैंड के नाम पर उस भाग को अधिकृत कर लिया।

१८वीं सदी तक इंगलैंड का दंड विधान बड़ा ही कठोर था और वहाँ के बड़े-बड़े कैदी अमेरिका भेजे जाते थे किन्तु अमेरिका के स्वतन्त्र हो जाने से वहाँ अपराधियों का निर्वासन बन्द हो गया। अब आस्ट्रेलिया में ही अपराधी भेजे जाने लगे। १७८८ ई० में कप्तान फिलिप की देख-रेख में अपराधियों का एक जत्था पहुँचा। उसके बाद सिडनी में नियमित रूप से अपराधी भेजे जाने लगे।

प्रारम्भ में उपनिवेशवासियों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। जलवायु उपयोगी नहीं मालूम पड़ी। पूँजी एवं श्रम के अभाव में कृषि संभव नहीं थी परन्तु १७९७ ई० में जॉन मैकार्थर ने ऊन के व्यवसाय के लिये यहाँ की जलवायु को उपयुक्त समझा। अतः उसने भेड़ों को पालने पर जोर दिया और ऊन-व्यवसाय की तरक्की होने लगी। १९वीं सदी के पूर्वार्द्ध में दो अन्य कारणों से भी आस्ट्रेलिया का विकास हुआ। भीतरी भागों की खोज की जाने लगी और उन्हें बसाया जाने लगा। मातृभूमि के लोगों के आगमन को प्रोत्साहित किया गया। धनी उपनिवेशवासियों के हाथ जमीन बेचने की ओर गरीबों को आर्थिक सहायता देने की व्यवस्था कर दी गयी। धीरे-धीरे कई चीजों की खानें मिलने लगीं। दक्षिण आस्ट्रेलिया में ताँबे, न्यूसाउथ वेल्स में पत्थर का कोयला और न्यूसाउथ वेल्स, विक्टोरिया तथा क्वीन्सलैंड में सोने की खानें पायी गईं। बस, अब क्या था—ग्रेट ब्रिटेन से अंग्रेजों के दल के दल पहुँचने लगे। अब कृषि के विकास पर भी ध्यान दिया जाने लगा। धीरे-धीरे अपराधियों के निर्वासन पर भी प्रतिबन्ध लगने लगा और १९वीं सदी के मध्य तक यह बन्द ही हो गया।

**औपनिवेशिक स्वराज्य का विकास**—कनाडा में स्वायत्त शासन का जो सिद्धान्त स्वीकृत हुआ उसे आस्ट्रेलिया में भी लागू किया गया। न्यूसाउथ वेल्स में १८४० ई०

**( ग ) राष्ट्रीय ऋण सम्बन्धी सूद में कमी**—राष्ट्रीय ऋण पर उस समय ३ प्रतिशत के हिसाब से सूद दिया जाता था। अब उसे घटाकर ढाई प्रतिशत कर दिया गया।

**( घ ) स्थानीय शासन में सुधार**—इस समय स्थानीय शासन के क्षेत्रों में बहुत सी बुराइयाँ वर्तमान थीं। बड़े बड़े शहरों में निर्वाचित कौंसिलों के द्वारा स्थानीय कार्यों का प्रबन्ध होता था। किन्तु काउन्टियों में ऐसा कोई प्रबन्ध नहीं था। लन्दन के कुछ भाग में जनता का कोई अधिकार नहीं था। इन सब बुराइयों को दूर करने के लिये १८८८ ई० में लोकल गवर्नमेंट एक्ट पास हुआ। इसके द्वारा इंगलैंड को ६२ शासकीय काउन्टी और ६० काउन्टी बोरो में बाँट दिया गया। प्रत्येक काउन्टी में एक-एक काउन्टी कौंसिल स्थापित की गई जिसके सदस्य रेट देने वालों के द्वारा तीन वर्ष के लिये चुने जाते थे। काउन्टी का शासन सम्बन्धी सारा काम इन्हीं कौंसिलों के हाथ में सौंप दिया गया और न्याय का काम न्यायाधीशों के हाथ में छोड़ दिया गया। इन न्यायाधीशों तथा कौंसिलों की एक सम्मिलित समिति कायम हुई जिसका उद्देश्य था काउन्टी पुलिस के ऊपर नियन्त्रण रखना।

**( ङ ) प्राथमिक शिक्षा में सुधार**—अभी तक प्राथमिक स्कूलों में भी पढ़ाई के लिये फीस ली जाती थी। इससे विद्यार्थियों तथा उनके अभिभावकों को बड़ी कठिनाई होती थी। फीस के अभाव में विद्यार्थी प्रायः अनुपस्थित रह जाया करते थे। अतः १८९१ ई० में सरकार के द्वारा प्राथमिक शिक्षा निःशुल्क कर दी गई।

इस प्रकार घरेलू क्षेत्र में सुधार का कार्य हो ही रहा था कि १८९२ ई० में नया चुनाव हुआ जिसमें आयरिशों के साथ मिलकर ग्लैडस्टन को बहुमत प्राप्त हुआ। अतः सैलिसबरी को पदत्याग कर देना पड़ा। ग्लैडस्टन का यह चौथा मंत्रिमंडल दो वर्षों तक रहा। १८९४ ई० में इसका अन्त हो गया और लार्ड रोजबरी को प्रधान मंत्री बनाया गया।

**४ लार्ड रोजबरी का मन्त्रिमंडल ( १८९४-९५ ई० )**—रोजबरी में योग्यता का कमी तो नहीं थी किन्तु उसके रेडिकल साथी उसे शंका की दृष्टि से देखते थे। अतः वह स्वतन्त्रतापूर्वक कोई काम नहीं कर सकता था। इसके समय में कोई महत्त्व-पूर्ण घटना न हुई। उस समय एक नई बात यह हुई कि चान्सलर सर विलियम हार-कोर्ट ने पहले पहल धन-जायदाद के आधार पर मृत्यु कर लगाया। अन्य कोई कार्य न हुआ। जून १८९५ ई० में सरकार की हार हो गई और रोजबरी ने त्याग पत्र दे दिया।

**५ सैलिसबरी का तृतीय मन्त्रिमंडल ( १८९५-१९०२ ई० )**—सैलिसबरी ने पुनः मन्त्रिमंडल स्थापित किया। प्रधान मंत्री तथा परराष्ट्र सचिव तो सैलिसबरी ही

सेना भेजी गई थी। डोमिनियन की भी सेना उसी क्षेत्र में काम कर रही थी। कुस्तुन्तुनिया पर कब्जा करने का प्रयत्न हुआ किन्तु वह व्यर्थ ही सिद्ध हुआ। गैलीपोली में ब्रिटिश सेना को असफलता हुई। यदि मित्रराष्ट्र अपने प्रयत्न में सफल हो जाते तो पूर्वी मोर्चे पर युद्ध की गति में सुविधा हो जाती और रूस का वैसा पतन न होता जैसा कि हुआ।

पश्चिमी एशिया में अंग्रेजों को अधिक सफलता मिली। स्वेज नहर के पास से तुर्कों को खदेड़ दिया गया। मेसोपोटामिया, फिलस्तीन और सीरिया को विजित किया गया। बहुत दिनों के बाद जेरुसलम ईसाईयों के हाथ में आ गया।

अंग्रेजों ने उत्तरी सागर में अपने जहाजों को रखा और जर्मनों का अवरोध किया। यह स्थिति दीर्घकाल तक बनी रही। जर्मन जहाज भी कील बन्दरगाह में रखे गये थे और क्रूजर के द्वारा कभी-कभी ब्रिटिश तट पर अचानक हमला भी कर दिया जाता था किन्तु डोगर बैंक के युद्ध में ब्लुचर नामक क्रूजर के नष्ट हो जाने के बाद यह जब तब का हमला भी बन्द हो गया। जर्मनी ने अवरोध का अन्त करने के लिये भरपूर प्रयत्न किया। ३१ मई १९१६ ई० को जटलैंड का प्रसिद्ध जलयुद्ध हुआ जिसमें ग्रेट ब्रिटेन तथा जर्मनी दोनों की गहरी क्षति हुई। जर्मनी ने पनडुब्बी जहाजों के द्वारा भी मित्रराष्ट्रों के व्यापारी जहाजों को बहुत हानि पहुँचाई। फिर भी जलयुद्धों में ग्रेट ब्रिटेन की ही प्रधानता रही और समुद्र पर उसका आधिपत्य बना रहा।

मार्च १९१७ ई० तक अमेरिका युद्ध से तटस्थ था। इङ्गलैंड अमेरिकी जहाजों की तलाशी लिया करता था ताकि केन्द्रीय शक्तियों को युद्ध का सामान मिल सकें। अमेरिका कभी-कभी इससे नाराज भी हो जाया करता था किन्तु जर्मनी के ही अमानुषिक कार्यों से अमेरिका मित्रराष्ट्रों के पक्ष में चला गया। जर्मन पनडुब्बी जहाज अमेरिकी जहाजों को भी बर्बाद करने लगा और इसमें कितने लोगों की जान भी जाने लगी। अतः अप्रैल १९१७ ई० में संयुक्त राज्य अमेरिका मित्रराष्ट्रों की ओर से युद्ध में शामिल हो गया। अमेरिका के प्रवेश से मित्रराष्ट्रों का पक्ष बड़ा ही सबल हो गया। धन-जन, अस्त्र-शस्त्र में काफी वृद्धि हो गई और मित्रराष्ट्रों की सफलता निश्चित हो गई।

१९१८ ई० में केन्द्रीय राज्यों ने मित्रराष्ट्रों को पराजित करने के लिये पुनः कमर कस कर प्रयत्न किया लेकिन जैसे दीपक बुझने के पहले एक बार लहक उठता है वैसे ही समर्पण करने के पहले उन्होंने एक बार जोश दिखलाया था। अवरोध और दीर्घकालीन युद्ध के कारण उनकी शक्ति का तो ह्रास हो चुका था। अमेरिका के प्रवेश से भी वे भयभीत हो उठे थे। टर्की, बल्गेरिया और आस्ट्रिया ने नवम्बर १९१८ ई० के पहले ही समर्पण कर दिया और शान्ति के लिये ईश्वर से प्रार्थना करने लगे।

## अध्याय ४६

# विक्टोरिया युगीन इंगलैंड की वैदेशिक नीति

## ( १८४१—१८६५ ई० )

पूर्व के अध्यायों में हम देख चुके हैं कि इङ्गलैंड के वैदेशिक मामलों में सन् १८३० ई० से ही लार्ड पामर्स्टन का एकाधिपत्य रहा। यद्यपि यदा-कदा कुछ दूसरे व्यक्ति भी इस विभाग के प्रधान थे, फिर भी उन्होंने पामर्स्टन के पदचिन्हों का ही अनुसरण किया था। पामर्स्टन की वैदेशिक नीति के उद्देश्यों एवं १८४१ ई० तक के उसके कार्यों की विवेचना पहले ही की जा चुकी है।* यहाँ हम १८४१ ई० के बाद की वैदेशिक नीति पर दृष्टिपात करेंगे।

१ पील सरकार की वैदेशिक नीति ( १८४१-४६ ई० )—१८४१ ई० में जबकि पील मंत्रिमंडल की स्थापना हुई इङ्गलैंड की राजनीतिक स्थिति संकटपूर्ण थी सर्वत्र शान्ति का अभाव था और युद्ध की ही चर्चा दीख पड़ती थी। घरेलू क्षेत्र के जैसा ही वैदेशिक क्षेत्र में भी कई विकट समस्याएँ उपस्थित हो गई थीं। चीन से साथ युद्ध चल रहा था। अफगानिस्तान के साथ युद्ध होने की पूरी संभावना हो चुकी थी। इङ्गलैंड का फ्रांस के साथ सम्बन्ध सन्तोषजनक न था। १८४० ई० में इङ्गलैंड ने फ्रांसीसी स्वार्थ के विरुद्ध कार्य किया था जिसकी स्मृति फ्रांसीसियों के मस्तिष्क में ताजी ही थी। अमेरिका के संयुक्त राष्ट्र के साथ सीमा सम्बन्धी झगड़े शुरू हो गये थे और वह युद्ध की तैयारी करने लगा था। कनाडा में भी शान्ति न थी। १८४० ई० के संयोग से भी कनाडा के लोग सन्तुष्ट नहीं थे।

इन सभी समस्याओं को हल करने के लिये एक बड़े ही कुशल राजनीतिज्ञ की नितान्त आवश्यकता थी। पील सरकार ने जिस कुशलता के साथ घरेलू समस्याओं का समाधान किया उसी निपुणता के साथ उसने इन वैदेशिक समस्याओं को भी हल किया। पील सरकार में लार्ड एबर्डीन परराष्ट्र सचिव था। वह शांतिप्रिय तथा नरम प्रवृत्ति का व्यक्ति था। पामर्स्टन के निरंकुश तरीकों और हस्तक्षेप करने की नीति को वह नापसन्द करता था। वह सभी राष्ट्रों की स्वतंत्रता तथा समानता में विश्वास करता था। पील भी शांति का समर्थक था। दोनों ही को असीम अंग्रेजी साम्राज्य के

* देखिये अध्याय ४

अपना कर्ज किस्तवार चुकाता रहा किन्तु अन्य राष्ट्र उसे कर्ज नहीं चुका सके। कुछ समय तो ऐसा हुआ कि अमेरिका ने जर्मनी को कर्ज दिया जिससे जर्मनी ने क्षतिपूर्ति की रकम मित्र राष्ट्रों को दी और मित्रराष्ट्र फिर वही रकम अमेरिका को देकर अपना कर्ज चुकाने लगे किन्तु समयगति के साथ-साथ युद्ध ऋण और क्षतिपूर्ति की समस्या विकट ही होती गई और इसका पूरा समाधान नहीं हो सका।

जर्मनी ग्रेट-ब्रिटेन का एक बहुत बड़ा खरीदार था। जर्मनी में बहुत से ब्रिटिश माल जाते थे, किन्तु अब पराजित जर्मनी जिस पर क्षतिपूर्ति करने का बहुत बड़ा बोझ लाद दिया गया उस स्थिति में नहीं रहा उसके साथ ब्रिटिश व्यापार की क्षति हुई।

महायुद्ध से राष्ट्रीयता को प्रोत्साहन मिला और ब्रिटिश साम्राज्य के कई हिस्सों में राष्ट्रीय भावना प्रबल हो उठीं। भारत ने ब्रिटिश सरकार की धन-जन से बड़ी मदद की थी। युद्ध का उद्देश्य भी लोक-तंत्र की रक्षा और सब को आत्म-निर्णय का अधिकार देना ही बतलाया गया था। अगस्त १९१७ ई० में यह भी घोषणा कर दी गई कि ब्रिटिश सरकार भारत में उत्तरदायी शासन स्थापित करना चाहती है। अतः पराधीन भारतीयों के हाथ में उज्जवल भविष्य के सम्बन्ध में नयी आशा का संचार हुआ किन्तु जब युद्ध के अन्त में आशा पूरी नहीं हुई तो राष्ट्रीय आन्दोलन सबल होने लगा।

आयरी स्वराज्य के प्रश्न ने उदार काल की रीढ़ को तो पहले ही तोड़ दिया था महायुद्ध ने इसकी टूटी हुई रीढ़ को और भी कमजोर बना डाला। युद्ध-नीति ने इस दल में मतभेद पैदा कर दिया और इस तरह इसमें पुनः विभाजन कर दिया गया जिससे यह दल काफी दुर्बल हो गया।

लेकिन बिना खतरा मोल लिये लाभ भी तो नहीं होता है। ग्रेट ब्रिटेन ने युद्ध में शामिल होकर धन-जन की क्षति उठायी किन्तु उसे फायदे भी हुये। समस्त संसार में उसकी धाक जम गई और समुद्र पर उसका आधिपत्य कायम रह गया। जिन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये वह युद्ध में शामिल हुआ उन उद्देश्यों की पूर्ति भी हो गई। बेलजियम की रक्षा हुई और उसका तट सुरक्षित रहा।

अन्तर्राष्ट्रीय सन्धि की उपेक्षा करने का फल जर्मनी को मिल गया। उसकी नाविक शक्ति तोड़ दी गई और उसे केवल एक लाख सैनिक दल रखने की आज्ञा मिली। उसके व्यापारिक जहाजों का टन भार ५७ लाख से ५ लाख घटाकर कर दिया गया। उसे क्षतिपूर्ति के लिये बहुत बड़ी रकम देनी पड़ी जिसमें इंगलैंड को भी हिस्सा मिला। जर्मनी के सभी उपनिवेश छीन लिये गये और उसकी बाहरी पूँजी जब्त कर ली गई। इस तरह जर्मनी को आर्थिक तथा सैनिक दृष्टि से कमजोर कर दिया गया।

ब्रिटिश साम्राज्य के विस्तार में भी सहायता मिली। जर्मनी से जर्मन पूर्वी

सागर के तट पर और (ग) अलास्का के किनारे। अलास्का सम्बन्धी मतभेद का अन्त तो नहीं हुआ। किन्तु अन्य दो सीमा सम्बन्धी झगड़ों को सफलतापूर्वक समाप्ति हो गई। १८४२ ई० में वाशिंगटन की सन्धि हुई जिसके द्वारा कनाडा और न्यूब्रन्सविक के बीच के कुछ भाग पर अमेरिका का आधिपत्य मान लिया गया। १८४६ ई० में ऑरेगन की सन्धि हुई और प्रशान्त तट सम्बन्धी झगड़े का निर्णय हुआ। कोलम्बिया और वैन्कोवर इङ्गलैंड के आधिपत्य में तथा ऑरेगन अमेरिका के अधीन मान लिया गया। इस प्रकार बड़ी ही कुशलता से इंगलैंड तथा अमेरिका के बीच पुनः सद्भावना स्थापित कर ली गई। अब विश्व में पहली बार तीन हजार मील लम्बी एक ऐसी सीमापंक्ति का निर्माण हुआ जिसकी रक्षा के लिये किसी भी तरफ से सैनिक रखने या किले बन्दी की आवश्यकता नहीं रही।

२ पामर्स्टन की वैदेशिक नीति (१८४६-६५ई०)—१८४६ ई० में पील मन्त्रिमण्डल का अन्त हो गया और रसल मन्त्रिमंडल स्थापित हुआ, जिसमें पामर्स्टन परराष्ट्र सचिव बनाया गया। अब १८४६ ई० से १८६५ ई० तक वही इस विभाग का प्रधान रहा। अतः इस काल की परराष्ट्र नीति पर उसी की गहरी छाप है।

फ्रांस से सम्बन्ध विच्छेद—अधिकार में आने के बाद ही फ्रांस के साथ मनमुटाव पैदा हो गया। फ्रांस का राजा लुई फिलिप अपने लड़के ड्यूक डी मौंटपेन्सिर का विवाह स्पेन की रानी इसाबेला से करना चाहता था। इससे एक ही घराने के अधीन दोनों राज्यों का संयोग हो जाता जो शक्ति सन्तुलन के सिद्धान्त में बाधक सिद्ध होता। अतः ब्रिटेन ने इस प्रस्ताव का घोर विरोध किया। इस मामले में उसे यूरोप की भी सहानुभूति प्राप्त थी। अतः लुई फिलिप पर दबाव डाल कर उसकी योजना विफल कर दी गई लेकिन लुई ने पुनः एक नवीन योजना का निर्माण किया। इंगलैंड के विरोध करने पर भी उसने इस नयी योजना को कार्यान्वित भी कर डाला। उसने स्पेन की रानी का विवाह अपने एक चचेरे भाई फ्रांसिस्को-डी असीसी से तथा रानी की बहन का विवाह अपने पुत्र से कर दिया। उसका चचेरा भाई अस्वस्थ और कमजोर था जिसे सन्तान होने की सम्भावना नहीं थी। ऐसी स्थिति में लुई का ख्याल था कि स्पेन का राज्य भी फ्रांस के अन्तर्गत आ जायगा। लुई के इस कार्य से पामर्स्टन को बड़ा ही रंज हुआ और उसने फ्रांस से सम्बन्ध विच्छेद कर दिया तथा इसका बदला लेने के लिये मौका ढूँढ़ता रहा।

१८४८ ई० की क्रांतियाँ—१८४८ ई० का साल यूरोप के लिये क्रांति का साल था। सभी प्रमुख देशों में क्रांति की बाढ़ सी आ गई थी। इसका उद्देश्य था निरंकुश राजाओं के बदले वैधानिक तथा राष्ट्रीय शासन की स्थापना। पामर्स्टन ग्रेट ब्रिटेन से बाहर राष्ट्रीयता तथा वैधानिकता का समर्थक था। अतः उसने विभिन्न देशों की

कानून लागू हुआ, कितने गोली-बारूद के शिकार हुये, कितने जेल गये और कितने मातृ-भूमि की गोद से ही वंचित कर दिये गये।

लेकिन दमन से आन्दोलन दबाया ही जा सकता है मानव भावना को कुचला नहीं जा सकता। उसमें भी कुछ थोड़े से मनुष्यों को ही थोड़े समय के लिये दबाया जा सकता है किन्तु समस्त राष्ट्र को नहीं, पूरी जाति को नहीं। आयरी उग्रपंथी तो अपने विचार में और भी दृढ़ हो गये। रेडमंड ने चाहा कि ब्रिटिश सरकार होम-रूल लागू कर दे ताकि आन्दोलन शान्त हो जाय परन्तु ब्रिटिश सरकार ने नहीं माना। इस पर रेडमंड ने अपने सहयोगियों के साथ कॉमन्स सभा का बहिष्कार कर दिया। १९१७ ई० में डबलिन में एक आयरी राष्ट्रीय परिषद् की बैठक हुई जिसमें शांति सभा में पृथक् प्रतिनिधित्व की माँग की गई। उसी वर्ष क्रांतिकारी नेता डी वेलेरा सिनफेन का अध्यक्ष भी निर्वाचित किया गया यद्यपि वह अभी जेल ही में था। लायड जार्ज ने आयरियों की एक बैठक बुलायी लेकिन इससे कोई फायदा नहीं हुआ। १९१८ ई० में राष्ट्रीय नेता रेडमंड मर गया और डिलन उसका उत्तराधिकारी हुआ। उसने युद्ध में असहयोग की नीति अपनायी और सेना में आयरियों की भर्ती का विरोध किया। उसी साल दिसम्बर में पार्लियामेंट के लिये निर्वाचन हुआ और उसमें सिनफेनर्स को ही बहुमत मिला। वे ७३ सीट प्राप्त किये लेकिन वे ब्रिटिश पार्लियामेंट में बैठना नहीं चाहते थे। वे जनवरी १९१९ ई० में डबलिन में अपनी बैठक किये। इस तरह आयरी पार्लियामेंट (डेलआयरियन) का संगठन हुआ और आयरलैंड के जनतन्त्र की घोषणा कर दी गई।

स्त्री समस्या—बीसवीं सदी के प्रारंभ से ही स्त्रियों में अपूर्व जागरण आया और वे अपने अधिकारों के लिये आन्दोलन करने लगीं। उन्होंने सरकार को तंग करने की नीति अपनायी और इसके लिये उचित या अनुचित सभी तरह के उपायों को काम में लाया। सरकारी कामों में अड़ंगा डालना, सभाओं में हुल्लड़बाजी करना, भूख हड़ताल के द्वारा दबाव डालना, चीजों को तहस-नहस करना, ये सब उनके ढंग थे परन्तु ये सब शान्तिकाल में ही किये गये। जब महायुद्ध आरंभ हो गया तो स्त्रियों ने भी अपना आन्दोलन स्थगित कर दिया और पुरुषों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर देश की रक्षा के लिये क्रियाशील हो उठीं। उन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में राष्ट्र को बहुमूल्य सेवायें प्रदान कीं। गृह-प्रबन्ध और बच्चों के पालन-पोषण का भार तो उनपर था ही, उन्होंने कई कार्यालयों और युद्ध के सामान बनने वाले कारखानों में भी काम किया। उन्होंने उपचारिकाओं के रूप में घायलों और असमर्थों की सेवातथा सहायता भी की। अपनी सेवाओं से इन औरतों ने पुरुष वर्ग की सहानुभूति प्राप्त कर ली और जहाँ पहले इनकी राजनीतिक माँग की उपेक्षा की जाती थी वहाँ अब

समर्थक पर अब वह इन आन्दोलनों को अराजकतावादी समझने लगा था। इस कारण उसने नेपोलियन के इस निरंकुश कार्य पर भी उसे धन्यवाद दिया। ऐसा करने में उसने मन्त्रिमंडल या रानी किसी की भी राय नहीं ली थी। रानी अब उससे ऊब उठी थी और मन्त्रिमंडल ने उसे बर्खास्त कर दिया।

अब लगभग चार वर्षों तक पामर्स्टन वैदेशिक विभाग से अलग रहा फिर भी इस बीच में वह प्रभावशून्य न था। वह चुप बैठना भी नहीं जानता था और उसने मन्त्रिमंडल से शीघ्र ही बदला भी ले लिया। सेना को बढ़ाने के उद्देश्य से सरकार ने एक मिलिशिया बिल पेश किया किन्तु पामर्स्टन के ही प्रभाव से वह पास न हो सका। अत रसल मन्त्रिमंडल टूट गया।

इसके बाद डर्बी मन्त्रिमंडल कायम हुआ जो कुछ महीनों तक ही रहा। १८५२ ई० में एवर्डीन मन्त्रिमंडल कायम हुआ। इस बार पामर्स्टन गृह सचिव था। इसी मन्त्रिमंडल के समय १८५३ ई० में क्रीमिया का युद्ध शुरू हुआ जो दो वर्षों तक चलता रहा।* एवर्डीन मन्त्रिमंडल इस युद्ध का संचालन करने में सर्वथा असफल रहा। अंग्रेजों को बड़ा क्षति उठानी पड़ रही थी और उनकी प्रतिष्ठा में धब्बा लग रहा था। अत १८५५ ई० में पामर्स्टन को प्रधान मंत्री बनाया गया। उसने बड़ी ही कुशलता से युद्ध का संचालन किया और इंगलैंड को विजयी बनाया। १८५६ ई० में पेरिस की सन्धि हुई। बाल्कन में रूस की प्रगति रुक गई और तुर्की साम्राज्य को पुनर्जीवन प्राप्त हो गया। अब विजेता की दृष्टि से वह सर्वत्र लोकप्रिय हो गया। अब उसका कोई प्रतिद्वन्द्वी न रहा और १५ महीनों के मध्यान्तर को छोड़ कर वह मृत्यु पर्यन्त ग्रेट ब्रिटेन का भाग्य विधाता बना रहा।

**चीन के साथ द्वितीय युद्ध ( १८५६-५८ ई० )**—क्रीमिया के युद्ध के अन्त होने पर भी अभी शान्ति की स्थापना नहीं हुई। शीघ्र ही चीन के साथ युद्ध शुरू हो गया। चीनियों ने यूनियन जैक लगे हुए एक जहाज को १८५६ ई० में पकड़ लिया जिसमें समुद्री लुटेरे भी भरे हुए थे। इस पर दूसरे ही ढाल पामर्स्टन ने लुटेरों का पक्ष लेकर लड़ाई घोषित कर दी किन्तु कामन्स सभा लड़ाई नहीं चाहती थी। अत इसने उसके विरुद्ध एक प्रस्ताव पास किया किन्तु पामर्स्टन ने कामन्स सभा को भंग कर दिया और नये चुनाव का आदेश दिया जिसमें उसे बहुमत प्राप्त हुआ। अब उसने सफलतापूर्वक इस युद्ध को समाप्त किया और हिन्दुस्तान से अफीम खरीदने के लिये चीन को बाध्य किया।

**हिन्दुस्तान में सिपाही विद्रोह ( १८५७-५८ ई० )**—उसी समय हिन्दुस्तान में

* देखिये अध्याय

निर्वाचन हुआ और संयुक्त सरकार के ही पक्ष में बहुमत आया किन्तु इसमें अनुदार दल वालों की प्रधानता थी। लायड जार्ज के ही नेतृत्व में पुनः संयुक्त सरकार की स्थापना हुई जो ४ वर्षों तक कायम रही।

इस सरकार के सामने युद्ध जनित अनेक विकट समस्यायें विकराल रूप धारण किये उपस्थित थीं। बेकारों की संख्या बहुत बढ़ गई थी और नौकरी मिलने में बड़ी कठिनाई हो रही थी। चीजें महँगी थीं किन्तु मजदूरी कम थी। जनता कर के बोझ से दुखित थी। मालिक-मजदूर का सम्बन्ध कटु होता जा रहा था और हड़ताल कर देना तो एक साधारण बात हो गयी थी। हड़ताल होने से फिर उत्पादन का ह्रास होता था। व्यापार की दशा भी ठीक नहीं थी। इस तरह आर्थिक दशा बड़ी ही शोचनीय थी और ऐसी हालत में कोई सुधार-योजना लागू करना भी दुस्तर कार्य था। वेल्स, आयरलैंड, भारत तथा मिश्र आदि देशों में भी असन्तोष की अग्नि सुलगती जा रही थी। सरकार ने इन सभी समस्याओं को हल करने का भरपूर प्रयत्न किया और इसे काफी सफलता भी मिली।

सर्वप्रथम बेकारी बीमा की व्यवस्था की गई। प्रति वर्ष अधिक से अधिक १५ सप्ताह तक बेकार पुरुषों को प्रति सप्ताह १५ शिलिंग और बेकार स्त्रियों को १२ शिलिंग आर्थिक सहायता देने का प्रबन्ध हुआ, लेकिन इसके लिये हर साल बहुत बड़ी रकम खर्च करनी पड़ती थी और इस पर भी बेकारी की समस्या स्थायी रूप से हल नहीं हो रही थी। अतः इस नियम से विशेष फायदा नहीं हुआ। सरकार ने देशान्तर गमन को भी प्रोत्साहित किया किन्तु बहुत से लोग न तो बाहर जाने के लिये उत्सुक थे और न दूसरे ही देश उन्हें अपने यहाँ खुशी से रखना चाहते थे। इस तरह बेकारी समस्या निर्मूल नहीं की जा सकी। १६२० ई० में बेकारी-बीमा नियम के अनुसार प्रायः सभी प्रकार के मजदूरों के लिये बीमा अनिवार्य कर दिया गया। स्त्रियों को मताधिकार तो पहले दे ही दिया गया था किन्तु १६१६ ई० के एक नियम के अनुसार उन्हें पेशों, पदों तथा सार्वजनिक उत्सवों की दृष्टि से भी पुरुषों के साथ समानता का पद दे दिया गया। १६२० ई० में वेल्स के चर्च को राज्य से अलग कर स्वराज्य प्रदान किया गया। १६२१ ई० में रूस के साथ एक व्यापारिक समझौता किया गया। युद्ध सम्बन्धी कुछ प्रमुख व्यवसायों की रक्षा के लिये व्यवसाय सुरक्षा नियम के अनुसार ३३⅓ प्रतिशत चुंगी लगाने की व्यवस्था की गई।

भारत को १६१६ ई० में गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट के अनुसार उत्तरदायी शासन के पथ पर और मिश्र को १६२२ ई० तक ऐक्ट के द्वारा स्वाधीनता के पथ पर अग्रसर किया गया किन्तु हम यथास्थान पर देखेंगे कि भारत तथा मिश्र को जो

इनको शीघ्र छोड़ देने तथा इस कार्य के लिये क्षमा माँगने के लिये उत्तरी राज्यों के पास आज्ञा भेजी। पामर्स्टन की नीति से ऐसा जान पड़ता था कि अब युद्ध अनिवार्य है। लेकिन प्रिन्स कन्सर्ट के हस्तक्षेप तथा प्रभाव से यह टल गया। उसने रानी को सलाह दिया कि उत्तरी राज्यों के यहाँ जो पत्र भेजे जायँ उनमें कटुता न रहे और उसकी भाषा स्थिर हो। ऐसा ही किया गया और उन राज्यों ने जहाजों के जाने का रास्ता दे दिया तथा कैद हुए दोनों व्यक्तियों को लौटा दिया।

१८६२ ई० में एक दूसरी घटना घटी जिसमें पामर्स्टन सरकार की ही गलती थी। दक्षिणी रियासतों के प्रयोग के लिये लिवरपूल में अलबामा नामक एक जंगी जहाज बना था। अंग्रेजी अधिकारियों ने जानबूझ कर भी इसकी उपेक्षा की और इस ओर ध्यान नहीं दिया। आखिर जहाज युद्ध के सामानों से लैस हो समुद्री यात्रा के लिये निकल पड़ा। दो वर्षों में इसने उत्तरी राज्यों के व्यापारी जहाजों को बड़ी नुकसान पहुँचाई। उनके ६५ जहाज पकड़ लिये तथा करीब ४० करोड़ डालर का सामान नष्ट कर दिया। अन्त में १८६४ ई० में चेरबुर्ग नामक एक फ्रांसीसी बन्दरगाह में रसद लेते समय उत्तरी राज्यों के एक स्टीमर से लड़ाई छिड़ गई और वह डुबो दिया गया। युद्ध समाप्त होने के पश्चात् संयुक्त राष्ट्र ने ब्रिटेन से इस क्षति के लिये हर्जाना की माँग की। काफी लिखा-पढ़ी के बाद १८७२ ई० में पामर्स्टन की भूल का मूल्य ग्लैडस्टन सरकार को चुकाना पड़ा और संयुक्त राष्ट्र को लगभग ३० लाख पौंड हर्जाना मिला।

पोलैंड की समस्या तथा बिस्मार्क ( १८६३ ई० )—इस काल में यूरोप में एक बड़ा ही प्रभावशाली व्यक्ति का प्रादुर्भाव हुआ था। वह था प्रशा का बिस्मार्क। पामर्स्टन उसकी बढ़ती हुई शक्ति को ठीक से समझ नहीं सका। १८६३ ई० में पोलैंड वालों ने रूसियों के खिलाफ विद्रोह कर दिया। इंगलैंड ने पोलों का साथ दिया। उसने रूस को तीन विरोध पत्र भेजा तथा वह पोलैंड वालों की सहायता करने के लिये तैयार था लेकिन उसे मन्त्रिमंडल का सहयोग नहीं प्राप्त हो सका। उधर बिस्मार्क ने रूस को सहायता करने की प्रतिज्ञा की और इस तरह उसका मित्र हो गया। पोलैंड वालों की बगावत दबा दी गई। इस तरह पामर्स्टन के हस्तक्षेप से भी पोलैंड वालों की तकलीफों का अन्त नहीं हुआ और उधर रूस भी उसका दुश्मन हो गया।

श्लेसविग तथा होल्स्टीन की समस्यायें ( १८६३-६४ ई० )—१८६४ ई० में ऊँची समस्या उठ गई। श्लेसविग तथा होलस्टीन नामक दो छोटे छोटे राज्य थे। श्लेसविग पूर्णतः एवं होलस्टीन आधिक रूप से जर्मन था लेकिन बहुत प्राचीन समय से ही इन पर डेनमार्क का राजा राज्य करता था। १८६३ ई० में पुराने डेनिश

के नेतृत्व में उसका साथ छोड़ दिये और उसके विरोधी बन गये। उसे और उसके समर्थकों को मजदूर दल से निकाल दिया गया। शीघ्र ही चुनाव हुआ और इसमें राष्ट्रीय सरकार को ५५४ सदस्यों का बहुमत प्राप्त हुआ।

१६३१ ई० से १६३६ ई० तक राष्ट्रीय सरकार कायम रही। १६३१ के चुनाव के फलस्वरूप अधिकांश अनुदारवादियों को ही सफलता मिली थी। उन्हें ३२५ का बहुमत प्राप्त था। मंत्रिमंडल में ११ अनुदार, ५ उदार और ४ मजदूर दल के सदस्य थे। प्रधान मंत्री मजदूर नेता मैकडोनल्ड ही रहे। पहले दो अवसरों पर १६२४ और १६२६ ई० में वे उदारवादियों पर निर्भर थे किन्तु इस बार अनुदारवादियों का समर्थन प्राप्त हुआ।

अब आर्थिक उन्नति के लिये कई उपायों को काम में लाया गया। उस आर्थिक योजना को जिस पर मजदूर सरकार की गाड़ी टकरा गयी थी, लागू किया गया। कई मदों पर खर्च में कमी कर दी गई। इससे आय-व्यय में सन्तुलन हो गया किन्तु सुवर्ण अभी भी बाहर जाता रहा। अतः सरकार ने सुवर्ण-मुद्रा ( गोल्ड स्टैंडर्ड ) का ही परित्याग कर दिया। इससे विदेशों में पौंड की कीमत घट गई। इसका फल यह हुआ कि ब्रिटिश आयात की तुलना में निर्यात की मात्रा बढ़ गई। इससे ग्रेट ब्रिटेन को लाभ ही हुआ।

अनुदार दल वाले संरक्षण नीति के समर्थक थे। बहुमत में रहने के कारण इसे लागू करने के लिये उन्हें सुअवसर प्राप्त था। अतः कुछ आयात तो बन्द कर दिये गये और जो रह गये उन पर १० प्रतिशत् की चुंगी रख दी गई लेकिन ऊन, कपास, माँस, मछली आदि जैसे कुछ कच्चे मालों पर चुंगी नहीं लगायी गयी। साम्राज्यान्तर्गत देशों के बीच व्यापार को बढ़ाने के लिये १६३१ ई० में ओटावा में एक सम्मेलन ( इम्पीरियल कान्फ्रेंस ) हुआ। इसमें एक समझौता हुआ जिसे ओटावा समझौता कहते हैं। इसके अनुसार विदेशी मालों की तुलना में साम्राज्यान्तर्गत देशों के बीच आपस में रियायती चुंगी लगाने के लिए निश्चय हुआ।

इस सरकार ने दूध की दर को निर्धारित करने के लिए १६३३ ई० में एक दूध विक्रय ( मिल्क-मार्केटिंग ) बोर्ड की स्थापना कर दी। इसने गृह-निर्माण को भी प्रोत्साहित किया। १६३५ ई० में भारत के लिए एक ऐक्ट पास हुआ और उसी के बाद बुरे स्वास्थ्य के कारण मैकडोनल्ड ने पदत्याग कर दिया।

यहाँ मैकडोनल्ड की जीवनी पर संक्षिप्त प्रकाश डाल देना असंगत नहीं होगा। १८६६ ई० में स्कॉटलैंड में उसका जन्म हुआ था। उसके माँ-बाप गरीब मजदूर थे। अतः उसे उच्च शिक्षा के लिये सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। फिर भी वह अध्ययन शील था और मजदूरों के हित के लिए चिन्तित था। ३० वर्ष की उम्र में उसका

## अध्याय ४७

# विक्टोरिया युगीन इंगलैंड की वैदेशिक नीति

## ( १८६५—१६०१ ई० )

### १ डिसरैली एव ग्लैडस्टन की वैदेशिक नीति ( १८६५-८५ ई० )

**यूरोप मे बिस्मार्क की प्रधानता एवं आस्ट्रिया और प्रशा का युद्ध ( १८६६ ई० )**—पामर्स्टन का मृत्यु के बाद ५ वर्षों के अन्दर यूरोप में प्रशा के बिस्मार्क का प्रभुत्व बहुत ही बढ़ गया। बिस्मार्क जर्मनी से आस्ट्रिया की प्रधानता का अन्त कर प्रशा का प्रभुत्व कायम करना चाहता था। इस कार्य के लिये उसने सभी उपायों का अवलम्बन किया। यह तो हम देख हा चुके हैं कि उसने पहले आस्ट्रिया से मित्रता कर डेनमार्क से श्लेसविग एव होल्स्टीन को डचों से छीन लिया। १८६५ ई० में गैस्टीन की सन्धि के द्वारा यह तय हुआ कि श्लेसविग प्रशा के अधिकार में रहे और होल्स्टीन आस्ट्रिया के। बिस्मार्क तो पहले से एक बहाना ढूँढ़ रहा था जिसको लेकर वह आस्ट्रिया से झगड़ सके। अब उसने स्वय ही एक बहाना भी बना लिया। दूसरे ही साल आस्ट्रिया ने इस सन्धि की अवहेलना की और जर्मनी सम्बन्धी सारा मामला जर्मन जागीरदारों की एक कौंसिल के निर्णय पर छोड़ दिया। बिस्मार्क इसे अपनी मानहानि समझता था। अत १८६६ ई० में उसने आस्ट्रिया के विरुद्ध लड़ाई की घोषणा कर दी। ७ सप्ताह तक युद्ध हुआ। ग्रेट ब्रिटेन तटस्थ रहा। सैडोवा के युद्ध में आस्ट्रिया की पराजय हुई और उसे सन्धि करने के लिये बाध्य होना पड़ा। अब जर्मनी पर से आस्ट्रिया का प्रभुत्व समाप्त हो गया और वहाँ प्रशा की सत्ता कायम हो गई।

**फ्रांसीसी-प्रशन युद्ध ( १८७०-७१ ई० )**—इसके बाद बिस्मार्क का ध्यान फ्रांस की तरफ आकृष्ट हुआ। फ्रांस प्रशा का पुराना दुश्मन था। बिस्मार्क फ्रांस के तृतीय नेपोलियन को अपने मार्ग का रोड़ा समझता था जिसे उठाकर फेंक देना आवश्यक था। उधर नेपोलियन को भी बिस्मार्क की बढ़ती हुई शक्ति पर बड़ी चिन्ता हुई। अत दोनों देशों के बीच युद्ध अवश्यम्भावी सा प्रतीत होने लगा। इस दिशा में सर्वप्रथम प्रशा ने ही पैर बढ़ाया। उसने १८६७ ई० में लक्जेम्बर्ग की डची पर अधिकार कर लिया। आस्ट्रिया और प्रशा के युद्ध में तो अंग्रेजी सरकार पूर्ण रूप से तटस्थ रही थी, पर इस प्रश्न पर वह चुप नहीं बैठ सकती थी। लदन में यूरोपीय

कब्जा कर लिया। रूर जर्मनी का औद्योगिक केन्द्र था। रूरवासियों ने असहयोग की नीति अपनायी।

अब इन सारी स्थिति की जाँच करने के लिए डौस नामक अर्थशास्त्री के अधीन एक कमेटी नियुक्त की गई। डौस कमेटी ने कई बातों की सिफारिश की—फ्रांस रूर को खाली कर दे, एक केन्द्रीय बैंक की स्थापना हो, जिसे ५० वर्षों तक नोट निकालने का एकाधिकार रहे। जर्मनी २ अरब ५० करोड़ मार्क नगद प्रति वर्ष दिया करे। कुल रकम की संख्या में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। १६२४ ई० में ब्रिटेन तथा अन्य राष्ट्रों ने डौस योजना को स्वीकृत कर लिया लेकिन यह योजना असफल ही रही और १६२८ ई० में यंग नामक अमरीकी अर्थशास्त्री के अधीन दूसरी कमेटी नियुक्त हुई। इस कमेटी ने यंग योजना प्रस्तुत की। पूर्व योजना में तावान के कुल रकम की संख्या पूर्ववत् रहने दी गई थी। यह रकम इतनी विशाल थी कि यह अनुमान करना कि जर्मनी कितने वर्षों में इसे चुका सकेगा। अतः नई योजना में यह निश्चित कर दिया गया कि जर्मनी ५८½ वर्षों में ३४ अरब मार्क चुका दे। १० वर्षों तक माल के रूप में भी तावान देने की व्यवस्था रखी गई। क्षतिपूरक कमीशन का अन्त करने और एक अन्तर्राष्ट्रीय बैंक की स्थापना करने के लिए भी प्रस्ताव हुआ। १६३० ई० में ब्रिटेन तथा अन्य राष्ट्रों ने इसे स्वीकार कर लिया। इससे लोगों को बड़ी आशा हुई थी कि तावान समस्या हल हो गई किन्तु शीघ्र ही उनकी आशा पर पानी फिर गया।

इसी समय सारे यूरोप में आर्थिक मन्दी फैल गई थी और सभी राष्ट्र बेचैन हो रहे थे। स्थिति पर विचार करने के लिये इन राष्ट्रों ने कई सम्मेलनों की व्यवस्था की। इनमें ग्रेट ब्रिटेन ने प्रमुख भाग लिया। प्रादेशिक समझौता के आधार पर आर्थिक संघ कायम करने की कोशिश हो रही थी किन्तु सफलता नहीं मिली। मार्च १६३१ ई० में केवल जर्मनी और आस्ट्रिया के बीच चुंगी संघ कायम हुआ। इन दोनों राज्यों ने आपस में चुंगी उठा दी और विदेशी मालों पर दोनों राज्यों में एक समान चुंगी लगाने की व्यवस्था कर दी गई। ग्रेट ब्रिटेन ने इस चुंगी संघ के निर्माण का स्वागत किया किन्तु फ्रांस ने विरोध किया। उसी समय आस्ट्रिया को कर्ज की बड़ी आवश्यकता थी। क्रेडिट अन्सटाल्ट आस्ट्रिया का मुख्य बैंक था। उसी पर आस्ट्रिया की व्यावसायिक उन्नति निर्भर थी। लेकिन इसकी दशा खराब हो रही थी और इसी के सुधार के लिए धन की आवश्यकता थी। फ्रांस कर्ज देने को तैयार था किन्तु शर्त यह थी कि चुंगी संघ भंग कर दिया जाय। आस्ट्रिया इसके लिए तैयार नहीं था और ब्रिटेन से कर्ज माँगने लगा। ब्रिटेन ने उसकी माँग पूरी भी की किन्तु कम ही समय के लिये।

के पेरिस की सन्धि की शर्तों की उपेक्षा की एवं काले सागर में अपने फौजी जहाज भेज दिये। १८६६ ई० में स्वेज नहर होकर भारत जाने का रास्ता खुल गया था जिसके कारण अब काले सागर का महत्व बहुत अधिक बढ़ गया। ग्लैडस्टन ने इसका विरोध किया लेकिन उसका विरोध शक्तिहीन विरोध था जिसका रूस पर कोई असर नहीं हुआ। अन्त में १८७१ ई० में लन्दन सम्मेलन में ग्लैडस्टन ने रूस के इस सन्धि तोड़ने के अधिकार को भी मान लिया। इससे राष्ट्र के सम्मान में बहुत धक्का पहुँचा।

अल्बामा का मामला—हम लोग पहले देख चुके हैं कि उत्तरी अमेरिका के गृह युद्ध में अल्बामा जहाज का एक मामला उठा था जिसने उत्तरी रियासतों के व्यापार को बहुत धक्का पहुँचाया था। इसकी जिम्मेवारी ब्रिटेन पर ही था। अतः उन्होंने इङ्गलैंड से ३० लाख पौंड हरजाने का दावा किया। यह रकम बहुत अधिक था। फिर भी ग्लैडस्टन ने इसे स्वीकार कर दे दिया।

अफगानिस्तान का मामला—सन् १८६६ ई० तक रूस की सीमा अफगानिस्तान तक पहुँच गई थी। इससे अफगानिस्तान को खतरा तो था हीं, साथ ही भारतीय साम्राज्य पर भी खतरा उपस्थित हो गया। अफगानिस्तान ने अंग्रेजी सरकार का ध्यान इस तरफ आकृष्ट कराया लेकिन इस प्रश्न पर कोई कड़ी कार्रवाई न कर ग्लैडस्टन ने रूस से ही मन्त्रणा की एवं दोनों ने मिलकर अफगानिस्तान की आजादी का सम्मान करने की प्रतिज्ञा की।

ग्लैडस्टन की इस नीति से विदेशों में इङ्गलैंड के सम्मान में गहरी ठेस लगी। अंग्रेज जनता को यह नीति बिल्कुल ही पसन्द नहीं थी। असल में उसकी वैदेशिक नीति एकदम पंगु थी। वह युद्ध में दिलचस्पी नहीं रखता था और अपने देश को युद्ध से बचाने के लिए भरसक प्रयत्न करता था। उसके विचार में स्वदेश की आर्थिक एवं वैधानिक समस्याओं का उचित समाधान करना विदेशी गौरव एवं प्रतिष्ठा से अधिक महत्वपूर्ण था। इसका फल यह हुआ कि वह उपर्युक्त युद्धों से पूर्णतः तटस्थ रहा। आस्ट्रिया और प्रशा के युद्ध में तो उसने कुछ किया ही नहीं, फ्रांसीसी प्रशन युद्ध में भी प्रारंभ में लंदन सम्मेलन के अतिरिक्त अन्य कोई कार्य नहीं किया। लंदन सम्मेलन के द्वारा युद्ध रोकने का प्रयत्न किया गया था, लेकिन यह अधिक समय तक नहीं चल सका। इटली के रोम पर अधिकार एवं इटली के संयुक्त राज्य कायम होने पर भी वह पूर्णतः चुप रहा। रूस ने जब पेरिस की सन्धि की शर्तों की अवहेलना की तो वह उसका सुनेआम विरोध नहीं कर सका। अल्बामा के मामले में भी उसने चुपचाप अमेरिका वालों की माँग को स्वीकार कर लिया तथा अफगानिस्तान के प्रश्न पर भी उसने रूस से मन्त्रणा करना ही उचित समझा। अतः ब्रिटेन की इस तटस्थता

सात सन्धियाँ हुईं। इनमें से दो पंच राज्य सन्धियों का सम्बन्ध जहाजी नियंत्रण से ही था। ये पाँच राज्य थे—अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, जापान, फ्रांस, इटली। दोनों संधियों में एक संधि से यह तय हुआ कि पनडुब्बियों के लिये वे ही नियम लागू हों जो जल के ऊपर चलने वाले जहाजों के लिये लागू हैं किन्तु यह संधि कार्यान्वित नहीं हो सकी। दूसरी संधि के द्वारा पाँचों राज्यों के लिये कैपिटल जहाज का टन भार निश्चित कर दिया गया। अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन तथा जापान के लिये यह ५:५:३ के अनुपात में निश्चित हुआ लेकिन इस संधि में दूसरे युद्ध-पोतों के सम्बन्ध में कोई चर्चा नहीं की गई। इसीलिये १६२७ ई० में जेनेवा सम्मेलन बुलाया गया। अमेरिका ने अन्य जहाजों के लिये भी ५:५:३ का ही अनुपात मान लेने के लिये जोर लगाया। ब्रिटेन ७५०० टन के क्रूजर के निर्माण पर कोई नियन्त्रण स्वीकार करना नहीं चाहता था। वह इसे अपने विशाल साम्राज्य एवं व्यापार की रक्षा के लिये आवश्यक समझता था परन्तु समुद्री अड्डों के अभाव तथा लम्बे समुद्री किनारों के कारण १०,००० टन के क्रूजर अमेरिका के लिये आवश्यक थे और ब्रिटेन इस पर नियन्त्रण लगाने के लिये उत्सुक था। इस तरह पारस्परिक स्वार्थ एवं मतभेद के कारण जेनेवा सम्मेलन असफल हो गया और अमेरिका तथा ब्रिटेन का सम्बन्ध कटु होने लगा।

दूसरे साल एक घटना ने दोनों देशों के बीच कटुता में और वृद्धि ला दी। १६२८ के प्रारंभ में इंगलैंड तथा फ्रांस में एक गुप्त समझौता हुआ। इसके अनुसार इंगलैंड ने स्थल सेना के सम्बन्ध में फ्रांस की बात स्वीकार कर ली और फ्रांस ने वादा किया कि निःशस्त्रीकरण सम्मेलन में वह अंग्रेजों के नौ सेना सम्बन्धी विचारों का समर्थन करेगा। लोगों को इस सन्धि का पता लग गया और 'न्यूयार्क अमेरिकन' नामक अखबार में यह समाचार प्रकाशित भी हो गया। इससे अमेरिकावासी अंग्रेजों से और भी अधिक नाराज हो गये।

इसी समय ग्रेट ब्रिटेन का सोवियत रूस के साथ भी सम्बन्ध कटु हो गया। अनुदार सरकार बोल्शेविक सरकार को शंका की दृष्टि से देखती थी। यह शंका और भी बढ़ गई जबकि रूस ने १६२६ ई० में इंगलैंड में की गई हड़ताल का समर्थन किया और चन्दा तक भी भेजा। रूस ने कई राज्यों से अनाक्रमण समझौता भी कर लिया था। इस तरह बातें बढ़ती गईं और सोवियत रूस इंगलैंड के विरुद्ध भी प्रचार कार्य करता रहा। अतः १६२७ ई० में दोनों देशों में कूटनीतिक सम्बन्ध विच्छेद हो गया।

१६२८ ई० में पेरिस सन्धि हुई। इसे केलौगब्रियाँ पैक्ट भी कहते हैं। इसके अनुसार राष्ट्रीय नीति में युद्ध का परित्याग करने की घोषणा की गई। सभी झगड़ों

बड़े बड़े राजे महाराजे उपस्थित थे। इसमें भारतवासियों ने महारानी के प्रति अपनी राजभक्ति का अद्भुत परिचय दिया।

**स्वेज नहर का हिस्सा खरीदना**—उसने १८७५ ई० में मिश्र के गर्वनर से स्वेज नहर का बहुत बड़ा हिस्सा खरीद लिया। इसके लिये उसने न तो अपने परराष्ट्र सचिव से ही राय ली और न पार्लियामेंट का स्वीकृति ही। बहुत लोगों ने उसके इस मनमाने कार्य को नापसन्द किया और ग्लैडस्टन ने तो उसपर अभियोग भी चलाना चाहा लेकिन डिसरैली का कार्य बुद्धिमतापूर्ण था। यह अंग्रेजों के लिये बड़ा ही लाभदायक सिद्ध हुआ। मिश्र में अंग्रेजी प्रभुता स्थापित करने के लिये रास्ता सुगम हो गया। भूमध्य सागर से लाल सागर तक का जलमार्ग खुल गया और भारत तथा यूरोप के बीच यात्रा करना आसान हो गया।

**मिश्र में द्वैध नियन्त्रण**—मिश्र का गर्वनर बड़ा ही अपव्ययी था। उसका दिवाला निकल रहा था और शान्ति तथा व्यवस्था स्थापित रखने में वह असमर्थ हो जाता था। अंग्रेज और फ्रांसीसी उसके महाजन थे। अव्यवस्था फैलने से उनके स्वार्थ में बाधा पड़ती। अत ब्रिटेन तथा फ्रांस ने मिलकर वहाँ द्वैध नियन्त्रण लागू किया।

**टर्की को सहायता देना**—मध्य एशिया तथा सुदूर पूर्व में रूस ब्रिटेन का दुश्मन था। उसने १८५६ ई० के पेरिस की संधि स काला सागर सम्बन्धी शर्त को तोड़ डाला था और वहाँ अपने जंगी बेड़ों को रखने लगा था। सुल्तान ने भी अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार अपने साम्राज्य में कोई सुधार नहीं किया। अत बाल्कन राज्य के लोगों ने सुल्तान के विरुद्ध विद्रोह कर डाला। तुर्कों ने विद्रोह को खास कर बल्गेरिया में बड़ी ही निर्दयता के साथ कुचल डाला। रूस का जार बाल्कन राज्य के लोगों को सहायता करना चाहता था। इसमें वह ग्रेट ब्रिटेन के सहयोग के लिए भी इच्छुक था। ग्लैडस्टन तो जार के साथ था और वह तुर्कों को बाल्कन प्रदेशों से निकाल बाहर करना चाहता था लेकिन डिसरैली ने इस नीति का घोर विरोध किया और उसने तुर्कों का पक्ष लिया। उसे महारानी का भी सहयोग प्राप्त था। अत जब रूस ने टर्की को युद्ध में हराकर उसे सैनस्टेफिनो की सन्धि स्वीकार करने के लिये बाध्य किया तो डिसरैली ने शीघ्र ही हस्तक्षेप किया। इस सन्धि को यूरोपीय कांग्रेस म पेश करने के लिए वह रूस पर दबाव देने लगा। जब रूस ने अस्वीकार किया तो डिसरैली ने झट कुस्तुनतुनिया में एक अंग्रेजी सेना भेज दी और युद्ध का प्रदर्शन किया। इस पर रूस ने उसके प्रस्ताव को मान लिया और १८७८ ई० में बर्लिन में कांग्रेस की एक बैठक हुई। अब एक नयी सन्धि हुई जिसके द्वारा सैनस्टेफिनो की सन्धि में महान् परिवर्तन कर रूस को पूर्व के सभी लाभों से वंचित कर दिया गया। अंग्रेजों को साइप्रस प्राप्त

नीति असफल रही। इटली और जर्मनी अहस्तक्षेप समिति में होते हुये भी स्पेन में हस्तक्षेप करते रहे।

इस प्रकार १९३७ ई० तक जब कि चेम्बरलेन प्रधान मंत्री हुये ग्रेट ब्रिटेन का सम्बन्ध जर्मनी से खराब हो गया था। फ्रांस भी ब्रिटिश नीति से पूरा खुश नहीं था किन्तु ब्रिटेन के विरुद्ध जाने का साहस भी नहीं कर सकता था। ग्रेट ब्रिटेन भी इटली तथा जर्मनी का खुले आम विरोध करना नहीं चाहता था और किसी तरह शांति बनाये रखना चाहता था। अतः उसने इन फासिस्ट राज्यों के प्रति संतुष्ट करने की नीति ग्रहण की। वह इनकी माँगों को मानता गया और समझौता करने के लिये भरपूर चेष्टा करता रहा किन्तु जर्मनी तथा इटली की भूख बढ़ती ही गई और अन्त में इसका परिणाम हुआ महायुद्ध का श्रीगणेश।

नवम्बर १९३७ ई० में हैलिफाक्स बर्लिन में हिटलर से मिले किन्तु विशेष लाभ न हुआ। ईडन तोष नीति का पक्षपाती नहीं था। अतः फरवरी १९३८ ई० में उसने मंत्रिमंडल से पदत्याग कर दिया। ब्रिटिश सरकार ने अबीसीनिया पर भी इटली के आधिपत्य को स्वीकार कर लिया। तोष-नीति के कारण अधिनायकों का मन बढ़ता जा रहा था। मार्च १९३८ ई० में जर्मनी ने आस्ट्रिया पर हमला किया और अप्रैल में मतगणना का जाल रचकर उसे अपने राज्य में हड़प लिया। इटली भी स्वार्थवश शान्त रहा लेकिन ग्रेट ब्रिटेन तथा फ्रांस ने पारस्परिक सहयोग बढ़ाने के लिये इसी समय एक समझौता किया। आस्ट्रिया के बाद चेकोस्लोवाकिया पर हिटलर की लोलुप दृष्टि पड़ी। चेकोस्लोवाकिया के सुडेटन प्रदेश में जर्मनी की प्रधानता थी और हेनलीन उनका नेता था। हिटलर इसे जर्मन राज्य में मिलाना चाहता था। तनाव बढ़ रहा था। ब्रिटिश सरकार ने एक बार रन्सीमैन को समझौता कराने के लिये भेजा किन्तु वह कुछ भी नहीं कर सका। १५ सितम्बर १९३८ ई० को ब्रिटिश प्रधान मंत्री चेम्बरलेन स्वयं हिटलर से मिले। चेक सरकार पर दबाव डालकर ब्रिटेन तथा फ्रांस ने जर्मन बहुमत प्रदेश जर्मनी को दिला दिया। बचे हुये भाग की सुरक्षा के लिये चेक सरकार को आश्वासन दिया गया लेकिन जर्मनी इतने से ही संतुष्ट नहीं था। उसकी माँग अधिक थी। अतः सितम्बर मास के अन्तिम सप्ताह में म्यूनिक में हिटलर और चेम्बरलेन पुनः मिले और म्यूनिक का समझौता हुआ। समस्त सुडेटन प्रदेश जर्मनी को दे दिया गया और चेक सरकार को बचे हुये भाग की सुरक्षा का सबों की ओर से आश्वासन दिया गया।

इस बीच इटली ने फ्रांस से ट्यूनीसिया की माँग की और १९३५ ई० में हुये मुसोलिनी-लावाल पैक्ट समाप्त हो जाने की घोषणा कर दी।

१९३९ ई० के प्रारम्भ में ब्रिटिश सरकार ने स्पेन की फ्रैंको सरकार को भी मान्यता

१८८४ ई० के लदन कन्वेशन के द्वारा ट्रान्सवाल की वैदेशिक नीति ब्रिटिश नियन्त्रण में ही रख दी गई।

**अफ्रीका का विभाजन**—उसके समय में अफ्रीका के विभाजन की भी समस्या उठ खड़ी हुई थी। इस क्षेत्र में वह सभी राज्यों को समान मौका देना चाहता था। इस पर विचार करने के लिये १८८४ ई० में बर्लिन में यूरोपीय राष्ट्रों की एक बैठक हुई थी।

**मिश्र और सूडान की समस्यायें**—मिश्र में यूरोपियनों की प्रधानता सी कायम हो रही थी। इसके विरुद्ध अरबी पाशा के नेतृत्व में सैनिकों ने विद्रोह कर डाला। अलेक्जड्रिया में दगे हो गये जिसमें ५० यूरोपियन मार डाले गये। विद्रोह दबाने में फ्रांसिसियों ने कोई तत्परता नहीं दिखलायी। बहुत ही हिचकिचाहट के बाद ग्लैडस्टन ने एक ब्रिटिश सेना भेजी। अरबी पराजित हुआ और विद्रोह दबा दिया गया। अब दे हीं वर्षों के बाद १८८२ ई० में मिश्र में अंग्रेजों तथा फ्रांसीसियों के द्वैध नियन्त्रण का अन्त हो गया लेकिन अब अंग्रेजों का आधिपत्य हुआ। गवर्नर का पद कायम रखा गया, किन्तु उसके अधिकार नाममात्र के रहे। वास्तविक अधिकार तो ब्रिटेन के ही हाथ में रहा।

लेकिन इससे परिस्थिति सकटपूर्ण हो गयी। मिश्र के दक्षिण सूडान भी मिश्र के अधीन था। अत सूडान पर ब्रिटेन और मिश्र दोनों का द्वैध अधिकार स्थापित हो गया अतएव एक मुसलमान पैगम्बर महदी के नेतृत्व में स्वतन्त्रता आन्दोलन चल पड़ा। मिश्र के गवर्नर ने ब्रिटिश सेनापतियों के अधीन एक सेना भेजी किन्तु इसकी हार हो गई। तब ब्रिटेन से सहायता के लिये अनुरोध किया गया लेकिन ग्लैडस्टन इस सम्बन्ध में आगा पीछा करने लगा। वह तो चाहता था कि सूडान महदी के अधिकार में छोड़ दिया जाय और मिश्री सेना वापस चली आवे। इस कार्य के लिये जेनरल गोर्डन भेजा गया। जब वह सूडान की राजधानी खरतूम में पहुँचा तो उसने एक बड़ी भूल की। उसने उत्तरी सूडान पर अधिकार रखने और महदी को विनष्ट करने के सम्बन्ध में मूर्खतापूर्ण घोषणा कर दी। सूडानी तो लड़ाकू थे ही, गोर्डन की घोषणा से उनके खून खौलने लगे। उन्होंने चट गोर्डन को घेर लिया। ब्रिटिश सरकार से सहायता माँगी गई, लेकिन सहायता भेजने में विशेष देर कर दी गई। इस बीच कितने ब्रिटिश और मिश्री सैनिक तलवार के घाट उतार दिये गये और गोर्डन स्वय मारा गया। अब सूडान छोड़ने के सिवा अन्य कोई चारा नहीं रह गया। अंग्रेज और मिश्रियों को सूडान खाली करना पड़ा। इस घटना से ग्लैडस्टन सरकार की बड़ी ही बदनामी हुई।

**अफगानिस्तान**—हम लोग देख चुके हैं कि अफगानिस्तान के सम्बन्ध में डिस-

के ही पानी का उपयोग करने का वचन दिया लेकिन इससे राष्ट्रवादी सन्तुष्ट नहीं हुये और वे राष्ट्र संघ के सामने मिश्र के प्रश्न को ले जाना चाहते थे किन्तु अंग्रेजों के विरोध से यह संभव नहीं हो सका।

इसके बाद १६२८ ई० तक मिश्री समस्या अनिश्चित स्थिति में पड़ी रही। पार्लियामेंट में राष्ट्रवादियों की प्रधानता थी और अंग्रेजों से सहानुभूति रखने वाला कोई भी मंत्रिमंडल टिक नहीं सकता था। १६२६ ई० के निर्वाचन में राष्ट्रवादियों का ही बहुमत था किन्तु जगलूल को प्रधान मंत्री नहीं होने दिया गया। एक संयुक्त मंत्रिमंडल का निर्माण हुआ। दूसरे ही साल १६२७ ई० में जगलूल का देहान्त भी हो गया।

१६२६ ई० में इंगलैंड में मजदूर सरकार की स्थापना हुई। मिश्रियों के हृदय में नई आशा का संचार हुआ। हेन्डरसन और महमूद के बीच समझौता का प्रयत्न हुआ किन्तु सफलता नहीं मिली। इसके बाद पार्लियामेंट स्थगित कर दी गई। वफ्द नेता नहस पाशा ने जो जगलूल का उत्तराधिकारी था, पदत्याग कर दिया। इसके बाद १६३० ई० में सिदकी पाशा प्रधान मंत्री बना और उसने एक नया विधान लागू किया।

यह विधान प्रतिक्रियावादी था। इसका उद्देश्य था राष्ट्रवादी दल (वफ्द) को कमजोर करना। इसने अप्रत्यक्ष निर्वाचन की व्यवस्था की। सिदकी को पदच्युत कराने के उद्देश्य से नहस पाशा और महमूद ने गठबंधन किया, किन्तु वे सिदकी का कुछ बिगाड़ नहीं सके और वह अधिनायक की भाँति शासन करता रहा। उसने राष्ट्रवादियों और कम्युनिस्टों को दबाने का खूब प्रयत्न किया। इसी समय रुई की कीमत घटने के कारण आर्थिक संकट भी पैदा हो गया था। ईसाइयों के विरुद्ध भयंकर विद्रोह भी शुरू हो गया था। इस विद्रोह का मुख्य कारण था कि एक अंग्रेज महिला एक मुस्लिम लड़की को बलात् ईसाई बनाना चाहती थी। राजा भी सिदकी से असंतुष्ट था और शासन में हस्तक्षेप करता था। जनता भी उसके निरंकुश शासन से असन्तुष्ट हो गई थी। धीरे-धीरे उसका स्वास्थ्य भी खराब होने लगा था। इन सब कारणों से सिदकी ने सितम्बर १६३३ ई० में पदत्याग कर दिया। नसीम पाशा उसका उत्तराधिकारी बना।

इसके बाद १६३० ई० का विधान रद्द हो गया लेकिन मिश्री इतने से ही संतुष्ट नहीं हुये। १६३५ ई० में मुसोलिनी ने अबीसीनिया पर हमला कर दिया। अब भूमध्य सागर की सुरक्षा की दृष्टि से मिश्रियों को सन्तुष्ट करना अत्यावश्यक हो गया। वफ्दिस्ट नेता नहस पाशा समानता के ही आधार पर इंगलैंड के साथ सहयोग करने को तैयार था। अतः १६३६ ई० के ग्रीष्म में नये निर्वाचन की व्यवस्था की

साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किया और जर्मनी आस्ट्रिया तथा इटली के बीच एक त्रिराष्ट्र गुट कायम किया।

बिस्मार्क की नीति के फलस्वरूप फ्रांस यूरोप में अकेला पड़ गया। अत उसे भी अपनी सुरक्षा की चिन्ता हुई और वह मित्र प्राप्त करने की चेष्टा करने लगा। इस समय रूस और इगलैंड ही दो ऐसे देश थे जिनके साथ जर्मनी का सम्बन्ध गहरा नहीं था। अत फ्रांस की मित्रता इन्हीं दोनों से हो सकती थी लेकिन मिश्र का इगलैंड तथा फ्रांस के बीच मनमुटाव चल रहा था। इसलिये फ्रांस को रूस की तरफ झुकने के लिये बाध्य होना पड़ा जार और कैसर के बीच अच्छा सम्बन्ध नहीं था। अत. फ्रांस और रूस के साथ मित्रता स्थापित हो गयी।

इस प्रकार यूरोप अब दो स्पष्ट दलों में बँट गया—आस्ट्रिया, जर्मनी और इटली का त्रिराष्ट्र गुट तथा फ्रांस और रूस का द्विराष्ट्र गुट। अब इगलैंड अकेला रहा और उसका अकेलापन वहाँ के राजनीतिज्ञों के मस्तिष्क में खटक रहा था। फ्रांस से तो इगलैंड का मनमुटाव था ही, रूस से भी उसे खतरे की आशका बनी रहती थी। अत १८६० ई० में इंगलैंड ने जर्मनी के साथ एक सन्धि की। अफ्रीका में दोनों ने सीमान्त झगड़ों का निर्णय कर लिया। जर्मनी ने जंजीबार को इगलैंड के अधीन और इगलैंड ने हेलिगोलैंड को जर्मनी के अधीन सौंप दिया।

इसके कुछ समय बाद सैलिसबरी सरकार का अन्त हो गया लेकिन १८६५ ई० में वह पुन स्थापित हो गयी। इस बार सैलिसबरी सरकार को बड़ी ही विकट स्थिति से पाला पड़ा।

आर्मीनिया में तुर्कों का जुल्म—इस समय आर्मीनिया की परिस्थिति बड़ी ही गम्भीर थी। तुर्क आर्मीनिया में भयकर नर हत्या कर रहे थे। उन्हें रूस की भी सहानुभूति प्राप्त थी। तुर्कों के इस नृशस व्यवहार से अंग्रेज रुष्ट हो रहे थे लेकिन सैलिसबरी ने बड़ी ही सावधानी से कार्य किया। युद्ध की आशका से सैलिसबरी ने हस्तक्षेप की नीति नहीं अपनायी और शान्ति को बनाये रखा।

क्रीट में भीषण स्थिति—लेकिन शीघ्र ही क्रीट में भीषण स्थिति पैदा हुई। वहाँ यूनानी लोग बहुमत में थे और वे यूनान के राज्य में सम्मिलित होना चाहते थे। दूसरे राष्ट्रों की भी सहानुभूति उन्हें प्राप्त थी। अत क्रेटनों ने तुर्कों के विरुद्ध विद्रोह कर डाला और १८६७ ई० में यूनान ने उनके पक्ष में युद्ध ही घोषित कर डाला लेकिन यूनान पराजित हो गया। इसी मौके पर सैलिसबरी ने यूरोप के अन्य राष्ट्रों से मिलकर तुर्कों की ओर से हस्तक्षेप किया। सुल्तान साधारण शर्तों पर क्रीट से सन्धि करने के लिये बाध्य हुआ और वहाँ से अपनी सेना वापस बुला ली। अब क्रीट में एक अन्तर्राष्ट्रीय सेना रख दी गई जिसमें ब्रिटिश, रूसी, फ्रांसीसी और इट-

सम्मेलन और राष्ट्र संघ में इन राज्यों को भी ग्रेट ब्रिटेन के साथ साथ अधिकार दिया गया। अब बाहरी मामलों में भी ये डोमिनियन अपने अधिकारों का उपयोग करने लगे। वे विदेशों में अपना राजदूत नियुक्त करने लगे और विदेशी राजदूतों का भी अपने यहाँ स्वागत करने लगे। कनाडा ने १६२३ ई० में अमेरिका से एक सन्धि भी कर ली।

इस तरह प्रथम महायुद्ध का अन्त होते-होते डोमिनियन भीतरी और बाहरी दोनों क्षेत्रों में व्यावहारिक दृष्टि से मातृभूमि से स्वतन्त्र हो चुके थे। १८८७ ई० से ही एक सम्मेलन का आयोजन होता था जिसमें डोमिनियनों के प्रधान मंत्री या अन्य प्रतिनिधि भाग लेते थे। इसकी बैठक प्रायः लन्दन में होती थी। १६०७ ई० तक सम्मेलन औपनिवेशिक सम्मेलन ( कॉलोनिअल कान्फ्रेंस ) के नाम से प्रसिद्ध था और उसके बाद यह इम्पीरियल कान्फरेन्स कहलाने लगा। इस सम्मेलन के रंग-मंच पर परस्पर हित के विषयों पर विचार-विमर्श होता था। डोमिनियन राज्यों के इतिहास में १६२६ ई० का इम्पीरियल कान्फ्रेंस विशेष महत्व रखता है। इसी सम्मेलन के एक प्रस्ताव में ( बाल्फर रिपोर्ट ) में यह घोषणा की गई कि ये डोमिनियन ब्रिटिश राष्ट्र-मंडल में आन्तरिक और वैदेशिक दोनों ही दृष्टियों से ग्रेट ब्रिटेन के बराबर हैं और केवल ताज ही इनके बीच मिलाने वाली एकमात्र कड़ी है। १६३० ई० के इम्पीरियल कान्फ्रेंस में इस प्रस्ताव को पुनः दुहराया गया।

१६३१ ई० में ब्रिटिश पार्लियामेन्ट ने स्टेच्यूट ऑफ वेस्टमिनिस्टर नामक कानून के द्वारा इस प्रस्ताव को कानूनी रूप दिया। अब ये डोमिनियन व्यवहार एवं सिद्धान्त दोनों ही में स्वतन्त्र समझे जाने लगे। अब सभी डोमिनियन ग्रेट ब्रिटेन की बराबरी में स्वीकृत कर लिये गये। अब ये अपने मन के अनुकूल अपना गवर्नर-जनरल नियुक्त करने लगे। डोमिनियन पार्लियामेंट कोई भी कानून बनाने की अधिकारिणी हो गई और इसका पास किया हुआ कानून ब्रिटिश-कानून का विरोधी होने पर भी अस्वीकृत नहीं किया जा सकता। डोमिनियन पार्लियामेंट के बिना स्वीकृति के अब कोई भी ब्रिटिश-कानून डोमिनियन राज्यों में लागू नहीं हो सकता। अब राजगद्दी के उत्तराधिकार नियम या सम्राट की उपाधि आदि के सम्बन्ध में कोई भी परिवर्तन करने के लिए ब्रिटिश पार्लियामेंट की स्वीकृति के साथ-साथ डोमिनियन पार्लियामेंट की भी स्वीकृति आवश्यक हो गई। १६३६ ई० में अष्टम् एडवर्ड के गद्दी-त्याग से जो वैधानिक परिवर्तन हुआ उसमें डोमिनियन पार्लियामेंट की भी स्वीकृति ली गई थी। डोमिनियन अपनी सुरक्षा का भी प्रबन्ध करने लगे और किसी युद्ध में जिसमें ग्रेट ब्रिटेन सम्मिलित हो, भाग लेना न लेना डोमिनियन की मर्जी पर निर्भर रहने लगा। ग्रेट ब्रिटेन इसके लिए डोमिनियन को बाध्य नहीं कर सकता। इस तरह १६३६ ई० में जब दूसरा

**आस्ट्रेलिया के कॉमनवेल्थ का उदय**—इसी समय आस्ट्रेलिया के सभी उपनिवेश मिलकर एक संघ शासन कायम करना चाहते थे। ब्रिटिश पार्लियामेंट के द्वारा स्वीकार किये जाने पर १ जनवरी १९०१ ई० को आस्ट्रेलिया के कॉमनवेल्थ का उदय हुआ।

**मध्य तथा सुदूर पूर्व में संकट**—मध्य तथा सुदूर पूर्व भी संकट से खाली नहीं था। १८९५ ई० में हिन्दुस्तान के उत्तर पश्चिम में चित्राल में एक भयानक विद्रोह हुआ। इसके दो वर्षों के बाद ही अफरीदों ने भी विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया। बड़ी परेशानी के बाद दोनों विद्रोह दबा दिये गये। १८९४-९५ ई० में चीन-जापान युद्ध हुआ जिसमें चीन की हार हो गयी। अब अफ्रीका के जैसा चीन में भी नोंच खसोट होने लगा लेकिन इसमें चीनियों की राष्ट्रीय भावना जाग्रत हो उठी और विदेशियों का सामना करने के लिये उन्होंने बोक्सर नामक एक संस्था स्थापित की। विदेशी दूतावासों पर हमला होने लगा। १९०१ ई० में चीनियों को दबाने के लिये एक अन्तर्राष्ट्रीय सेना भेजी गई। चीनी पराजित हुए और क्षति पूर्ति के रूप में एक बड़ी रकम देने के लिये वे बाध्य हुये।

**आंग्ल-जापानी सन्धि ( १९०२ ई० )**—इस समय तक जापान तीव्र गति से आगे बढ़ता जा रहा था। १९०२ ई० में ब्रिटेन ने उसके साथ एक सन्धि कर ली। किसी राज्य से युद्ध होने पर दोनों ने तटस्थ रहने का प्रतिज्ञा की। यदि आक्रमणकारी को अन्य राष्ट्र सहयोग देता तो ये दोनों भी एक दूसरे की सहायता करते।

इसी बीच १९०१ ई० में विक्टोरिया की मृत्यु हो गयी और सप्तम एडवर्ड राजा हुआ। १९०२ ई० में सैलिसबरी ने भी अस्वस्थता के कारण पदत्याग कर दिया और बाल्फर प्रधान मंत्री हुआ।

ब्रिटेन से एक समझौता हुआ और कई विवादपूर्ण विषयों के सम्बन्ध में निर्णय कर लिया गया। ब्रिटिश सरकार ने तटवर्ती अड्डों को आयरियों के हाथ सौंप दिया और उन स्थानों से अपनी सेना को वापस बुला लिया। आयर ने ग्रेट ब्रिटेन को एक करोड़ पौंड देना मंजूर कर लिया। इस प्रकार दोनों देशों में मनमुटाव बहुत कुछ दूर हो गया किन्तु देश के विभाजन से जो कटुता पैदा हो गई थी वह अभी भी बनी रही। सितम्बर १६३६ ई० में जब दूसरा महायुद्ध शुरू हुआ तो आयर तटस्थ रह गया। लेकिन अन्य सभी डोमीनियनों ने युद्ध में ग्रेट ब्रिटेन का साथ दिया था।

---

और ४ वर्षों में यह यातायात के उपयुक्त हो गया। १८२६ ई० में इन्जनों की चाल सम्बन्धी एक प्रतियोगिता का आयोजन हुआ जिसमें पुरस्कार की घोषणा की गई। चार प्रकार की इन्जनों ने इसमें भाग लिया और स्टीफेन्सन का राकेट नामक इन्जन विजयी हुआ। इसकी चाल ३५ मील प्रति घंटा थी। उसी अवसर पर रेल की सर्व प्रथम दुर्घटना भी घटी। इंगलैंड का भूतपूर्व मन्त्री हसकिसन ड्यूक आफ वेलिंगटन से मिलने के लिये जाना चाहता था। वह ज्योंही रेल मार्ग को पार करने लगा कि राकेट वहाँ आ पहुँचा। हसकिसन को धक्का लगा, उसे गहरी चोट आयी और इसी चोट के चपेटे से वह काल के गाल में चला गया लेकिन लोग इस दुर्घटना से विचलित नहीं हुए। रेलों की उपयोगिता लोग समझने लगे और रेल कम्पनियों की वृद्धि होने लगी। १८५० ई० तक देश भर में रेलमार्गों का जाल सा बिछ गया। प्रारम में यात्रियों को बहुत सुविधा नहीं थी खासकर तीसरे दर्जे के लोगों को किन्तु धीरे-धीरे असुविधाएँ दूर होती रहीं और आराम के साधनों का विकास होता रहा। १८४१ ई० में रेलवे की प्रथम समयसारणी (टाइम टेबुल) और १८४४ ई० में प्रथम यात्री नियम का निर्माण हुआ था। प्रत्येक लाइन पर जाने जाने वाली गाड़ियों की सख्या तथा समय निर्धारित करा दिये गये। एक पेनी प्रति मील के हिसाब से किराया भी निश्चित कर दिया गया।

भाप से सचालित जहाजों तथा रेलों के निर्माण तथा प्रयोग से यातायात के क्षेत्र में एक महान् क्रांति पैदा हो गई। इससे समय और दूरी दोनों ही संक्षिप्त हो गये। जहाँ पहले दो स्थानों के बीच यात्रा करने में कई महीने या कई दिन लगते थे। वहाँ अब वही यात्रा करने में कुछ ही दिन या घंटे लगने लगे। १६वीं सदी के प्रारम में भारत से लदन जाने में ६ महीने लगते थे किन्तु इस सदी के अन्त में दो या तीन सप्ताह ही लगने लगे। इसी तरह कहीं से कहीं भी आने जाने में पहले की अपेक्षा अब बहुत कम समय लगने लगा और समाचार भेजने में भी काफी सहूलियत हो गई।

इसी तरह डाक के क्षेत्र में भी अद्भुत उन्नति हुई। डाक का प्रचार पहले भी था किन्तु उसमें बहुत त्रुटियाँ भी थीं। पत्र तथा पैकेट का खर्च वजन तथा दूरी के आधार पर लिया जाता था। इससे खर्च अधिक पड़ता था और इन चीजों के पहुँचने में अधिक समय भी लगता था। जैसे लदन से कैम्ब्रिज पत्र भेजने में ८ पेंस तो डुरहम भेजने में १२ पेंस खर्च करना पड़ता था। पत्रादि पामर के मेल कोचों पर ही मन्द गति से ढोये जाते थे। अत बहुत से लोग डाक से पत्र न भेजकर प्राइवेट तरीके से ही भेजा करते थे। इससे डाक विभाग को आर्थिक क्षति होती थी। डाक-व्यवस्था पर सरकार का ही पूरा अधिकार था। रोलैंडहिल के प्रयास से इस दिशा में महत्वपूर्ण सुधार हुआ। उसी के सुझाव एव प्रयत्न से १८४० ई० में पेनी पोस्टेज का प्रचार

## अध्याय ६२

# युद्धोत्तर ग्रेट ब्रिटेन ( १९४६—१९५६ ई० )

( क ) गृह नीति—हम देख चुके हैं कि मई १९४० ई० में अनुदार नेता चेम्बर-लेन ने पदत्याग कर दिया और चर्चिल प्रधान मंत्री बने। चर्चिल भी अनुदार दल के ही नेता थे। चर्चिल के नेतृत्व में संयुक्त मंत्रिमंडल जारी रहा। पार्लियामेंट का निर्वाचन १९३५ ई० में ही हुआ था। युद्ध की स्थिति में १९४५ ई० तक इसका नया निर्वाचन स्थगित रहा और पार्लियामेंट अपनी अवधि बढ़ाती रही।

चर्चिल मंत्रिमंडल के सामने युद्ध-संचालन की ही प्रमुख समस्या थी किन्तु सरकार ने कुछ अन्य बातों की ओर भी ध्यान दिया। पुनर्निर्माण कार्य के लिए एक नगर तथा ग्राम योजना नामक नया विभाग खोला गया। राज्य विभाग सम्बन्धी योजनाओं का विस्तार हुआ और सर विलियम बेवरिज की देखरेख में सामाजिक सुरक्षा के सम्बन्ध में एक विस्तृत योजना तैयार की गई। इसके आधार पर युद्ध-काल में तो कोई कानून नहीं बन सका किन्तु शान्ति-काल में उसे लागू करने के लिए आशा की गई। १९४४ ई० में एक शिक्षा नियम पास हुआ किन्तु इसे भी शान्ति-काल में लागू करने के लिये स्थगित रखा गया लेकिन लागू होने पर इस नियम के द्वारा महत्वपूर्ण सुधार हुए। अब स्कूल छोड़ने के लिये विद्यार्थियों की उम्र १६ वर्ष निश्चित हुई। माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में भी सुधार हुआ और योग्य एवं प्रतिभा-शाली विद्यर्थियों को पर्याप्त आर्थिक सहायता देकर उत्साहित किया जाने लगा।

मई १९४५ ई० में दूसरा महायुद्ध समाप्त हुआ और जुलाई में निर्वाचन की व्यवस्था की गई। श्रम दल को विजयश्री मिली। इस दल के ४०० से भी अधिक सदस्य निर्वाचन में सफल हुए। एटली के प्रधान मंत्रित्व में सरकार का निर्माण हुआ। यों तो श्रमदल का यह तीसरा मंत्रिमंडल था किन्तु वास्तव में यह प्रथम श्रम मंत्रिमंडल था जिसे कॉमन्स सभा में अपने दल का स्पष्ट बहुमत प्राप्त था।

एटली मंत्रिमण्डल १९४५ से १९५० ई० तक कायम रहा। ५ वर्ष की अवधि पूरी हो जाने पर १९५० ई० में निर्वाचन कराया गया। इसमें श्रम-दल को बहुमत तो मिला किन्तु बहुत कम। लगभग १७ सदस्यों का ही बहुमत प्राप्त हुआ। एटली की सरकार पुनः बनी, किन्तु यह अल्पकाल तक ही रही। १९५१ ई० में पुनः चुनाव हुआ और अनुदार दल को बहुमत मिला। चर्चिल ने अपना दूसरा मंत्रिमंडल बनाया।

लेकिन १६वीं सदी में ये सभी असुविधाएँ धीरे धीरे दूर होने लगीं। राष्ट्र की सामाजिक तथा राजनीतिक प्रगति में समाचार पत्रों की उपयोगिता क्रमश मालूम होने लगी। करों में कमी की जाने लगी। भाप तथा बिजली से छपाई का कार्य भी सुलभ हो गया और घंटे के अन्दर हजारों प्रतियाँ छपकर निकलने लगीं। अत अब समाचार पत्र सस्ते हो गये और जन साधारण में इनका खूब प्रचार हुआ। तार के द्वारा देशी और केबुल के द्वारा विदेशी समाचार भी प्रकाशनार्थ यथार्थ प्राप्त होने लगे। जहाँ तहाँ समाचार एजेन्सियाँ स्थापित होने लगीं और विश्व के प्रमुख स्थानों में इनके सम्वाददाता रहने लगे। प्रसिद्ध रायटर की समाचार एजेन्सी १८५१ ई० में ही लंदन में कायम हुई थी। अब पत्रिकाएँ और सम्पादकों का समाज में एक विशिष्ट स्थान हो गया क्योंकि ये लोकमत के निर्माण में प्रबल साधन सिद्ध हुये।

(ख) अन्य आविष्कार—इस प्रकार १६वीं सदी में आवागमन के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुये। साथ ही अन्य क्षेत्र में भी कई महत्वपूर्ण आविष्कार हुये जिनसे जीवन के मौज और आराम में पर्याप्त वृद्धि हुई। फोटोग्राफी, टाइप राइटर, गैस, बिजली, प्रकाश, दियासलाई, बर्नर, साइकिल आदि इसी सदी की अमूल्य देन हैं।

१६वीं सदी के प्रारम्भ तक स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के क्षेत्र में अनेक बुराइयाँ थीं। अस्पतालों और चिकित्सा सम्बन्धी सामानों की बड़ी ही कमी थी। चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान भी कम ही था। अस्पताल तो यातना का ही घर था और दुर्गन्ध ही के आधार पर किसी अस्पताल की स्थिति जानी जा सकती थी। चीर-फाड़ के रोगियों में ६० प्रतिशत् तो मृत्यु के ही शिकार हो जाया करते थे। मानव का औसत जीवन ३० वर्ष ही समझा जाता था।

किन्तु इसी सदी में चिकित्सा के क्षेत्र में कुछ ऐसे आविष्कार हुए जिनसे मानव समाज का बड़ा उपकार हुआ है। एडिनबरा निवासी डा० जेम्स सिम्पसन ने क्लोरोफार्म का आविष्कार किया। इसके द्वारा पीड़ित मानव को मूर्छित कर चीर-फाड़ का काम आसानी से किया जाने लगा। फ्रांसीसी पास्टर ने कीटाणु नाशक औषधि का आविष्कार कर टीका लेने की प्रथा चलाई और डा० लिस्टर ने घाव सम्बन्धी कीटाणु नाशक औषधि (ऐन्टी सेप्टीक) का निर्माण किया। क्लोरोफार्म और ऐन्टी सेप्टीक के आविष्कारों से डाक्टरों को शरीर का चीर फाड़ करने में बहुत सुविधा हो गई। घाव से पीड़ित मृतकों की संख्या भी बहुत घटने लगी। १८६५ ई० में रोन्टजेन ऐक्सरे का आविष्कार हुआ। १८६७ ई० में सर रोनल्ड रौस ने मलेरिया का कारण मच्छरों को बतलाया और उनके विनाश पर जोर दिया। अब चिकित्सा तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों का प्रचार होने लगा। मृत्यु संख्या में कमी होने लगी। औसत् जीवन का भी

समय तक रूस और अमेरिका दोनों ही खूब शक्तिशाली हो गये थे और दोनो ने ग्रेट ब्रिटेन के साथ-साथ युद्ध में प्रमुख भाग लिया है। वास्तव में द्वितीय महायुद्ध में रूस तथा अमेरिका की देन ग्रेट ब्रिटेन की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण रही है। अतः इस युद्ध के बाद ग्रेट ब्रिटेन का विश्व के रंगमंच पर तीसरा स्थान हो गया है। युद्धोत्तर काल में संसार के राजनीतिक रंगमंच पर अमेरिका और रूस दो प्रबल प्रति द्वन्द्वी के रूप में उपस्थित हुए हैं। युद्ध समाप्त होने पर रूस अपने साम्यवादी विचार और प्रभाव को बढ़ाने का प्रयत्न करने लगा और अमेरिका उसकी नीति का विरोधी बना। ग्रेट ब्रिटेन अमेरिका का साथ देता रहा है। १९१८ ई० में जब सन्धि हुई तो उसके बाद लगभग १५ वर्षों तक किसी ने नहीं सोचा था कि फिर विश्वयुद्ध होगा। नाज़ियों के हाथ में शासन-सूत्र आने के बाद ही युद्ध होने की आशंका धीरे-धीरे बढ़ने लगी किन्तु दूसरे महायुद्ध के बाद सन्धि होने के बाद कुछ ही समय के अन्दर रूस के विरुद्ध युद्ध की आशंका होने लगी। अतः जहाँ वर्साई की सन्धि ( १९१८ ई० ) के १७ वर्षों के बाद इंगलैंड में अस्त्र-शस्त्र की वृद्धि होने लगी वहाँ द्वितीय महायुद्ध के अन्त होने के ४ ही वर्ष के बाद (१९४९ ई०) अस्त्र-शस्त्र का उत्पादन शुरू हो गया।

युद्धोत्तर काल में शीघ्र ही एक नवीन प्रकार का युद्ध शुरू हुआ जिसे शीतयुद्ध कहते हैं। रूस ने इसमें काफी हाथ बँटाया है और अमेरिका तथा ब्रिटेन को तंग करता रहा है। राष्ट्र संघ की भाँति संयुक्त राष्ट्र संघ का भी एक विधान बना है। इसकी कार्यकारिणी संस्था को सुरक्षा परिषद कहते हैं। इसमें ५ बड़े राज्यों को स्थायी स्थान प्राप्त है। इन ५ राज्यों में एक ग्रेट ब्रिटेन भी है। इनमें से यदि कोई भी राज्य किसी प्रस्ताव को स्वीकृत न करे तो वह पास नहीं समझा जायगा। इस तरह इसमें प्रत्येक महान राज्य को ये अधिकार प्राप्त हैं और रूस ने अपने इस अधिकार का कई बार उपयोग भी किया है। जर्मनी की पराजय हो जाने पर चारों विजेता राष्ट्रों ( अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस और रूस ) ने उसे आपस में बाँट लिया। इस परिस्थिति में अन्य कोई उपाय नहीं था। जर्मनी की राजधानी बर्लिन में भी चारों ने हिस्सा लिया लेकिन अन्य तीन शक्तियों को रूसी भूमि से ही रास्ता मिलता था। एक बार १९४८ ई० में रूस ने रास्ता देना अस्वीकार कर दिया। तब अमेरिका और ब्रिटेन ने करीब १२ महीने तक हवाई रास्ते से अपने क्षेत्र में प्रबन्ध किया। इसके बाद रूस से फिर समझौता हो गया। कोरिया में भी युद्ध शुरू हो गया। वह दो भागों में बँटा था—उत्तरी और दक्षिणी और दोनों कोरिया में युद्ध शुरू हो गया। संयुक्त राष्ट्र संगठन की ओर से युद्ध घोषित हुआ जिसमें अमेरिका की ही प्रधानता रही। कई वर्षों तक लड़ाई चलने के बाद इसकी समाप्ति हुई। यहाँ भी रूस तथा अमेरिका विरोधी के रूप में लड़ रहे थे।

इस सदी में पील तथा ग्लैडस्टन के प्रयास से मुक्त व्यापार की नीति अख्तियार की गई। इससे वाणिज्य व्यापार को बहुत प्रोत्साहन मिला। इसी सदी में इंगलैंड में कई ज्वायंट स्टाक कंपनियां और ज्वायंट स्टाक बैंक भी स्थापित हुए। इस तरह पूँजी की बड़ी-बड़ी रकम व्यवसाय तथा उद्योग धंधों में लगायी जाने लगी। इससे वाणिज्य-व्यापार में काफी सहायता मिली। देश में धन दौलत की काफी वृद्धि होती गई। जिससे समाज में प्रत्येक श्रेणी के लोग लाभान्वित हुए।

१६वीं सदी में वाणिज्य व्यवसाय की भाँति कृषि की भी उन्नति हुई। इस सदी के तृतीय चरण में तो कृषि का इतना विकास हुआ कि इसे कृषि का सुनहला युग ही कहते हैं लेकिन इस सदी के चतुर्थ चरण में इस प्रगति में मन्दी आ गई और इसे कृषि का आकर्षण युग कहते हैं। इस सदी के अन्त में केवल खेती में ही नहीं, व्यवसाय में भी इंगलैंड का अधिकार जाता रहा। इसका प्रधान कारण था—विदेशी प्रतियोगिता। १८७० तक यूरोप के देशों में औद्योगिक क्रान्ति का प्रसार नहीं हुआ था। इटली तथा जर्मनी राष्ट्रीय संगठन में व्यस्त थे पर अन्य कई देश युद्ध से थके थे। अमेरिका भी कुछ समय तक गृह युद्ध में ही फँसा था किन्तु १८७० के बाद प्रायः सभी प्रमुख देशों में व्यावसायिक क्रान्ति का प्रसार हो गया और इटली तथा जर्मनी भी साम्राज्यवाद के रंग मंच पर प्रतियोगी के रूप में आ खड़े हुए। इंगलैंड में विदेशों से अन्न, फल, मांस आदि भी पर्याप्त मात्रा में आने लगे जिससे वहाँ की कृषि पर बुरा असर पड़ा।

( ख ) व्यवसाय संघ—इस सदी की एक और विशेषता है मजदूरों की जागृति और व्यवसाय संघ ( ट्रेड यूनियन ) का निर्माण। आधुनिक व्यवसाय संघ औद्योगिक क्रांति की ही देन है। १६वीं सदी के उत्तरार्द्ध में संघ का विशेष रूप से विकास हुआ।

१८वीं सदी के पहले सरकार मजदूरों की भलाई का ख्याल रखती थी। मालिक और मजदूरों के हृदय में भी दया का भाव रहता था और मजदूरों की संख्या भी कम थी किन्तु १८वीं सदी में ये सभी बातें न रहीं। औद्योगिक क्रान्ति और कारखाना प्रणाली के कारण मजदूरों की संख्या में दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति होने लगी। मालिक अधिकतम नफा के ख्याल से उनका अधिकतम शोषण करना चाहते थे और आर्थिक क्षेत्र में सरकार ने अहस्तक्षेप की नीति अपना ली थी। अतः मजदूरों की दशा दिन पर दिन खराब होने लगी और वे अपना संगठन करना शुरू किये इस तरह व्यवसाय संघ का निर्माण होने लगा। संघ का प्रमुख उद्देश्य था मजदूरों की दशा में सुधार लाना।

संघों में संगठित होकर मजदूर हड़ताल और हुड़दंग मचाने लगे। १८वीं सदी के

उत्पन्न आय में उसे बहुत कम मिलता था। १६५५ ई० में ३½ करोड़ पौंड की आय में मिश्र को केवल १० लाख पौंड ही मिले थे। मिश्रियों की दृष्टि में यह घोर अन्याय था—राष्ट्रीय धन का लूट था। यह अन्याय और भी बुरी तरह खलने लगा जब कि आवश्यकता पड़ने पर इंगलैंड तथा फ्रांस ने मिश्र को ऋण देने से अस्वीकार कर दिया। मिश्री सरकार को असवन बाँध के लिये एक बड़ी रकम की आवश्यकता थी। इंगलैंड तथा फ्रांस से कर्ज माँगा गया किन्तु इन दोनों देशों ने अँगूठा दिखा दिया। इससे मिश्रियों की आत्म-प्रतिष्ठा को—राष्ट्रीय भावना को गहरी चोट पहुँची। नहर के क्षेत्र से ब्रिटिश सेना हटायी जा चुकी थी। राष्ट्रपति कर्नल नसीर ने स्वेज नहर का राष्ट्रीयकरण कर दिया।

स्वेज नहर के राष्ट्रीयकरण का समाचार पाते ही ग्रेट ब्रिटेन तथा फ्रांस में खलबली मच गई। इन देशों के साम्राज्यवादी स्वार्थ को गहरा धक्का लगा। प्रधान मन्त्री इडेन ने रोष में आकर आक्रमणात्मक नीति अपनायी। फ्रांस तो क्रुद्ध था ही। इसरायल भी मिश्र का दुश्मन था। अतः इन तीनों राज्यों ने अक्टूबर १६५६ ई० में मिश्र पर धावा बोल दिया। सभी दिशाओं से हमले का घोर विरोध होने लगा—आक्रमणकारियों की कटु निन्दा की जाने लगी। एशियाई-अफ्रीकी देशों की जनता ने मिश्री सरकार की नीति का समर्थन किया और आक्रमण का एक स्वर से विरोध किया। केवल पाकिस्तान अपवादस्वरूप है। संयुक्त राष्ट्र संगठन के रंगमंच से भी आक्रमण नीति की आलोचना की गई और सेना हटा लेने के लिये प्रस्ताव पास हुआ। यहाँ तक कि अमेरिका ने भी मिश्र पर हमले का समर्थन नहीं किया और इंगलैंड को सहयोग देने से अस्वीकार कर दिया। ब्रिटिश लोकमत भी अपनी सरकार की इस नीति से पूर्ण रूपेण सहमत नहीं था। इन सब का यही परिणाम हुआ कि अपनी अवधि के बहुत पूर्व ही इडेन को प्रधान मन्त्री के पद से त्याग-पत्र देना पड़ा। वह मन्त्रिमंडल से ही नहीं हटा बल्कि लोक सभा की सदस्यता से भी त्याग पत्र दे दिया। यह उनकी बहुत बड़ी पराजय थी और थी कर्नल नासिर की महान् विजय। मिश्र की भूमि से धीरे-धीरे सेना भी हटने लगी और तृतीय महायुद्ध के बादल भी फटने लगे।

---

(क) मजदूरों की दशा में सुधार—१८०२ ई० में स्वास्थ्य तथा नीति सम्बन्धी नियम (हेल्थ एण्ड मोरल्स ऐक्ट) पास हुआ। इसके द्वारा रात में काम करना बन्द कर दिया गया और गरीब भिखारी के लड़कों को १२ घंटा प्रति दिन काम करने के लिए कहा गया। स्थानीय अधिकारियों को दो निरीक्षक भी नियुक्त करने का अधिकार मिला। १८१६ ई० में रुई कारखाना नियंत्रण नियम (कॉटन फैक्टरीज़ रेगुलेशन ऐक्ट) पास हुआ। इसके द्वारा रुई कारखाना में ६ वर्ष से नीचे के बच्चों को काम करने से मना कर दिया गया और इससे ऊपर के लड़कों को १२ घंटे तक काम करने के लिए कहा गया लेकिन इन शर्तों को कड़ाई के साथ लागू नहीं किया गया। अतः इस नियम से विशेष लाभ नहीं हुआ। १८३३ ई० का कारखाना नियम* (फैक्ट्री ऐक्ट) बड़ा ही महत्वपूर्ण था जिसके द्वारा महत्वपूर्ण सुधार हुए। १८४० ई० में चिमनियों पर चढ़कर साफ करने वाले मजदूर बच्चों और १८४२† ई० में कोयले कारखानों में काम करने वाले मजदूरों की दशा में सुधार हुये। १८४४ तथा १८४७ ई० के कानूनों द्वारा भी मजदूरों की दशा में सुधार हुये। इसके द्वारा औरतों और १८ वर्ष तक के लड़के-लड़कियों के काम के लिए १० घंटे निश्चित किए गए।

१९वीं सदी के उत्तरार्ध में भी राज्य की हस्तक्षेप नीति जारी रही और मजदूरों के काम, स्वास्थ्य तथा सफाई के सम्बन्ध में अनेक नियम बने। इस दृष्टि से डिजरैली का का दूसरा मन्त्रिमंडल विशेष उल्लेखनीय है। सार्वजनिक स्वास्थ्य नियम, श्रम-आवास नियम आदि उसी समय पास हुये। मजदूरों की क्षति पूर्ति के सम्बन्ध में भी नियम बनने लगे। राज्य के हस्तक्षेप का तो इतना विकास हुआ कि कारखाने के अलावे दूकान तथा होटल के मजदूरों के लिए भी नियम पास होने लगे।

(ख) दासों की दशा में सुधार—मजदूरों के सिवा दासों की दशा में परिवर्तन हुआ। १८०७ ई० में दास प्रथा कायम रह गई। १८३३ ई० में इसका भी खात्मा कर डाला गया परन्तु तत्काल ही सभी दास मुक्त नहीं कर दिये गये। कुछ दासों के लिए यह तय हुआ कि वे अपने मालिकों के यहाँ १८४० ई० तक काम करें और उसके बाद वे भी मुक्त हो जायेंगे लेकिन मालिक लोग उनसे अमानुषिक एवं कठोर काम कराने लगे। अतः १८३८ ई० में ही पार्लियामेंट ने मालिकों को हरजाना देकर उन दासों को मुक्त कर दिया।

(ग) बेकारों की दशा में सुधार—वैज्ञानिक युग का औद्योगिक व्यवस्था में

---

* ग्रे के सुधार को देखें

† पिल के सुधार को देखें

| | |
|---|---|
| आंग्ल-फ्रांसीसी समझौता | १९०४ ई० |
| आंग्ल-रूसी समझौता | १९०७ ई० |
| एडवर्ड सप्तम की मृत्यु, जार्ज पंचम का राज्याभिषेक, दक्षिणी अफ्रीका का संयोग | १९१० ई० |
| पार्लियामेंट ऐक्ट | १९११ ई० |
| प्रथम महायुद्ध; मिश्र पर आंग्ल संरक्षण | १९१४ ई० |
| चौथा सुधार नियम | १९१८ ई० |
| गवर्नमेंट आफ इंडिया ऐक्ट, वर्सायी की सन्धि, राष्ट्र संघ की स्थापना | १९१९ ई० |
| आयरी फ्री स्टेट का निर्माण | १९२२ ई० |
| मिश्र में आंग्ल संरक्षण का अन्त, लौजेन की संधि और तुर्की प्रजातंत्र | १९२३ ई० |
| आर्थिक संकट | १९२९ ई० |
| स्टेट्युट आफ वेस्टमिनस्टर | १९३१ ई० |
| जार्ज पंचम की मृत्यु; अष्टम एडवर्ड का राज्याभिषेक और गद्दी-त्याग, जार्ज षष्टम का राज्याभिषेक | १९३६ ई० |
| द्वितीय महायुद्ध | १९३९ ई० |
| ,, ,, का अन्त और संयुक्त राष्ट्र संघ का निर्माण | १९४५ ई० |
| जार्ज षष्ठम की मृत्यु, द्वितीय एलिजाबेथ का राज्यारोहण | १९५२ ई० |
| मिश्र पर इङ्गलैंड तथा फ्रांस द्वारा आक्रमण | १९५६ ई० |

---

## परिशिष्ट ४

Important Questions & Quotations ( 1815-1956 )

1. What were the principal features of English History after Waterloo and before the first Reform Bill ?
2. What was the condition of England in 1815? What methods were adopted by the Government to cope with the social unrest of the time ?
3. Describe and account for the changes in Britain's domestic and foreign policy during 1815-1830.
4. In what ways did the discontent of the people express itself after 1815 ? What did the Government do to deal with the situation ?
5. What were the defects in the Parliamentary System

हास, विज्ञान आदि शास्त्रों की पढ़ाई उपेक्षित सी थी। ग्लैडस्टन के मंत्रित्व काल में शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कदम उठाया गया। १६६८ ई० में पब्लिक स्कूल्स ऐक्ट और १८६९ ई० में एनडाउड स्कूल्स ऐक्ट पास कर शिक्षा प्रणाली के विकास और आधुनीकरण पर जोर दिया गया। १८८० ई० में प्राथमिक शिक्षा नियम* पास हुआ और इसने शिक्षा में क्रान्ति ला दी।

१८७१ ई० में युनिवर्सिटी ऐक्ट के द्वारा उच्च शिक्षा का विकास हुआ। सभी धर्म वालों के लिए विश्वविद्यालय का दरवाजा खोल दिया गया। उच्च शिक्षा की जाँच के लिए १८७७ ई० में एक कमीशन की भी नियुक्ति की गई थी।

१८८१ ई० तक प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य तो थी किन्तु निःशुल्क नहीं थी। उसी साल इसे निःशुल्क भी बना दिया गया और अब इसे लोकप्रियता प्राप्त होने लगी।

स्काॅटलैंड में शिक्षा का प्रबन्ध बहुत पहले से था फिर भी वहाँ भी कुछ त्रुटियाँ थीं। प्रत्येक पेरिश पर शिक्षा-प्रचार का भार था। १८७० ई० में वहाँ भी निर्वाचित बोर्डों की स्थापना हुई तथा पेरिश स्कूलों के प्रबन्ध का भार इन्हें ही दे दिया गया। खर्च के लिए चुंगी की रकम निश्चित कर दी गई। १८८० ई० में माध्यमिक शिक्षा में सुधार हुआ और आगे चलकर प्राथमिक शिक्षा वहाँ भी निःशुल्क कर दी गई।

(ख) साहित्य—शिक्षा के प्रचार के साथ साथ साहित्य की भी उन्नति हुई। कविता और गद्य दोनों ही का विकास हुआ।

कविता के क्षेत्र में शुरू में लेक स्कूल और उदारवादी भावनाओं के कवियों की प्रधानता थी। १६वीं सदी के मध्य में टेनिसन तथा ब्राउनिंग दो प्रसिद्ध कवि हुये और इनकी कविताओं में राष्ट्रीय भावनाओं तथा प्रकृति की विभिन्न प्रवृत्तियों का सुन्दर चित्रण पाया जाता है। कुछ ऐसे भी कवि हुए जो कविता को केवल कला एवं सौंदर्य की दृष्टि से देखते थे। ऐसे कवियों में रोसेटी स्वीनबर्न और विलियम मोरिस के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

गद्य के क्षेत्र में प्रारंभ में रोमांटिक स्कूल की प्रधानता थी। १६वीं सदी के पूर्वार्द्ध में उपन्यास की प्रधानता कम थी किन्तु उत्तरार्द्ध में यह बहुत ही लोकप्रिय बन गया। उपन्यासकारों में सर वाल्टर स्काट, चार्ल्स डिकेंस और थैकरे के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इसी युग में समालोचना साहित्य का भी उदय हुआ। समालोचकों में कारलाइल, जौन रस्किन तथा मैथ्यू आर्नोल्ड के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

१६वीं सदी में देश में मैगजीन तथा समाचार पत्रों की भी भरमार हो गई और

* ग्लैडस्टन के सुधार देखें।

ऑक्सफोर्ड आन्दोलन का एक परिणाम यह हुआ कि मध्ययुगीन कला तथा रीति के अध्ययन पर विशेष जोर दिया जाने लगा और उस युग के संस्कारों का प्रचार होने लगा। इस प्रकार दो और सम्प्रदाय कायम हो गये—(क) रिचुअलिस्ट या चरम पंथी और (ख) लैटिट्यूडिनेरियन या उदारवादी। दूसरे सम्प्रदाय को ब्रोड चर्च भी कहा गया। रिचुअलिस्ट सम्प्रदाय वाले मध्यकालीन प्रथाओं तथा संस्कारों को बहुत अधिक महत्व देते थे। इन्हें कुचल देने के लिये भरपूर प्रयत्न हुए थे। डिसरैली ने भी १८७४ ई० में सार्वजनिक पूजा नियन्त्रण नियम (पब्लिक वर्शिप रेगुलेशन ऐक्ट) पास कर इस पर आघात किया था किन्तु सभी प्रयत्न विफल सिद्ध हुए। ब्रोड चार्च वाले सम्प्रदाय को भी कुछ लोगों ने दबा देना चाहा किन्तु इसमें भी सफलता नहीं मिली।

अन्त में इन सभी सम्प्रदायों को वैधता प्राप्त हो गई किन्तु इससे पार्टीबन्दी की भावना विकसित हुई। धार्मिक क्षेत्र में यह भावना हानिकारक थी किन्तु इन धार्मिक आन्दोलनों के कारण धार्मिक भावना भी जाग्रत हुई। धर्म में लोग कुछ दिलचस्पी लेने लगे। कई नये-नये चर्च निर्मित हुए और पुराने चर्चों की मरम्मत भी कराई गई। चर्च के सुप्रबन्ध के लिए भी प्रयत्न हुये। १८३६ ई० में एक धार्मिक कमीशन की नियुक्ति हुई। इसने चर्च की सुव्यवस्था और उसकी सम्पत्ति के समान वितरण के सम्बन्ध में विचार किया। १८६७ ई० में ऐंग्लिकनों की एक धार्मिक बैठक हुई। इसमें ६५ ऐंग्लिकनों ने भाग लिया। ११ वर्ष के बाद १८६७ ई० में जब फिर बैठक हुई तो उसमें करीब ढाई सौ ऐंग्लिकन उपस्थित हुए। चर्च के कन्वोकेशन की महत्ता भी स्थापित हुई। लगभग पिछले १५० वर्षों से इसकी बैठक होती थी किन्तु कोई वास्तविक कार्य नहीं होता था। १८५४ ई० से इसे अपना कार्य करने का अधिकार प्राप्त हो गया लेकिन यह सच्ची प्रतिनिधि संस्था नहीं रह गई थी। अतः चर्च के मत को समुचित रूप से मानने के लिए कांग्रेस और कौंसिलों की बैठक होने लगी।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इस सदी में चर्च की प्रधानता घटती गई लेकिन यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि इस सदी के पूर्वार्द्ध की अपेक्षा उत्तरार्द्ध में चर्च अधिक सक्रिय एवं लोकप्रिय था।

लेकिन नान कन्फर्मिस्टों की स्थिति में सुधार हुआ। इनकी संख्या तथा संगठन, धन तथा प्रभाव में वृद्धि हुई। १८२८ ई० में टेस्ट और कारपोरेशन नियम रद्द कर दिये गये। फिर १८३६ ई० में उन्हें अपने चर्च में या रजिस्ट्रार के सामने विवाह करने की आज्ञा मिल गयी। १८६८ ई० में अनिवार्य चर्च कर उठा दिया गया और १८७१ ई० में विश्वविद्यालयों से धार्मिक शर्त उठा दी गई। १८८० के कब्रगाह-नियम (बेरियल ऐक्ट) के अनुसार उन्हें पेरिश के कब्रगाह में किसी ईसाई या धार्मिक

नियम के मुताबिक मृतक गाड़ने की अनुमति मिल गई। वे स्वेच्छा सिद्धान्त को मान लिये और उनके मतानुसार राज्य का धर्म के मामले में कोई अधिकार नहीं था। १८६६ ई० का आयरी चर्च नियम इसी मत के विजय की सूचक थी।

रोमन कैथोलिक चर्च की प्रगति हुई। उनके विरुद्ध पास हुये कठोर नियम उठा दिये गये थे और १८२६ ई० में उनके उद्धार के लिये एक नियम पास हुआ था। तब से वे भी आगे बढ़ने लगे।

स्कॉटलैंड में भी धार्मिक बखेड़े उत्पन्न थे। वहाँ प्रेस्बिटेरियन धर्म १६८८ ई० से ही राज्य धर्म था किन्तु इसके विरुद्ध भी आवाज उठाई जा रही थी और १६ वीं सदी के अन्त तक धार्मिक मतभेद चलता ही रहा था।

## ५. राजनीतिक दशा

(क) केन्द्रीय और स्थानीय सरकार—१६ वीं सदी में तीन सुधार बिल पास हुये जिनके द्वारा प्रतिनिधित्व तथा मताधिकार प्रणाली में महत्वपूर्ण सुधार हुये। मतदाताओं की संख्या बढ़ी और कॉमन्स सभा राष्ट्र का अधिक प्रतिनिधित्व करने लगी। १८७२ ई० में ही गुप्त मतदान की प्रथा भी प्रचलित कर दी गई थी लेकिन स्त्रियों को अभी तक मताधिकार नहीं प्राप्त हुआ था। अब मंत्रिमंडलीय और पार्लियामेंटरी व्यवस्था सुदृढ़ हो गयी। हम यह भी देख चुके हैं कि इस सदी में राज्य-हस्तक्षेप की नीति का विकास हुआ। अब राज्य के कामों में बहुत ही वृद्धि हुई। अतः केन्द्रीय सरकार में नये-नये विभाग खोले गये और पदाधिकारियों की संख्या में वृद्धि हुई। दो राज्य मंत्री के स्थान पर अब ६ हो गये। मंत्रिमंडल में मन्त्रियों की संख्या २० तक हो गई। मन्त्री तो प्रधानतः नेता होते थे और उन्हें अपने विभाग की समुचित जानकारी नहीं रहती थी। अतः उन्हें वैतनिक तथा स्थायी अफसरों के द्वारा बहुमूल्य सहायता मिलने लगी थी। सिविल सर्विस के कर्मचारियों का चुनाव प्रतियोगिता परीक्षा के ही आधार पर होता था।

स्थानीय सरकार के कार्यों में भी परिवर्तन हुआ। १८३५ ई० के नियम के द्वारा नगर सभाओं की दशा में सुधार किया गया और उनके अधिकारों की वृद्धि हुई। १८८८ ई० ने नियम के काउन्टियों में एक निर्वाचित कौंसिलों की व्यवस्था की।

(ख) सेना—१६वीं सदी के पूर्वार्द्ध में स्थल सेना की दशा बड़ी ही बुरी थी। १८५३ ई० में क्रीमिया के युद्ध में इसका परिणाम भी भोगना पड़ा। उसके बाद कुछ सुधार हुए। एक युद्ध मंत्री की नियुक्ति हुई किन्तु सेनापति को सीधे सम्राट के अधीन रखा गया। १८७० ई० में कार्डवेल ने सेना में महत्वपूर्ण सुधार किया। सैनिकों की संख्या और योग्यता दोनों ही में वृद्धि हुई। इसके बाद ब्रिटिश सैनिकों ने

युद्धों में काफी ख्याति प्राप्त की किन्तु बोअर युद्ध में ब्रिटिश सेना की हार हो गयी। इससे स्पष्ट है कि अभी भी सेना में कुछ त्रुटि रह गयी थी जिसे दूर करना आवश्यक था।

लेकिन जल सेना की दशा अच्छी थी। भाप के आविष्कार ने जल-युद्ध-कला में क्रांति पैदा कर दी थी। अब लोहे और इस्पात के बड़े-बड़े जंगी बेड़े बनने लगे थे और नाविक सैनिक भारी तथा शक्तिशाली बन्दूकों का व्यवहार करते थे। जंगी बेड़े घंटे में २० मील से अधिक की ही चाल में चलाये जाते थे।

( ग ) न्याय—१६वीं सदी के प्रारम्भ में न्याय के क्षेत्र में बहुत बुराइयाँ थीं। १८२५ ई० में २०० से अधिक अपराध ऐसे थे जिसमें प्राण दण्ड की ही सजा दी जाती थी। एक बार दो लड़कियों ने एक तीतर के खोंते को अनजाने ही कुचल दिया तो एक पादरी मैजिस्ट्रेट ने उन्हें ६ महीने तक जेल की सजा दे दी। एक कृषि मजदूर ने एक झाड़ी से एक छड़ी काट ली तो उसे शिकार का चोर समझकर १२ महीने की जेल सजा मिली। कई दाइयों को अपने मालिकों के यहाँ से पैसे चुराने के अपराध में १४ वर्ष तक के निर्वासन की सजा दी गई थी। इस तरह के कितने उदाहरण बतलाये जा सकते हैं। जेलखाने की दशा भी बड़ी ही दयनीय थी। श्रीमती फ्राई के शब्दों में वे जंगली जानवरों के वासस्थान तुल्य थे। १८०० ई० में करीब २०,००० कैदी जेलों में मरे थे।

लेकिन १६वीं सदी के अन्त तक जेलों की दशा में सुधार हुआ। ७० प्रतिशत अपराधों की भी कमी हो गई। कैदियों की संख्या घटने लगी। सजा की कठोरता में नरमी आई और विचारपतियों के हृदय में दया एवं मानवता के भाव उभरने लगे। अब कैदियों को उत्तम नागरिक बनाने की कोशिश होने लगी।

# अध्याय ४६

## गृहनीति ( १६०१—१६१४ ई० )

### १. यूनियनिस्टों का युग ( १६०१-०५ ई० )

सप्तम एडवर्ड का राज्याभिषेक और उसका चरित्र—१६०१ ई० में महारानी विक्टोरिया की मृत्यु हो गई और उसके बाद उसका लड़का एलबर्ट एडवर्ड सप्तम एडवर्ड के नाम से गद्दी पर बैठा। गद्दी पर बैठने के समय उसकी उम्र ६० वर्ष की हो चुकी थी। अतः उसमें अनुभव और व्यावहारिकता की कमी नहीं थी। २० वर्ष की ही अवस्था से वह विभिन्न उत्सवों में रानी के साथ या उसके प्रतिनिधि की हैसियत से भाग लेता रहा था। उसे भ्रमण में पूरी दिलचस्पी थी और साम्राज्य के करीब सभी हिस्से को वह अच्छी तरह जानता था। मामलों और मनुष्यों को भी समझने के लिये उसमें बड़ी निपुणता थी। वह सज्जन, दूरदर्शी और बुद्धिमान् था। उसमें सहानुभूति, सहिष्णुता और उदारता की भावना भरी हुई थी। वह किसी व्यक्ति या पार्टी के साथ मिलकर कार्य कर सकता था। वह वैधानिक शासक जैसा बर्त्ताव करता था लेकिन सभी जगह खासकर वैदेशिक क्षेत्र में उसका गहरा प्रभाव दीख पड़ता था। इन्हीं सब गुणों के कारण वह प्रजा का प्रिय-पात्र बन गया था।

जार्ज पंचम का राज्याभिषेक और उसका चरित्र—६ मई १६१० ई० को सप्तम एडवर्ड की मृत्यु हो गयी और उसका लड़का जार्ज पंचम के नाम से गद्दी पर आसीन हुआ। उसने १६१० से १६३६ ई० तक राज्य किया। वह राज्याभिषेक के समय ४५ वर्ष का था और वह एडवर्ड का द्वितीय पुत्र था। १८६२ ई० में उसके बड़े भाई की मृत्यु हो गयी थी। दूसरे साल उसने जार्ज तृतीय की परपोती मेरी से ब्याह किया। यद्यपि मेरी का पिता एक जर्मन था और वह ब्रिटेन में ही पाली-पोसी गई थी और ट्यूडर राजाओं के बाद पहले-पहल दोनों ही राजा तथा रानी पूर्ण रूप से अंग्रेज कहे जा सकते थे। जार्ज एक कुशल नाविक, भ्रमणकारी और वक्ता था। १६१४ ई० में महायुद्ध के शुरू होने पर उसने विदेशी पदवियों का परित्याग कर दिया और अपने घराने को विन्डसर का घराना कहने लगा। उसके समय में साम्राज्य की एकता के केन्द्र के रूप में सम्राट का महत्व विशेष बढ़ गया।

इस समय यूनियनिस्ट मंत्रिमंडल स्थापित था। जुलाई १६०२ ई० में लार्ड सैलिसबरी ने पदत्याग कर डाला और उसका भतीजा लार्ड बाल्फर प्रधान मंत्री हुआ।

चालकर १६०५ ई० तक अपने पद पर विराजमान रहा। उसका मन्त्रित्वकाल कुछ बड़े ही उपयोगी सुधारों के लिये प्रसिद्ध है।

शिक्षा सम्बन्धी परिवर्तन—१६०२ ई० में एक शिक्षा नियम पास हुआ था। इसके द्वारा प्राथमिक तथा उच्च दोनों प्रकार की शिक्षाओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये गये।*

आयरिश भूमि क्रय नियम†—१६०३ ई० में आयरिश भूमि क्रय नियम पास हुआ। इसके द्वारा आयरिश किसानों को भूमि खरीदने के लिये साधारण सूद पर ऋण देने की सुविधा दी गई। उसी समय उपनिवेश मन्त्री चेम्बरलेन ने करों में सुधार लाने के लिये अपनी योजना पेश की।

जोसेफ चेम्बरलेन की संक्षिप्त जीवनी—जोसफ चेम्बरलेन का जन्म १८३६ ई० में हुआ था। कुछ पढ़ने लिखने के बाद वह अपने घरेलू व्यापार का प्रबन्ध करने लगा। १८७० ई० में वह बर्मिंघम की म्युनिसिपैलिटी का मेयर चुना गया और ३ वर्षों तक इस पद पर स्थित रहा। इस समय में उसने बर्मिंघम की बड़ी सेवा की। उसने उसे मध्यकालीन शहर से आधुनिक आदर्श शहर के रूप में परिवर्तित कर दिया जहाँ सभी सुविधाएँ प्राप्त हो गई। १८७६ ई० में कॉमन्स सभा के लिये वह बर्मिंघम का प्रतिनिधि चुना गया। वह उग्रवादी विचार का व्यक्ति था और विशेषाधिकारों के विरुद्ध खूब प्रचार करता था। वह बालिग मताधिकार, नि शुल्क प्राथमिक शिक्षा, अनोपार्जित आय पर कर आदि बातों का समर्थक था। ग्लैडस्टन के दूसरे मन्त्रिमंडल में वह बोर्ड ऑफ ट्रेड का प्रेसिडेन्ट नियुक्त हुआ था। मन्त्रिमंडल के पतन के बाद उसे भी अपने पद से हटना पड़ा किन्तु १८८५ ई० के चुनाव में वह फिर सदस्य निर्वाचित हुआ और ग्लैडस्टन के पुनर्संगठित मन्त्रिमंडल में शामिल हुआ लेकिन शीघ्र ही होमरूल के प्रश्न पर उसे ग्लैडस्टन से मतभेद हो गया। वह उग्रवादी होते हुए, साम्राज्यवादी भी था। अतः वह होमरूल का विरोधी था। १८६५ ई० में वह सैलिसबरी मन्त्रिमंडल में उपनिवेश मंत्री नियुक्त हुआ। इस काल में पश्चिमी द्वीप समूह और पश्चिमी अफ्रीका की प्रगति में, आस्ट्रेलिया के संघ शासन की स्थापना में और बोअर युद्ध की समाप्ति में उसने प्रमुख भाग लिया था।

चेम्बरलेन की कर सुधार सम्बन्धी योजना—१६०३ ई० में चेम्बरलेन ने करों में सुधार करने के लिये कुछ प्रस्ताव उपस्थित किया। वह स्वतन्त्र व्यापार की नीति का कट्टर विरोधी था। इसके कई कारण थे। ग्रेट ब्रिटेन स्वतन्त्र व्यापार की नीति का समर्थक था लेकिन उसके वाणिज्य व्यवसाय में क्रमशः बड़ी मन्दी आने

---

* देखिये आगे

† लैंड पर्चेज ऐक्ट

लगी थी। कई देश संरक्षण की नीति को ही अनुसरण करते हुए खूब उन्नति कर रहे थे। उन देशों का माल तो ब्रिटेन में बिना किसी रुकावट का जा रहा था लेकिन उन देशों में ब्रिटिश माल पर पूरा कर लगता था। विदेशों की बात तो दूर रही, उपनिवेशों में भी ब्रिटिश माल पर चुंगी लगती थी। अतः चेम्बरलेन स्वतन्त्र व्यापार की नीति को तिलांजलि दे देना चाहता था परन्तु साथ ही वह उपनिवेशों से घना सम्पर्क स्थापित रखना चाहता था। अतः उसका विचार था कि विदेशी मालों पर पूरी चुंगी और उपनिवेश के मालों पर साधारण चुंगी लगायी जाय लेकिन कच्चे मालों को वह कर से मुक्त रखना चाहता था।

चेम्बरलेन को बहुमत प्राप्त नहीं हो सका। लिबरल उसके विरोधी थे। अतः स्वतन्त्रतापूर्वक अपने विचारों का प्रचार करने के लिये उसने पदत्याग कर डाला। १६१४ ई० में मृत्युकाल तक वह अपने सिद्धान्तों का प्रचार करता रहा और बहुत से लोगों को अपना समर्थक भी बनाया फिर भी उसकी नीति लोकप्रिय नीति नहीं बन सकी।

चेम्बरलेन की नीति के कारण यूनियनिस्ट पार्टी में फूट पैदा हो गयी। जौसेफ चेम्बरलेन और उसके समर्थकों के पदत्याग के बाद मंत्रिमंडल में कुछ परिवर्तन हुआ। चेम्बरलेन का पुत्र ऑस्टीन चेम्बरलेन कोषाध्यक्ष नियुक्त हुआ। लेकिन बाल्फर प्रधान मंत्री बना रहा।

**लाइसेंसिंग ऐक्ट ( १६०४ ई० )**—देश में बहुत से ऐसे सार्वजनिक स्थान थे जहाँ जुआरी और शराबी अधिक संख्या में जमा होते थे और रात में पर्याप्त समय तक रंग-तमाशा में व्यस्त रहते थे। इससे शांति भंग होने की संभावना थी। अतः १६०४ ई० में लाइसेंसिंग ऐक्ट पास कर इस स्थिति में सुधार लाने का प्रयास किया गया।

**सैन्य-सुधार ( १६०४-५ ई० )**—इस काल में कुछ प्रमुख सैन्य सुधार किये गये। युद्ध के सामानों में वृद्धि हुई। नये प्रकार के बन्दूक तथा जहाज बनने लगे। मन्दगति के जहाजों के बदले तीव्र गति वाले जहाजों का निर्माण होने लगा। इसी समय पनडुब्बी जहाज का बनना शुरू हुआ। सुरक्षा कौंसिल में केबिनेट के सदस्य के सिवा स्थल तथा जलसेना के कर्मचारियों को भी जगह दी गई। सैनिक कौंसिल का पुनर्संगठन किया गया और १६०५ ई० में जेनरल स्टाफ की स्थापना हुई।

**विदेशी नियम और बेकार मजदूर नियम ( १६०५ ई० )**—विदेशों से मजदूर ब्रिटेन में आते थे जिससे वहाँ की मजदूरी में परिवर्तन होने लगता था। मजदूरी सस्ती होने लगती और बेकारी बढ़ती थी। अतः १६०५ ई० में एक विदेशी

नियम* पास कर विदेशियों के प्रवेश पर रोक लगा दी गई। इसी साल बेकार मज़दूर नियम† पास कर मजदूरों को सहायता देने के लिये सकट समितियाँ स्थापित की गई।

बाल्फर मन्त्रिमण्डल का अन्त (१६०५ ई०)—इस प्रकार बाल्फर सरकार महत्वपूर्ण कार्यों को करने में व्यस्त थी फिर भी उसे लोकप्रियता प्राप्त नहीं हो सकी। शिक्षा और लाइसेंसिंग नियमों से लोग खुश नहीं थे। चेम्बरलेन ने धीरे-धीरे बहुत से लोगों को अपना अनुयायी बना डाला था। स्वयं बाल्फर भी सरक्षण नीति की ओर झुक गये लेकिन ब्रिटिश लोकमत इसके पक्ष में नहीं था। गरीबों को भय था कि सरक्षण नीति से जीवनयापन का खर्च बढ़ जायगा, व्यापारियों को निर्यात में घाटा होने का सन्देह था और सर्वसाधारण भी इसलिये सशंकित थे कि इससे कुछ थोड़े से स्वार्थी लोगों की ही धाक जम जायगी। अत. बाल्फर सरकार की लोकप्रियता जाती रही और दिसम्बर १६०५ ई० में पदत्याग करने के लिये बाध्य किया गया।

२ लिबरलों का युग (१६०५-१४ ई०)—बाल्फर के पदत्याग के साथ यूनियनिस्टों के युग का अन्त हो चला और लिबरलों के युग का प्रादुर्भाव हुआ। उनका युग १६१५ ई० तक कायम रहा। १६०५ ई० में हेनरी कैम्पबेल बैनरमैन प्रधान मन्त्री हुआ और करीब ३ वर्षों तक इस पद पर आसीन रहा। इस मन्त्रिमण्डल में कई कुशल व्यक्ति शामिल थे। ऐसक्विथ चासलर था, सर एडवर्ड ग्रे विदेश मन्त्री और लार्ड हैल्डन विदेश सचिव था। जॉन मॉर्ले भारत सचिव और लायड जार्ज बोर्ड ऑफ ट्रेड का सभापति था। शीघ्र ही १६०६ ई० के प्रारम्भ में ही साधारण निर्वाचन हुआ। सरकार के ही पक्ष में लोकमत था। लिबरलों को पर्याप्त बहुमत प्राप्त हुआ। इतना बहुमत अतीत में किसी सरकार को नहीं मिला था। सदस्यों की संख्या थी—३६० लिबरल, ८० आयरिश और ४० मजदूर। इस बहुमत के कई कारण थे—देश सामाजिक सुधार के लिये उत्सुक था और लिबरल पार्टी भी इसका समर्थन करती थी। वह खाद्यान्नों पर किसी प्रकार का कर लगाना नहीं चाहती थी। अब इस पार्टी के कार्यक्रम में होमरूल का कोई प्रमुख स्थान नहीं था। कन्जर्वेटिव पार्टी में मतभेद पैदा हो गया था।

अप्रैल १६०८ ई० में अस्वस्थता के कारण कैम्पबेल ने पदत्याग कर दिया और इसके दो सप्ताह बाद इस संसार से ही चल बसा। अब ऐसक्विथ प्रधान मन्त्री हुआ और लायड जार्ज चासलर।

---

* एलियन्स ऐक्ट

† अनइम्प्लायड वर्कमेन ऐक्ट

**लिबरल सरकार के सुधार कार्य**—लिबरल पार्टी का तो सिद्धान्त ही सुधार करना रहा है। अतः लिबरल सरकार ने कई महत्वपूर्ण सुधारों को किया। सुधार का कार्य किसी एक क्षेत्र में सीमित नहीं था बल्कि यह कई क्षेत्रों में फैला हुआ था। कैम्पबेल सरकार ने सुधार के कार्यक्रम को प्रारंभ किया और ऐस्क्विथ सरकार ने उसे जारी रखा।

**१. शिक्षा में सुधार की चेष्टायें**—१९०६ से १९०८ ई० के बीचशिक्षा में सुधार करने के लिये चेष्टायें की गई। इसके लिये कई प्रस्ताव उपस्थित किये गये किन्तु वे पास नहीं हुये। ऐसे ही १९०६ ई० में एक प्लुरल वोटिंग बिल उपस्थित किया गया जिसके द्वारा एक व्यक्ति को एक ही मत देने का अधिकार होता लेकिन लार्डों के विरोध से यह बिल भी पास न हो सका।

**२. व्यवसाय संघर्ष नियम ( ट्रेड डिस्प्यूट्स ऐक्ट ) ( १९०६ ई० )**—१९०१ ई० में टैफवेल मामले में यह कोर्ट के द्वारा निर्णय हुआ था कि यदि कोई व्यक्ति अवैध कार्य कर क्षति पहुँचावे तो व्यवसाय संघ के कोष से क्षति पूर्ति की जा सकती थी। इससे व्यवसाय संघ की सुरक्षा खतरे में पड़ जाती थी। अतः १९०६ ई० में एक व्यवसाय संघर्ष नियम पास हुआ जिसके द्वारा यह तय कर दिया गया कि न्यायालय में अवैध कार्य करने वाले व्यक्ति पर ही अभियोग लगाया जा सकता है और व्यवसाय संघ इसके लिये उत्तरदायी नहीं हो सकता। इससे व्यवसाय संघ की स्थिति सुरक्षित हो गयी।

**३. मजदूर क्षतिपूर्ति नियम (वर्कमैन्स कम्पेन्सेशन ऐक्ट) (१९०६ ई०)**—१८९७ ई० में प्रथम मजदूर क्षति पूर्ति नियम पास हुआ था। इसके द्वारा यह तय हुआ कि यदि काम करते समय दुर्घटना हो जाय जिससे मजदूर आगे कार्य करने में असमर्थ हो जाय तो उसे क्षतिपूर्ति मिलनी चाहिये लेकिन यह कुछ थोड़े से ही व्यवसायों में लागू किया गया। १९०६ ई० में यह नियम सभी व्यवसायों में लागू कर दिया गया। २५० पौंड वार्षिक आमदनी वाले मजदूर को यदि कार्य करते समय किसी दुर्घटना से शारीरिक दुर्बलता होती तो उसे क्षति पूर्ति मिलती।

**४. फौजदारी अपील नियम (१९०६ ई०)**—इस नियम के द्वारा किसी अपराधी को अपील करने का अधिकार दिया गया।

**५. सार्वजनिक धरोहर नियम ( पब्लिक ट्रस्टी ऐक्ट ) (१९०६ ई०)**—इस नियम के द्वारा कोई व्यक्ति अपनी जायदाद की देखभाल का उत्तरदायित्व किसी सार्वजनिक अफसर को सौंप सकता था।

**६. छोटा भूभाग और वितरण नियम ( स्माल होल्डिंग्स ऐंड एलाटमेंट ऐक्ट्स ) (१९०७ ई०)**—इस नियम के द्वारा छोटे किसानों में जमीन बाँटने के लिये स्थानीय कर्मचारियों को जमीन खरीदने का अधिकार दिया गया।

७. करों में वृद्धि ( १६०७ ई० )—१६०७ ई० में अनुपार्जित धन पर एक शिलिंग और उपार्जित धन पर नौ पेनी के हिसाब से कर लगा दिया गया।

८ प्रादेशिक एवं सुरक्षित सेना नियम (टेरिटोरियल ऐंड रिजर्व फोर्सेज ऐक्ट) ( १६०७ ई० )—लार्ड हेल्डन युद्धसचिव जो था बड़ा ही योग्य था। उसी की प्रेरणा से कई मुख्य सैन्य सुधार हुये। बाहर के लिये १ लाख ५० हजार और गृह रक्षा के लिये ३ लाख सुव्यवस्थित सैनिकों का प्रबन्ध किया गया। साथ ही स्कूल तथा बाहर स्वयं सेवकों को तैयार करने की भी व्यवस्था चालू रखी गई।

६. वृद्ध अवस्था पेन्शन नियम (ओल्ड एज पेन्शन ऐक्ट) (१६०८ ई०)—जिन लोगों की अवस्था ७० वर्ष की हो गयी और जिन्हें पैरिस से सहायता नहीं मिलती थी उन्हें ५ शिलिंग प्रति सप्ताह के हिसाब से पेन्शन देने के लिये निश्चय हुआ। इसकी चुकती पोस्ट आफिस में हो सकती थी। जिसकी स्त्री वर्तमान थी उसे ६३ शिलिंग देने के लिये तय हुआ। अब वे लोग काम घरों से अवकाश पाकर सुचारु रूप से पारिवारिक जीवन व्यतीत कर सकते थे।

१०—चिल्ड्रेन्स ऐक्ट ( १६०८ ई० )—इस नियम के द्वारा १६ वर्ष तक के लड़कों के हाथ बीड़ी सिगरेट आदि नशीली चीजों का विक्रय रोक दिया गया। स्कूलों में गरीब बच्चों के खाने और दवा आदि के लिये समुचित प्रबन्ध किया जाने लगा।

११ कोयला खान नियम ( कोल माइन्स ऐक्ट ) ( १६०८ ई० )—इस नियम के द्वारा कोयले की खानों में मजदूरों के काम करने का समय ८ घण्टा प्रति दिन निश्चित किया गया।

१२ मादक द्रव्य के विक्रय पर रोक लगाने के लिये एक लाइसेंसिंग बिल पेश किया गया। कामन्स सभा ने इसे पास किया लेकिन लार्ड सभा ने अस्वीकार कर डाला।

१३ श्रम विनिमय नियम ( लेबर एक्सचेंज ) ( १६०६ ई० )—इस नियम के द्वारा प्रमुख स्थानों में श्रम विनिमय आफिस स्थापित किया गया। वहाँ जाने पर किसी को श्रम या नौकरी मिलने की खबर मालूम होती थी। इससे बेकारी की समस्या हल करने में सहायता मिली।

१४ व्यवसाय बोर्ड नियम ( ट्रेड बोर्ड ऐक्ट ) ( १६०६ ई० )—यह नियम पास कर सरकार मालिक और मजदूरों के प्रतिनिधियों को बोर्ड निर्माण करने का अधिकार दे दिया गया। इस बोर्ड का कार्य था—सभी व्यवसायों में मजदूरी निश्चित करना और उसका उल्लंघन करने वालों को कड़ा दण्ड देना।

१५ गृह और नगर व्यवस्था नियम ( हाउस ऐंड टाउन प्लैनिंग ऐक्ट ) ( १६०६ ई० )—इस नियम के द्वारा स्थानीय अधिकारियों को सुन्दर और स्वास्थ्य कर घरों का निर्माण करने के लिये उत्तरदायित्व दिया गया। वे नवीन गृहों का

निर्माण तो करते ही; पुराने गन्दे घरों को ढाह देने के लिये भी उन्हें अधिकार दिया गया।

१६. १९०९ ई० का बजट—सुधारों की प्रगति और सैन्य प्रसार के कारण सरकार के खर्च में बहुत वृद्धि हो गयी थी। उसके सामने घाटा की समस्या उपस्थित हो रही थी। अतः इस समस्या के समाधान के लिये लायड जार्ज ने अपना नया बजट उपस्थित किया। यह बजट बड़ा ही लोकप्रिय था और इसे सर्वसाधारण का बजट कहा जाता था। इसका प्रधान उद्देश्य था—गरीबों के सहायतार्थ उन धनी-मानी लोगों पर कर लगाना जो प्रायः करों से मुक्त रहते थे। ३००० पौंड तक की वार्षिक आय पर १ शि० २ पेंस के दर से कर लगाया गया लेकिन ५००० से ऊपर की आमदनी पर ६ पेंस प्रति पौंड के दर से अतिरिक्त कर लगाया गया। अनुपार्जित आय कर* और मृत्यु कर में वृद्धि कर दी गयी। जब कोई बड़ा राज्य बेचा जाता था उसके मालिक के मरने पर वह दूसरे के अधिकार में जाता तो ऐसी दशा में पूरा कर लिया जाता। शराब तम्बाकू, मोटर आदि के व्यवसायों पर कर लगा। लाइसेंस फीस में वृद्धि कर दी गई।

इस प्रकार इस बजट का असर उन्हीं लोगों पर विशेष पड़ता जो धन-दौलत से पूर्ण थे। अतः स्वाभाविक ही इन लोगों ने इस बजट का विरोध किया। उनकी दृष्टि में उनके धन का अपहरण हो रहा था। वे इस बजट को क्रांतिकारी समझ रहे थे। लार्ड सभा का अनुदारवादी बहुमत और कॉमन्स सभा का विरोध पक्ष इस बजट के कट्टर विरोधी थे। वे बजट के समर्थकों को अत्याचारी समझते थे लेकिन बजट के पक्षपातियों को भी वे फूटी आँखों नहीं सुहाते थे। भीषण वाद-विवाद के बाद कॉमन्स सभा ने बजट को स्वीकार कर लिया, लेकिन लार्ड सभा ने तो इसे अस्वीकार ही कर दिया।

अतः लोकमत के निर्माण के लिये लिबरल सरकार ने पार्लियामेंट तोड़ दी और जनवरी १९१० ई० में नया निर्वाचन हुआ। लोकमत ने लिबरल सरकार का समर्थन किया, यद्यपि लिबरलों का बहुमत पहले की अपेक्षा कम हो गया। अब बाध्य होकर लार्ड सभा ने भी अप्रैल में बजट पास कर दिया।

१७. लार्ड सभा के वैधानिक अधिकारों को सीमित करने की चेष्टायें— लार्ड सभा एक प्रतिक्रियावादी संस्था थी जिसमें अनुदारवादियों का बहुमत सदा ही

* किसी के मरने पर राज्य का अधिकार मिलना, या किसी विकसित शहर के निकट की जमीन के मूल्य में बहुत वृद्धि होना आदि आयों को अनुपार्जित आय समझा जाता है।

राजनीतिक क्षेत्र के सिवा औद्योगिक और आयरी क्षेत्रों में भी कठिनाइयाँ उपस्थित हुई। हड़तालों की भरमार होने लगी थी। १६११ और १६१२ ई० में क्रमशः रेलवे तथा कोयले की खानों में भयानक हड़तालें हुईं जिनके कारण व्यापार में बड़ी क्षति हुई। अन्त में एक 'अल्पतर वेतन नियम' (मिनिमम् वेज ऐक्ट) पास हुआ जिसके द्वारा यह तय किया गया कि मजदूरों को एक निश्चित सीमा के नीचे वेतन नहीं दिया जा सकता फिर भी असन्तोष जारी ही रहा। इस उत्पात और असन्तोष के कई कारण थे—कम वेतन, व्यवसाय संघ की तत्परता और समाजवादी सिद्धान्तों का प्रचार।

इसी बीच आयरिश होमरूल बिल और वेल्स चर्च बिल को कॉमन्स सभा ने पास कर लार्ड्स सभा में भेजा लेकिन लार्ड्स सभा अस्वीकार करती गयी फिर भी १६११ ई० के नियमानुसार दोनों बिल राजनियम बन गये लेकिन आयरलैंड में अल्स्टर निवासियों और राष्ट्रवादियों के बीच गृह युद्ध की तैयारी होने लगी तब तक १६१४ ई० में प्रथम महायुद्ध का श्रीगणेश हुआ और एक स्थगन नियम पास कर उपर्युक्त दोनों नियमों का कार्यान्वयन स्थगित कर दिया गया। अब सुधार का कार्यक्रम भी बन्द कर देने के लिये बाध्य होना पड़ा।

# अध्याय ५०

## वैदेशिक नीति ( १६०१—१४ ई० )

(क) पृथकत्व नीति का परित्याग ( १६०१-०५ ई० )—१६ वीं सदी के अन्तिम चरण में यूरोप के सम्बन्ध में इंगलैंड ने पृथकत्व की नीति अपना रखी थी। इस युग के इतिहास में यह नीति चमत्कारपूर्ण पृथकत्व के नाम से विख्यात है। ऐसी नीति अपनाये जाने के कई कारण थे।

(क) १८७५ ई० तक यूरोप की जो समस्यायें थीं वे हल हो चुकी थीं। अब बहुत समय तक महादेश में ऐसी कोई समस्या नहीं उठ खड़ी हुई जिसमें हस्तक्षेप करने की जरूरत हो।

(ख) उसी साल बर्लिन कांग्रेस में पूर्वी समस्या को भी हल किया गया था और उसके बाद कई वर्षों तक यह समस्या भी दबी रही।

(ग) १८७८ ई० तक शक्ति प्रसार और औपनिवेशिक विस्तार में बहुत कम लोगों की रुचि थी। १८५२ ई० में डिसरैली ने उपनिवेशों को गले का पत्थर बतलाया था और बिस्मार्क ने भी इस ओर अपनी उदासीनता ही दिखलायी थी किन्तु अब यूरोप के राजनीतिज्ञों की प्रवृत्ति में परिवर्तन होने लगा था। विश्व राजनीति में १८७० ई० से नये साम्राज्यवाद का उदय हो चुका था। अब यूरोप के प्रत्येक बड़े राज्य को कच्चे और पक्के माल तथा बढ़ती हुई आबादी के लिये उपनिवेशों की आवश्यकता अनुभव होने लगी। वैज्ञानिक उन्नति के कारण यातायात के साधन भी उन्नत होते जा रहे थे और साथ ही राष्ट्रीय गौरव की भावना भी बलवती हो रही थी। स्वाभाविक ही उपनिवेश-स्थापना के लिये बड़े राज्यों में होड़-सी मच गयी और इसके लिये एशिया तथा अफ्रीका के महादेश ही उपयुक्त क्षेत्र मिले। अतः १६वीं सदी के चतुर्थ चरण में राजनीतिक केन्द्र यूरोप से हटकर इन महादेशों में चला आया था।

लेकिन १६वीं सदी के अन्त तक पृथकत्व की नीति चमत्कारपूर्ण के बदले खतरनाक मालूम पड़ने लगी और परिस्थिति से बाध्य होकर इंगलैंड को अपनी यह नीति त्यागनी पड़ी। हम देख चुके हैं कि जुलाई १६०२ ई० में सैलिसबरी के पद-त्याग के बाद लार्ड बाल्फर प्रधान मंत्री हुआ था। उसके आगमन के साथ ही बीसवीं सदी के प्रारंभ में इंगलैंड की वैदेशिक नीति में महान् परिवर्तन हुआ। पृथकत्व की नीति को तिलांजलि दे दी गई। इसके कई कारण थे। सर्वप्रथम, जर्मनी के हौसले और कार्य

से इगलैंड चिन्तित था। विलियम द्वितीय के नेतृत्व में जर्मनी विश्व शक्ति के रूप में विकसित होना चाहता था। उसने अफ्रीका तथा एशिया के कई स्थानों पर अपना कब्जा कर लिया था और सुलतान से दोस्ती कर तुर्की साम्राज्य में रेल को खोलना चाहता था। इससे पूर्व में ब्रिटिश साम्राज्य के लिये शंका पैदा हो जाने की सभावना थी। आग्ल बोअर युद्ध के समय तो कैसर ने बोअर नेता क्रूगर के पास बधाई सम्बन्धी एक तार भी भेज दिया था। कुछ अन्य राष्ट्रों ने भी बोअरों से सहानुभूति दिखलायी थी। इगलैंड को रूस की ओर से भी सकट की आशका थी क्योंकि वह भी तुर्की साम्राज्य में अपना विस्तार करना चाहता था। मिस्र को लेकर फ्रास से भी उससे अनबन था। फैशोदा में तो दोनों में युद्ध की ही नौबत आ गयी थी।

इन सभी कारणों से पृथक्ता की नीति को छोड़ने में ही अग्रेजों ने अपना हित देखा। इसके लिये देश की परिस्थिति भी अनुकूल थी। सैनिक-दृष्टि से इगलैंड की स्थिति सन्तोषजनक थी। दूसरे, इस समय इगलैंड की गद्दी पर भी एडवर्ड सप्तम विराजमान था। वह बड़ा ही बुद्धिमान, दूरदर्शी एव मिलनसार था। वह यूरोप के राजाओं से मिलने के लिये उनके देशों में जाता था तथा अपने देश में उन्हें बुलाकर स्वागत करता था। उसकी शान्तिस्थापना में विशेष अभिरुचि थी और वह अन्य राज्यों से मित्रता बनाये रखने का पक्षपाती था। तीसरे, उसके विदेश मत्री लार्ड लैन्सडाउन के भी कुछ ऐसे ही विचार थे। अत अन्य देशों से मित्रता और सन्धियों के लिये रास्ता सुगम था। चौथे, यूरोप के कई राज्यों से यद्यपि इगलैंड का मनमुटाव था फिर भी खुलकर दुश्मनी नहीं थी। वे इगलैंड के दुश्मनों के साथ सहानुभूति भले ही दिखलाते थे किन्तु किसी में इतनी हिम्मत नहीं थी कि उन्हें इङ्गलैंड के विरुद्ध सक्रिय सहायता दे।

अत इङ्गलैंड अब अन्य राज्यों से मित्रता करने के लिये उत्सुक था। उसने सर्वप्रथम जर्मनी से ही दोस्ती करने का प्रयत्न किया। जर्मनी के साथ अभी अधिक शत्रुता नहीं थी। दूसरे अग्रेजों के पूर्वजों की जन्मभूमि जर्मनी ही थी यानी अग्रेजों के पूर्वज जर्मनी से ही आकर इङ्गलैंड में बसे हुए थे। इस तरह दोनों की उत्पत्ति एक ही शाखा से हुई थी। तीसरे, महारानी विक्टोरिया का भी जर्मनी से निकट सम्बन्ध था। अत १८९८ १९०२ ई० के बीच चेम्बरलेन ने जर्मनी से सन्धि करने के लिये कई बार चेष्टा की लेकिन कैसर ने उसकी उपेक्षा की और सभी चेष्टायें विफल हुई। इससे दोनों में मनमुटाव बढ़ा और दोनों के बीच खाई चौड़ी होती गई। जर्मनी के कई कार्यों से इङ्गलैंड रुष्ट हो गया। आग्ल बोअर युद्ध के समय कैसर ने बोअरों की सफलता पर उनके राष्ट्रपति क्रूगर को बधाई का तार भेजा था। दूसरे, कैसर जर्मनी को विश्व-शक्ति के रूप में विकसित करने के लिये प्रयत्नशील था। वह ससार में

जर्मनी के लिये उपयुक्त स्थान चाहता था। इसके लिये जलसेना की वृद्धि पर विशेष जोर दिया जा रहा था। जहाजी कानून पास कर जंगी बेड़ों का निर्माण किया जा रहा था और इस दृष्टि से इङ्गलैंड को भी दबा देने के लिये जर्मनी सचेष्ट था। तीसरे, कैसर तुर्की सुल्तान से भी दोस्ती कर टर्की में अपना प्रभाव कायम करना चाहता था। बर्लिन से बगदाद तक एक रेल लाइन भी खोलने की योजना बनायी जा रही थी। चौथे, कैसर और जर्मन प्रोफेसर तथा दार्शनिक अपने भाषणों और लेखों के द्वारा युद्ध एवं हिंसा को प्रोत्साहित कर रहे थे और उनका रुख इङ्गलैंड के विरुद्ध ही था। वे जर्मन जाति को विश्व में सर्वश्रेष्ठ तथा योग्यतम समझते थे और संसार की उन्नति के लिये दूसरी सभी जातियों पर जर्मन आधिपत्य आवश्यक समझते थे।

इस समय सुदूर पूरब में जापान का उत्थान हुआ था। इसने अपनी शक्ति काफी बढ़ा ली थी। अतः जनवरी १९०२ ई० में इङ्गलैंड ने जापान से सन्धि करली। यह तय हुआ कि यदि इन दोनों राष्ट्रों में से कोई एक किसी अन्य राष्ट्र के साथ युद्ध में फँसेगा तो दूसरा तटस्थ रहेगा लेकिन यदि आक्रमणकारी को कोई राष्ट्र सहायता देगा तो ये दोनों भी एक दूसरे की सहायता करेंगे। इसी साल मई में आंग्ल बोअर युद्ध भी समाप्त हो गया और दोनों में सन्धि हो गयी। बोअर प्रजातन्त्रों को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया गया किन्तु उनके साथ निर्दयता का व्यवहार नहीं किया गया। ये दोनों घटनायें लार्ड सेलिसबरी के ही समय में हुई थीं।

लेकिन इन सन्धियों से यूरोप की समस्या का तो निराकरण नहीं हुआ। जर्मनी का रुख इङ्गलैंड के प्रतिकूल ही होता जा रहा था। अतः १९०४ ई० में इङ्गलैंड ने फ्रांस के साथ समझौता कर लिया। इङ्गलैंड ने फ्रांस को मोरक्को में और फ्रांस ने इंगलैंड को मिश्र में स्वतन्त्र छोड़ दिया। स्पेन ने फ्रांस का मोरक्को में समर्थन किया। इस समझौता से जर्मनी इङ्गलैंड से क्रुद्ध हुआ और अपनी जल-सेना की वृद्धि तेजी से करने लगा। उसने रूस के साथ भी दोस्ती करने का प्रयत्न किया।

इसी समय रूस और जापान में लड़ाई छिड़ गई और इसी मौके पर रूस तथा इंगलैंड के बीच एक दुर्घटना हो गयी। यह डोगरबैंक की दुर्घटना कहलाती है। एक रूसी बेड़ा उत्तर सागर की तरफ जा रहा था। इसने डोगरबैंक पर एक जहाज देखा और उसे जापानी समझ कर गोली का शिकार बना दिया। कुछ व्यक्तियों के साथ कुछ सामानों की क्षति हुई। ब्रिटिश जनमत रूस के खिलाफ और जापान के पक्ष में हो गया लेकिन रूस ने अपनी भूल स्वीकार कर ली और पेरिस में एक अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय के द्वारा क्षतिपूर्ति पर विचार हुआ। रूस ने इंगलैंड को क्षतिपूर्ति देना स्वीकार कर लिया। इस तरह दोनों के बीच उत्पन्न संकट टल गया।

उधर रूस-जापान युद्ध में जापान विजयी हुआ। अपने दोस्त की विजय से इंगलैंड को खुशी हुई। १६०२ ई० की सन्धि को फिर से दुहराया गया। इसके क्षेत्र का विस्तार हुआ और इसकी अवधि १० वर्ष निश्चित हुई।

तिब्बत के साथ भी अंग्रेजों का झगड़ा हुआ। तिब्बत में रूसी प्रभाव बढ़ता जा रहा था। इस समय भारत का गवर्नर जेनरल लार्ड कर्जन था जिसमें नौकरशाही और साम्राज्यवादी प्रवृत्ति कूट कूट कर भरी हुई थी। उसने तिब्बत में अंग्रेजी प्रभाव कायम करने के लिये ठान लिया। तिब्बत के साथ समझौता करने के लिये जब अंग्रेजों के प्रयत्न विफल सिद्ध हुये तब तिब्बत में एक अंग्रेजी सेना भेजी गयी और सन्धि करने के लिये तिब्बतियों को बाध्य किया गया।

लार्ड कर्जन की नीति से जाग्रत भारत में भी असन्तोष की अग्नि प्रज्वलित हो उठी। उसने बंगाल के विभाजन की योजना बनायी और इस योजना ने अग्नि में घी का काम किया। सारे देश में इसके विरुद्ध आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। अंग्रेजी मालों के बहिष्कार तथा स्वदेशी के प्रचार पर जोर दिया जाने लगा। ब्रिटिश सरकार ने दमन चक्र चलाकर आन्दोलन कुचलना चाहा लेकिन आगे चलकर योजना ही स्थगित करनी पड़ी।

इस बीच १६०५ ई० में बाल्फर ने पदत्याग कर दिया और इसके बाद शासन सूत्र उदारवादियों (लिबरलों) के हाथ में चला गया।

## (ख) अन्तर्राष्ट्रीय दुर्घटनाओं का युग (१६०५-१४ ई०)

प्रथम मोरक्को सकट—यह पहले ही कहा जा चुका है कि १६०४ ई० में जब इंगलैंड और फ्रांस में समझौता हो गया तो जर्मनी बड़ा नाराज हुआ। मोरक्को के सम्बन्ध में जर्मनी की कोई राय नहीं ली गयी जबकि उसका भी वहाँ कुछ स्वार्थ था। अब जर्मनी ऐसा प्रयत्न करने लगा कि इंगलैंड तथा फ्रांस में फूट पैदा हो जाय। इंगलैंड से मैत्री कर फ्रांस मोरक्को में अपना प्रभाव सुदृढ़ करने की चेष्टा करने लगा। १६०५ ई० में सुल्तान के विरुद्ध मोरक्को में जब विद्रोह हुआ तो फ्रांस ने वहाँ अपनी एक सेना भेज दी। इससे जर्मनी का क्षोभ और भी बढ़ गया। उसने दो माँगें उपस्थित कीं फ्रांस के विदेश मंत्री का परित्याग और यूरोपीय सम्मेलन में मोरक्को के प्रश्न पर विचार। प्रधान मंत्री से मतभेद होनेपर विदेश मंत्री देलकासे ने तो पदत्याग ही कर दिया। मोरक्को पर विचार करने के लिये स्पेन में अल्जेसी रास में एक सम्मेलन भी हुआ जिसमें अमेरिका ने भी भाग लिया था। १६०६ ई० में यह बैठक हुई। इस तरह जर्मनी की दोनों माँगें पूरी हो गयीं लेकिन सम्मेलन के निर्णय से फ्रांस को ही वास्तविक

लाभ हुआ। मोरक्को में शांति स्थापना तथा चुंगी के प्रबन्ध का भार फ्रांस और स्पेन पर ही सौंपा गया।

इस मौके पर इंगलैंड फ्रांस के ही पीठ पर था। अतः दोनों में और भी अधिक निकटता स्थापित हो गयी। अब दोनों देशों के बीच सैनिक सम्बन्धी बातचीत होने लगी। दोनों में फूट डालने का जर्मन उद्देश्य विफल रहा।

आंग्ल-रूसी समझौता—फ्रांस इंगलैंड तथा रूस दोनों का मित्र था। अतः उसके माध्यम से दोनों एक दूसरे के निकट आने लगे। रूस का ज़ार सप्तम एडवर्ड की पत्नी का भतीजा भी लगता था। एडवर्ड स्वयं शांति, सहयोग तथा मित्रता को प्रोत्साहित करता था। इस तरह १६०७ ई० में इंगलैंड तथा रूस में भी समझौता हो गया। तिब्बत, अफ़गानिस्तान तथा फारस में जो मतभेद था वह दूर हो गया। तिब्बत में दोनों ने अहस्तक्षेप की नीति अख्तियार की। अफ़गानिस्तान में ब्रिटिश स्वार्थ स्वीकार कर लिया गया। फ़ारस के उत्तरी भाग में रूस का और दक्षिण पूर्वी भाग में ब्रिटेन का प्रभाव क्षेत्र मान लिया गया। इस तरह फ्रांस, रूस तथा इंगलैंड को मिला कर त्रिदलीय आंतात का निर्माण हुआ। यह स्मरणीय है कि इसके पहले जर्मनी, आस्ट्रिया तथा इटली को मिलाकर त्रिदलीय गुट का भी निर्माण हो चुका था।

जर्मनी से तनाव में कमी—सम्राट एडवर्ड सप्तम के प्रयास से जर्मनी के साथ भी तनाव कुछ कम हो गया था। जर्मन सम्राट उसका भतीजा लगता था और एडवर्ड ने उसके साथ व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित किया था किन्तु यह सम्पर्क अस्थायी ही सिद्ध हुआ।

प्रथम बाल्कन संकट ( १६०८ ई० )—१६०८ ई० में पुनः एक संकट पैदा हुआ जो प्रथम बाल्कन संकट कहलाता है। १८७८ ई० की बर्लिन सन्धि के अनुसार बोस्निया तथा हर्जेगोविना नामक प्रदेशों का शासन-भार आस्ट्रिया को सौंपा गया था लेकिन उसे इन प्रदेशों को अपने साम्राज्य में मिलाने का आदेश नहीं था। अब १६०८ ई० में युवक तुर्कों ने निरंकुश शासन के खिलाफ विद्रोह किया तो आस्ट्रिया ने इसे सुल्तान की कमजोरी का चिन्ह समझा और बोस्निया तथा हर्जेगोविना को अपने साम्राज्य में मिला लिया। घरेलू झंझट के कारण तुर्क विरोध करने में लाचार थे और उन्हें चुप ही रह जाना पड़ा। सर्बिया भी आस्ट्रिया के कार्य से बड़ा क्षुब्ध हुआ। उन प्रान्तों में स्लाव जाति के लोग थे और सर्बिया उन्हें स्वयं लेकर बृहत्तर सर्बिया कायम करना चाहता था लेकिन वह भी कुछ करने में असमर्थ ही था क्योंकि उसका समर्थक रूस युद्ध करने की स्थिति में नहीं था।

द्वितीय मोरक्को संकट ( १६११ ई० )—मोरक्को में अभी तक शांति व्यवस्था का अभाव ही था। फ्रांस इससे अधिक चिन्तित था और वह इस स्थिति में सुधार

लाना चाहता था। अत उसने मोरक्को में पुनः हस्तक्षेप करना शुरू किया। जर्मनी ने विरोध किया और अपने स्वार्थों की रक्षा के लिये कैसर ने पैन्थर नामक एक गन बोट आगादिर बन्दरगाह पर भेज दिया। जर्मनी ने अन्य सम्बन्धित राज्यों से कोई अपील भी नहीं की। इससे इंगलैंड रुष्ट था। फ्रांस और जर्मनी में युद्ध की सम्भावना दीख पड़ने लगी। इंगलैंड ने फ्रांस के पक्ष में अपनी घोषणा की। अत जर्मनी सहम गया और फ्रांस के साथ समझौता कर लिया। कैसर ने मोरक्को में फ्रान्स का संरक्षण मान लिया और फ्रांस ने उसे फ्रांसीसी काँगो में कुछ अधिकार दे दिया। इस तरह यूरोपीय गगन में युद्ध का बादल फट गया।

द्वितीय बाल्कन संकट (१९११-१२ ई०)—टर्की में जर्मनी का प्रभाव बढ़ता जा रहा था। युवक तुर्कों पर भी जर्मनी का प्रभाव था। ईसाई प्रजा असन्तुष्ट थी। जहाँ-तहाँ विद्रोह होने लगा। इससे इटली ने फायदा उठाया। १९११ ई० में इसने त्रिपोली पर धावा बोल कब्जा कर लिया। इससे बाल्कन राज्यों को प्रोत्साहन प्राप्त हुआ। १९१२ ई० में बल्गेरिया, सर्बिया, मौन्टनीग्रो और यूनान ने टर्की के विरुद्ध एक संघ कायम किया। टर्की और संघ में युद्ध छिड़ गया। यह बाल्कन का प्रथम युद्ध कहलाता है। टर्की की पराजय हो गयी। इसके बाद संघ के सदस्य ही लूट के माल के विभाजन के प्रश्न पर आपस में लड़ पड़े। एक तरफ बल्गेरिया और दूसरी ओर अन्य बाल्कन राज्य थे। तुर्की ने भी बल्गेरिया के विरुद्ध युद्ध में भाग लिया। उसे आशा थी कि उसके खोये हुये प्रदेश या उसके कुछ भाग भी प्राप्त हो जायँगे। यह द्वितीय बाल्कन युद्ध कहलाता है। बल्गेरिया का बुरी तरह हार हुई और उसने बुखारेस्ट की सन्धि की। उसके हाथ से जीते हुये प्रदेशों का अधिकांश भाग छीन लिया गया। टर्की को ऐड्रियानोपुल तथा कुछ अन्य प्रदेश प्राप्त हो गये।

इन दोनों बाल्कन युद्धों के भयंकर परिणाम हुये। सर्वप्रथम, टर्की के द्वारा पश्चिमी एशिया में जर्मनी अपना आधिपत्य जमाना चाहता था। उसकी इस आशा पर पानी फिर गया। इससे वह बड़ा ही निराश हुआ और उसके सामने करो या मरो का प्रश्न उपस्थित हो गया। अत अब उसने युद्ध क्षेत्र में ही अपने दुश्मनों से शक्ति की परीक्षा करने का निश्चय किया। इस तरह युद्ध अब अनिवार्य हो गया। दूसरे, बल्गेरियावासी अपनी हार से बहुत ही दुखी थे और सर्बिया से बदला लेने के लिये मौका ढूँढ रहे थे। तीसरे, आस्ट्रिया तथा सर्बिया के बीच कटुता तथा तनाव में वृद्धि हुई। टर्की तथा बल्गेरिया के विरुद्ध विजयी होने के कारण सर्बिया का मन बहुत बढ़ गया था। जिन राज्यों में स्लाव जाति के लोग बसते थे उन राज्यों को मिलाकर सर्बिया एक विशाल राज्य कायम करना चाहता था। इसका मतलब था कि आस्ट्रिया का साम्राज्य भंग हो जाता। अत आस्ट्रिया सर्बिया की योजना का विरोधी

था। इन दोनों में तनाव का एक दूसरा कारण भी था। सर्विया ऐड्रियाटिक सागर तक पहुँचना चाहता था किन्तु अलबानिया उसके मार्ग में बहुत बड़ा बाधक था। आस्ट्रिया के ही प्रयास से इस राज्य का निर्माण हुआ था। अतः आस्ट्रिया ने ही सर्विया के समुद्र तक जाने के मार्ग में एक रोड़ा खड़ा कर दिया था। सर्विया को यह बुरी तरह खटक रहा था और वह इसका बदला लेने के लिये बेचैन था। परिस्थिति बड़ी ही विषम था, वातावरण बड़ा ही गम्भीर था। युद्ध का सामान एकत्रित हो गया था केवल एक चिनगारी की जरूरत थी। यह चिनगारी भी पैदा हो ही गयी। २८ जून १६१४ ई० को बोसनिया की राजधानी सेराजिवो में एक भीषण हत्याकांड हो गया। आस्ट्रिया के युवराज आर्क ड्यूक फ्रांसिस फर्डिनेन्ड तथा उनकी पत्नी को एक जुलूस में जाते समय किसी ने गोली से मार डाला।

**सर्विया पर हत्या का दोषारोपण**—आस्ट्रिया ने इस वध का सारा दोष सर्विया के मत्थे मढ़ा लेकिन लगभग एक महीने तक वह चुप रहा। बहुत लोग तो समझने लगे कि आस्ट्रिया ने इसे क्षमा कर सहनशीलता का परिचय दिया। किन्तु वास्तविकता कुछ दूसरी ही थी। सर्विया के नाश के लिये कौन-सा काम किस तरीके से किया जाय—इसी पर कई दिनों तक विचार-विमर्श होता रहा। विदेश मंत्री बर्कटोल्ड सर्व आन्दोलन को नष्ट कर देने पर तुला हुआ था। वह ऐसी कठोर शर्तें सर्विया के पास भेजना चाहता था जिन्हें वह कबूल न करता और उसी बहाने उस पर आस्ट्रिया हमला कर उसे रौंद डालता। आस्ट्रिया के समर्थक जर्मनी की भी राय ली गयी और उसने मानो आस्ट्रिया को एक कोरा चेक ही दे दिया। जर्मनी के रुख से आस्ट्रिया को सर्विया के विरुद्ध कार्रवाई करने के लिये काफी प्रोत्साहन मिला।

२३ जुलाई को आस्ट्रिया ने सर्विया के पास अपनी शर्तों के साथ एक पत्र भेजा। दस शर्तें थीं जो बड़ी ही कठोर एवं अपमानजनक थी। ४८ घंटे का समय दिया गया। आस्ट्रिया कहाँ एक विशाल साम्राज्य और सर्विया कहाँ एक छोटा देश। सर्विया अकेला आस्ट्रिया के विरुद्ध हाथ नहीं उठा सकता था लेकिन उसे रूस का बहुत भरोसा था। रूसी विदेश मंत्री ने घोषणा भी कर दी कि सर्विया पर आस्ट्रिया का हमला रूस कभी भी बर्दाश्त नहीं करेगा। इस घोषणा से सर्विया की जान में जान आ गयी उसे काफी प्रोत्साहन मिला। उसने कुछ शर्तें तो स्वीकार कर लीं और बाकी शर्तों पर विचार करने के लिये एक यूरोपीय सम्मेलन की माँग की। आस्ट्रिया को युद्ध का बहाना मिल गया। ४८ घंटा पूरा होते ही आस्ट्रिया की सेना सर्विया के विरुद्ध चल दी और २८ जुलाई को बजाप्ते आस्ट्रिया ने युद्ध की घोषणा कर दी।

बाल्कन में रूसी प्रभाव और स्लाव जाति के गौरव की रक्षा के लिये रूस ने सजातीय सर्विया को मदद देने का निश्चय कर लिया और इसके लिये सैनिक तैयारी होने

लगी जर्मनी ने इसे रोकने के लिये रूस को एक कड़ा पत्र दिया। रूस ने कोई उत्तर भी नहीं दिया और आस्ट्रिया के पास युद्ध घोषणा का एक पत्र भी भेज दिया। जर्मनी ने भी १ अगस्त को रूस के विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया। उसने फ्रांस से भी निष्पक्ष रहने का आश्वासन माँगा। फ्रांस ने ऐसा आश्वासन नहीं दिया और अपने स्वार्थ के अनुसार काम करने के लिये कहा। अत जर्मनी ने ३ अगस्त को उसके विरुद्ध भी युद्ध घोषणा कर दी।

ग्रेट ब्रिटेन का रुख—इस तरह युद्ध तो शुरू हो गया किन्तु अभी तक इंगलैंड का रुख स्पष्ट नहीं था। हाँ, वह युद्ध को रोकना ही चाहता था। परराष्ट्र सचिव ग्रे ने युद्ध रोकने या इसे स्थानीय बनाने का भरपूर प्रयत्न किया। यह निष्पक्ष राष्ट्रों के सम्मेलन या विरोधी राष्ट्रों के परस्पर वार्तालाप के द्वारा युद्ध को स्थगित करने के लिये सचेष्ट था किन्तु ऐसे प्रस्तावों में जर्मनी ने कोई दिलचस्पी नहीं दिखलायी और ग्रे के सभी प्रयत्न निष्फल सिद्ध हुये।

ग्रे की नीति बिल्कुल स्पष्ट नहीं थी। वह रूस तथा फ्रांस को न तो खुलकर सहायता देने को कहता था और न युद्ध की स्थिति में तटस्थ ही रह जाने के लिये कहता था। यदि वह खुलकर मित्र-राष्ट्रों को सहायता देने के लिये कहता तो संभवत विरोधी राष्ट्र जर्मनी तथा आस्ट्रिया आगे बढ़ने से हिचकिचाते। यदि वह युद्ध होने पर तटस्थ रहने की ही घोषणा करता तो संभवत मित्रराष्ट्र रूस तथा फ्रांस आगे बढ़ने में हिचकिचाते लेकिन ग्रे ने अपनी स्पष्ट नीति नहीं बतलायी। इसमें उसका दोष भी कहाँ तक कहा जा सकता है। वह कुछ परिस्थिति से लाचार था। एक गुप्त नौ सन्धि के द्वारा ब्रिटेन ने जर्मन हमला से फ्रांस के बेड़ों तथा तटों की रक्षा करने का वादा किया था। दूसरी बात यह थी कि बहुत वर्षों के बाद अभी हाल ही में रूस से समझौता हुआ था और यह रूस को नाराज कर त्रिवर्गी समझौता तोड़ना नहीं चाहता था। तीसरे, इंगलैंड का लोकमत बाल्कन की समस्या को लेकर यूरोपीय युद्ध में शामिल होना नहीं चाहता था। चौथे, यूरोपीय मामले में हस्तक्षेप के प्रश्न पर ब्रिटिश मन्त्रिमंडल का बहुमत हस्तक्षेप के ही विरुद्ध था। ऐसी स्थिति में ग्रे के लिये कुछ स्पष्ट कहना आसान नहीं था। अत उसने खुलकर कोई घोषणा नहीं की और युद्ध रोकने ही के लिये भरसक प्रयत्न किया।

लेकिन मनुष्य सोचता कुछ है और होता कुछ है। विधि की गति कोई नहीं जानता। फ्रांस पर हमला करने के लिये जर्मनी ने बेल्जियम से रास्ता माँगा। वह इसी रास्ते को उपयुक्त समझता था। बेल्जियम के लोग इसके लिये राजी नहीं हुये और वहाँ के राजा एलबर्ट ने इसे रोकने के लिये अंग्रेजों से सहायता माँगी। बेल्जियम की सुरक्षा में इङ्गलैंड बराबर दिलचस्पी लेता रहा था। जापान के लिए कोरिया का

जो महत्व है वही महत्व इङ्गलैंड के लिये बेल्जियम का है। इङ्गलैंड की बहुत दिनों से यह नीति थी कि बेल्जियम एक तटस्थ देश के रूप में रहे और वहाँ किसी विदेशी का आधिपत्य न हो। बेल्जियम में किसी अन्य राष्ट्र का आधिपत्य इङ्गलैंड की सुरक्षा के लिये खतरनाक समझा जाता था। अतः जर्मनी की माँग को इङ्गलैंड ने भी पसन्द नहीं किया। ७५ वर्ष पहले १८३६ ई० में ही इङ्गलैंड फ्रांस, प्रशा, आस्ट्रिया तथा रूस ने बेल्जियम की तटस्थता एवं सुरक्षा को स्वीकार कर लिया था। अतः जर्मनी की माँग इस अंतर्राष्ट्रीय सन्धि की भी उपेक्षा थी। १८७१ ई० में भी फ्रांस और प्रशा ने बेल्जियम की तटस्थता की रक्षा के लिये इङ्गलैंड को आश्वासन दिया था। जब जर्मन चांसलर को इन सन्धियों की याद दिलायी गयी तो वह कहने लगा कि सन्धि-पत्र तो कागज के टुकड़े मात्र हैं—आवश्यकता पड़ने पर उन्हें तोड़ा भी जा सकता है। जर्मनी ने सन्धि-पत्र इङ्गलैंड या बेल्जियम, किसी का भी परवाह नहीं किया और ४ अगस्त से हठी जर्मनी ने तटस्थ बेल्जियम में अपनी लड़ाकू सेना को भेज ही दिया और इसके साथ ही ब्रिटिश जनमत भी उत्तेजित हो उठा। ब्रिटिश राजनीतिज्ञ सोचने लगे कि यदि जर्मनी को रोका नहीं जायगा तो वह अन्य अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियों को भी महत्वहीन समझ कर तोड़ने के लिये प्रोत्साहित होगा। अतः इङ्गलैंड ने बेल्जियम से सेना हटा लेने के लिये जर्मनी को आदेश दिया। जर्मनी ने कोई ध्यान नहीं दिया और उसी दिन शीघ्र ही इङ्गलैंड ने भी जर्मनी के विरुद्ध युद्ध घोषणा कर दी। इङ्गलैंड ने इस युद्ध में क्यों भाग लिया—इसके सम्बन्ध में लार्ड ऐसक्विथ ने अपने भाषण में दो कारणों को बतलाया था—(क) पवित्र अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिज्ञा की रक्षा के लिये और (ख) स्वेच्छाचारी शक्तिशाली राज्य अन्तर्राष्ट्रीय विश्वास का हनन कर छोटे-छोटे राष्ट्रों को न कुचल सकें—इस सिद्धान्त की रक्षा के लिये।

इस तरह अगस्त १६१४ ई० में प्रथम महायुद्ध प्रारम्भ हो गया जिसकी लपट धीरे-धीरे समस्त संसार में फैल गयी।

## अध्याय ४१

# ग्रेट ब्रिटेन और पूर्वी प्रश्न ( १८१५—१६१४ ई० )

पूर्वी प्रश्न की व्याख्या—१४५३ ई० में तुर्कों ने कुस्तुनतुनिया पर विजय प्राप्त कर यूरोप के दक्षिण पूर्व के बाल्कन राज्यों पर आधिपत्य जमाया। कुस्तुनतुनियाँ में ही राजधानी स्थापित हुई। इसे उस्मानी साम्राज्य भी कहते हैं। लगभग २०० वर्षों तक व फूलते फलते रहे, किन्तु उसके बाद उनकी अवनति होने लगी और १८वीं सदी में यह अवनति सबको दृष्टिगोचर होने लगी। इसके साथ ही तुर्की साम्राज्य में अनेक जातियों का मिश्रण था और उनमें राष्ट्रीयता और प्रजातन्त्र की भावना प्रस्फुटित हो रही थी। तुर्क लोग एशियायी और मुसलमान थे और सुल्तान का शासन भी मनमाने ढंग का था। अत. तुर्की शासन की दुर्बलता से लाभ उठाकर बाल्कन की विजित जातियाँ स्वतंत्र होने के लिये चेष्टा करने लगीं। इतना ही नहीं, यूरोप के सभी महान् राष्ट्र भी तुर्की साम्राज्य की कमजोरी से फायदा उठाना चाहते थे। रूस काले सागर पर अधिकार कर पूर्वी भूमध्यसागर पर आधिपत्य स्थापित करना चाहता था। १७७४ ई० से ही सुल्तान ने रूस को अपने ईसाई प्रजा का रक्षक भी मान लिया था। आस्ट्रिया भी दक्षिण पूरब की ही ओर बढ़ना चाहता था। अत बाल्कन में रूस तथा आस्ट्रिया परस्पर विरोधी थे। फ्रांस का भी तुर्की साम्राज्य में व्यापारिक स्वार्थ था और वह पूर्व के रोमन कैथोलिकों का संरक्षक था। सबसे बढ़कर इंगलैंड का स्वार्थ था। वह तुर्की साम्राज्य में किसी भी राष्ट्र के प्रभाव को शंका की दृष्टि से देखता था और उसे संकटपूर्ण समझता था। वह तुर्की साम्राज्य को अपने पूर्वी एवं भारतीय साम्राज्य की रक्षा के लिये बाँध समझता था। अत तुर्की साम्राज्य की अवनति होने पर भी वह इसे कायम ही रखना चाहता था। इसीलिये जब जार ने इसे यूरोप का रोगी कहकर इसका अन्त कर देने का प्रस्ताव किया तो इंगलैंड ने इसका घोर विरोध किया। दूसरे शब्दों में रूस तुर्की साम्राज्य का विभाजन करना चाहता था और इंगलैंड इसके पक्ष में नहीं था।

इस प्रकार सुल्तान के दुर्बल, निरंकुश शासन, बाल्कन जातियों की राष्ट्रीय जागृति तथा यूरोप के महान् राष्ट्रों के स्वार्थों के कारण १६वीं सदी में जो विकट प्रश्न पैदा हुआ उसे ही पूर्वी या निकट पूर्वी प्रश्न कहते हैं। इसे निकट पूर्वी समस्या भी कहते हैं। यह नाम भी भारतीय दृष्टिकोण से नहीं है, बल्कि यूरोपीय दृष्टिकोण से है। टर्की इंगलैंड या यूरोप के निकट पूर्व में है अत इससे सम्बन्धित प्रश्न निकट

पूर्वी प्रश्न कहलाया। अफगानिस्तान के आसपास के राज्यों से सम्बन्धित प्रश्न मध्य पूर्वी और चीन-जापान से सम्बन्धित प्रश्न सुदूर पूर्वी के नाम से सम्बोधित किया गया। ये नाम अभी भी इतिहास में प्रचलित हैं।

**सर्वों का विद्रोह**—सर्वप्रथम सर्व लोगों में जागरण हुआ और वे स्वशासन के लिये १८०४ ई० में विद्रोह कर बैठे। धीरे-धीरे १८२० ई० तक स्वशासन के क्षेत्र में इन्हें कई अधिकार प्राप्त हो गये।

**यूनान का स्वतंत्रता-संग्राम**—१८२१ ई० में यूनानियों ने तुर्की के विरुद्ध विद्रोह का झंडा खड़ा किया। उनका अतीत बड़ा ही उज्ज्वल एवं गौरवमय था। अतः उन्हें परतंत्रता बड़ी ही बुरी तरह खलती थी और वे भी स्वतंत्रता के लिये कटिबद्ध हो गये। अंग्रेजों तथा यूरोप के अन्य राष्ट्रों की भी यूनानियों के साथ सहानुभूति थी। इनकी सहायता के लिये कई देशों से स्वयंसेवक भेजे गये। प्रसिद्ध अंग्रेज कवि बायरन ने भी यूनानियों की ओर से संग्राम में भाग लिया और वह मारा भी गया। एक ही साल के अन्दर तुर्क यूनान से खदेड़ दिये गये परन्तु शीघ्र ही यूनानियों में फूट का बाजार गर्म हो चला और इन्हें लेने के देने पड़े। फूट के कारण यूनानी कमजोर हो गये। तुर्कों को मिश्र के गवर्नर मुहम्मद अली से सहायता मिल गयी। अतः तुर्कों ने पुनः यूनान को विजित कर लिया। रूस यूनान की मदद करने के लिये तैयार था, किन्तु ब्रिटिश परराष्ट्र मंत्री कैनिंग रूस को अकेले हस्तक्षेप करने का मौका देना नहीं चाहता था। अतः वह रूस और फ्रांस के साथ मिलकर हस्तक्षेप करने के लिये स्वयं तैयार हुआ। इन तीनों राष्ट्रों में १८२७ ई० में लन्दन की सन्धि हुई। इसमें यह तय हुआ कि टर्की के ही संरक्षण में यूनान को स्वराज्य मिल जाना चाहिये। इसके लिये यह निश्चय हुआ कि सुल्तान पर दबाव डाला जाय और युद्ध को स्थगित कराया जाय। नेवारिनो की खाड़ी में टर्की और मिश्र की सम्मिलित नौसेना वर्तमान थी। अतः इंगलैंड, फ्रांस तथा रूस का एक संयुक्त बेड़ा उसी खाड़ी में भेजा गया। तुर्की-मिश्री बेड़े के नौसेनापति ने युद्ध-स्थगन के प्रस्ताव को नहीं माना और एक तुर्की जहाज ने गोलाबारी भी प्रारम्भ कर दी। अब युद्ध शुरू हो गया और तुर्की—मिश्री बेड़े तहस-नहस हो गये। टर्की पराजित हो यूनान की स्वतंत्रता को मानने के लिये बाध्य हुआ।

इसी समय लार्ड कैनिंग की मृत्यु हो गयी और ड्यूक ऑफ वेलिंगटन उसका उत्तराधिकारी हुआ। उसने यूनान के मामलों में दिलचस्पी नहीं ली और कैनिंग की नीति को बदल दिया। उसने नेवारिनो के नाविक युद्ध को दुर्घटना मात्र कहकर दुःख प्रकट किया और तुर्कों के विरुद्ध सहायता देना बन्द कर दिया। अब रूस को अकेले ही टर्की से युद्ध करना पड़ा। १८२९ ई० में रूस ने टर्की को एड्रियानोपुल की सन्धि

करने के लिये बाध्य किया। टर्की ने यूनान की स्वतंत्रता को कुबूल कर लिया। रूस ने तुर्की साम्राज्य के कुछ भू भाग पर भी अधिकार कर लिया। १८३२ ई० में लन्दन सम्मेलन हुआ और कुछ साधारण हेर फेर के साथ यूरोप के प्रमुख राष्ट्रों ने भी इस सन्धि को स्वीकार कर लिया।

टर्की और मुहम्मदअली—मुहम्मदअली अलबानिया का निवासी था और वह मिश्र में सुल्तान के प्रतिनिधि की हैसियत से राज्य करता था। १८१० ई० में वह मिश्र पर अपना पूरा आधिपत्य जमा लिया और उसकी शक्ति बढ़ने लगी। यूनान के स्वाधीनता संग्राम में उसने सुल्तान की सहायता की और क्षति सही। सुल्तान ने इसके बदले में उसे क्रीट सौंप दिया परन्तु इतने से ही वह सन्तुष्ट नहीं हुआ। वह तो सीरिया और फिलस्तीन लेने के लिये लालायित था। १८३० ई० में उसने अपने पुत्र इस्माइल के नेतृत्व में एक सेना भेजकर इन प्रदेशों पर हमला कर दिया। तुर्क पराजित हुये और इस्माइल ने इन राज्यों को दखल कर लिया। अब सुल्तान ने अन्य राज्यों से मदद लेने के लिये अपील की और रूस ने उसे सहायता दी। रूसी सहायता के ही बदौलत मिश्री सेना कुस्तुनतुनिया की ओर आगे नहीं बढ़ सकी। इसी समय इंगलैंड तथा फ्रांस ने हस्तक्षेप किया। वे सुल्तान पर दबाव डालकर सीरिया को मुहम्मदअली को दिलवा दिये। ज़ार ने भी अपनी सहायता के लिये सुल्तान से मूल्य माँगा और दोनों में १८३३ में उंकियरस्केलिसी की सन्धि हुई। इस सन्धि के अनुसार बास्फोरस और डार्डनेल्स के बन्दरगाह रूसी बेड़ा के लिये खोल दिये गये, किन्तु अन्य राष्ट्रों के बेड़ों के लिये बन्द कर दिये गये। इसका परिणाम यह हुआ कि कुस्तुनतुनिया पर रूस का प्रभाव कायम हो गया और कृष्ण सागर भी उसके पूरे कब्जे में आ गया। इससे इंगलैंड बड़ा ही चिंतित हुआ और रूस को इन लाभों से वंचित कर देने का निश्चय किया।

१८३६ ई० में सुल्तान ने मुहम्मदअली से सीरिया छीन लेने का प्रयत्न किया। इस तरह दोनों में लड़ाई छिड़ गई जिसमें तुर्की सेना पराजित हो गई। अब मुहम्मदअली उत्साहित होकर कुस्तुनतुनिया पर धावा बोलने के लिये आगे बढ़ने लगा। इसी समय पामर्स्टन सुल्तान की सहायता करने के लिये प्रस्तुत हुआ। वह तुर्की साम्राज्य को सुरक्षित रखना चाहता था। उधर फ्रांस मिश्र में अपना प्रभाव बढ़ाना चाहता था। यह स्मरणीय है कि ४० वर्ष पहले नैपोलियन ने भी मिश्र पर अधिकार करने के लिये प्रयत्न किया था, परन्तु नील नदी के युद्ध ने उसके सारे प्रयत्नों को व्यर्थ सिद्ध कर दिया। इस बार भी फ्रांस सफल नहीं हुआ। फ्रांस का राजा लुई फिलिप मुहम्मदअली की मदद करने लगा। रूस न तो मुहम्मदअली की प्रगति को, और न मिश्र में फ्रांसीसी प्रभाव को ही पसन्द करता था। अतः वह इंगलैंड की ओर झुका। १८४०

ई० में इंगलैंड, रूस, प्रशा तथा आस्ट्रिया के बीच लन्दन में एक समझौता हुआ और मुहम्मदअली की प्रगति को रोकने के लिये एक संघ कायम हुआ। सीरिया पर हमला हुआ और एकर पर बम गिरा। अब सीरिया मुहम्मदअली के हाथ से निकल गया लेकिन मिश्र पर उसका अधिकार दृढ़ हो गया।

१८४१ ई० में लन्दन की सन्धि हुई। मिश्र पर में मुहम्मदअली का वंशानुगत अधिकार स्वीकार कर लिया गया और बास्फोरस तथा डार्डनैल्स सभी राष्ट्रों के जंगी जहाजों के लिये बन्द कर दिये गये लेकिन इन सारी व्यवस्था में फ्रांस ने कोई भाग नहीं लिया और वह उपेक्षित रहा। इसे अपमानजनक समझकर लुई फिलिप युद्ध करने पर उतारू हो गया लेकिन वह भूँकता ही रहा, कुछ कर नहीं सका। पामर्स्टन की नीति ने फ्रांस या रूस को पूर्वी भूमध्य सागर में बढ़ने से रोक दिया। फ्रांस अकेला हो गया और कुछ समय के लिये इंगलैंड से उसका मनमुटाव हो गया। सुल्तान भी अंग्रेजी सहायता पर विशेष निर्भर रहने लगा।

## क्रीमिया का युद्ध १८५४-५६ ई०

कारण—( १ ) १८४१ ई० की लंदन की सन्धि ने रूस के लिये १८३३ ई० की उंकियारस्केसी की संधि को महत्वहीन बना दिया। रूस पहले के लाभों से वंचित कर दिया गया किन्तु वह निराश नहीं हुआ। दुर्बल तुर्की साम्राज्य को रूस लालच भरी निगाह से देखता रहा। वह इंगलैंड से मिलकर पूर्वी सवाल को स्थायी रूप से हल कर देना चाहता था। ज़ार के ख्याल से रूस तथा इंगलैंड ही मिलकर ऐसा कर सकते थे क्योंकि दोनों की शक्ति बहुत थी। एक प्रधान स्थलशक्ति था तो दूसरा जलशक्ति। ज़ार निकोलस प्रथम की दृष्टि में तुर्की साम्राज्य लड़खड़ा रहा था और वह इस साम्राज्य का बँटवारा कर देना चाहता था। वह स्वयं १८४४ ई० में इंगलैंड गया और इसके सम्बन्ध में उसने चर्चा भी की। उसने ब्रिटिश राजदूत से भी कहा था कि "हम लोगों के हाथ में एक रोगी है जिसकी अन्त्येष्टि क्रिया की तैयारी होनी चाहिये।" उसके कहने का आशय यह था कि तुर्की साम्राज्य का विभाजन कर लेना चाहिये। प्रस्ताव में मिश्र और क्रीट पर अंग्रेजी अधिकार स्थापित कर लेने के लिये इशारा किया गया। ब्रिटिश सरकार ने रूसी प्रस्ताव का समर्थन नहीं किया, क्योंकि उसे विश्वास था कि तुर्की साम्राज्य में सुधार कर उसे सुरक्षित रखा जा सकता है। अब रूस की नियत में इंगलैंड का सन्देह बढ़ने लगा।

( २ ) कुस्तुनतुनिया में स्थित ब्रिटिश तथा रूसी राजदूत भी अपने-अपने स्वार्थ की रक्षा के लिये युद्ध आवश्यक ही समझते थे। ( ३ ) नेपोलियन तृतीय फ्रांस का सम्राट था। गद्दी पर उसका अधिकार कमजोर था। अतः वह फ्रांसीसियों का ध्यान

बाहरी मामलों में केन्द्रित रखना चाहता था। नेपोलियन प्रथम का भतीजा होने के कारण उसमें स्वय गौरव एवं प्रतिष्ठा की भूख थी जिसे वह शान्त करना चाहता था।

( ४ ) राजनीतिक कारणों के साथ धार्मिक कारण भी मिल गया। जेरूजलम ईसाइयों का पवित्र तीर्थस्थान था जो तुर्की साम्राज्य में ही स्थित था। वहाँ के चर्च की कुञ्जी के लिये रोमन तथा यूनानी गिरजों के पादरी झगड़ पड़े। फ्रांस ने रोमन पादरियों का और रूस ने यूनानी पादरियों का पक्ष लिया। कुस्तुनतुनिया में स्थित रूसी राजदूत मेनशिकोफ ने कुञ्जी के लिये फ्रांसीसी दावे का विरोध किया, किन्तु ब्रिटिश राजदूत रेडक्लिफ ने उसका समर्थन किया अत सुल्तान ने रोमन कैथोलिक के सम्बन्ध में फ्रांस के अधिकार को स्वीकृत कर लिया। सन्धि के सिलसिले में जार ने सुल्तान की ईसाई प्रजा का संरक्षक होने का अधिकार प्रस्तुत किया। ब्रिटिश राजदूत की राय से सुल्तान ने जार के इस अधिकार को स्वीकार नहीं किया क्योंकि जार को इससे तुर्की साम्राज्य में हस्तक्षेप करने का सुअवसर प्राप्त हो जाता।

रूसी राजदूत ने कुस्तुनतुनिया छोड़ दिया और सुल्तान पर दबाव देने का निश्चय हुआ। रूस ने एक सेना भेजकर डैन्यूब नदी पर स्थित दो तुर्की रियासतों—मोलडेविया एवं वैलेशिया पर धावा बोल दिया और कृष्ण सागर के किनारे सिनोप नामक स्थान पर एक तुर्की जहाजी बेड़े को नष्ट कर दिया। इससे इगलैंड तथा फ्रांस उत्तेजित हो उठे। उन्होंने दोनों रियासतों से रूसी सेना हटा लेने के लिये कहा और रूस के अस्वीकार करने पर उसके विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया। १८५४ ई० के प्रारम्भ में युद्ध शुरू हुआ। इटली के एकीकरण में इंगलैंड तथा फ्रांस के सहयोग की आवश्यकता थी। अत. सार्डीनिया भी इस युद्ध में उनकी ओर से रूस के विरुद्ध शामिल हो गया। इस तरह एक तरफ इगलैंड, फ्रांस, सार्डीनिया तथा टर्की और दूसरी तरफ रूस हुये। आस्ट्रिया तथा प्रशा तटस्थ रहे। यह युद्ध इतिहास में क्रीमिया के युद्ध के नाम से प्रसिद्ध है क्योंकि क्रीमिया प्रायद्वीप से ही इसका विशेष सम्बन्ध रहा है। युद्ध का प्रधान उद्देश्य था दोनों तुर्की रियासतों से रूसियों को खदेड़ देना। यह उद्देश्य शीघ्र ही पूरा भी हो गया किन्तु मित्र राष्ट्र इतने ही से सन्तुष्ट नहीं रहे—अब उनका मन बढ़ गया। वे रूस का इतना निर्बल बना देना चाहते थे कि भविष्य में फिर उसकी ओर से तुर्की साम्राज्य को कोई सकट ही पैदा न हो। सेबेस्टोपोल नामक रूसियों का एक प्रसिद्ध किला था जो क्रीमिया में स्थित था इसे ही नष्ट कर देने की योजना बनी।

सितम्बर १८५४ ई० में ब्रिटिश तथा फ्रांसीसी सेनायें क्रमश लार्ड रागलान तथा मार्शल सेंट आरनौड की अध्यक्षता म क्रीमिया में पहुँच गई। अल्मा नदी के मैदान में एक युद्ध हुआ। मित्र राष्ट्र विजयी हुये और रूसी हार गये। इस विजय के

बाद यदि मित्र राष्ट्र शीघ्र ही सेबेस्टोपोल पर धावा बोल देते तो वे सफल हो जाते लेकिन ऐसा नहीं हुआ और सेबेस्टोपोल को घेरे की स्थिति में रखा गया। बालक्लवा और इनकरमान में लड़ाइयाँ हुईं। इन लड़ाइयों में सेनापतियों ने अनेक भूलें कीं परन्तु सैनिकों ने अपनी अद्भुत बहादुरी का परिचय दिया। उन्होंने असीम तकलीफें झेलीं। कठोर जाड़े का आगमन हो गया और बर्फ, वर्षा तथा तूफान के भी प्रकोप हुए। उसी में कपड़े तथा रसद का भी अभाव हो चला। माल ढोने के लिये जानवरों की भी कमी हो गई। फिर रोगों का भी हमला हुआ। सैनिक अस्पतालों की भी दशा दयनीय थी। रोगियों और घायलों के लिये बिछौना की कमी तो थी ही, उनकी सेवा एवं औषधि के लिये भी सुप्रबन्ध नहीं था। सुशिक्षित और पर्याप्त उपचारिकायें नहीं थीं।

इंगलैंड के अखबारों में इन सभी बातों का प्रकाशन होने लगा और ये सब जानकर ब्रिटिश जनमत उत्तेजित हो उठा। एबर्डीन मन्त्रिमंडल की बड़ी बदनामी हुई तथा उसका पतन भी हो गया। लार्ड पामर्स्टन प्रधानमंत्री हुआ और अब स्थिति में तीव्र गति से सुधार होने लगा। क्रीमिया में सामान तथा सैनिक दोनों ही भेजे गये। कुमारी फ्लोरेंस नाइटिंगेल ने अस्पतालों की सभी असुविधाओं को दूर कर सेवा-सुश्रूषा के लिये उत्तम प्रबन्ध किया। उसने अस्पतालों में उपचारिकाओं की शिक्षा के लिये भी समुचित व्यवस्था की।

इस प्रकार पामर्स्टन के नेतृत्व में महत्वपूर्ण सुधार हुआ। सितम्बर १८५५ ई० में रूसियों ने भी सेबेस्टोपोल को खाली कर दिया। मित्र राष्ट्रों ने इसके किले को नष्ट कर दिया और इसके पतन के साथ ही युद्ध का भी अंत हो गया। इस समय तक निकोलस की मृत्यु हो गयी थी और अलेक्जेंडर द्वितीय रूस का ज़ार हुआ था। अब १८५६ ई० में पेरिस की सन्धि हो गयी और युद्ध बिल्कुल बन्द हो गया।

**पेरिस की सन्धि**—इस सन्धि पत्र में कई बातें थीं—( क ) जीते हुए प्रदेशों को एक-दूसरे को लौटा दिया गया किन्तु रूसियों को यह वादा करना पड़ा कि वे सेबेस्टोपोल की पुनः किलाबन्दी नहीं करेंगे ( ख ) सभी राष्ट्रों ने टर्की के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने का वादा किया और सुल्तान की स्वतंत्रता तथा उसके राज्य की रक्षा करने के लिये भी निश्चय हुआ। ( ग ) मोलडेविया तथा वैलेशिया पर से रूसी संरक्षण का अन्त हो गया और सुल्तान के नाममात्र के प्रभुत्व के अन्दर स्वतंत्र हो गये। ( घ ) डैन्यूब नदी के किनारे से रूस हट गया और यह नदी सभी राष्ट्रों के जहाजों के लिये खोल दी गई। ( ङ ) कृष्ण सागर तटस्थ क्षेत्र घोषित किया गया और यह तय हुआ कि इसमें सभी राष्ट्रों के व्यापारी जहाज आवेंगे किन्तु किसी

का भी जंगी जहाज नहीं आ सकता। इसके तट पर रूस या टर्की कोई भी नाविक सेना नहीं रख सकता।

इस तरह पेरिस की सन्धि ने पूर्वी प्रश्न हल करने का प्रयत्न किया। ईसाई प्रजा को सुल्तान के अत्याचार से बचाने के लिये भी कोशिश की गई और बाल्कन में रूस की प्रगति को भी रोका गया। अब टर्की साम्राज्य को छिन्न भिन्न किये बिना ही-टर्की प्रान्तों को स्वतंत्र या अर्द्ध स्वतंत्र राज्यों के रूप में स्वीकार करना ही बड़े राज्यों की नीति हो गई।

युद्ध का प्रभाव—आधुनिक युग में जितने भी युद्ध हुये हैं उनमें क्रीमिया का युद्ध अधिक व्यर्थ समझा जाता था किन्तु यह बिल्कुल महत्वहीन या प्रभावशून्य नहीं था। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इसके कई परिणाम हुये। सार्डीनिया का महत्व बढ़ा और इटली के ऐकीकरण में फ्रांस से मदद मिली। रूस को आस्ट्रिया से दुश्मनी और प्रशा से निकटता हो गई। इससे बिस्मार्क ने लाभ उठाया और जर्मन एकता को आगे बढ़ाया। फ्रांस के सम्राट नेपोलियन तृतीय के गौरव में वृद्धि हुई। जहाँ तक इंगलैंड का सम्बन्ध है वह भी इस युद्ध से बहुत प्रभावित हुआ। हम देख चुके हैं कि इसी युद्ध के फलस्वरूप मन्त्रिमंडल में परिवर्तन हुआ और पामर्स्टन के आधिपत्य के लिये मार्ग खुला। अब युद्ध कला के विकास तथा सैनिक संगठन पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। इन मदों पर खर्च की वृद्धि हुई और खजाने पर अधिक बोझ बढ़ने लगा। स्वयंसेवकों का भी संगठन किया जाने लगा। उपचारिका प्रथा का भी विकास एवं संगठन होने लगा। रेडक्रास सोसायटी के विकास को प्रोत्साहन मिला। बाल्कन राज्यों में रूस की प्रगति अवरुद्ध हो गई और कुछ समय के लिये टर्की साम्राज्य भी सुरक्षित हो गया।

पूर्वी प्रश्न ( १८५६-७८ ई० )—लेकिन क्रीमिया युद्ध और पेरिस सन्धि से पूर्वी प्रश्न स्थायी रूप से हल नहीं हो सका। पराजित जातियों की राष्ट्रीय एवं स्वतंत्रता की भावना को बलपूर्वक कुचलना संभव नहीं था। उसे सन्तुष्ट कर देना ही शान्ति का एकमात्र उपाय था लेकिन महान् राज्यों ने वैसा नहीं किया और पेरिस की सन्धि की शर्तें अस्थायी सिद्ध हुईं। ३ ही वर्ष के बाद डैन्यूबियन राज्य मोलडेविया तथा वैलेशिया रूमानिया के नाम से एक राज्य में संयुक्त हो गये और अलेक्जेन्डर कौजा वहाँ का राजा निर्वाचित हुआ। अन्य राष्ट्रों ने भी १८६२ ई० में इसे मान लिया। इंगलैंड की सहानुभूति से सर्विया के अधिकारों में वृद्धि हुई। रूस को भी पेरिस की सन्धि के प्रतिकूल कार्य करने के लिये प्रोत्साहन मिला। उसने क्रीट निवासियों को विद्रोह करने के लिये और बल्गेरिया निवासियों को धार्मिक स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये प्रोत्साहित किया। १८७० ई० में जर्मनी ने फ्रांस को पराजित किया और रूस ने इससे फायदा

उठाया। उसने सेवेस्टोपोल की किलाबन्दी शुरू कर दी और काले सागर में जंगी जहाज रख दिया।

१८७५ ई० से स्थिति और भी बिगड़ने लगी साथ-साथ गंभीर भी होने लगी। सुल्तान ने सुधार सम्बन्धी अपने वादों को पूरा नहीं किया। अतः बाल्कन जातियों की दशा में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। उधर यूनान, सर्विया तथा रूमानिया के उदाहरण से भी वे बहुत प्रभावित हुये थे। साथ ही उन्हें रूस तथा आस्ट्रिया के स्लावों से भी सहायता का आश्वासन मिल रहा था। अतः १८७५ ई० में बोस्निया हर्जेगोविना के निवासियों ने विद्रोह कर दिया। सर्विया तथा मौन्टिनिग्रो ने भी उनकी मदद की। विद्रोह की लपट बढ़ने लगी और बल्गेरिया के लोगों ने भी बगावत कर डाली। इस बगावत के दबाने में तुर्कों ने बड़ी ही अमानुषिक कठोरता एवं बर्बरता का परिचय दिया। प्रतिहिंसा की भावना से ओत-प्रोत होकर तुर्कों ने विद्रोहियों को पाशविक ढंग से तलवार के घाट उतार दिया। भीषण रक्तपात हुआ और स्त्रियों तथा बच्चों तक की भी हत्या हुई।

तुर्कों के इस अमानुषिक व्यवहार का समाचार सुनकर समस्त यूरोप क्षुब्ध हो हो गया। इंगलैंड का सुप्रसिद्ध शान्तिवादी लिबरल नेता ग्लैडस्टन बिगड़ उठा। उसने इसके सम्बन्ध में अनेक भाषण दिया और लेख भी लिखा। उसने इस बात की अपील की कि तुर्क बाल्कन प्रान्तों से बोरिया-बस्ता के साथ निकाल दिये जायँ लेकिन इसके सिवा ग्लैडस्टन तो कुछ सक्रिय कर नहीं सकता था क्योंकि साम्राज्यवादी कन्जर्वेटिव नेता डिसरैली के हाथ में शासन-सूत्र था। वह रूसी कूटनीति से सशंकित था और उसने तुर्की साम्राज्य के पक्ष में पुरानी ब्रिटिश नीति का ही अनुसरण किया। उसने तुर्कों के विरुद्ध कोई कदम नहीं उठाया।

रूसी-तुर्की युद्ध—लेकिन रूस तो चुपचाप बैठने वाला नहीं था। बाल्कन में तुर्कों के अन्याय एवं अत्याचार के कारण रूस के हृदय में भी गहरी चोट पहुँची थी। अतः इंगलैंड ने जब तुर्कों को सजा देने के लिये कुछ नहीं किया तो रूस १८७७ ई० में तुर्की के साथ युद्ध ही छेड़ दिया। रूस तुर्की प्रदेश पर हमला करने लगा और उसे विजयश्री भी मिलने लगी। अन्त में रूसियों ने तुर्कों के प्रसिद्ध गढ़ प्लेवना को घेरा। इसकी अजेयता पर तुर्कों को गर्व था, किन्तु इसका भी पतन हो गया। शीघ्र ही एड्रियानोपुल भी रूसियों के हाथ में चला गया। अब सुल्तान रूस से सन्धि करने के लिये बाध्य हुआ।

१८७८ ई० में रूस और टर्की में सैनेस्टेफानो की सन्धि हुई। इसकी शर्तें पराजित टर्की के लिये बड़ी ही कठोर थीं। इसके अनुसार कुछ राज्यों को स्वतंत्रता मिली और कुछ राज्यों में रूस का संरक्षण स्थापित हुआ। रूस के अधीन एक महान

बल्गेरिया का निर्माण हुआ। कुस्तुन्तुनिया पर भी रूस का अधिकार हो जाता लेकिन इंगलैंड ने इस सन्धि का घोर विरोध किया और उसने इस पर विचार करने के लिये एक अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस की माँग की। रूस भला इतनी आसानी से अपने ही पैर में क्योंकर कुल्हाड़ी मारता किन्तु इंगलैंड के हठ के सामने रूस की एक भी न चली। इंगलैंड ने कुस्तुनतुनिया के पास जंगी जहाज भेज दिया और माल्टा में भी हिन्दुस्तानी सेना तैनात कर दी गई। इंगलैंड और रूस में युद्ध छिड़ जाने की नौबत आ गयी। अब रूस ने अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस में सन्धि के लिये पुनर्विचार सम्बन्धी प्रस्ताव को मान लिया। १८७८ ई० में ही बर्लिन में कांग्रेस की बैठक हुई।

पूर्वी प्रश्न ( १८७८-१९१४ ई० )—१८७८ ई० में जर्मन चान्सलर बिस्मार्क के सभापतित्व में बर्लिन में यूरोपीय कांग्रेस का अधिवेशन शुरू हुआ। इसमें इंगलैंड की ओर से डिसरैली तथा सैलिसबरी ने भाग लिया। सैनस्टेफानो की सन्धि में परिवर्तन कर एक नयी सन्धि हुई जो बर्लिन की सन्धि कहलाई। इसमें कई बातें थीं—( क ) सर्बिया, रूमानिया और मौन्टनिग्रो को स्वतन्त्रता प्रदान कर दी गई। ( ख ) बोस्निया और हर्जेगोविना को तुर्की सत्ता के ही अधीन आस्ट्रिया के शासन में सौंप दिया गया। ( ग ) महान बल्गेरिया को तीन टुकड़ों में बाँट दिया गया—एक भाग को सुल्तान का कर देने की शर्त पर स्वायत्त शासन मिला और दूसरे भाग को एक ऐसे गवर्नर के अधीन रखा गया जो यूरोप की स्वीकृति से सुल्तान के द्वारा मनोनीत किया जाता। तीसरा भाग तुर्की साम्राज्य में मिला दिया गया ( घ ) रूस को रूमानी-बेसरेबिया और एशिया माइनर में कुछ स्थान मिले। इंगलैंड को साइप्रस मिला।

सन्धि के परिणाम—इस सन्धि से डिसरैली बहुत खुश हुआ और उसने बड़े गर्व के साथ कहा था कि 'सम्मान के साथ शान्ति' स्थापित हुई है। इससे तुर्की साम्राज्य का कुछ और समय के लिये जीवन बढ़ गया किन्तु इससे पूर्वी प्रश्न का निपटारा नहीं हुआ। इस सन्धि ने अनेक अन्य उलझनें पैदा कर दीं। पहले, राष्ट्रीयता की भावना को कुचल कर ही बेसरेबिया को रूस के और बोस्निया तथा हर्जेगोविना को आस्ट्रिया के हाथों में सौंपा गया। इसी तरह बल्गेरिया का भी विभाजन किया गया। दूसरे, निकट पूर्व में रोके जाने पर रूस ने एशिया के अन्य भागों में प्रसार नीति अपनायी जो ब्रिटिश एशियायी साम्राज्य के लिये खतरनाक सिद्ध हुई। तीसरे, आस्ट्रिया तथा जर्मनी के बीच निकटता के लिये मार्ग प्रशस्त हो गया और यह प्रथम महायुद्ध के होने में सहायक सिद्ध हुआ। चौथे, १८७८ ई० के बाद इस सन्धि की शर्तों की भी उपेक्षा की जाने लगी।

१८८५ ई० में बल्गेरिया के दो भाग संयुक्त हो गये और इसे इंगलैंड ने स्वीकार कर लिया यद्यपि ७ वर्ष पहले इसने इस संयोग का विरोध किया था। १८८६ ई०

में क्रीट निवासियों ने यूनान के साथ संयुक्त होने के लिये आन्दोलन शुरू किया था। टर्की ने विरोध किया। अतः क्रीट को कुछ स्वशासन सम्बन्धी अधिकार ही प्राप्त हुआ और यूनान तथा क्रीट का संयोग नहीं हो सका।

१९०८ ई० में तुर्की में युवक तुर्क आन्दोलन हुआ और सुल्तान ने वैधानिक शासन कायम किया। इसी समय आस्ट्रिया ने बोसनिया तथा हर्जेगोविना को भी अपने साम्राज्य में मिला लिया। इङ्गलैंड ने विरोध किया किन्तु कुछ अधिक न हो सका। सर्विया भी दाँत पीस कर ही रह गया। इसी समय क्रीट तथा यूनान का भी संयोग हो गया और बल्गेरिया ने भी स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी। १९११ ई० में इटली ने ट्रिपोली ले लिया। १९१२ ई० में बल्गेरिया, सर्विया, यूनान, और मोन्टनीग्रो ने एक संघ कायम किया और टर्की से युद्ध घोषित कर दिया। टर्की पराजित हुआ और १९१३ ई० में लन्दन की एक सन्धि हुई। टर्की के हाथ में कुस्तुनतुनिया के आसपास के प्रदेश रह गये। अल्बानिया की दृष्टि हुई और यूनान तथा क्रीट के संयोग को स्वीकृति प्राप्त हुई।

लन्दन की सन्धि से सर्विया दुखी हुआ क्योंकि अल्बानिया के निर्माण से उसका समुद्र तट आने का मार्ग बन्द हो गया। आस्ट्रिया से भी दुश्मनी बढ़ गयी। दूसरी ओर बल्गेरिया सर्विया के विस्तार का विरोध कर रहा था। अतः बाल्कन के अन्य सभी राज्य बल्गेरिया के विरुद्ध संगठित हो गये और युद्ध शुरू हो गया टर्की भी उसके विरुद्ध युद्ध में शामिल हो गया। बल्गेरिया हार गया और टर्की को कुछ प्रदेश प्राप्त हो गये।

१९१४ ई० में प्रथम महायुद्ध शुरू हो गया। अब टर्की ने इंगलैंड में भी विश्वास खो दिया था। अभी तक जर्मनी ने ही तुर्की साम्राज्य के प्रदेशों पर अधिकार नहीं जमाया था। अतः महायुद्ध में टर्की ने उसी का पक्ष ग्रहण किया किन्तु जर्मनी के हार के साथ उसकी भी हार हो गयी। १९२० ई० में सेवर की सन्धि हुई जिसके द्वारा तुर्की साम्राज्य का बटवारा हो गया। सुलतान ने इसे भी स्वीकार कर लिया परन्तु कमालपाशा के नेतृत्व में राष्ट्रवादियों ने इसका विरोध किया। १९२२ ई० में सुल्तान के पद का अन्त कर टर्की में गणतंत्र राज्य कायम कर दिया गया। १९२३ ई० में लोजान की सन्धि के द्वारा यूरोपीय राज्यों ने कमालपाशा की सरकार को स्वीकार कर लिया। फिलस्तीन तथा मेसापोटामिया पर अंग्रेजों का अधिकार रहा।

## अध्याय ५२

# ग्रेट ब्रिटेन और अफ्रीका ( १८१५—१९१४ ई० )

### ( क ) अफ्रीका की खोज एवं नोच-खसोट

आन्तरिक खोज—१९ वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक यूरोपियनों को अफ्रीका महादेश का ज्ञान बहुत ही सीमित था। इसके भीतरी भाग की जानकारी उन्हें कुछ भी नहीं थी। वे इसे अन्ध महादेश कहते थे। इसके कई कारण थे। अफ्रीका जंगलों से भरा था, वहाँ जलवायु अच्छी नहीं थी, वहाँ सहारा का विशाल रेगिस्तान और कड़ाके की गर्मी पड़ती है। उत्तम बन्दरगाहों तथा अन्य व्यापारिक सुविधाओं की कमी थी। आदिम निवासी भी विदेशियों को बुरी दृष्टि से देखते थे। १८४० ई० तक अफ्रीका में गुलामों का व्यापार होता था। वहाँ के हब्शी गुलाम बनाकर अमेरिका आदि देशों में भेजे जाते थे किन्तु धीरे धीरे दास-व्यापार की प्रथा बन्द हो चली। अब भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अफ्रीका के आन्तरिक भागों की खोज जरूरी हो गई। लिविंगस्टोन, स्टेनली, स्पीक तथा बेकर जैसे साहसी अन्वेषकों ने इस दिशा में प्रयास किया और वे सफलीभूत हुये।

इस प्रसंग में ईसाई पादरियों की देन के विषय में उल्लेख करना आवश्यक है। अन्वेषकों में अधिक संख्या इन्हीं पादरियों की थी जिन्होंने अनेक कष्टों को झेलते हुये अपने प्राण को हथेली पर रख अन्ध-महादेश के भीतरी भागों में पर्यटन किया। इन्हीं के द्वारा यूरोपियनों को अफ्रीका का ज्ञान हुआ। वहाँ व्यापारियों ने प्रस्थान किया। अन्त में सैनिकों का आगमन हुआ।

डैविड लिविंगस्टोन एक स्कॉट डाक्टर था। १८४० ई० में वह लंदन पादरी समाज की ओर से दक्षिणी अफ्रीका में गया और एक दशक के बाद उसने भीतरी भागों का भ्रमण प्रारंभ किया। उसने लम्बी लम्बी कष्टपूर्ण तथा आश्चर्यजनक यात्रायें कीं। उसने जाम्बेजी नदी के मार्ग का अनुसरण कर विक्टोरिया तथा न्यासा झीलों की जानकारी प्राप्त की। एक बार रास्ता भूलकर दीर्घकाल तक वह इन जंगलों में भटकता रहा। उसके विषय में किसी को कोई खबर नहीं मिलती थी। उसकी खोज में स्टेनली चला। वह वेल्स का निवासी था और एक समाचार पत्र का संवाददाता था। उसने अफ्रीका में भ्रमण किया और लिविंगस्टोन की खोज की। बाद में अन्य यात्रियों ने लिविंगस्टोन तथा स्टेनली का अनुसरण किया। स्पीक ने विक्टोरिया

झील के दक्षिणी भाग की खोज की और सर्वप्रथम इसे नील नदी का उद्गम स्थान बतलाया।

अफ्रीका का विभाजन—बेल्जियम के राजा लियोपोल्ड द्वितीय ने १८७६ ई० में यूरोप के राष्ट्रों की ब्रूसेल्स में एक सभा बुलाई। उसने अफ्रीका की महत्ता बतलाई। लगभग एक दशाब्दी बाद उसने स्वतन्त्र कांगो राज्य को अपने अधीन स्थापित किया। रबर का व्यापार भी होने लगा लेकिन उसने ईसाई धर्म के प्रचार में कोई दिलचस्पी नहीं दिखलाई। १६०८ ई० में उसने कांगो-राज्य को बेल्जियम सरकार के हाथ बेच दिया और यह बेल्जियम राज्य का एक अंग बन गया।

यूरोप के अन्य देश भी पीछे नहीं रहे। इंगलैंड, जर्मनी फ्रांस, इटली आदि देशों ने बेल्जियम का अनुसरण किया। कुछ लोगों ने अफ्रीका को सभ्य बनाने या ईसाई धर्म का प्रचार करने का स्वाँग रचा किन्तु अधिकांश लोग तो कल-कारखानों के लिये कच्चे माल और उनसे बने माल की खपत के लिये बाजार की खोज में थे। बड़े-बड़े पूँजीपति अपनी पूँजी के सदुपयोग के लिये विशाल क्षेत्र चाहते थे। अतः इन राज्यों ने अफ्रीका में व्यापार के लिये अपनी-अपनी कंपनियाँ खोल दीं। सेसील-रोड्स नामक एक अंग्रेज ने बेचुआनालैंड और रोडेशिया पर अधिकार स्थापित किया और व्यापार के द्वारा अकूत धन प्राप्त किया। लुडरीज नाम का एक जर्मन व्यापारी दक्षिण-पश्चिम में तटीय भागों में व्यापार करने लगा। इस प्रकार यूरोप के राष्ट्रों द्वारा अफ्रीका की नोच-खसोट शुरू हुई जिससे विभिन्न राज्यों में संघर्ष छिड़ गया। कई मौकों पर तो युद्ध की नौबत आ पहुँची। इंगलैंड दक्षिण में उत्तमाशा अन्तरीप से लेकर उत्तर में कैरो तक साम्राज्य फैलाना चाहता था और दोनों छोर को रेल द्वारा मिला देना चाहता था। फ्रांस सहारा की मरुभूमि से होते हुये पूर्वीय तथा पश्चिमी तट को मिलाना चाहता था। अंत में उन्होंने आपस में कई सम्मेलन और संधियाँ कीं और अफ्रीका का विभाजन कर लिया। प्रथम युद्ध १६१४ ई० के प्रारंभ के समय तक सम्पूर्ण महादेश यूरोपियनों के हाथ में आ गया। १८८५ ई० में बर्लिन में यूरोपीय राज्यों का विशाल सम्मेलन हुआ। इसमें ब्रिटिश, जर्मन तथा फ्रांसीसी राज्यों की सीमायें निर्धारित की गईं। १८६० ई० में इंगलैंड ने जर्मनी तथा फ्रांस के साथ पुनः संधि की।

अफ्रीका के विभाजन में अंग्रेजों को सबसे अधिक हिस्सा मिला। उन्हें दक्षिणी अफ्रीका जिसमें उत्तमाशा प्रान्त, नेटाल, ट्रान्सवाल और औरेंज नदी के भू-भाग सम्मिलित हैं, बेचुआनालैंड, रोडेशिया, मिश्र, सूडान का कुछ भाग, उगैंडा, ब्रिटिश सुमालीलैंड, नाईजीरिया तथा गेम्बिया मिले। फ्रांस का ध्यान अफ्रीका की तरफ बहुत पहले से आकृष्ट हुआ था और बिसमार्क भी इसके लिये उसे उत्साहित करता

था। १८३० ई० में उसने अलजीरिया पर अधिकार कर लिया था। १८८१ ई० में उसने ट्यूनिस पर भी अधिकार स्थापित किया। उस पर इटली का भी दाँत लगा हुआ था। अत ३० वर्ष तक इन दोनों में ट्यूनिस को लेकर संघर्ष चलता रहा। अन्त में यह भी फ्रांस के अधिकार में ही रहा। अलजीरिया और ट्यूनिस के अतिरिक्त फ्रेंच वेस्ट अफ्रीका, फ्रेंच कांगो, फ्रेंच सोमालीलैंड, मोरक्को तथा मैडागास्कर फ्रांस को मिले। इटली के हाथ में इटालियन सोमालीलैंड, लीबिया और इरीट्रिया आये। जर्मनी को कैमेरून, टोगोलैंड, दक्षिणी पश्चिमी अफ्रीका तथा पूर्वी अफ्रीका मिले। पुर्तगाल के अधिकार में गिनी, पुर्तगीज पश्चिमी अफ्रीका तथा पुर्तगीज पूर्वी अफ्रीका आये। पश्चिमी तट पर रिओडी ओरो को स्पेन ने अधिकृत किया।

( ख ) आंग्ल मिस्री सम्बन्ध—मिश्र में अंग्रेजी आधिपत्य की स्थापना और इसका अन्त ब्रिटिश साम्राज्य के इतिहास में एक बड़ा ही मनोरंजक तथा शिक्षाप्रद अध्याय है। अत. हम इसकी विस्तृत विवेचना करेंगे।

इस्माइल पाशा का अव्यवस्थित शासन—मिश्र पहले तुर्की साम्राज्य का एक अग था और सुल्तान की ओर से वहाँ उसका एक प्रतिनिधि शासन करता था। उसे वायसराय या खदीव कहा जाता था। १८११ ई० में मुहम्मद अली वहाँ का स्वतंत्र शासक बन बैठा। १८६३ ई० में उसका नाती इस्माइल पाशा गद्दी पर बैठा और १३ वर्षों तक राज्य करता रहा।

इस्माइल पाशा सुल्तान को कर देता था किन्तु गद्दी पर उसने वंशानुगत अधिकार कायम कर लिया। वह बड़ा ही शान शौकत, तड़क-भड़क मे रहता था और उसे खर्च की कोई परवाह नहीं थी। वह बड़ा ही शाह-खर्च था। राजकीय खर्च के अलावे उसने सुधार सम्बन्धी भी कुछ महत्वपूर्ण कार्य किये। रेल, सड़कें तथा पुल बने। स्कूल तथा न्यायालय खोले गये। तार तथा डाक की व्यवस्था हुई। बन्दरगाहों का विकास हुआ। १८६६ ई० में एक फ्रांसीसी कम्पनी ने मिश्र के पास एक नहर का निर्माण किया। यह स्वेज नहर के नाम से विख्यात है। इस्माइल ने इसमें कई हिस्से खरीदे। इस तरह मिश्री सरकार के खर्च में दिन दूनी रात चौगुनी वृद्धि होती रही। खर्च की विशाल रकम कहाँ से आती थी? जनता के खून पसीने की कमाई से किन्तु जनता की शक्ति भी तो सीमित ही होती है। जब जनता के शोषण से काफी रकम नहीं मिलने लगी तब इस्माइल ने कर्ज लेना शुरू किया। उसे विदेशी महाजनों की भी शरण में जाना पड़ा। इगलैंड तथा फ्रांस ने उसे बहुत कर्ज दिया लेकिन कर्ज तो कभी न कभी चुकाना ही पड़ता है। जब महाजन कर्ज चुकाने के लिये इस्माइल के सर पर सवार हुये तो उसके हाथ अभी भी खाली ही थे। अब न तो वह जनता पर टैक्स लगा सकता था और न उसे कहीं से कर्ज ही मिलने की

संभावना थी। अतः उसे स्वेज नहर के अपने हिस्सों को ही बेचने के लिये बाध्य होना पड़ा।

इंगलैंड के लिये स्वेज नहर का महत्व बहुत ही अधिक था। स्वेज नहर के ही पास मिश्र स्थित है। भौगोलिक दृष्टि से पूर्व और पश्चिम के बीच मिश्र सिंहद्वार का काम करता है। स्वेज नहर होकर भारत आने में काफी सुविधा हो गई। अब मिश्र पर अंग्रेजों के लिये प्रभुत्व जमाना आवश्यक हो गया। अतः डिसरैली ने १८७५ ई० में मिश्री सरकार के १ लाख ७७ हजार के हिस्सों को ४० लाख पौंड में खरीद लिया लेकिन इससे भी इस्माइल को महाजनों से छुटकारा नहीं मिला। अतः इंगलैंड तथा फ्रांस ने हस्तक्षेप किया। मिश्र की आर्थिक दशा में सुधार लाने के लिये अपने दो अधिकारियों को नियुक्त किया। इन दोनों राज्यों के दबाव से १८७९ ई० में सुल्तान ने इस्माइल को पदच्युत भी कर दिया और उसके बड़े बेटे तवफिक को खदीव बहाल किया। इस तरह १८७९ ई० में मिश्र पर इंगलैंड तथा फ्रांस का द्वैध नियन्त्रण कायम हुआ और धीरे-धीरे इंगलैंड अपना आधिपत्य बढ़ाने लगा।

**राष्ट्रीय आन्दोलन का सूत्रपात**—मिश्रियों ने द्वैध नियन्त्रण को पसंद नहीं किया। विदेशी अधिकारियों ने खर्चे में कमी की और धनियों पर टैक्स लगाना शुरू किया। उधर सैनिकों का वेतन भी बहुत दिनों से नहीं मिला था। इससे वे असन्तुष्ट थे। इस पर भी उनके खर्च में भी कमी करने की कोशिश होने लगी। अतः वे बौखला उठे और अराबी पाशा के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया। इस तरह राष्ट्रीय एवं सैनिक विद्रोह का प्रादुर्भाव हुआ। विदेशी सचिवों को निकाल देने और सैनिकों की संख्या बढ़ा देने के लिये खदीव से माँग की गई। खदीव ने विदेशी सचिवों को पदच्युत भी कर दिया और अराबी को युद्ध मन्त्री नियुक्त कर लिया। विद्रोहियों ने अलेक्जंड्रिया पर भी अपना आधिपत्य जमा लिया और वे अराबी के नेतृत्व में इसकी किलेबन्दी भी करने लगे।

इसी बीच ग्रेट ब्रिटेन तथा फ्रांस ने विद्रोह दबाने के लिये संयुक्त जंगी जहाज भेजा किन्तु इससे विद्रोह की अग्नि और भी तीव्र हो उठी। लगभग ५० यूरोपियनों का वध कर डाला गया। ब्रिटिश पोताध्यक्ष ने जब किलेबन्दी रोकने का आदेश दिया तो इसकी भी उपेक्षा कर दी गई। तब अलेक्जंड्रिया शहर को बम वर्षा से तहस-नहस कर देने की आज्ञा हुई लेकिन इसके लिये फ्रांसीसी तैयार नहीं हुये। अन्त में यह ध्वंसात्मक कार्य अंग्रेजों को अकेले ही करना पड़ा परन्तु इससे भी विद्रोही दबे नहीं—उत्पात मचाते ही रहे। फिर भी अराबी अलेक्जंड्रिया छोड़ने के लिये बाध्य हुआ। तब तक इंगलैंड और भारत से भी सैनिकों का जत्था आ पहुँचा।

सितम्बर १८८२ ई० में युद्ध शुरू हो गया और तेल एल कबीर में अराबी पराजित हुआ। उसे सिलोन में निर्वासित कर दिया गया और मिश्र पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। अब मिश्र में सुव्यवस्था स्थापित करने का प्रयत्न हुआ किन्तु इसमें सफलता नहीं मिली।

सूडान का प्रश्न—मिश्र का सूडान पर भी आधिपत्य था। अत मिश्र पर अंग्रेजी अधिकार होने से सूडान भी अंग्रेजों के कब्जे में आ गया। जब मिश्र में विद्रोह दबा दिया गया तब सूडान में गड़बड़ा पैदा हुई। मुहम्मद अहमद नामक एक व्यक्ति ने अपने को मेहदी (ईश्वर का दूत) घोषित किया और उसके अनुयायियों की संख्या क्रमश बढ़ने लगी। वे दरवेश कहलाते थे। वे काफिरों के विरोधी थे और इनके खिलाफ उन्होंने धर्म-युद्ध (जेहाद) शुरू कर दिया। यह अंगरेजों को भी चुनौती थी। अत कर्नल हिक्स के नेतृत्व में मिश्र से एक सेना उन्हें दबाने के लिये भेजी गयी। इसमें नये रँगरूटों की ही संख्या अधिक थी। अनुभवहीन होने के कारण अलउबेद के निकट इसे पराजय का ही कड़वा फल चखना पड़ा।

इस समय इंगलैंड में ग्लैडस्टन का मन्त्रिमंडल था। उसे सूडान के साथ झंझट करना पसन्द नहीं था। अत वह वहाँ से मिश्री सेना को हटा देना चाहता था। यह भार जेनरल गोर्डन को सौंपा गया। १८८४ ई० के प्रारंभ में ही वह खार्तूम पहुँचा। वहाँ पहुँचने पर गोर्डन ने अपना निर्णय बदल दिया। उसने सेना को हटाया नहीं और इसकी संख्या बढ़ाने के लिये ही प्रयत्न करने लगा। ब्रिटिश सरकार से लिखा-पढ़ी होने लगी। तब तक मेहदी की सेना ने खार्तूम का अवरोध कर दिया और गोर्डन भी वहीं घिर गया। अब उसे मुक्त करने के लिये सचमुच ही नयी सेना की आवश्यकता आ पड़ी किन्तु ग्लैडस्टन ने तत्परता से कार्य नहीं किया। कई महीने बीत चुके। अन्त में वुल्सले के नेतृत्व में एक सेना गोर्डन की रक्षा के लिये भेजी गई किन्तु इस सेना के पहुँचने के पहले ही काम भी समाप्त हो चुका था। हजारों ब्रिटिश तथा मिश्री सैनिक दरवेशों की तलवारों के शिकार हुये यहाँ तक कि गोर्डन भी मार डाला गया और सूडान में मेहदी का झंडा फहराया। यह अंग्रेजों की बड़ी ही अपमानजनक पराजय थी जिसका कड़वा घूँट पीने के सिवा अन्य कोई चारा नहीं था।

मिश्र की समस्या—मिश्र पर ब्रिटिश आधिपत्य होने से एक नयी समस्या उठ खड़ी हुई। अंग्रेज विकट उलझन में पड़ गये। वे मिश्र पर पूर्ण स्वामित्व स्थापित नहीं कर सकते थे क्योंकि इससे टर्की का उनमें विश्वास खो जाता किन्तु वे उसे छोड़कर हटना भी नहीं चाहते थे क्योंकि यह उनके पूर्वी साम्राज्य की रक्षा के लिये अत्यावश्यक था। अत अंग्रेजों ने एक बीच का रास्ता पकड़ा। १८८२ से १९१४

ई० तक मिश्र तुर्की साम्राज्य का अंग बना रहा और खदीव वहाँ के शासन का प्रधान रहा परन्तु वास्तविक शासन-सूत्र ब्रिटिश कौन्सल जेनरल के ही हाथ में चला आया। इस प्रकार इस युग में मिश्र में दोहरा शासन कायम रहा लेकिन इतना स्वीकार करना पड़ेगा कि अंग्रेजों की देख-रेख में मिश्र की दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति होने लगी। इसका अधिकांश श्रेय लार्ड क्रोमर को ही प्राप्त है।

लार्ड क्रोमर के सुधार—यदि लार्ड क्रोमर को आधुनिक मिश्र का निर्माता कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं। वह एक बहुत बड़ा सुधारक था। उसके पदारूढ़ होने के समय मिश्र की दशा बहुत ही गिरी हुई थी। शासन भ्रष्टाचारपूर्ण था। वहाँ तीन भयंकर बुराइयाँ प्रचलित थीं—बेगार, घूसखोरी और अमानुषिक दण्ड विधान। कृषि, वाणिज्य-व्यवसाय आदि भी पिछड़े हुये थे। नहर, सिंचाई आदि की समुचित व्यवस्था नहीं थी। जनता पर टैक्स का बोझ था। फिर भी आय-व्यय पत्रक में संतुलन नहीं था। क्रोमर ने महत्त्वपूर्ण सुधारों के द्वारा एक क्रान्ति पैदा कर दी। दण्ड विधान में परिवर्तन कर कानून की कठोरता में नरमी लायी गयी। बेगार का अन्त कर उचित पारिश्रमिक देने की व्यवस्था हुई। समुचित वेतन देने का प्रबन्ध कर, घूसखोरी मिटाने का प्रयत्न किया गया। नहरें निकाल कर और बाँधें बाँध कर सिंचाई की व्यवस्था कर दी गयी। कृषि और उद्योग-धन्धों की उन्नति हुई। वाणिज्य-व्यापार को प्रोत्साहन मिला। प्रजा का टैक्स घटा और बजट भी संतुलित हो गया। आबादी में भी वृद्धि हुई। इस तरह २५ वर्ष के बाद १९०७ ई० में जब क्रोमर ने पद-त्याग किया तो मिश्र एक सुखी तथा प्रगतिशील राष्ट्र के पथ पर अग्रसर हो चुका था।

क्रोमर ने उपर्युक्त सुधारों को कर अपनी अद्भुत प्रतिभा का परिचय दिया किन्तु सबसे बढ़कर तो यह बात है कि उसने अनेक विरोधों तथा कठिनाइयों के बीच रह कर इन महत्त्वपूर्ण सुधारों को किया और मिश्र का कायापलट कर दिया।

सूडान की पुनर्विजय—हम देख चुके हैं कि सूडान में किस तरह अंगरेजों की अपमानजनक पराजय हुई। उनके दिल में यह बात बड़ी बुरी तरह खटक रही थी और वे इस कलंक को मिटा देने के लिये उतावले हो रहे थे। दरवेशों की प्रधानता से मिश्र की सुरक्षा भी खतरे में थी। उनके हमले की आशंका बनी रहती थी। इतना ही नहीं मिश्र पर ब्रिटिश अधिकार हो जाने से सूडान पर भी उनका अधिकार होना आवश्यक था क्योंकि मिश्र की उन्नति नील नदी पर निर्भर करती रही है और यह नदी सूडान होकर ही बहती थी। अब सूडान पर अंगरेजी आधिपत्य जमाने के लिये सुअवसर भी प्राप्त हुआ। मिश्र अँगरेजों के प्रभाव में आ गया था और वहाँ की सेना सुव्यवस्थित होने लगी थी। उधर सूडान में मेहदी के अनियन्त्रित शासन से दुर्व्य-

बस्था प्रचलित थी और इस पर फ्रांसीसीयों की भी लोलुप दृष्टि गड़ी हुई थी। अब मेहदी भी मर चुका था और उसका उत्तराधिकारी अब्दुल नामक व्यक्ति था जो उसके समान शक्तिशाली नहीं था।

अत १८८९ और १८९१ ई० में दरवेशों पर हमला हुआ और उन्हें पराजित किया गया। लाल सागर के तट प्रदेशों को भी अधिकृत कर लिया गया। १८९२ ई० में किचनर मिस्री सेना का सेनापति नियुक्त हुआ। वह बड़ा ही योग्य और साहसी व्यक्ति था। दरवेशों को कुचल देने का भार उसे ही सौंपा गया। उसने २२ हजार अंगरेजी मिस्री सैनिकों के साथ प्रस्थान किया। दरवेशों की संख्या ४० हजार थी। १८९८ ई० में उमदुर्मान पर दोनों की मुठभेड़ हुई और दरवेशों की बुरी तरह पराजय हुई।

फैशोडा काड—लेकिन मिश्र तथा सूडान में अंग्रेजों की सफलता से यूरोपवासी खुश नहीं थे। खासकर फ्रांस तो ब्रिटेन के मार्ग में अड़ंगा ही डालना चाहता था। १८९८ ई० में फैशोडा नामक स्थान पर फ्रांसीसी मेजर मार्चेंड पहुँचा और उसी समय लार्ड किचनर भी पहुँच गया। अंग्रेज अपने साम्राज्य के उत्तरी तथा दक्षिणी छोर को और फ्रांसीसी पूर्वी तथा पश्चिमी छोर को सम्बन्धित कर देना चाहते थे और दोनों का केन्द्र बिन्दु फैशोडा में ही पड़ता था। फैशोडा सूडान की राजधानी खार्तूम से ४५० मील दक्षिण की ओर है। अत वहाँ मार्चेंट और किचनर के पहुँचते ही स्थिति बड़ी ही विषम हो गयी। तनाव इतना बढ़ा कि युद्ध की संभावना दीख पड़ने लगी किन्तु अन्त में फ्रांसीसियों ने अपनी कमजोरी समझी और वे झुक गये। अब सूडान में ब्रिटिश अधिकार सुदृढ़ हो गया और वहाँ अंग्रेजों तथा मिश्रियों का दोहरा शासन स्थापित हो गया।

लेकिन ब्रिटेन के प्रति फ्रांस की नीयत अभी भी ठीक नहीं थी। इस समय मिश्र की आर्थिक व्यवस्था एक सार्वजनिक ऋण समिति की देख रेख में थी। यह एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था थी जिसका एक सदस्य फ्रांस भी था। अत. वह फिर इगलैंड को तंग करने लगा किंतु १९०४ ई० में दोनों में समझौता हो गया। इसके अनुसार फ्रांस ने इगलैंड को मिश्र में और इगलैंड ने फ्रांस को मोरक्को में हस्तक्षेप करने के लिये स्वतंत्र छोड़ दिया। मिश्र की आर्थिक व्यवस्था पर से अन्तर्राष्ट्रीय नियन्त्रण का भी अन्त कर दिया गया।

परन्तु अंग्रेज बहुत समय तक सुख शांति का उपभोग नहीं कर सके। धीरे धीरे मिश्रियों में राष्ट्रीय भावना का विकास होने लगा और वे स्वराज्य पाने की बात सोचने लगे। वफद के नाम से एक राष्ट्रीय दल का भी निर्माण हुआ। मिश्रियों को संतुष्ट करने के लिये एक विधान सभा की स्वीकृति दे दी गई किंतु इससे ब्रिटिश उद्देश्य पूरा नहीं हुआ और मिश्रियों का असन्तोष जारी रहा।

## ( ग ) दक्षिणी अफ्रीका के संयोग का इतिहास

**प्रारंभिक इतिहास**—दिशासूचक यन्त्र के आविष्कार हो जाने से समुद्र पर लम्बी यात्रा करने के लिये नाविकों को बहुत सुविधा हो गयी। १५वीं सदी में इस क्षेत्र में स्पेन तथा पुर्तगाल बहुत आगे थे। एक पुर्तगाल नाविक ने ही अफ्रीका के दक्षिण में उस अन्तरीप की खोज की जो आशा अन्तरीप के नाम से विख्यात है। इसी अन्तरीप से होते हुये १८६८ ई० में पुर्तगाल निवासी वास्कोडिगामा भारत के पश्चिमी तट पर पहुँचा था। इसके बाद तो अफ्रीका में विदेशियों का ताँता बँध गया किन्तु १६५२ ई० में सर्वप्रथम डचों ने ही अन्तरीप उपनिवेश (केपकालोनी) में यूरोपीय बस्ती बसायी। यहाँ की आबादी अभी कम थी और यह विशेष रूप से डच जहाजों के लिये स्टेशन के रूप में काम आता था। १७वीं सदी के अन्त में फ्रांस से भाग कर कुछ ह्युजिन (प्रोटेस्टेंट) भी यहाँ आये और बस गये परन्तु धीरे-धीरे ये डचों में ही घुल-मिल गये। १८वीं सदी के अन्त में जब फ्रांस ने हालैंड पर अधिकार कर लिया तो ग्रेट ब्रिटेन ने इस उपनिवेश पर अपना आधिपत्य जमा दिया लेकिन आमीन की सन्धि के द्वारा यह पुनः डचों के हाथ में चला गया परन्तु ४ ही वर्षों के बाद यह फिर अंग्रेजों के कब्जे में आ गया। १८१४ ई० में अंग्रेजों ने डचों को कुछ रकम देकर इसे अपने ही हाथ में स्थायी रूप से रख लिया।

**अंग्रेज और डच ( १८१५-१८३३ ई० )**—१८१५ ई० के बाद बहुत से अंग्रेज आकर केपकालोनी में बसने लगे। इस तरह इस उपनिवेश में डच तथा अंग्रेज दोनों ही पर्याप्त संख्या में पाये जाने लगे। प्रारम्भ में दोनों में कटुता का भाव नहीं था क्योंकि काले मूल निवासियों की संख्या बहुत अधिक थी और उनसे गोरों को भय था। साथ ही डच भाषा तथा कानून का व्यवहार होता था और डच किसान गुलामों से अपनी खेती कराते थे लेकिन डचो तथा अंग्रेजों का सम्बन्ध धीरे-धीरे कटु होने लगा। इसके कई कारण थे। १८२८ ई० से शासन में अंग्रेजों की प्रधानता होने लगी और डच भाषा की उपेक्षा कर अंग्रेजी भाषा का राज भाषा के रूप में व्यवहार होने लगा। उपनिवेश के स्वतन्त्र मूल निवासियों को नागरिकता के अधिकार प्रदान कर दिये गये और डच इसके पक्ष में नहीं थे। १८३३ ई० में दास-प्रथा को उठा दिया गया और इससे डचों की बहुत क्षति हुई क्योंकि उनकी आर्थिक व्यवस्था इसी पर आधारित थी।

डचों को बोअर कहा जाता था। वे धार्मिक प्रवृत्ति के थे और ईश्वर में उनका दृढ़ विश्वास था। वे बाइबल के प्राचीन सिद्धान्तों को ही मानते थे। उनमें आत्म विश्वास और स्वाधीनता के भी भाव भरे हुये थे किन्तु वे अंग्रेजों के समान प्रगतिशील नहीं थे और नये सुधारों को शंका भरी दृष्टि से देखते थे। वे आदिम निवासियों

को तुच्छ समझते थे और उनका मुख्य कर्त्तव्य था गोरी जातियों की सेवा करना लेकिन अंग्रेज उन्हें नीच नहीं मानते थे और पादरियों की रिपोर्ट के आधार पर वे यह भी समझते थे कि बोअर लोग उनके प्रति अनुचित व्यवहार करते हैं। आदिम निवासियों को बोअरों से रक्षा करने की आवश्यकता थी।

१८३३ ई० के बाद—१८३३ ई० में अन्तरीप उपनिवेश को ताज उपनिवेश (क्राउन कालोनी) के रूप में घोषित किया गया। एक गवर्नर को शासन का प्रधान बनाया गया और उसकी मदद के लिये दो कौंसिलों की व्यवस्था हुई लेकिन अभी प्रजातन्त्र राज्य कायम नहीं हुआ। १८३४ ई० में काफिरों का हमला हुआ लेकिन बोअरों को अंग्रेजों से पूरी सहायता नहीं मिली अत बोअर और भी अधिक असन्तुष्ट हो गये और १८३६ ई० में वे हजारों की संख्या में केपकालोनी छोड़कर बाहर जाने लगे। इस घटना को देश परित्याग या ट्रेक कहते हैं। उन्होंने ओरेंज फ्री स्टेट तथा ट्रान्सवाल नामक दो राज्यों को कायम किया। पहले की राजधानी ब्लोमफोन्टेन और दूसरे की प्रिटोरिया थी। कुछ बोअर नेटाल में जा बसे किन्तु अंग्रेजों से तंग आकर उनमें से भी बहुत लोग उपर्युक्त दोनों राज्यों में ही चले गये। १८५२ ई० में सान्ड नदी के कन्वेंशन द्वारा ट्रान्सवाल की और १८५४ ई० में ब्लोमफोन्टेन के कन्वेंशन द्वारा ओरेंज फ्री स्टेट की स्वतन्त्रता अंग्रेजों ने मान ली।

केपकालोनी और नेटाल में अंग्रेजों की ही प्रधानता रही। १६वीं सदी के उत्तरार्द्ध में इन दोनों उपनिवेशों में पहले प्रतिनिधि संस्थाओं की स्थापना की गई और कुछ समय बाद उत्तरदायी शासन कायम हुआ। कनाडा के ही आधार पर इन उपनिवेशों में भी वैधानिक विकास हुआ।

किम्बरले पर ब्रिटिश अधिकार—ओरेंज फ्री स्टेट और ट्रान्सवाल के बोअर अपने को स्वाधीन समझ कर खुशियाली मना रहे थे लेकिन वे चैन की बंशी बहुत दिनों तक नहीं बजा सके। १८६८ ई० में अंग्रेजों ने सीमान्त प्रदेश बसुटोलैंड को संरक्षित राज्य घोषित कर दिया। किम्बरले के आसपास हीरे की खान मिली और बहुत से यूरोपवासी इधर आने लगे। बोअरों की आँखें किम्बरले पर लगी हुई थीं किन्तु अंग्रेजों ने १८७१ ई० में इसे भी अपने राज्य में हड़प लिया। इससे बोअरों के रोष में वृद्धि हुई।

ट्रान्सवाल पर ब्रिटिश अधिकार—बोअर प्रजातन्त्रों को मूल निवासी जुलुओं से हमले का भय था। इससे अंग्रेजी उपनिवेशों को भी खतरा पैदा होता। अत अंग्रेजों ने ट्रान्सवाल पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। इसके कारण अंग्रेजों को जुलुओं और बोअरों—दोनों से ही युद्ध में फँसना पड़ा। १८७६ ई० में जुलुओं से युद्ध हुआ। पहले तो अंग्रेजों की हार हो गयी किन्तु अन्त भला तो सब भला—

अन्त में विजय अंग्रेजों की ही हुई। जुलू नेता पकड़ा गया और जुलूलैंड अंग्रेजी राज्य में मिला लिया गया।

**बोअर युद्ध**—ट्रान्सवाल को अधिकृत करने से बोअर भी नाराज थे। अब तो जुलुओं के हमले का भी भय नहीं रहा। ब्रिटिश अफसर बोअरों के साथ अनुचित व्यवहार करते थे। अतः १८८१ ई० में बोअरों ने विद्रोह कर दिया। अंग्रेजों और बोअरों में युद्ध छिड़ गया। मजुबा पहाड़ी पर अंग्रेजों की करारी हार हुई। अब वे बोअरों की स्वाधीनता मान लेने के लिये बाध्य हुये और ३ वर्ष के बाद उन्होंने ट्रान्सवाल को स्वतन्त्र कर दिया।

**पाल क्रुगर और सेसिल रोड्स**—इसी समय दक्षिणी अफ्रीका के रंग-मंच पर महान नेताओं का प्रादुर्भाव हुआ—पाल क्रुगर और सेसिल रोड्स।

पाल क्रुगर का जन्म १८२५ ई० में केप कालोनी में हुआ था। वह बड़ा ही साहसी और प्रतिभाशाली व्यक्ति था। वह बोअर था और १० वर्ष की उम्र में उसे भी अपने माता-पिता के साथ देश परित्याग करना पड़ा था। १४ वर्ष की उम्र में उसने जुलू राजा के खिलाफ एक युद्ध में भाग लिया था। शिक्षा के क्षेत्र में उसे बहुत पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हो सका लेकिन बाइबल के अध्ययन में उसे विशेष अभिरुचि थी। १८८१ ई० में बोअरों ने उसे अपना नायक बनाया और दो वर्ष के बाद वह ट्रान्सवाल प्रजातन्त्र का राष्ट्रपति निर्वाचित हुआ। वह कई वर्षों तक इस पद को सुशोभित करता रहा। १८९९ ई० में उसने इंगलैंड के विरुद्ध युद्ध की भी घोषणा की और यूरोप के कुछ राज्यों से भी सहायता पाने के लिये प्रयत्न किया। १९०२ ई० तक यह आंग्ल-बोअर युद्ध चलता रहा और १९०४ ई० में स्वीटजरलैंड में क्रुगर का देहान्त हो गया।

सेसिल रोड्स अंग्रेज था। एक पादरी के कुल में उसका जन्म हुआ था। लड़कपन से ही वह दक्षिणी अफ्रीका का भ्रमण करता था। उसने आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में शिक्षा भी प्राप्त की। अफ्रीका में वह किम्बरले में हीरे की खानों में काम करने लगा और उसके धन में वृद्धि होने लगी। वह धनी था तो दिल का भी उदार था। १८९० ई० में वह केप कालोनी का प्रधान मंत्री निर्वाचित हुआ और ६ वर्षों तक अपने इस पद पर कायम रहा। वह ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार चाहता था। उसी की प्रेरणा से बेचुआनालैंड में ब्रिटिश संरक्षण कायम हुआ, जुलूलैंड अंग्रेजी राज्य में मिलाया गया और ब्रिटिश दक्षिणी अफ्रीकी कम्पनी की देख-रेख में रोडेशिया पर ब्रिटिश अधिकार कायम हुआ।

**ट्रान्सवाल में स्वर्ण क्षेत्र**—१८८१ ई० में ट्रान्सवाल में स्वर्ण क्षेत्र का पता

लगा और यूरोपियनों खासकर अंग्रेजों का तांता बँध गया। बोअर उन्हें विदेशी या उटलैंडर (आउटलैंडर) कहते थे। विदेशियों की संख्या बढ़ने लगी और कहीं-कहीं तो वे बोअरों से भी अधिक होने लगे। जोहान्सबर्ग नगर का उदय हुआ। बोअरों की सुरक्षा खतरे में थी। अत क्रूगर ने विदेशियों पर प्रतिबन्ध लगाना शुरू किया और उन्हें सभी राजनीतिक अधिकारों से वंचित रखा। इससे सभी उटलैंडर रुष्ट हो गये। इसके अलावे क्रूगर तथा रोड्स के विचारों में भी अन्तर था। रोड्स क्रूगर को ब्रिटिश साम्राज्य के विस्तार में बाधक समझता था। अत क्रूगर सरकार को नष्ट करने के लिये १८९५ ई० में जेम्सन ने ट्रान्सवाल पर हमला कर दिया लेकिन वह बुरी तरह असफल रहा।

पुन आंग्ल-बोअर युद्ध— डा० जेम्सन के हमले के बुरे परिणाम हुये। इंगलैंड तथा जर्मनी में दुश्मनी बढ़ी क्योंकि जर्मन कैसर ने क्रूगर की सफलता पर उसे बधाई का तार भेजा। दक्षिणी अफ्रीका में भी अंगरेजों तथा बोअरों में कटुता बढ़ गयी। १८९९ ई० में क्रूगर ने अंगरेजों को एक चेतावनी दी। इसमें यह कहा गया कि ट्रान्सवाल तथा ऑरेंज फ्री स्टेट में अंगरेजों का आधिपत्य नहीं रह सकता और वे अपनी सेनाओं को इन प्रदेशों की सीमाओं से शीघ्र हटा लें। अंगरेजों ने चेतावनी की परवाह नहीं की और युद्ध शुरू हो गया।

बोअरों का स्थिति अच्छी थी। वे युद्ध के लिये काफी तैयारी कर चुके थे और घात लड़ाई भिड़ाई के लिये निपुण थे। वे दक्षिणी अफ्रीका की भौगोलिक स्थिति से भी भली भाँति परिचित थे। उनमें बहुत से कुशल घुड़सवार थे और वे गोरिल्ला युद्ध में भी निपुण थे। उनका नेता बोथा, डीवेट तथा स्टीन भी बहुत ही योग्य व्यक्ति थे।

अत बोअरों ने केपकालोनी तथा नेटाल पर आक्रमण किया और प्रारंभ में उन्हें अद्भुत सफलता भी मिली। किम्बरले, लेडीस्मिथ आदि स्थानों पर घेरा डाला गया। अंगरेजों ने भी वीरतापूर्वक उनका सामना किया। लार्ड राबर्ट्स और लार्ड किचनर के नेतृत्व में सेनायें भेजी गईं। भारतीय सेना ने भी भाग लिया। १९०२ ई० तक युद्ध चलता रहा और अन्त में विजयश्री अंगरेजों को ही प्राप्त हुई। अब दोनों में संधि हो गयी और दोनों बोअर प्रजातंत्र अंगरेजी साम्राज्य में सम्मिलित कर लिये गये परन्तु डच भाषा को स्वीकृत किया गया और आगे अनुकूल परिस्थिति में बोअरों को स्वायत्त शासन भी देने का आश्वासन दिया गया। मूल निवासियों के मताधिकार को प्रत्येक राज्य की मर्जी पर छोड़ दिया गया।

बोअरों की हार के कारण—कई सुविधाओं के होते हुये भी बोअरों की हार हो

गयी। इसके कई कारण थे। (क) पहले एक बार बोअर लोग सफल हो चुके थे (१८८१ ई० में) अतः उनमें अहंकार की प्रवृत्ति आ गयी थी। इससे उन्मत्त हो वे अंगरेजों की शक्ति का ठीक से अनुमान नहीं लगा सके और उसकी उपेक्षा की। (ख) बोअरों को केप कालोनी तथा नेटाल के डचों से पूरी सहायता नहीं मिली। (ग) अन्य यूरोपीय राष्ट्रों ने भी बोअरों की मदद नहीं की। (घ) अंगरेज मजुबा हिल की पराजय का बदला लेने के लिये चिन्तित थे और उनमें उत्साह तथा बलिदान की भावना खूब भरी हुई थी। (ङ) असफलता सफलता का सोपान है—इसे अंगरेजों ने चरितार्थ किया। एक बार ठोकर लग जाने से वे अधिक सचेत थे और बड़ी ईमानदारी से युद्ध में भाग लिया। (च) अंगरेजों को भारत, कनाडा और आस्ट्रेलिया से भी सहायता मिली और उनके सेनापति भी बड़े ही योग्य तथा अनुभवी थे।

दक्षिणी अफ्रीका का संयोग—बीसवीं सदी के प्रारंभ में अब सभी राजनीतिज्ञों की यही नीति थी कि जातीय कटुता का अन्त हो। अंग्रेजों की नीति में महान परिवर्तन हुआ। अब वे उदारवादी बन गये। उन्होंने बोअरों को बसाने में लाखों रुपये खर्च किये और उन्हें कर्ज की सुविधा दे दी गई। लार्ड मिलनर पर ३ वर्ष तक पुनर्निर्माण के निरीक्षण का कार्य भार सौंपा गया। उसने बहुत ही हितकारी कार्य किया और उसके उत्तराधिकारी लार्ड सेलबर्न ने भी उसकी नीति जारी रखी। इस समय व्यापार में मन्दी आ गयी थी और खानों में काम करने के लिये मजदूरों की भी बड़ी कमी हो गयी थी। इस कमी को पूरा करने के लिये ब्रिटिश सरकार ने चीन से कुलियों को मँगाया। उनके साथ एक समझौता किया जाता था और कार्य करने की अवधि निश्चित कर दी जाती थी। युद्ध के पाँच वर्ष के ही अन्दर ब्रिटिश सरकार ने १९०६ ई० में ट्रान्सवाल को और १९०७ ई० में औरेंज फ्री स्टेट को उत्तरदायी शासन दे दिया। इस बीच दक्षिणी अफ्रीका में एकता का तीव्र आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। अभी तक आर्थिक स्थिति में पर्याप्त सुधार नहीं हुआ था। बोअर राज्य प्रधानतः स्थल राज्य थे जिनका समुद्र से सम्बन्ध नहीं था। वे व्यापार के लिये केप कलोनी या नेटाल पर ही निर्भर थे। प्रत्येक प्रदेश में अलग-अलग शासन सम्बन्धी व्यय भी बहुत था। अतः एकता या संयोग के सम्बन्ध में विचार विमर्श होने लगा। १९०८ ई० में एक राष्ट्रीय समिति की बैठक हुई और इसने संयोग के पक्ष में निर्णय किया। १९०९ ई० में ब्रिटिश पार्लियामेंट ने दक्षिणी अफ्रीकी नियम (साउथ अफ्रीकन ऐक्ट) पास कर इसे स्वीकृति दे दी। ट्रांसवाल, औरेंज फ्री स्टेट, केपकालोनी और नेटाल एक सरकार के अधीन संयुक्त हो गये।

दक्षिणी अफ्रीका ने कनाडा या आस्ट्रेलिया का अनुसरण नहीं किया। वहाँ

संघ शासन की स्थापना नहीं हुई बल्कि एक सुदृढ़ केन्द्रीय सरकार स्थापित हुई। यूनियन सरकार का प्रधान गवर्नर जेनरल था जो ब्रिटिश सम्राट द्वारा निर्वाचित होता था। वह उत्तरदायी मन्त्रियों की सहायता से शासन करता था। दो भवनों में स्थित पार्लियामेंट की व्यवस्था थी। १६१० ई० में ड्यूक आफ कनाट ने नयी पार्लियामेंट का उद्घाटन किया। लार्ड ग्लैडस्टन पहला गवर्नर जेनरल और जेनरल बोथा पहला प्रधान मन्त्री नियुक्त हुआ।

# अध्याय ५३

## आयरलैंड ( १८१५—१९१४ ई० )

भूमिका—१९वीं और प्रारंभिक २०वीं सदी में आयरलैंड ने ब्रिटिश दलीय राजनीति में बहुत बड़ा भाग लिया है। इस युग में आयरलैंड ही ब्रिटिश राजनीति का केन्द्र बिन्दु था। लार्ड सैलिसबरी के शब्दों में कभी-कभी तो राजनीति का मतलब ही था केवल आयरलैंड और कुछ नहीं। १९वीं सदी में आयरलैंड ने इंगलैंड से निरंतर बदला ही चुकाया। जार्ज पील नामक अंग्रेज का कहना था कि १८वीं सदी में हम लोगों ने उसके उद्योग-धन्धों को नष्ट किया और उसने १९वीं सदी में हम लोगों के मंत्रिमंडल को ही तोड़ दिया। वास्तव में आयरी समस्या के कारण ब्रिटिश राजनीतिज्ञों के सिर में दर्द हो जाया करता था और वे इसे हल कर वहाँ शान्ति-व्यवस्था स्थापित करने में ही व्यस्त थे।

हम देख चुके हैं कि १८०० ई० में संयोग से आयरी समस्याओं का निराकरण नहीं हुआ। उनकी अनेक शिकायतें अभी भी मौजूद रहीं और बहुत अंशों में उनकी शिकायतें उचित भी थीं। राजनीतिक दृष्टि से कैथोलिकों का उद्धार नहीं हुआ और उन पर अभी भी कई प्रतिबन्ध लगे रहे। आर्थिक दृष्टि से आयरलैंड में विदेशी जमींदारों की प्रधानता थी और किसानों को मनमाने ढंग से जमीन से हटाया जा सकता था। धार्मिक दृष्टि से बहुमत में रहने पर भी कैथोलिक धर्म राज-धर्म नहीं था और कैथोलिकों को प्रोटेस्टेंट चर्च के लिये दशांश देना पड़ता था। सांस्कृतिक दृष्टि से शिक्षा-व्यवस्था में भी कैथोलिकों का हाथ नहीं था।

ओकौनेल का उदय—१९वीं सदी के पूर्वार्द्ध में आयरियों को एक सुयोग्य नेता मिल गया। उसका नाम था डेनियल ओकौनेल। वह एक कैथोलिक वकील था जिसमें कई गुण थे। वह मिलनसार एवं उदार व्यक्ति था। वह बहुत बड़ा वक्ता था जो अपने भाषण से श्रोताओं को मुग्ध कर किसी भी दिशा में प्रभावित कर लेता था। वह संयोग का विरोधी था और इसे नष्ट करना चाहता था किन्तु वह हिंसात्मक तरीकों का नहीं बल्कि वैधानिक तरीकों का ही प्रबल समर्थक था। ताज के प्रति उसकी सहानुभूति थी। ३० वर्षों तक वह आयरियों का सफल नेतृत्व करता रहा।

ओकौनेल ने मतदाताओं से अनुरोध किया कि वे उन्हीं उम्मीदवारों को अपना मत दें जो कैथोलिकों का उद्धार करने के लिए प्रतिज्ञा करें। १८२३ ई० में उसने आयरी पादरियों के सहयोग से कैथोलिक संघ (एसोसियेशन) नामक एक संस्था

स्थापित की। सर्वत्र इसकी शाखायें खुलने लगीं। इसके खर्चे के लिये नियमित रूप से साप्ताहिक चन्दा लिया जाने लगा जिसे कैथोलिक-कर कहा जाता था। इसकी विरोधी गति विधि को देख कर पार्लियामेंट ने ३ वर्ष के लिये इस पर प्रतिबन्ध लगा दिया परन्तु ओकौनेल इससे जरा भी विचलित नहीं हुआ और कार्य करता रहा। १८२८ ई० में वह काउन्टी क्लेयर नामक क्षेत्र से पार्लियामेंटरी निर्वाचन में फिजिराल्ड नामक एक प्रोटेस्टेंट जमींदार के विरुद्ध उम्मीदवार खड़ा हुआ। सभी कैथोलिकों ने उसका पक्ष लिया और उसके विरोधी को चुनाव लड़ने का साहस ही नहीं हुआ। अन्त में वह निर्विरोध निर्वाचित घोषित हुआ किन्तु कैथोलिक होने के कारण वह पार्लियामेंट में नहीं बैठ सकता था। यह तो सरासर अन्याय था। ३ वर्ष बीत जाने पर कैथोलिक एसोसियेशन भी क्रियाशील हो उठा। अब भयंकर विद्रोह हो जाने की आशंका थी। अतः परिस्थिति से बाध्य हो वेलिंगटन की टोरी सरकार ने कैथोलिक उद्धार नियम पास कर दिया। अब कैथोलिकों को पार्लियामेंट में बैठने की अनुमति मिली। ओकौनेल मुक्तिदाता ( लिबरेटर ) की उपाधि से विभूषित किया गया लेकिन अभी भी कैथोलिकों पर कुछ प्रतिबन्ध मौजूद ही रहे। उन्हें शपथ लेनी पड़ती थी कि वे राज्य और चर्च को नुकसान नहीं पहुँचायेंगे। लार्ड चान्सलर, लार्ड लेफ्टिनेंट और रीजेंट के पदों पर वे नियुक्त नहीं हो सकते थे। आयरी मतदाताओं की सम्पत्ति सम्बन्धी योग्यता भी बढ़ा दी गयी। अतः ओकौनेल अभी भी संयोग का विरोधी बना रहा।

ग्रे का मन्त्रित्व—ओकौनेल ने संयोग का विरोध तो किया ही, उसने दशांश ( टाइथ ) का भी विरोध किया। ह्विग सरकार ने आयरलैंड के प्रति उदारवादी नीति दिखलायी। शिक्षा के क्षेत्र में सुधार हुआ। एक आयरी बोर्ड की स्थापना हुई और इसे सरकार की ओर से आर्थिक सहायता भी दी जाने लगी। प्रोटेस्टेंटों और कैथोलिकों के लिये पृथक धार्मिक शिक्षा की भी व्यवस्था हुई।

लेकिन १८३१ ई० में ही दशांश युद्ध भी शुरू हो गया। दशांश देने वाले और लेने वाले—दोनों ही पर हमला होने लगा और वे तलवार के घाट उतारे जाने लगे। सरकार ने भी दमन चक्र चलाया परन्तु उसने सुधार का कार्य भी जारी रखा। ग्रे दशांश को कर के रूप में जमींदारों से वसूल करना चाहता था। साथ ही वह ऐंग्लिकन चर्च की सम्पत्ति की उचित व्यवस्था कर इसके कुछ भाग को शिक्षा जैसे सार्वजनिक स्वार्थ के मद पर खर्च करना चाहता था। ग्रे के इन सुधार सम्बन्धी प्रस्तावों पर लार्ड सभा तथा मंत्रिमंडल के कुछ सदस्यों से मतभेद हो गया। कुछ मंत्रियों ने पद त्याग भी कर दिया। इस पर ग्रे ने भी १८३४ ई० में त्याग पत्र दे दिया।

मेलबोर्न का मन्त्रित्व—ग्रे के बाद मेलबोर्न प्रधान मन्त्री हुआ। उसने १८३५

ई० में ओकौनेल से एक समझौता किया जिसे लीचफोल्ड का समझौता कहते हैं। ओकौनेल ने आन्दोलन स्थगित कर दिया और मेलबोर्न ने कुछ रिआयतें स्वीकृत कर दीं। १८३६ ई० में टाइथ कम्युटेशन ऐक्ट पास हुआ। इसके द्वारा कैथोलिकों को दशांश से छुटकारा मिल गया किन्तु इसे लगान के रूप में प्रोटेस्टेंट जमींदारों को देना पड़ा। एक का बोझ दूसरे के मत्थे पर चला गया। आयरलैंड के लिये एक दरिद्र विधान और एक म्युनिसिपल नियम भी पास हुआ।

**पिल का मन्त्रित्व**—लेकिन इन सुधारों से भी आयरी समस्याओं का पूर्ण रूपेण समाधान नहीं हुआ। अतः ओकौनेल के नेतृत्व में पुनः आन्दोलन प्रारंभ हो गया। इसी काल में आयरलैंड में एक युवक आयरी दल का भी प्रादुर्भाव हुआ। यह उग्रवादी दल था जो हिंसात्मक ढंग से भी संयोग का खात्मा करना चाहता था। इस तरह एक तीव्र आन्दोलन का सूत्रपात हुआ। इस समय पील का मंत्रिमंडल ( १८४१-४६ ) था। पील ने दमन नीति लागू की। ओकौनेल ने एक विशाल सभा का आयोजन किया था किन्तु पील ने उसे रोक दिया। ओकौनेल ने हठ नहीं किया और सरकार की आज्ञा का पालन किया किन्तु इससे उसको छुटकारा नहीं मिला। राजद्रोहात्मक भाषणों का दोषारोपण कर उसे १८४३ ई० में जेल दे दिया गया। कुछ समय के बाद वह जेल से मुक्त भी कर दिया गया किन्तु तब तक तो उसकी शक्ति का बहुत कुछ ह्रास हो चुका था। १८४४ ई० में उसका देहावसान हो गया परन्तु उसके मरने से आन्दोलन शिथिल नहीं हुआ। युवक दल ने आन्दोलन को जीवित रखा और पील भी उनका दमन करता रहा।

किन्तु पील केवल दमन का ही समर्थक नहीं था। सुधार का भी पक्षपाती था। उसे दृढ़ विश्वास था कि कोरे दमन से ही आयरियों की शिकायतों का अन्त नहीं हो सकता अतः उसने आयरियों को सुधारों के द्वारा भी सन्तुष्ट करना चाहा। उसने कैथोलिक मेनुथ कालेज के लिये २६ हजार पौंड रकम की सहायता की स्वीकृति दे दी। क्वीन्स विश्वविद्यालय के अधीन उसने तीन स्थानों में तीन कालेजों की स्थापना की। इन कालेजों में धर्म निरपेक्ष शिक्षा की व्यवस्था की गई परन्तु पील की दोहरी नीति से न तो कैथोलिक सन्तुष्ट हुये और न प्रोटेस्टेंट। दोनों ही इन कालेजों को धर्म-हीन मानते थे और वे पील की कटु आलोचना करने लगे।

इसी समय आयरलैंड में एक भीषण अकाल पड़ा। १८४५ ई० में आयरलैंड में आलू की मुख्य फसल बर्बाद हो गई। हजारों की संख्या में आयरी मृत्यु के मुख में जाने लगे—बहुत अपनी जन्मभूमि को छोड़ने लगे। इसी में कुछ स्वार्थी लोग अन्न का निर्यात भी करने लगे थे और कॉर्नलॉ के कारण बाहर से अन्न भी इंगलैंड नहीं जा सकता था। भयंकर क्रांति की संभावना देखकर पील ने अन्न-कानून को १८४६

ई० में रद्द कर दिया। इस पर पुनः टोरी पार्टी में विभाजन हो गया और उसे भी पद-त्याग करना पड़ा।

आयरी नीति (१८४६-६८ ई०)—अन्न कानून के रद्द होने से आयरियों की तकलीफें तत्काल ही दूर नहीं हो गयीं। अकाल और इसके बुरे परिणाम जारी रहे—मौत, मुसीबतें तथा देशान्तर भ्रमण। बहुत से आयरी तो भाग कर अमेरिका चले गये और वहाँ इंगलैंड के विरुद्ध कार्रवाई करने का बात सोचने लगे। इसी में कुछ जमींदारों का भी किसानों के प्रति बुरा व्यवहार हो रहा था। रसल सरकार ने सहायतार्थ कुछ प्रयत्न किया। साधारण व्यापारियों को अन्न की पूर्ति का भार सौंपा गया किन्तु वे भी आयरियों की तकलीफ दूर करने की अपेक्षा अपने नफा का ही विशेष ख्याल रखते थे। अतः आयरियों की दुख-दर्द भरी कहानी का अन्त नहीं हुआ। कितने आयरियों के हृदय में इंगलैंड के प्रति घृणा एवं रोष के भाव उत्पन्न होने लगे और वे स्वतंत्रता का स्वप्न देखने लगे।

सन् १८४८ का साल यूरोप के इतिहास में विप्लव का साल है। कई स्थानों में निरंकुश शासन के विरुद्ध विद्रोह हुये—क्रान्ति के नारे लगाये जाने लगे। आयरियों की नसों में भी खून था और उन्हें भी स्वतंत्रता प्यारी थी। वे भी जगे—उठ खड़े हुये। युवक आयरी दल ने १८४८ ई० में ही स्मिथ ओब्रायन के नेतृत्व में सशस्त्र विद्रोह कर दिया इसका उद्देश्य था कि संयोग का अन्त कर आयरी जनतन्त्र की स्थापना की जाय किन्तु ब्रायन पकड़ा गया और विद्रोह दब गया। १० वर्ष के बाद उग्र-वादियों ने पुनः एक संघ कायम किया जो फेनियन सोसायटी कहलाने लगा। आयर-लैंड में स्वतन्त्र प्रजातन्त्र राज्य कायम करना इसका एकमात्र उद्देश्य था। इसकी स्थापना में अमेरिकी आयरियों का ही विशेष हाथ था। इनमें से कितनों ने अमेरिकी गृह-युद्ध में भी भाग लिया था। उनसे प्रेरित होकर जहाँ तहाँ दंगा-फसाद होने लगे। एक बार संयुक्त राज्य (यू० एस० ए०) की तरफ से कनाडा पर हमला करने का भी प्रयत्न हुआ था किन्तु फेनियन असफल ही रहे, फिर भी बिलकुल ही नहीं। उनके विद्रोह से कुछ लाभ भी हुये। पहले तो आयरी प्रश्न प्रमुख बन गया और दूसरे, ग्लैडस्टन के नेतृत्व में उदारवादियों ने आयरलैंड के प्रति उदार नीति को अपनाया।

ग्लैडस्टन और आयरलैंड—ग्लैडस्टन के समय में आयरियों की तीन प्रमुख समस्यायें ज्यों की त्यों बनी रही थीं। पहले तो भूमि सम्बन्धी विकट समस्या थी। अधिकांश जमीन विदेशी जमींदारों के आधिपत्य में थी। उन्हें अपनी जमीन की उर्वरा शक्ति बढ़ाने की कोई चिन्ता नहीं थी और इसका भार किसानों के ही ऊपर था परन्तु किसी जमीन पर किसानों की स्थिति भी सुरक्षित एवं स्थायी नहीं थी। वे कभी

भी अपने खेत से बेदखल किये जा सकते थे या उस खेत के लगान में वृद्धि की जा सकती थी।

खेती की उर्वरा शक्ति बढ़ाने, मेंड़ बनाने, टट्टी लगाने आदि सुधारों के लिये किसानों को कहाँ तक पुरस्कृत कर प्रोत्साहित किया जाता तो उल्टे जमीन से अचानक निकाल कर या लगान बढ़ाकर उन्हें दण्डित किया जाता था। ऐसी स्थिति में कोई किसान जमीन में दिल से सुधार ही करना नहीं चाहता था। दूसरे धर्म सम्बन्धी समस्या थी। आयरी जनसंख्या में कैथोलिकों की अधिकता थी फिर भी वहाँ का स्थापित चर्च प्रोटेस्टेंट चर्च ही था। इस तरह धार्मिक क्षेत्र में अल्पसंख्यकों का ही बोलबाला था। इतना ही नहीं, कैथोलिकों को अपने चर्च के अलावे इस चर्च के खर्च में भी हाथ बँटाना पड़ता था। यह व्यवस्था कैथोलिकों के लिए अन्यायपूर्ण तथा अपमानजनक थी। तीसरी समस्या संस्कृति सम्बन्धी थी। शिक्षा के क्षेत्र में भी कैथोलिकों की प्रधानता नहीं थी। कोई ऐसा विश्वविद्यालय नहीं था जहाँ कि कैथोलिक अपने ढंग से शिक्षा का प्रबन्ध कर सकते थे।

ग्लैडस्टन एक समझदार और व्यावहारिक प्रधान मंत्री था। वह जानता था कि बल एवं दमन के ही द्वारा आयरियों को शान्त नहीं किया जा सकता बल्कि उनकी समस्याओं का समुचित निराकरण होना चाहिये। आयरियों को सन्तुष्ट एवं शान्त करने के लिये उसने अपने जीवन का एक प्रधान लक्ष्य ही बना रखा और इसके लिये उसने भरपूर प्रयत्न भी किया। उसने अनेक सुधारों को कार्यान्वित किया।

ग्लैडस्टन ने १८६९ ई० में आयरी चर्च ( डिसस्टेब्लिशमेंट ऐक्ट ) उन्मूलन नियम पास किया और इसके लागू होते ही आयरी प्रोटेस्टेंट चर्च का उन्मूलन हो गया। अब राज्य से इसका कोई सम्बन्ध नहीं रहा। इस चर्च की सम्पत्ति का कुछ भाग इसके ही हाथ में रहा और बाकी सम्पत्ति को सार्वजनिक हितों के काम में खर्च किया जाने लगा।

१८७० ई० में प्रथम भूमि विधान पास हुआ। इसके द्वारा भूमि पर जमींदारों के एकाधिकार का खात्मा हो गया। अब एक तरह से जमीन पर मालिक तथा किसान दोनों का अधिकार स्वीकार किया गया। यह तय हुआ कि यदि किसान लगान देता रहा है तो उसे भूमि से वंचित नहीं किया जा सकता। यदि लगान के अलावे किसी दूसरे कारण से किसान को जमीन से निकालने की नौबत आ गयी और यदि किसान ने उस जमीन में काफी प्रगति की है तो उसे क्षति पूर्ति देना आवश्यक कर दिया गया। यदि किसान ही उस खेत को खरीद लेना चाहे तो इसके लिये भी उसे कर्ज आदि की सुविधा दी गई। इससे किसानों को कुछ फायदा तो अवश्य हुआ किन्तु इस विधान में भयंकर त्रुटियाँ भी रह गयीं। अतः किसानों को वास्तविक लाभ नहीं दीख

पड़ा। पहले तो अधिक लगान की रकम घटाने के लिये कुछ नहीं हुआ। दूसरे, स्वेच्छानुसार लगान बढ़ाने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगा। तीसरे, दुर्भिक्ष आदि के समय लगान देने में लाचार होने पर सहायता के लिये कोई उपाय नहीं किया गया। चौथे, मालिक क्षति पूर्ति कर किसी किसान को जमीन से बेदखल करने के लिये स्वतन्त्र हो गया।

कैथोलिकों की शिक्षा सम्बन्धी बुराइयों को दूर करने के लिये ग्लैडस्टन ने १८७३ ई० में एक युनिवर्सिटी बिल उपस्थित किया। इसके द्वारा डब्लिन विश्वविद्यालय में कैथोलिकों की दृष्टि से सुधार लाने का प्रस्ताव किया गया किन्तु यह बिल ही पास नहीं हो सका।

इस बीच आयर्लैंड में उग्रवादी फेनियनों का प्रभाव घट गया था। नरम पंथियों ने इसाक बट के नेतृत्व में १८७० ई० में एक गृह शासन संघ (होम गवर्नमेंट एसोशियेशन) कायम कर लिया था। दूसरे साल माइकेल डेविड के नेतृत्व में एक भूमि-संघ (लैंड लीग) का भी निर्माण हुआ। इसका उद्देश्य था—आयरी जमीनों पर आयरी किसानों का आधिपत्य स्थापित करना। १८७३ ई० में होम गवर्नमेंट एसोशियेशन का नाम भी होमरूल लीग हो गया। इस संघ का उद्देश्य था आयरलैंड में उत्तरदायी शासन स्थापित करना। दूसरे शब्दों में आयरलैंड में आयरी पार्लियामेंट स्थापित कर इसी के प्रति वहाँ की कार्यकारिणी को उत्तरदायी बनाना इस संघ का उद्देश्य था। दोनों ही लोग क्रियाशील होने लगे। अत १८७४ ई० में ब्रिटिश सरकार ने पुन दमनकारी नीति अपनायी।

पार्नेल का उदय—इसी समय आयरी रंग मंच पर पार्नेल नामक एक नये नेता का आगमन हुआ। वह एक आयरी प्रोटेस्टेंट जमींदार का लड़का था और उसकी माता अमेरिकी थी। उसकी इच्छा शक्ति बड़ी ही दृढ़ थी। उसकी शिक्षा दीक्षा इङ्गलैंड में ही हुई और वह आयरी राजनीति में खूब दिलचस्पी लेने लगा। १८७५ ई० में वह पार्लियामेंट का सदस्य बना और ४ वर्ष के बाद लैंड लीग में भी सम्मिलित हो गया। वह इंगलैंड से सम्बन्ध रखते हुए भी आयरलैंड के लिये स्वराज्य (होमरूल) चाहता था। उसके पथ प्रदर्शन में आयरियों ने देश के भीतर और बाहर उत्पात मचाना शुरू किया। उन्होंने इंगलैंड के साथ तंग करने की नीति अपनायी। पार्लियामेंट में पार्नेल ने आयरी सदस्यों को मिला कर एक राष्ट्रीय पार्टी का संगठन किया। इस पार्टी ने पार्लियामेंट में अड़ंगा डालने की नीति अख्तियार की। बात बात में तर्क होने लगा। प्रत्येक विषय पर वाद-विवाद उठाया जाने लगा। पार्लियामेंट में जिस प्रश्न का आयरलैंड से सम्बन्ध नहीं था उस प्रश्न की ओर आयरी सदस्य बिलकुल उदासीन थे और कोई भी काम सुचारू रूप से होने देना नहीं चाहते थे। उनके अड़-

चन की नीति से सरकार परेशान होने लगी। पार्लियामेंट के बाहर भी कई आयरी नेता आवेशपूर्ण भाषण देते थे और लोकमत उत्तेजित करते थे। जो लोग किसानों के प्रतिकूल जमींदारों का साथ देते थे उनके साथ पार्नेल के दल वालों ने असहयोग करना शुरू कर दिया। यदि कोई बेदखल किये गये किसान की जमीन को जोत लेता था तो उसको हर तरह से बहिष्कार किया जाने लगा। उसके खेत में किसी को काम करने से मना किया जाने लगा। पार्नेल ने खर्च के लिये अमेरिका से काफी धन भी इकट्ठा कर रखा था। इस तरह डिसरैली के मन्त्रित्व काल में अनेक उपद्रव होते रहे।

१८८० ई० में ग्लैडस्टन का दूसरा मंत्रिमंडल बना। उसने पुनः सुधार एवं दमन दोनों प्रकार की नीति लागू की। १८८१ ई० में एक दमन कानून पास कर उपद्रवियों को गिरफ्तार करने और जेल देने के लिए स्थानीय अधिकारियों को अधिकार दिया गया। उसी वर्ष ग्लैडस्टन ने दूसरा भूमि-विधान भी पास किया। इसके द्वारा भूमि पर किसानों के अधिकार की अवधि निश्चित कर दी गयी। उन्हें अपनी जमीन का क्रय-विक्रय करने का अधिकार मिला और उचित लगान की व्यवस्था कर दी गयी। उचित लगान निर्धारित करने के लिए एक लैंड कोर्ट भी स्थापित कर दिया गया। एक बार निश्चित किये गये लगान में १५ वर्षों तक कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता था। जो किसान भूमि खरीदना चाहें उन्हें कर्ज के रूप में सहायता देने के लिये कुछ लैंड कमिश्नर भी नियुक्त हुये लेकिन आयरी अभी सन्तुष्ट नहीं हो सके और उनके उपद्रव जारी रहे। सरकार की दमन नीति भी जारी ही रही। पार्नेल और उसके कई मित्र गिरफ्तार हुये और जेल में रख दिये गये। लैंड लीग को भी भंग कर दिया गया परन्तु दुश्मन से आन्दोलन दबा नहीं। अब तो लगान-बन्दी आन्दोलन भी शुरू हो गया। पार्नेल ने लोगों को लगान देने से ही नहीं रोका, बहुत किसानों ने स्वयं लगान नहीं दिया और मार-डरा कर दूसरों को भी नहीं देने दिया। लैंड लीग के भङ्ग होने पर अन्य कई गुप्त संस्थायें भी कायम हो गई थीं।

१८८२ ई० में सरकार से समझौता हो गया और पार्नेल अपने साथियों के साथ जेल से छोड़ दिया गया लेकिन शीघ्र ही स्थिति पुनः बिगड़ गई। डब्लिन के फोनिक्स पार्क में एक हत्याकाण्ड हो गया। आयरी सेक्रेटरी लार्ड कैवेन्डिश और अन्डर सेक्रेटरी बर्क दोनों ही का वध कर दिया गया। अतः एक दमन कानून पास कर एक विशेष न्यायालय की स्थापना हुई। इस न्यायालय को बिना जूरी के शीघ्र निर्णय कर सजा देने का अधिकार मिला। लार्ड लेफ्टिनेंट भी किसी सभा को अनुचित करार कर भङ्ग कर सकता था परन्तु १८८४ ई० में जब सुधार नियम पास हुआ तो इससे आयरी मतदाताओं की संख्या में भी वृद्धि हुई जिससे पार्नेल का पक्ष और सबल ही हुआ।

१८८५ ई० में ग्लैडस्टन का पतन हो गया और लार्ड सैलिसबरी के हाथ में शासन सूत्र चला आया। उसने उसी वर्ष तीसरा भूमि विधान ( ऐशबोर्न ऐक्ट ) पास किया। इसके द्वारा किसानों को कर्ज लेने की अधिक सुविधा हुई और लैंड कमिश्नरों के अधिकारों में भी वृद्धि हुई।

ग्लैडस्टन और आयरी होमरूल—१८८६ ई० के साधारण चुनाव में ८६ आयरी सदस्य सफल हुये। ये पार्नेल के ही अनुयायी थे। इस समय तक ग्लैडस्टन भी आयरी होमरूल का पक्का समर्थक बन गया। अतः आयरी सदस्यों ने उसका समर्थन किया और ग्लैडस्टन फिर प्रधान मन्त्री हुआ। उसने चौथा भूमि विधान पास किया। इसके द्वारा सरकार को यह अधिकार दिया गया कि वह भूमिपतियों से जमीन खरीद कर उचित मूल्य में किसानों को दे। वह इतने ही से सन्तुष्ट नहीं था। उसने १८८६ ई० में प्रथम होमरूल बिल भी कॉमन्स सभा में उपस्थित किया। इसके अनुसार दो सदन वाली धारा सभा कायम होती किन्तु साम्राज्य के कुल खर्च का १/१५ आयरलैंड को देना पड़ता और परराष्ट्र नीति, चुंगी आबकारी आदि कुछ विषय ब्रिटिश पार्लियामेंट के ही अधीन होते।

कन्जर्वेटिव और कुछ रेडिकल होमरूल बिल के विरोधी थे ही, कुछ लिबरलों ने भी बिल का घोर विरोध किया और वे कन्जर्वेटिवों के साथ जा मिले। अब ये विरोधी लिबरल और कन्जर्वेटिव मिलकर युनियनिस्ट कहलाने लगे क्योंकि वे यूनियन या संयोग के ही पक्षपाती थे। वे सोचते थे कि आयरलैंड को स्वराज मिल जाने से कैथोलिकों की प्रधानता हो जायगी और अन्त में वे इंगलैंड से सम्बन्ध विच्छेद करके ही दम लेंगे। होमरूल के पक्षपाती लिबरल और आयरी सदस्य मिलकर होमरूलर कहलाने लगे। इस तरह आयरी स्वराज्य के प्रश्न ने ब्रिटिश दल को नये सिरे से विभाजित कर दिया। जब होमरूल बिल पर मत लिया गया तो ३१३ पक्ष में और ३४३ विरुद्ध में मत मिले। बिल के विरोधियों में ६३ लिबरल ही थे। इस प्रकार ३० मतों से बिल कामन्स सभा में अस्वीकृत हो गया। इसके साथ ही ग्लैडस्टन को भी पद-त्याग कर देना पड़ा।

सैलिसबरी और आयरलैंड—नये निर्वाचन में युनियनिस्टों को ही १८८ का बहुमत ( कन्जर्वेटिव और युनियनिस्ट ३९४, लिबरल और आयरिश २७६ ) प्राप्त हुआ। लार्ड सैलिसबरी के नेतृत्व में युनियनिस्ट सरकार बनी। इसका उद्देश्य था आयरी संयोग को कायम रखना। इस समय आयरियों ने आन्दोलन का एक नया ही तरीका निकाला। यह तय हुआ कि किसान उतना ही लगान दें जितना वह स्वयं उचित समझे। इस पर ज़मींदार बिगड़े और वे किसानों को भूमि से बेदखल करने लगे। जहाँ-तहाँ दंगे फसाद होने लगे। अब सरकार ने आयरी आन्दोलन को

दबाने के लिये कठोर दमन नीति अपनायी। १८८८ ई० में एक फौजदारी कानून ( क्राइम ऐक्ट ) पास हुआ। इसके द्वारा आयरलैंड में मुकदमों में जूरी का प्रयोग स्थगित कर दिया गया और विशेष प्रकार के मैजिस्ट्रेटों द्वारा मुकदमों की सुनवायी होने लगी। उधर टाइम्स नामक अखबार में पार्नेल पर कई उपद्रवों का अभियोग लगाया गया और उसकी जाँच के लिये ३ जजों की कमीशन की नियुक्ति हुई। कमीशन ने उसे निर्दोष घोषित किया किन्तु शीघ्र ही पार्नेल एक तलाक सम्बन्धी मामले में फँस गया। पार्नेल ने अपनी सफाई नहीं दी और बहुत से लोगों का अब उसमें विश्वास नहीं रहा। यह घटना १८९० ई० में हुई। अब उसकी धाक मिट गयी। दूसरे ही साल ४६ वर्ष की उम्र में ही वह इस संसार से ही चल बसा।

सरकार ने दमन के साथ सुविधाओं को भी प्रदान किया। कई सुधार कार्यान्वित किये गये। १८८७ ई० में पुनः एक भूमि विधान पास हुआ। इसके अनुसार १८८१ ई० के भूमि विधान के सिद्धान्तों को स्वीकार कर उनके क्षेत्रों को विस्तृत किया गया। १८९१ ई० में भूमि-क्रय नियम ( लैंड पर्चेज ऐक्ट ) पास हुआ। इसके द्वारा किसानों को भूमि खरीदने के लिये सरकार की ओर से कम या नाम मात्र सूद पर कर्ज देने की व्यवस्था की गयी। लाइट रेलवे ऐक्ट, कनजेस्टेड डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ऐक्ट आदि जैसे नियमों के द्वारा भी पश्चिम के घनी आबादी वाले तथा अन्य क्षेत्रों में भी सुधार हुये। इस प्रकार ब्रिटिश सरकार ने सुधार तथा दमन-चुम्बन तथा लातमर्दन की नीति के द्वारा आयरियों को सन्तुष्ट कर होमरूल आन्दोलन को कमजोर कर देने का प्रयत्न किया। पार्नेल की मृत्यु के बाद उसकी पार्टी भी छिन्न-भिन्न हो गयी और इससे भी आयरी आन्दोलन में कमजोरी उत्पन्न हुई।

ग्लैडस्टन ने अपने चौथे मन्त्रिमंडल में १८९३ ई० में दूसरा होम रूल बिल उपस्थित किया। इसके अनुसार आयरलैंड में पार्लियामेंट स्थापित होती। उच्च सभा का साम्पत्तिक योग्यता के आधार पर कर-दाताओं के द्वारा निर्वाचन होता। आयरलैंड के ८० सदस्य ब्रिटिश पार्लियामेंट में भी भेजे जाते और वे साम्राज्य-नीति सम्बन्धी सभी मामलों में मत देने के अधिकारी होते। यह बिल कामन्स सभा में सकीर्ण बहुमत से पास हुआ किन्तु लार्ड सभा में बिलकुल ही अस्वीकृत हो गया। इस समय तक ग्लैडस्टन बहुत बूढ़ा भी हो चला था। अतः उसने शीघ्र ही पद-त्याग कर डाला।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि कन्जर्वेटिव और लिबरल दोनों ही दल आयरी समस्या की विकट स्थिति को स्वीकार करते थे और उन्हें सुलझाने के लिये प्रयत्नशील थे किन्तु दोनों के तरीके भिन्न थे। कन्जर्वेटिव दल का ख्याल था कि यदि भूमि सम्बन्धी समस्या हल हो जाय, तो स्वराज्य आन्दोलन शिथिल पड़ जायगा अतः वह दल भूमि-समस्या के हल करने में ही व्यस्त रहा। लिबरलों का

ख्याल था कि भूमि समस्या हल करना तो आवश्यक है ही किन्तु इससे आयरियों को कुछ ही लाभ होगा। उनकी समस्या का स्थायी हल तभी होगा जब कि उन्हें स्वराज्य मिल जायगा।

ग्लैडस्टन के पतन के बाद १८६५ ई० से १६०५ ई० तक सैलिसबरी तथा बाल्फर के नेतृत्व में युनियनिस्ट मन्त्रिमंडल कायम रहा था। सुधार का क्रम जारी रहा। १८८६ ई० में एक भूमि विधान पास कर पहले के भूमि विधानों के क्षेत्र का विस्तार कर दिया गया। १८६८ ई० से स्थानीय स्वायत्त शासन में प्रजा को अधिकार मिलने लगा और निर्वाचित काउन्टी कौंसिल प्रथा का प्रचार हुआ। इससे यह आशा भी की गयी कि स्वराज्य-आन्दोलन दब जायगा। कृषि व्यवसाय की उन्नति के लिये प्रयत्न हुये। कृषि शिक्षा का प्रबन्ध हुआ और सहयोग समितियों के संगठन को प्रोत्साहित किया गया। १६०३ ई० के एक भूमि विक्रय नियम ने किसानों को भूमि खरीदने के लिये प्रर्याप्त सुविधा दे दी। उन्हें बहुत कम सूद पर कर्ज मिलने लगा और साधारण किश्तों में ही कर्ज चुका देने की भी व्यवस्था कर दी गई। जमींदारों को भी कुछ प्रलोभन देकर जमीन बेचने के लिये प्रोत्साहित किया गया। रेलवे का भी विस्तार हुआ। १६०५ ई० में एक आयरी कौन्सिल बिल भी पेश किया गया लेकिन यह पास नहीं हो सका। इसी साल के अन्त तक युनियनिस्ट सरकार का भी अन्त हो गया।

लिबरल सरकार और आयरलैंड (१६०६-१४ ई०)—दिसम्बर १६०५ ई० में लिबरल मन्त्रिमंडल का निर्माण हुआ। इस समय जौन रेडमंड के पथ प्रदर्शन में आयरियों का संगठन हुआ। अनेक सुधारों के कारण आयरलैंड की उन्नति हुई थी किन्तु इसमें स्वराज्य-प्राप्ति की इच्छा दबी नहीं। रेडमंड होमरूल का पक्षपाती था किन्तु इंगलैंड से भी संबंध बनाये रखना चाहता था लेकिन उग्र राष्ट्रवादी उसके विचारों से पूरे सहमत नहीं थे। आर्थर ग्रेफीथ उनका नेता था और वे अपने को सिनफेनर कहते थे। १६०४ ई० में ही वे सिनफेन के नाम से संगठित हुये थे। सिन फेन का अर्थ होता था कि केवल हमही लोग। इस संगठन का यही उद्देश्य था कि असहयोग, बायकाट, हिंसा आदि के द्वारा भी आयरलैंड में जनतंत्र की स्थापना कर ली जाय।

सरकार की ओर से सुधार होता रहा। १६०७ ई० में एविक्टेड टेनेन्ट ऐक्ट पास हुआ जिसके अनुसार भूमि से निकाले गये किसानों को पुनर्स्थापित करने की कोशिश की गयी। १६०८ ई० में युनिवर्सिटीज ऐक्ट पास हुआ जिसके अनुसार दो विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई—डब्लिन में राष्ट्रीय विश्वविद्यालय और बेलफास्ट में क्वीन्स विश्वविद्यालय। पहले विश्वविद्यालय में कैथोलिकों की प्रधानता रही। इस तरह शिक्षा संबंधी दीर्घकालीन समस्या का निराकरण हुआ और कैथोलिक सन्तुष्ट हुये।

१६०६ ई० में एक कानून पास हुआ जिसके अनुसार विदेशी जमींदारों को आयरलैंड में स्थित अपनी जमींदारी बेच देने के लिये बाध्य किया गया। अब धीरे-धीरे भूमि पर आयरी किसानों को स्वामित्व स्थापित होने लगा।

१६११ ई० का पार्लियामेंट ऐक्ट पास करने में ऐसक्विथ सरकार को आयरी नेताओं का समर्थन प्राप्त था। इसी कृतज्ञता में १६१२ ई० में तीसरा होमरूल बिल पेश हुआ। इसके अनुसार आयरलैंड में द्विसदनात्मक धारा-सभा कायम होती—कॉमन्स सभा और मनोनीत सिनेट। इसी पार्लियामेंट के प्रति आयरी कार्यकारिणी उत्तरदायी होती। पार्लियामेंट को सत्ता एक बार न मिलकर क्रमशः प्राप्त होती किन्तु ताज, सेना और परराष्ट्र नीति जैसे विषय इसके दायरे से बाहर होते। अभी भी ४२ आयरी सदस्य ब्रिटिश पार्लियामेंट में भी बैठते। यह बिल तीन बार कॉमन्स सभा के द्वारा पास हुआ किन्तु लार्ड सभा बार-बार अस्वीकृत ही करती रही। अन्त में १६११ ई० के पार्लियामेंट ऐक्ट के अनुसार राजा की स्वीकृति पाकर होमरूल बिल पास हो गया। प्रोटेस्टेंट तो यह सुनकर नाक भौं सिकोड़ने लगे। अल्स्टर ने तो घोर विरोध किया क्योंकि वहाँ के अधिकांश निवासी प्रोटेस्टेंट ही थे। ब्रिटिश कन्जर्वेटिव पार्टी ने भी अल्स्टर का पक्ष लिया। अलस्टर निवासियों ने सर एडवर्ड कार्सन के नेतृत्व में विद्रोह की तैयारी कर दी। स्वयंसेवकों का संगठन किया जाने लगा। इसके विरोध में दक्षिणी आयरलैंड के राष्ट्रवादियों ने भी अपना संगठन शुरू किया और जरूरत पड़ने पर वे अल्स्टर का मुकाबला भी करने की बात करने लगे। आयरलैंड दो सशस्त्र कैम्पों में विभाजित हो गया और गृह युद्ध की संभावना हो गयी। सम्राट ने बकिंघम पैलेस में एक सम्मेलन भी बुलाया जिसमें प्रमुख आयरी तथा ब्रिटिश नेताओं ने भाग लिया किन्तु इसका कोई फल नहीं निकला। तब तक प्रथम महायुद्ध का श्रीगणेश हो गया और एक स्थगन नियम ( सस्पेन्सरी ऐक्ट ) के द्वारा होमरूल नियम को युद्ध काल तक स्थगित कर दिया गया।

# अध्याय ५४

## ब्रिटिश राष्ट्रमंडल या कामनवेल्थ (१८१५–१९१४ ई०)

भूमिका—१८वीं सदी के अन्त तक अंगरेजों ने संसार के कई भागों को जीत लिया और वे वहाँ बसने भी लगे। वे अपने विकास के लिये मूल निवासियों को दबाते और खदेड़ते गये। अमरीकी उपनिवेशों के अंग्रेजी अधिकार से निकल जाने के बाद ब्रिटिश नीति में परिवर्तन की आवश्यकता हो गयी। समय गति के साथ साथ उपनिवेशवासियों में भी जागृति होती ही रही। अतः ब्रिटिश राजनीतिज्ञों के सामने एक विकट समस्या पैदा हो गयी। यह समस्या थी—साम्राज्य शासन और उपनिवेश शासन का समन्वय। किसी प्रकार कोई उपनिवेश "अपनी माँ के घर में उसकी बेटी और अपने घर में मलकिनी की तरह रहे"। दूसरे शब्दों में सवाल यह था कि किस तरह उपनिवेशों को स्वतन्त्रता दे दी जाय और ग्रेट ब्रिटेन के साथ उनका सबंध भी बना रहे। इस समस्या ने कुछ समय तक ब्रिटिश राजनीतिज्ञों के सिर में दर्द पैदा कर कर दिया था किन्तु इसका निराकरण हो ही गया और उसका दर्द भी दूर हो गया। सर्वप्रथम कनाडा में ही इसका प्रयोग हुआ। अत. पहले हम उसी की चर्चा करेंगे। कनाडा के अलावे आस्ट्रेलिया, न्यूफाउंडलैंड और दक्षिणी अफ्रीका ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत उपनिवेश थे।

१९वीं सदी में दो और कारणों से उक्त समस्या में जटिलता आ गयी। एक कारण था अगरेजों और अन्य यूरोपियनों का सम्बन्ध, दूसरा कारण था यूरोपियनों और मूल-निवासियों का सम्बन्ध। कनाडा में पहला कारण वर्तमान था तो न्यूजीलैंड में दूसरा और दक्षिण अफ्रीका में दोनों कारण मौजूद थे तो आस्ट्रेलिया में दोनों में से कोई नहीं लेकिन आस्ट्रेलिया में एक नयी बात ही उपस्थित थी—स्वतंत्र निवासियों और अपराधियों (कन्विक्ट) का सम्बन्ध।

प्रथम महायुद्ध के पहले तक ग्रेट ब्रिटेन के ५ स्वतन्त्र उपनिवेश थे—(१) कनाडा, (२) न्यूफाउन्डलैंड, (३) आस्ट्रेलिया, (४) न्यूजीलैंड और (५) दक्षिणी अफ्रीका। दक्षिणी अफ्रीका के इतिहास पर हम पहले ही दृष्टिपात कर चुके हैं।

### (१) कनाडा

प्रारंभिक इतिहास—१५३४ ई० में जैकीकार्टियर नामक एक नाविक क्वेबेक के आस पास पहुँचा और उस भू-भाग को अधिकृत कर लिया। वहाँ के मूल निवासी

उस भू-भाग को कनथ कहा करते थे जिसका अर्थ था ग्राम। इसी शब्द के आधार पर कार्टियर ने उत्तरी अमेरिका के उत्तरी भाग को कनाडा के नाम से पुकारा। १७वीं सदी के प्रारम्भ में फिर फ्रांसीसी नाविक वहाँ गया और १७६३ ई० तक कनाडा के अधिकांश भाग पर फ्रांसीसियों ने अपना अधिकार कायम कर लिया लेकिन वे ही निर्विरोध समस्त कनाडा के स्वामी नहीं रहे। १६७० ई० में हडसन बे नामक एक ब्रिटिश कम्पनी भी व्यापार में लगी हुई थी। अतः उत्तरी अमेरिका में भी अंग्रेज तथा फ्रांसीसी एक दूसरे के प्रतियोगी हो गये और दोनों में युद्ध तक होने लगा। इससे अंग्रेज ही अधिक लाभान्वित रहे। १७१३ ई० में युट्रेक्ट की सन्धि के द्वारा उन्हें नोवास्कोशिया तथा न्यूफाउन्डलैंड मिले और १७६३ ई० में पेरिस की सन्धि के द्वारा कनाडा तथा अन्य प्रदेश प्राप्त हुये। वहाँ एक अंग्रेज गवर्नर शासन करने लगा किन्तु फ्रांसीसी भाषा तथा विधि-विधानों को भी स्थान दिया गया लेकिन यह स्थिति स्थायी नहीं रह सकी।

फ्रांसीसियों की संख्या ७० हजार थी लेकिन १७६० ई० से अंग्रेज भी कनाडा में अधिक संख्या में आने लगे। वे फ्रांसीसियों से अधिक प्रगतिशील थे। अतः फ्रांसीसियों को अंग्रेजों के आगमन से भय होने लगा। उनके भय को ही दूर करने के लिये १७७४ ई० में ब्रिटिश पार्लियामेंट ने क्वेबेक ऐक्ट पास किया। इसके अनुसार क्वेबेक प्रान्त की सीमा बढ़ा दी गयी। शासन के लिये एक गवर्नर नियुक्त हुआ और उसे सलाह देने के लिये एक मनोनीत कौंसिल की व्यवस्था हुई। फ्रांसीसियों को धार्मिक स्वतन्त्रता प्रदान की गई यानी कैथोलिक धर्म स्वीकृत कर लिया गया। उनके रस्म-रिवाज तथा विधि-विधान भी सुरक्षित रखे गये।

इस ऐक्ट से फ्रांसीसी तो संतुष्ट थे किन्तु अंग्रेजों को खुशियाली नहीं हुई। क्वेबेक की सीमा विस्तृत करने से उनके विकास के मार्ग में रुकावट पैदा हो गई। साथ ही अभी उनको स्वशासन के अधिकार नहीं मिले। इस तरह कितने अंग्रेजों ने अमेरिका के संग्राम में ब्रिटेन का साथ नहीं दिया किन्तु फ्रांसीसियों ने उनकी सहायता की। अमेरिकी संग्राम के समय भी कुछ उपनिवेश वासी इंगलैंड के प्रति राजभक्त बने रहे। ऐसे लोगों का संयुक्त राज्य में रहना कठिन हो गया। अतः वे कनाडा में आकर बसने लगे। उन्होंने न्यूब्रन्सविक और ओन्टेरियो को आबाद किया। धार्मिक दृष्टि से भी उन्होंने अपने चर्च को अंग्रेजी चर्च के ही आधार पर संगठित किया। इस तरह फिर एक नयी समस्या उत्पन्न हो गई।

इस समस्या को हल करने के लिये १७९१ ई० में ब्रिटिश पार्लियामेंट ने एक कनाडा ऐक्ट पास किया। इसे 'कन्स्टीच्युशनल ऐक्ट' भी कहते हैं। इसके अनुसार कनाडा को दो भागों में बाँट दिया गया। (१) ऊपरी कनाडा ( ओन्टेरियो ) और

(२) निचला कनाडा ( क्वेबेक )। प्रत्येक भाग में एक एक गवर्नर की व्यवस्था हुई। उसे ब्रिटिश सरकार नियुक्त करती थी। दोनों भागों में एक एक व्यवस्थापिका सभा की भी व्यवस्था की गयी। इसके दो अंग थे—जनता द्वारा निर्वाचित छोटी सभा और गवर्नर द्वारा मनोनीत कौंसिल परन्तु मंत्रिमंडल व्यवस्थापिका सभा के प्रति उत्तरदायी नहीं था और इस तरह अभी प्रतिनिधि संस्था की ही व्यवस्था की गयी, उत्तरदायी शासन की नहीं। मनोनीत कौंसिल तथा निर्वाचित सभा में भी पूर्ण राय नहीं थी जिससे वैधानिक खिंच पैदा होने की अधिक आशंका थी।

अतः इस दोषपूर्ण शासन व्यवस्था से उपनिवेश वासियों में असन्तोष की वृद्धि हुई। १८१५ ई० के बाद यह और बढ़ता ही गया और १८३७ ई० में इसने भयकर रूप धारण कर लिया। दोनों भागों में विद्रोह हो गया। ब्रिटिश सरकार ने विद्रोह तो बलपूर्वक दबा दिया किन्तु वह यह भी जान गयी की असन्तोष गहरा है * और इसका निराकरण होना चाहिये।

स्थिति की जाँच कर सुधार के लिये सुझाव देने का काम लार्ड डुरहम को सौंपा गया। वह एक महान् राजनीतिज्ञ एवं दूरदर्शी था। उसे सुधार के लिये पूरा अधिकार देकर कनाडा भेजा गया। उसने कनाडा में रह कर समस्या का गहरा अध्ययन किया और बड़ा ही महत्त्वपूर्ण सुझाव दिया। उसने बतलाया कि अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के बीच सुदृढ़ जातीय भावना वर्तमान है। अंग्रेजों की उन्नति हो रही थी। अतः फ्रांसीसी अपनी सुरक्षा संकटपूर्ण समझते थे। कनाडा के दोनों ही भागों में वास्तविक स्वायत्त शासन का अभाव था। डुरहम ने सिफारिश की कि दोनों भागों को एक कर निर्वाचित व्यवस्थापिका सभा को पूर्ण अधिकार दे दिया जाय यानी उत्तरदायी शासन स्थापित किया जाय। १८४० ई० में पुनर्संयोग नियम ( रीयूनियन ऐक्ट ) के द्वारा दोनों भागों को एक साथ मिला दिया गया। विस्तृत अधिकार के साथ एक निर्वाचित व्यवस्थापिका सभा भी कायम कर दी गई। इसके दो अंग थे—निम्न सभा और उच्च सभा लेकिन उत्तरदायी शासन की स्थापना नहीं हो सकी।

१८४६ ई० तक उत्तरदायी शासन का अभाव रहा। इसके सम्बन्ध में गवर्नर तथा पार्लियामेंट में मतभेद हो गया था। गवर्नर वैधानिक शासक के रूप में नहीं रहना चाहता था लेकिन १८४७ ई० में स्थिति में बड़ा परिवर्तन हुआ जबकि लार्ड एलगिन वहाँ गवर्नर बनकर आया। वह सात वर्ष तक अपने पद पर बना रहा। वह अपने को एक वैधानिक शासक के रूप में ही देखता था और उसने उत्तरदायी शासन की दृढ़ नींव खड़ी कर दी। वह वैधानिक संकट काल में ही शासन में

* लार्ड डुरहम और उसकी रिपोर्ट

हस्तक्षेप करता था। इस तरह एलगिन ने कनाडा में औपनिवेशिक स्वराज्य की मजबूत नींव स्थापित कर दी।

**औपनिवेशिक स्वराज्य का विकास**—१८४० ई० के पुनर्संयोग नियम से कनाडा की समस्या का पूर्ण रूपेण निराकरण नहीं हो सका। इससे अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के बीच कटुता का अन्त नहीं हुआ। दोनों की आबादी में अन्तर था फिर भी संयुक्त पार्लियामेंट में दोनों के प्रतिनिधियों की संख्या बराबर थी। इससे फ्रांसीसी असंतुष्ट थे। ब्रिटिश प्रधान उत्तरी कनाडा तीव्र गति से प्रगति करने लगा और वह अपने प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ाने की माँग करने लगा। वह कई अन्य सुविधाओं का भी इच्छुक था किन्तु फ्रांसीसी प्रधान दक्षिण कनाडा उसकी माँगों के विरोधी थे। कनाडा का विस्तार भी होता जा रहा था। कभी-कभी संयुक्त राज्य अमेरिका से मतभेद हो जाया करता था और ऐसी स्थिति में उसके हमले की आशंका हो जाती थी। अतः कनाडा की सुरक्षा का प्रश्न उपस्थित हो जाता था। विभाजित कनाडा की सुरक्षा संकटपूर्ण थी। अतः इन सभी कारणों से कनाडा में संघ शासन की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। कनाडावासियों ने १८६४ ई० में इस सिद्धान्त को मान लिया और १८६७ ई० में ब्रिटिश पार्लियामेंट ने ब्रिटिश उत्तरी अमेरिका नियम ( ब्रिटिश नार्थ अमेरिका ऐक्ट ) पास कर संघ शासन स्थापित कर दिया। इस प्रकार कनाडा के डोमिनियन का जन्म हुआ।

१८६७ ई० के नियम के अनुसार १८४० ई० के संयोग को रद्द कर कनाडा के दोनों भागों को पुनः पृथक् कर दिया गया। उत्तरी भाग ओन्टेरियो और दक्षिणी भाग क्वेबेक के नाम से प्रचलित हुआ। इस समय ओन्टेरियो, क्वेबेक, नोवास्कोशिया और न्यूब्रन्सविक संघ में सम्मिलित हुये। १८७० ई० में कनाडा ने हडसनबे कम्पनी का विशाल प्रान्त खरीद कर मैनीटोबा प्रान्त का निर्माण किया। १८७१ ई० में ब्रिटिश कोलम्बिया, १८७३ ई० में प्रिंस एडवर्ड द्वीप और १९०५ ई० में एलबर्टा तथा ससकैचवन संघ में शामिल हुये। इस प्रकार संघ में कुल नौ प्रान्त सम्मिलित हुये।

**शासन व्यवस्था**—संघशासन का प्रधान गवर्नर जनरल रहा जो इंगलैंड के राजा के प्रतिनिधि के रूप में स्वीकृत हुआ। उसकी स्थिति ब्रिटिश राजा के ही समान थी। वह मंत्रिमंडल की राय से शासन सम्बन्धी काम कर सकता था। मंत्रिमंडल निर्वाचित विधान सभा के प्रति उत्तरदायी रहा। द्वि सदनात्मक विधान सभा की व्यवस्था हुई—सिनेट जिसके सदस्य गवर्नर जेनरल द्वारा मनोनीत होते थे और कामन्स सभा जिसके सदस्य जनता द्वारा निर्वाचित होते थे। संघ शासन का केन्द्र ओटावा में

निश्चित हुआ। प्रान्तों में भी एक एक लेफ्टिनेन्ट गवर्नर नियुक्त हुये और उन्हें भी अपने उत्तरदायी मन्त्रिमण्डल की राय से ही शासन करने का अधिकार था।

१८६७ ई० की व्यवस्था के ही आधार पर कनाडा में अभी तक शासन सूत्र संचालन होता है। धीरे-धीरे घरेलू तथा वैदेशिक दोनों ही क्षेत्रों में कनाडी सरकार अपने अधिकारों को बढ़ाती रही किन्तु १८६७ से १९१४ ई० तक कनाडा के इतिहास की आर्थिक प्रधानता विशेष रही है। देश की भौतिक प्रगति हुई है। यातायात के साधन उन्नत हुये हैं, रेल का काफी विस्तार हुआ है। वाणिज्य व्यापार तथा उद्योग धन्धों की उन्नति हुई है और जनसंख्या में वृद्धि होती रही है। ग्रेट ब्रिटेन और संयुक्त राज्य से ही अधिक व्यापार होता रहा है।

## ( २ ) न्यूफाउन्डलैंड

प्रारम्भिक इतिहास—न्यूफाउन्डलैंड उत्तरी अमेरिका में सेंटलारेंस की खाड़ी के मुहाने पर स्थित है। १४९७ ई० में हेनरी सप्तम के राज्य काल में इसकी खोज हुई। इसके बाद १५०० ई० में एक पुर्तगाली नाविक आ बसा। १४५८ ई० में सर हम्फ्रे गिलबर्ट ने महारानी एलिजाबेथ की ओर से इसे अधिकृत कर लिया। १७वीं १८वीं सदियों में अंग्रेज तथा फ्रांसीसी दोनों ही आकर वहाँ बस गये और मछली मारने के सम्बन्ध में दोनों में मतभेद पैदा हो गया था। १७१३ ई० में यूट्रेक्ट की सन्धि के द्वारा फ्रांस ने मछली मारने का अधिकार रखा किन्तु अन्य सभी अधिकारों को छोड़ दिया। १८५५ ई० में इसे स्वायत्त शासन प्रदान किया गया। वहाँ के निवासी कनाडा के साथ मिलना नहीं चाहते थे। अतः वह एक पृथक उपनिवेश के रूप में ही कायम रहा और संयुक्त राज्य अमेरिका से अधिक व्यापार करता रहा लेकिन इसकी प्रगति मन्द थी। मछली मारने के प्रश्न पर अंग्रेजों तथा फ्रांसीसियों में भी मतभेद रहता था किन्तु इसका १९०४ ई० में ही अन्त हो गया। जब हवाई रास्ते का यहाँ एक स्टेशन बना दिया गया तब से इसका महत्व बढ़ने लगा।

१९३४ ई० में न्यूफाउन्डलैंड को भयंकर आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा। अतः उसने स्वेच्छा से औपनिवेशिक पद को छोड़ दिया और एक शाही कमीशन के द्वारा उसका शासन प्रबन्ध किया जाने लगा। दूसरे महायुद्ध काल में ( १९३९-४५ ई० ) ग्रेट ब्रिटेन ने यहाँ हवाई तथा जहाजी अड्डा बनाने के लिये अमेरिका को अधिकार दे दिया था। १९४९ ई० में कनाडा ने इसे संघ में मिल जाने के लिये प्रस्ताव किया और वहाँ का बहुमत इसके पक्ष में रहा। अतः उसी साल न्यूफाउन्डलैंड कनाडा के संघ में मिल गया और अब संघ के सदस्यों की संख्या दस हो गई।

## ( ३ ) आस्ट्रेलिया

**प्रारंभिक इतिहास**—आस्ट्रेलिया का क्षेत्रफल बहुत विस्तृत है। प्रारंभ में यहाँ आबादी बहुत ही कम थी। यहाँ कुछ आदिम निवासी थे जो बड़े ही असभ्य थे। डिटोरी नामक स्पेनी नाविक सर्वप्रथम यूरोपियन था जो १६०६ ई० में आस्ट्रेलिया के उत्तरी-पूर्वी छोर पर एक खाड़ी के निकट पहुँचा था। अब उसी के नाम से वह स्थान भी प्रसिद्ध है। १६१६ ई० में डचों ने पश्चिमी किनारे की खोज की और बाद में तस्मानने दक्षिणी पूर्वी तट पर तसमानिया का पता लगाया। १७वीं सदी के चतुर्थ चरण में एक ब्रिटिश समुद्री डाकू डैम्पियर भी आस्ट्रेलिया के तट पर पहुँचा। इस महादेश का महत्व अंग्रेजों को तब समझ में आने लगा। १७६८ और १७७६ ई० के बीच कप्तान कुक ने आस्ट्रेलिया के उपजाऊ एवं विस्तृत पूर्वी तट की खोज की। उसने इंगलैंड के नाम पर उस भाग को अधिकृत कर लिया।

१८वीं सदी तक इंगलैंड का दंड विधान बड़ा ही कठोर था और वहाँ के बड़े-बड़े कैदी अमेरिका भेजे जाते थे किन्तु अमेरिका के स्वतन्त्र हो जाने से वहाँ अपराधियों का निर्वासन बन्द हो गया। अब आस्ट्रेलिया में ही अपराधी भेजे जाने लगे। १७८८ ई० में कप्तान फिलिप की देख-रेख में अपराधियों का एक जत्था पहुँचा। उसके बाद सिडनी में नियमित रूप से अपराधी भेजे जाने लगे।

प्रारम्भ में उपनिवेशवासियों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। जलवायु उपयोगी नहीं मालूम पड़ी। पूँजी एवं श्रम के अभाव में कृषि संभव नहीं थी परन्तु १७९७ ई० में जॉन मैकार्थर ने ऊन के व्यवसाय के लिये वहाँ की जलवायु को उपयुक्त समझा। अतः उसने भेड़ों को पालने पर जोर दिया और ऊन-व्यवसाय की तरक्की होने लगी। १६वीं सदी के पूर्वार्द्ध में दो अन्य कारणों से भी आस्ट्रेलिया का विकास हुआ। भीतरी भागों की खोज की जाने लगी और उन्हें बसाया जाने लगा। मातृभूमि के लोगों के आगमन को प्रोत्साहित किया गया। धनी उपनिवेशवासियों के हाथ जमीन बेचने की और गरीबों को आर्थिक सहायता देने की व्यवस्था कर दी गयी। धीरे-धीरे कई चीजों की खानें मिलने लगीं। दक्षिण आस्ट्रेलिया में ताँबे, न्यूसाउथ वेल्स में पत्थर का कोयला और न्यूसाउथ वेल्स, विक्टोरिया तथा क्वीन्सलैंड में सोने की खानें पायी गईं। बस, अब क्या था—ग्रेट ब्रिटेन से अंग्रेजों के दल के दल पहुँचने लगे। अब कृषि के विकास पर भी ध्यान दिया जाने लगा। धीरे-धीरे अपराधियों के निर्वासन पर भी प्रतिबन्ध लगने लगा और १६वीं सदी के मध्य तक यह बन्द ही हो गया।

**औपनिवेशिक स्वराज्य का विकास**—कनाडा में स्वायत्त शासन का जो सिद्धान्त स्वीकृत हुआ उसे आस्ट्रेलिया में भी लागू किया गया। न्यूसाउथ वेल्स में १८४० ई०

में अपराधियों का आना बन्द कर दिया गया और २ वर्ष के बाद यहाँ प्रतिनिधि सरकार की स्थापना हुई। १८५५ ई० में इसे उत्तरदायी शासन प्राप्त हो गया। तसमानिया में १८०४ ई० से स्वतन्त्र लोग बसने लगे थे और १८५३ ई० में यहाँ अपराधियों का आना रोक दिया गया। १८५५ ई० में इसे भी उत्तरदायी शासन मिल गया। १८५१ ई० में विक्टोरिया को न्यूसाउथ वेल्स से अलग कर एक प्रान्त बना दिया गया। उन्नत कृषि और सोने की खान के कारण इसकी काफी उन्नति थी और १८५५ ई० में इसे भी उत्तरदायी शासन प्राप्त हो गया। १८५६ ई० में क्वींसलैंड को भी न्यूसाउथ वेल्स से अलग एक प्रान्त बनाकर उत्तरदायी शासन प्रदान कर दिया गया। दक्षिणी आस्ट्रेलिया को प्रतिनिधि शासन १८५० ई० में और उत्तरदायी शासन १८५५ ई० में स्वीकृत कर दिया गया। पश्चिमी आस्ट्रेलिया में १८६८ ई० में अपराधियों का निर्वासन बन्द कर दिया गया और १८७० ई० में प्रतिनिधि शासन तथा १८९० ई० में उत्तरदायी शासन वहाँ स्थापित कर दिया गया।

संघ शासन की स्थापना—यह पहले ही कहा जा चुका है कि आस्ट्रेलिया का क्षेत्रफल बहुत ही विस्तृत है लेकिन यातायात के साधनों का पूरा सुभीता नहीं था। विभिन्न प्रान्तों के निवास में भी अन्तर था और उनकी जरूरतों में भी भिन्नता थी। सभी प्रान्तों में एक दूसरे से आगे बढ़ जाने के लिये प्रतियोगिता चल पड़ी थी। विक्टोरिया और दक्षिणी आस्ट्रेलिया में अपराधी नहीं बसे थे। अत वहाँ के निवासी अन्य प्रान्तों के निवासियों से अपने को उच्च समझते थे। वे लोग मुक्त व्यापार के भी पक्षपाती नहीं थे किन्तु न्यूसाउथ वेल्स तथा क्वींसलैंड वाले मुक्त व्यापार के ही समर्थक थे। इस तरह सभी प्रान्तों में ईर्ष्या द्वेष की भावना कायम थी। इसी स्थिति में विदेशियों से भी मतभेद हो गया और सुरक्षा की समस्या विकट हो गयी। न्यूकैलिडोनिया में फ्रांसीसियों से झगड़ा हो गया और न्यूगिनी पर क्वींसलैंड के द्वारा अधिकार करने पर जर्मनी से तनाव हो गया। बहुत से चीनी भी पहुँच गये थे और उनसे भी उपनिवेशवासियों का मन मुटाव हो गया।

ऐसी विषम परिस्थिति में उपनिवेशवासियों ने अपनी कमजोरी को अनुभव किया और वे एकता की कामना करने लगे। लगभग बीस वर्षों तक वे एकता के लिये प्रयत्न करते और उपाय ढूँढ़ते रहे। अन्त में वे सफल भी हुये। १८९७ ई० में एडलेड में एक कन्वेंशन बुलायी गयी और संघ शासन की योजना तैयार हुई। सभी उपनिवेशों ने उसे स्वीकृत किया। १९०० ई० में ब्रिटिश पार्लियामेंट ने कामनवेल्थ आफ आस्ट्रेलिया ऐक्ट पास किया और बीसवीं सदी के प्रथम दिवस को आस्ट्रेलिया के कामनवेल्थ का जन्म हुआ। कैनबेरा में इसकी राजधानी स्थापित हुई।

कनाडा की ही भाँति संघ सरकार की स्थापना हुई किन्तु कनाडा में प्रान्तीय

सरकारों के अधिकारों का उल्लेख कर अवशेष केन्द्र को छोड़ दिया गया और आस्ट्रेलिया में संघ सरकारों के अधिकारों का उल्लेख कर दिया गया और अवशेष राज्य सरकारों के जिम्मे रहा। शासन का प्रधान ब्रिटिश राजा द्वारा नियुक्त गवर्नर जेनरल रहा। दो भवन वाली पार्लियामेंट कायम हुई—सिनेट और प्रतिनिधि भवन। गवर्नर जेनरल का पद वैधानिक रहा। राज्यों की अपनी शासन व्यवस्था रही। यही व्यवस्था उस समय से आस्ट्रेलिया में प्रचलित रही है और समयानुसार कुछ आवश्यक परिवर्तन होते रहे हैं।

## ( ४ ) न्यूज़ीलैंड

प्रारम्भिक इतिहास—न्यूज़ीलैंड आस्ट्रेलिया के दक्षिण-पूर्व में स्थित है। इसमें उत्तरी तथा दक्षिणी दो बड़े और कई छोटे द्वीप सम्मिलित हैं। यहाँ के मूल निवासी मावोरी कहलाते थे और वे आस्ट्रेलिया के मूल निवासियों से अधिक होशियार थे। १८१५ ई० से वहाँ ईसाई पादरी जाने लगे थे और इसके दो वर्ष के बाद ही ब्रिटिश बस्तियाँ बसायी जाने लगी थीं। १८३९ ई० में गिबन वेकफील्ड ने उपनिवेश-वास को प्रोत्साहित करने के लिये एक न्यूज़ीलैंड कम्पनी की स्थापना की। शीघ्र ही मावोरियों से झगड़ा हो गया और दोनों द्वीपों को अंग्रेजों ने अधिकृत कर लिया। कप्तान होवसन को लेफ्टिनेंट गवर्नर नियुक्त कर दिया गया।

अब ब्रिटिश उपनिवेश के रूप में इसकी उत्तरोत्तर तरक्की होने लगी। १८५१ ई० में कम्पनी का अन्त कर दिया गया और दूसरे ही साल न्यूज़ीलैंड को उत्तरदायी शासन दे दिया गया। भूमि को लेकर मावोरियों के साथ झंझट होता रहा। १८६० ई० में लड़ाई तक छिड़ गयी। संघर्ष १० वर्षों तक चलता रहा। १८७१ ई० में दोनों में संधि हुई। मावोरियों के लिये जमीन सुरक्षित रही। १८६७ ई० से ही उनके चार प्रतिनिधियों को भी व्यवस्थापिका सभा में स्थान दिया गया। १८७१ ई० के बाद न्यूज़ीलैंड की खूब उन्नति होने लगी। यातायात के साधन उन्नत हुये। रेल का निर्माण हुआ। जनसंख्या में भी वृद्धि होती रही। १९०७ ई० में इसे औपनिवेशिक स्वराज्य प्राप्त हुआ और इसके दस वर्ष बाद गवर्नर को गवर्नर जेनरल की पदवी मिली।

## अध्याय ५५

# प्रथम महायुद्ध और उसकी विशेषतायें (१६१४—१८ ई०)

(क) प्रथम महायुद्ध का संक्षिप्त विवरण—अगस्त १६१४ ई० में महायुद्ध का श्रीगणेश हुआ और नवम्बर १६१८ में इसका अन्त हुआ। इस तरह युद्ध ४ वर्ष से कुछ अधिक ही चलता रहा। इसमें संसार के प्राय सभी देश प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शामिल थे और इससे प्रभावित भी हुये। सभी सैनिक तथा नाविक कारवाइयों का विस्तृत वर्णन उपस्थित करना हमारा उद्देश्य नहीं है। हम सामान्य रूप से ही युद्ध की गतिविधि का संक्षिप्त विवरण ही प्रस्तुत करेंगे।

फ्रांस और जर्मनी के बीच की सीमा पर कई दुर्ग बने हुये थे। अत जर्मनों ने बेल्जियम होकर ही फ्रांस पर हमला किया किन्तु पेरिस तक पहुँचने में असमर्थ ही रहे। पश्चिमी मोर्चे पर युद्ध बराबर चलता रहा। मार्न और वर्दन जैसी प्रसिद्ध लड़ाइयाँ हुई। बम वर्षा का तो कहना ही क्या! बम बाजी तो साधारण बात हो गई थी।

पूर्वी मोर्चे पर दुश्मन शक्तियों से रूस भिड़ा हुआ था परन्तु रूसी सेना दरिद्र और अशिक्षित थी। उसके पास सामग्री की बड़ी ही कमी थी। अत उन्हें बड़ा ही नुकसान सहना पड़ा और टनेनबर्ग की लड़ाई में उनकी करारी हार भी हो गई। इससे ज़ार के शासन की बड़ी बदनामी हुई, रूसी जनता के रोष का ठिकाना नहीं रहा और क्रान्ति का प्रारम्भ हो गया। जिस ज़ार के भय से कभी लोग काँप रहे थे उसे ही पकड़कर गद्दी से हटा दिया गया और फाँसी पर झुला दिया गया। लेनिन के नेतृत्व में १६१७ ई० में ही बोल्शेविकों ने जर्मनी से सन्धि कर ली और वे युद्ध से अलग हो गये। अब उस मोर्चे पर दुश्मनों का बोझ हल्का हो गया और वे अपनी सेना उधर से अन्यत्र भेजने लगे।

दक्षिण की ओर इटली पहले तो त्रिगुट का एक सदस्य था और जर्मनी के ही साथ था किन्तु १६१५ ई० में वह मित्रराष्ट्रों की ओर चला गया। आस्ट्रिया से उसकी मुठभेड़ हुई। १६१६ ई० में उसे कुछ सफलता भी मिली किन्तु दूसरे ही साल आस्ट्रिया ने अपने खोये हुये भू भागों को प्राप्त कर लिया और ब्रिटिश तथा फ्रांसीसी सेना के हा प्रयत्न से उत्तरी इटली की आस्ट्रिया के हमले से रक्षा हो सकी।

दक्षिण पूर्व में तुर्की साम्राज्य था। टर्की और बलगेरिया ने केन्द्रीय शक्तियों का और सर्बिया तथा रूमानिया ने मित्रराष्ट्रों का पक्ष लिया। बाल्कन में एक ब्रिटिश

सेना भेजी गई थी। डोमिनियन की भी सेना उसी क्षेत्र में काम कर रही थी। कुस्तुन्तुनिया पर कब्जा करने का प्रयत्न हुआ किन्तु वह व्यर्थ ही सिद्ध हुआ। गैलीपोली में ब्रिटिश सेना को असफलता हुई। यदि मित्रराष्ट्र अपने प्रयत्न में सफल हो जाते तो पूर्वी मोर्चे पर युद्ध की गति में सुविधा हो जाती और रूस का वैसा पतन न होता जैसा कि हुआ।

पश्चिमी एशिया में अंग्रेजों को अधिक सफलता मिली। स्वेज नहर के पास से तुर्कों को खदेड़ दिया गया। मेसोपोटामिया, फिलस्तीन और सीरिया को विजित किया गया। बहुत दिनों के बाद जेरुसलम ईसाईयों के हाथ में आ गया।

अंग्रेजों ने उत्तरी सागर में अपने जहाजों को रखा और जर्मनों का अवरोध किया। यह स्थिति दीर्घकाल तक बनी रही। जर्मन जहाज भी कील बन्दरगाह में रखे गये थे और क्रूजर के द्वारा कभी-कभी ब्रिटिश तट पर अचानक हमला भी कर दिया जाता था किन्तु डोगर बैंक के युद्ध में ब्लुचर नामक क्रूजर के नष्ट हो जाने के बाद यह जब तब का हमला भी बन्द हो गया। जर्मनी ने अवरोध का अन्त करने के लिये भरपूर प्रयत्न किया। ३१ मई १६१६ ई० को जटलैंड का प्रसिद्ध जलयुद्ध हुआ जिसमें ग्रेट ब्रिटेन तथा जर्मनी दोनों की गहरी क्षति हुई। जर्मनी ने पनडुब्बी जहाजों के द्वारा भी मित्रराष्ट्रों के व्यापारी जहाजों को बहुत हानि पहुँचाई। फिर भी जलयुद्धों में ग्रेट ब्रिटेन की ही प्रधानता रही और समुद्र पर उसका आधिपत्य बना रहा।

मार्च १६१७ ई० तक अमेरिका युद्ध से तटस्थ था। इङ्गलैंड अमेरिकी जहाजों की तलाशी लिया करता था ताकि केन्द्रीय शक्तियों को युद्ध का सामान मिल सकें। अमेरिका कभी-कभी इससे नाराज भी हो जाया करता था किन्तु जर्मनी के ही अमानुषिक कार्यों से अमेरिका मित्रराष्ट्रों के पक्ष में चला गया। जर्मन पनडुब्बी जहाज अमेरिकी जहाजों को भी बर्बाद करने लगा और इसमें कितने लोगों की जान भी जाने लगी। अतः अप्रैल १६१७ ई० में संयुक्त राज्य अमेरिका मित्रराष्ट्रों की ओर से युद्ध में शामिल हो गया। अमेरिका के प्रवेश से मित्रराष्ट्रों का पक्ष बड़ा ही सबल हो गया। धन-जन, अस्त्र-शस्त्र में काफी वृद्धि हो गई और मित्रराष्ट्रों की सफलता निश्चित हो गई।

१६१८ ई० में केन्द्रीय राज्यों ने मित्रराष्ट्रों को पराजित करने के लिये पुनः कमर कस कर प्रयत्न किया लेकिन जैसे दीपक बुझने के पहले एक बार लहक उठता है वैसे ही समर्पण करने के पहले उन्होंने एक बार जोश दिखलाया था। अवरोध और दीर्घकालीन युद्ध के कारण उनकी शक्ति का तो ह्रास हो चुका था। अमेरिका के प्रवेश से भी वे भयभीत हो उठे थे। टर्की, बल्गेरिया और आस्ट्रिया ने नवम्बर १६१८ ई० के पहले ही समर्पण कर दिया और शान्ति के लिये ईश्वर से प्रार्थना करने लगे।

नवम्बर में जर्मन कैसर ने गद्दी छोड़ दी और जर्मनी में जनतंत्र राज्य की स्थापना हुई। जनतंत्र राज्य ने लोहा रख दिया और सन्धि की माँग की। अब ११ नवम्बर १९१८ ई० को युद्ध बन्द हो गया।

पेरिस में शान्ति सम्मेलन की बैठक हुई। इसमें अमेरिका के राष्ट्रपति विल्सन ग्रेट ब्रिटेन के प्रधान मंत्री लायड जार्ज और फ्रांस के प्रधान मंत्री क्लेमेन्शो की प्रधानता थी। जर्मनी के साथ वर्साई की सन्धि हुई। जर्मनी पर सन्धि की शर्तें लाद दी गईं। उसे अलसेस लोरेन फ्रांस को लौटा देना पड़ा। उसके सभी बेड़े छीन लिये गये और स्थल सेना घटा दी गई। उसे क्षति पूर्ति करने के लिये बाध्य होना पड़ा। उसके बाहरी उपनिवेश और पूँजी भी छीन ली गई।

पोलैंड एक स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में खड़ा हुआ। इटली को आस्ट्रिया से कुछ प्रदेश मिले। आस्ट्रिया के अधीन रहने वाली जातियाँ स्वतन्त्र हो गईं। युगोस्लाविया का निर्माण हुआ।

सबसे बड़ी बात यह हुई कि राष्ट्रपति विल्सन के प्रयास से राष्ट्र संघ नामक एक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन कायम हुआ।

(ख) महायुद्ध की विशेषतायें—इतिहास में वर्णित जितनी भी लड़ाइयाँ हैं उन सबों में १९१४ ई० की लड़ाई अपूर्व है। इसकी अपनी कई विशेषतायें हैं।

यह केवल सेनाओं की नहीं बल्कि राष्ट्रों की लड़ाई थी। अब तक जितने युद्ध हुये उनमें खास कर सैनिक लड़ने वाले होते थे। युद्ध क्षेत्र में वे ही एक दूसरे का सामना करते थे किंतु प्रथम महायुद्ध में केवल सैनिक ही नहीं, राष्ट्र के राष्ट्र सम्मिलित थे। दुनिया के करीब सभी राष्ट्रों ने इसमें किसी न किसी रूप में भाग लिया था। ग्रेट ब्रिटेन की ओर से उसका विशाल साम्राज्य ही युद्ध में शामिल हुआ था। भूमंडल के अधिकांश भागों में भी युद्ध का क्षेत्र रहा था।

यह लड़ाई केवल जमीन पर ही नहीं लड़ी गई। जमीन के नीचे भी बहुत से सुरंग बनाये गये और लोग अपना जान की रक्षा के लिये इन सुरंगों में छिपा करते थे। समुद्र पर अनेक जल युद्ध हुये। आकाश में भी हवाई जहाजों से लड़ाइयाँ हुईं। हवाई जहाजों से बड़े बड़े शहरों पर बमवर्षा की जाती थी। इतिहास में हवाई युद्ध का यह प्रथम उदाहरण था। इस तरह जमीन, जल और आसमान तीनों ही युद्ध के विशाल वातावरण से व्याप्त थे। अतः इसे ठीक ही महायुद्ध या विश्व युद्ध की संज्ञा दी गई है।

यह अपने ढंग का पहला आधुनिक युद्ध था। उस समय तक विज्ञान ने जितने अस्त्र-शस्त्र का आविष्कार किया था उन सबों का प्रयोग हुआ। तोपों और बन्दूकों का इतना व्यवहार हुआ जितना पहले कभी नहीं हुआ था। जर्मन तोपों का ध्वंसात्मक कार्य बड़ा ही विचित्र था। कई मीलों से ये अपना करामात दिखाते थे। टैंक का भी इसी

युद्ध में अंग्रेजों द्वारा आविष्कार हुआ था। यह खाई या पहाड़ सबको पार कर काम करता था। हवा विषाक्त करने के लिये गैस का खूब ही प्रयोग होता था। समुद्र पर लोहे के विशाल सुदृढ़ जंगी जहाज, पनडुब्बी तथा टारपीडो जैसे विध्वंसक जहाज चलाये जाते थे।

इस तरह अनेक प्रकार के प्रबल एवं संहारक उपकरणों का अमानुषिक ढंग से युद्ध में व्यवहार हुआ। मानव ने मानव का निःसंकोच रक्तपात किया। पहले युद्ध में केवल सैनिक ही काम आते थे परन्तु इस प्रलयकारी युद्ध में बूढ़े, बच्चे तथा औरतें किसी का कोई ख्याल नहीं किया गया। सबों का वध हुआ—लाखों-करोड़ों की संख्या में। मनुष्य के खून से युद्धक्षेत्र रंजित हुआ। बम वर्षा और गैस के प्रयोग से निरीह जनता काल के गाल में चली जाती थी। कितनों के सर धड़ से अलग हो गये थे तो कितने की आँखें निकल गई थीं। इतने विस्तृत और व्यापक पैमाने पर नर-हत्या का उदाहरण मानव के अब तक के इतिहास में नहीं पाया जाता है। हजारों की संख्या में लोग लंगड़े, लूले, अन्धे और अपाहिज बने—उनका जीवन बेकार हो गया। कितनी माताओं की गोद सूनी पड़ गई, कितनी ललनाओं की माँग के सिन्दूर धुल गये। कितने होनहार जीवन जो सभ्यता एवं संस्कृति की गाड़ी को आगे बढ़ा सकते थे नष्ट हो गये। समाज के कितने लहलहाते पुष्प युद्ध के ताप से मुरझा गये। युद्ध के कोलाहल से कितने तपस्वियों का तप भंग हो गया और लेखकों की लेखनी रुक गई। युद्ध से केवल मानव जीवन ही नष्ट नहीं हुआ। असीम धन की बर्बादी हुई। धन पानी की तरह बेकार बहाया गया। करोड़ों की सम्पत्ति नष्ट हुई, कितने जहाज और अस्त्र-शस्त्र बर्बाद हुये, कितने नगर धूल में मिल गये और सारी सामाजिक व्यवस्था में ही उथल-पुथल मच गयी। मालूम पड़ता था कि सभ्य मानव समाज की प्रतिभा हत्या एवं विनाश की ही सेवा में लग गई थी। बर्बरता का दृश्य उपस्थित हो गया था।

# अध्याय ५६

# प्रथम महायुद्ध और ग्रेट ब्रिटेन

*(क) युद्ध से ग्रेट ब्रिटेन का नफा-नुकसान*—युद्ध में मित्र राष्ट्र विजयी हुये। मित्रराष्ट्रों में ग्रेट ब्रिटेन का एक प्रमुख स्थान था लेकिन विजय बड़ी मँहगी थी क्योंकि धन जन के रूप में इसका बहुत मूल्य चुकाना पड़ा था। चार वर्ष में ग्रेट ब्रिटेन के लगभग १० लाख लोग मारे गये और बहुत से लोग अन्धे, लँगड़े, लूले बनकर बेकार हो गये। इन मृतकों और बेकारों में कितने होनहार नवयुवक थे जो न मालूम समाज को क्या क्या दे सकते थे।

लाखों की सम्पत्ति भी बर्बाद हुई और लाखों पौंड युद्ध की तैयारी में पानी की तरह बहाये गये। युद्ध कर्ज बढ़ कर ८ अरब पौंड हो गया। इसका वार्षिक सूद ३० करोड़ था। युद्ध के पूर्व देश की आय भी इस रकम की आधी ही थी। अतः युद्ध के बाद देश की आर्थिक स्थिति बड़ी ही दयनीय थी।

शिक्षा के क्षेत्र में हानि हुई। शिक्षा पर खर्च घटा दिया गया। सैकड़ों नवयुवक *विद्यार्थी स्कूल कालेज छोड़ कर युद्ध में भाग लेने के लिये चले गये।*

ग्रेट ब्रिटेन को खाद्य पदार्थ बाहर से ही मिलता था किन्तु युद्ध-काल में विदेशी व्यापार में बाधा पड़ गयी। इससे खाद्य पदार्थों के मूल्य में वृद्धि होने लगी। चीजें बहुत मँहगी हो गयीं इसी में बेकारी का प्रकोप भी बढ़ा। युद्ध के लिये लाखों सैनिक भर्ती किये गये थे। युद्ध के बाद उतने सैनिकों की आवश्यकता नहीं रह गयी और सबों को काम भी देना कठिन था। युद्ध-काल में कई कारखाने अपने व्यवसाय को छोड़ कर युद्ध-सामग्री तैयार करने लगे थे लेकिन युद्ध का अन्त हो जाने पर उन सामग्रियों की जरूरत नहीं रह गयी और वे कारखाने बन्द हो गये। इससे हजारों मजदूर बेकार हो गये। बेकार सैनिकों और मजदूरों की समस्या विकट थी और सरकार को इस सम्बन्ध में भी काफी खर्च करना पड़ा। चालू कारखानों में भी युद्ध-काल की दर से मजदूरी नहीं मिल रही थी। अतः वहाँ के मजदूर भी असन्तुष्ट थे। इन सब का परिणाम यह हुआ कि जहाँ-तहाँ मजदूर हड़ताल कर सरकार तथा पूँजीपति पर दबाव डालने लगे।

युद्ध काल में अमेरिका ने ग्रेट ब्रिटेन को और ग्रेट ब्रिटेन ने अन्य मित्र राष्ट्रों को बहुत कर्ज दिया था लेकिन युद्धोत्तरकाल में कर्ज चुकाने में बड़ी कठिनाई होने लगी और वसूली का काम अधूरा ही रह गया। ग्रेट ब्रिटेन कुछ समय तक अमेरिका को

अपना कर्ज किस्तवार चुकाता रहा किन्तु अन्य राष्ट्र उसे कर्ज नहीं चुका सके। कुछ समय तो ऐसा हुआ कि अमेरिका ने जर्मनी को कर्ज दिया जिससे जर्मनी ने क्षतिपूर्ति की रकम मित्र राष्ट्रों को दी और मित्रराष्ट्र फिर वही रकम अमेरिका को देकर अपना कर्ज चुकाने लगे किन्तु समयगति के साथ-साथ युद्ध ऋण और क्षतिपूर्ति की समस्या विकट ही होती गई और इसका पूरा समाधान नहीं हो सका।

जर्मनी ग्रेट-ब्रिटेन का एक बहुत बड़ा खरीदार था। जर्मनी में बहुत से ब्रिटिश माल जाते थे, किन्तु अब पराजित जर्मनी जिस पर क्षतिपूर्ति करने का बहुत बड़ा बोझ लाद दिया गया उस स्थिति में नहीं रहा उसके साथ ब्रिटिश व्यापार की क्षति हुई।

महायुद्ध से राष्ट्रीयता को प्रोत्साहन मिला और ब्रिटिश साम्राज्य के कई हिस्सों में राष्ट्रीय भावना प्रबल हो उठी। भारत ने ब्रिटिश सरकार की धन-जन से बड़ी मदद की थी। युद्ध का उद्देश्य भी लोक-तंत्र की रक्षा और सब को आत्म-निर्णय का अधिकार देना ही बतलाया गया था। अगस्त १९१७ ई० में यह भी घोषणा कर दी गई कि ब्रिटिश सरकार भारत में उत्तरदायी शासन स्थापित करना चाहती है। अतः पराधीन भारतीयों के हाथ में उज्जवल भविष्य के सम्बन्ध में नयी आशा का संचार हुआ किन्तु जब युद्ध के अन्त में आशा पूरी नहीं हुई तो राष्ट्रीय आन्दोलन सबल होने लगा।

आयरी स्वराज्य के प्रश्न ने उदार काल की रीढ़ को तो पहले ही तोड़ दिया था महायुद्ध ने इसकी टूटी हुई रीढ़ को और भी कमजोर बना डाला। युद्ध-नीति ने इस दल में मतभेद पैदा कर दिया और इस तरह इसमें पुनः विभाजन कर दिया गया जिससे यह दल काफी दुर्बल हो गया।

लेकिन बिना खतरा मोल लिये लाभ भी तो नहीं होता है। ग्रेट ब्रिटेन ने युद्ध में शामिल होकर धन-जन की क्षति उठायी किन्तु उसे फायदे भी हुये। समस्त संसार में उसकी धाक जम गई और समुद्र पर उसका आधिपत्य कायम रह गया। जिन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये वह युद्ध में शामिल हुआ उन उद्देश्यों की पूर्ति भी हो गई। बेल्जियम की रक्षा हुई और उसका तट सुरक्षित रहा।

अन्तर्राष्ट्रीय सन्धि की उपेक्षा करने का फल जर्मनी को मिल गया। उसकी नाविक शक्ति तोड़ दी गई और उसे केवल एक लाख सैनिक दल रखने की आज्ञा मिली। उसके व्यापारिक जहाजों का टन भार ५७ लाख से ५ लाख घटाकर कर दिया गया। उसे क्षतिपूर्ति के लिये बहुत बड़ी रकम देनी पड़ी जिसमें इंगलैंड को भी हिस्सा मिला। जर्मनी के सभी उपनिवेश छीन लिये गये और उसकी बाहरी पूँजी जब्त कर ली गई। इस तरह जर्मनी को आर्थिक तथा सैनिक दृष्टि से कमजोर कर दिया गया।

ब्रिटिश साम्राज्य के विस्तार में भी सहायता मिली। जर्मनी से जर्मन पूर्वी

अफ्रीका और टर्की से पैलेस्टाइन तथा मेसोपोटामिया ग्रेट ब्रिटेन को मिले। राष्ट्र संघ के तत्वावधान में ग्रेट ब्रिटेन इन प्रदेशों में शासन करता रहा और उसे काफी लाभ हुआ।

कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और दक्षिणी अफ्रीका ने स्वेच्छा से युद्ध में ब्रिटिश सरकार की सहायता की और ब्रिटिश सरकार ने कैबिनेट में उन्हें भी स्थान दिया। इस तरह ग्रेट ब्रिटेन और डोमीनियनों में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो गया।

राष्ट्रसंघ की कार्यकारिणी परिषद में ५ स्थायी सदस्य थे जिनमें एक स्थान ग्रेट ब्रिटेन को ही प्राप्त था। अमेरिका राष्ट्र संघ का सदस्य नहीं था। अतः दीर्घकाल तक संघ में ग्रेट ब्रिटेन का ही बोल बाला रहा और सर्वत्र उसी की तूती बोलती रही।

देश के अन्दर महत्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन हुये। स्त्रियों तथा मजदूरों का महत्व बढ़ा और उनकी स्थिति में सुधार हुआ। स्त्रियों को मताधिकार मिला और मजदूरों की दशा में सुधार के लिये उत्तरोत्तर प्रयत्न किया जाने लगा। मजदूर दल की स्थिति भी दृढ़ होने लगी और इसकी सहायता के लिये दूसरे लोग भी मुँह ताकने लगे।

## ( ख ) युद्धकाल में ग्रेट ब्रिटेन की आन्तरिक स्थिति

ऐसक्विथ की नीति—जब प्रथम महायुद्ध का श्रीगणेश हुआ उस समय लिबरल सरकार थी और लार्ड ऐसक्विथ प्रधान मंत्री थे। उदारवादियों को आयरी राष्ट्रवादियों तथा मजदूर सदस्यों का सहयोग प्राप्त था। सर्वप्रथम ऐसक्विथ ने लार्ड किचनर को युद्ध मंत्री बनाया। किचनर ने सूडान तथा दक्षिणी अफ्रीका में अपनी योग्यता एवं प्रतिभा का परिचय दिया था। वह बड़ा ही बुद्धिमान एवं दूरदर्शी था। बहुत लोग तो समझते थे कि लड़ाई शीघ्र ही समाप्त हो जायगी लेकिन किचनर ने बतलाया कि नहीं, लड़ाई कम से कम ३ वर्ष तक अवश्य हो चलेगी। उसने बड़ी मुस्तैदी से अपनी तैयारी की—५,००,००० स्वयं सेवक संगठित किये गये। ये किचनर सैनिक कहलाते थे और दो वर्षों तक बड़ी बहादुरी से इन्होंने काम किया परन्तु किचनर की मुस्तैदी के बावजूद भी युद्ध की प्रगति सन्तोषजनक नहीं थी। ऐसक्विथ सुस्ती से काम करता था और उसमें युद्ध जैसे संकट काल में जल्दी से निर्णय करने की क्षमता नहीं थी। युद्ध सामग्री का भी बहुत ही अभाव था। गैलीपोली नामक स्थान में मित्र राष्ट्रों की पराजय हो गयी। इन सब कारणों से ऐसक्विथ मंत्रिमंडल के विरुद्ध असन्तोष फैलने लगा। अतः मई १९१५ ई० में मंत्रिमंडल का पुनर्संगठन हुआ। अब लिबरल, कन्जर्वेटिव तथा मजदूर नेताओं को सम्मिलित कर एक संयुक्त मंत्रिमंडल की स्थापना हुई। ऐसक्विथ ही इसके भी प्रधान मंत्री बने

रहे। बोनरला उपनिवेश मंत्री और बालफर जल सेना मंत्री नियुक्त हुये। युद्ध सामग्री प्रस्तुत करने के लिये एक नया विभाग ही खोल दिया गया और लायड जार्ज को इसका मंत्री नियुक्त कर दिया गया। उसने पर्याप्त तत्परता दिखलायी और युद्ध के सामानों में काफी वृद्धि हुई। उसने १९१६ ई० में अनिवार्य भर्ती नियम लागू कर सेना का भी विस्तार किया किन्तु जो लोग अपने धर्म या आन्तरिक प्रेरणा से युद्ध एवं रक्तपात के विरोधी थे उन पर यह नियम बलात् नहीं लादा गया। इसी समय लार्ड किचनर के जहाज को रूस जाने में कहीं ठोकर लगा और उसकी मृत्यु ही हो गई। अब लायड जार्ज ही उसके पद पर आसीन हुआ और युद्ध सचिव बन गया।

**ऐसक्विथ का पतन**—इस समय तक ऐसक्विथ अपने कार्य से लोगों को संतुष्ट नहीं कर सका था। अतः लायड जार्ज से उसका मतभेद हो गया। वह एक युद्ध कैबिनेट का निर्माण करना चाहता था जिसमें ऐसक्विथ को स्थान न मिलता। इससे ऐसक्विथ सहमत नहीं हुआ। इस पर लायड जार्ज ने पद-त्याग कर दिया और इसके बाद ऐसक्विथ ने भी त्याग-पत्र दे दिया।

**लायड जार्ज का प्रधान मंत्रित्व**—इस तरह लिबरल दल में पुनः फूट पैदा हो गई। अब लायड जार्ज ने नवीन मंत्रिमंडल संगठित किया। उसे कुछ लिबरलों को छोड़ कर सभी लोगों का समर्थन प्राप्त था। उसने अपने सारे प्रयत्नों को युद्ध विजय की ओर ही केन्द्रित किया।

**कैबिनेट में परिवर्तन**—इस समय कैबिनेट शासन प्रणाली में महान् परिवर्तन हुये। लायड जार्ज ने एक युद्ध कैबिनेट स्थापित किया। इसमें ५ ही सदस्य रहे जो तीनों ही दल कन्जर्वेटिव, लिबरल तथा लेबर का प्रतिनिधित्व करते थे। पहले दल के तीन, दूसरे और तीसरे दल के एक-एक प्रतिनिधि थे। इनमें से एक को छोड़कर अन्य सभी सदस्यों को विभागीय शासन-भार से भी मुक्त रखा गया। आवश्यकता पड़ने पर प्रमुख विभागों के प्रमुख अध्यक्षों और सैन्य विभाग के विशेषज्ञों को इसकी बैठक में आमन्त्रित कर लिया जाता था। पहले कैबिनेट की बैठक में इसके सदस्यों के अतिरिक्त अन्य कोई भी नहीं बैठ सकता था। कैबिनेट की बैठक भी पहले की अपेक्षा अधिक होने लगी। प्रतिदिन और कभी-कभी तो एक ही दिन में कई बार इसकी बैठकें होती थीं। युद्ध कैबिनेट राज्य के सामान्य कामों को भी देखता था और इस समय का कार्यक्षेत्र बहुत ही विस्तृत हो गया। राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक अंग पर राज्य का नियन्त्रण स्थापित हो गया था। प्रत्येक स्त्री-पुरुष के भोजन पर भी नियन्त्रण था। युद्ध मंत्रिमंडल ( वार कैबिनेट ) की बैठक में भाग लेने के लिये डोमीनियन्स के भी प्रधान मंत्री बुलाये जाते थे। उस समय इसे साम्राज्य युद्ध-मंत्रिमंडल

(इम्पीरियल वार कैबिनेट) कहा जाता था। इस तरह दक्षिणी अफ्रीका के फील्ड मार्शल स्मट्स ने युद्ध नीति के निर्माण में महत्वपूर्ण भाग लिया था। इसी समय १९१७ ई० में एक कैबिनेट सचिवालय (सेक्रेटेरियट) की भी स्थापना हुई। एक सेक्रेटरी को इसका प्रधान बनाया गया। अब कैबिनेट की कार्यवाही एवं निर्णयों का पूरा विवरण रखा जाने लगा।

लायड जार्ज ने एक नये ढंग का सैनिक प्रबन्ध भी किया था। पहले विभिन्न मित्रराष्ट्रों की सेना अपने अपने सेनापति के अधीन काम करती थी किन्तु इससे उत्तरदायित्व विभाजित हो जाता था और काम सुचारु रूप से नहीं होता था। लायड जार्ज ने मित्र राष्ट्रों की सभी सेनाओं का प्रधान फ्रांसीसी सेनापति मार्शल फोश को बना दिया।

मुख्य घरेलू समस्यायें—इसी काल में तीन प्रमुख घरेलू समस्यायें भी पैदा हुईं जिनका निराकरण आवश्यक था। पहली समस्या आयरलैंड से, दूसरी स्त्रियों के अधिकार से और तीसरी राष्ट्रीय शिक्षा में सुधार से सम्बन्धित थी।

आयरी समस्या—हम देख चुके हैं कि १९१४ ई० में किस तरह आयरी होम-रूल नियम पास हुआ और महायुद्ध के छिड़ने पर इसे स्थगित कर देना पड़ा। इससे रेडमंड के नेतृत्व में राष्ट्रीय दल को सन्तोष हुआ और उसने युद्ध में इगलैंड को मदद देने के लिये आश्वासन दिया। बहुत लोग सोचने लगे कि युद्ध के कारण आयरी समस्या दब गई और आगे अब शान्ति कायम रहेगी किन्तु ब्रिटिश सरकार की ही भूलों से परिस्थिति बदल गई और इसने आयरियों की सहानुभूति को खो दिया। ब्रिटिश सरकार ने अन्य आयरियों की अपेक्षा अलस्टर वासियों में अधिक विश्वास प्रदर्शित किया। अलस्टर को जहाँ अपनी सेना सगठित करने का अधिकार मिला वहाँ दक्षिणी आयरलैंड के निवासी इस अधिकार से वंचित रखे गये। इन्हें यह भी भय था कि वे अनिवार्य सैनिक सेवा सम्बन्धी नियम के भी शिकार होंगे। अब उग्रपंथी उत्तेजित होने लगे और सिनफेन नामक एक क्रान्तिकारी दल का उदय हुआ। इसने युद्ध में इगलैंड को सहयोग न देने की घोषणा कर दी और जनता की सहायता से आयरी जनतन्त्र की स्थापना के लिये प्रयत्न किया जाने लगा। सिन-फेनर्स पूर्ण स्वतन्त्रता के समर्थक थे। जर्मनी ने भी इसके लिये आश्वासन दे ही दिया। अमेरिकी आयरियों से भी इसे आर्थिक सहायता मिलने लगी। बस, अब क्या था। १९१६ ई० में इस्टर सोम के इस दल ने भयकर बगावत का झंडा खड़ा कर दिया लेकिन विद्रोह असफल रहा। आतुर राष्ट्रवादियों ने इसमें पूरा सहयोग नहीं दिया और ब्रिटिश अवरोध के कारण जर्मनी भी मदद देने में असमर्थ रहा। ब्रिटिश सरकार ने बड़ी कठोरता के साथ विद्रोह को दबाया भी। आयरलैंड में फौजी

कानून लागू हुआ, कितने गोली-बारूद के शिकार हुये, कितने जेल गये और कितने मातृ-भूमि की गोद से ही वंचित कर दिये गये।

लेकिन दमन से आन्दोलन दबाया ही जा सकता है मानव भावना को कुचला नहीं जा सकता। उसमें भी कुछ थोड़े से मनुष्यों को ही थोड़े समय के लिये दबाया जा सकता है किन्तु समस्त राष्ट्र को नहीं, पूरी जाति को नहीं। आयरी उग्रपंथी तो अपने विचार में और भी दृढ़ हो गये। रेडमंड ने चाहा कि ब्रिटिश सरकार होम-रूल लागू कर दे ताकि आन्दोलन शान्त हो जाय परन्तु ब्रिटिश सरकार ने नहीं माना। इस पर रेडमंड ने अपने सहयोगियों के साथ कॉमन्स सभा का बहिष्कार कर दिया। १९१७ ई० में डबलिन में एक आयरी राष्ट्रीय परिषद् की बैठक हुई जिसमें शांति सभा में पृथक् प्रतिनिधित्व की माँग की गई। उसी वर्ष क्रांतिकारी नेता डी वेलेरा सिनफेन का अध्यक्ष भी निर्वाचित किया गया यद्यपि वह अभी जेल ही में था। लायड जार्ज ने आयरियों की एक बैठक बुलायी लेकिन इससे कोई फायदा नहीं हुआ। १९१८ ई० में राष्ट्रीय नेता रेडमंड मर गया और डिलन उसका उत्तराधिकारी हुआ। उसने युद्ध में असहयोग की नीति अपनायी और सेना में आयरियों की भर्ती का विरोध किया। उसी साल दिसम्बर में पार्लियामेंट के लिये निर्वाचन हुआ और उसमें सिनफेनर्स को ही बहुमत मिला। वे ७३ सीट प्राप्त किये लेकिन वे ब्रिटिश पार्लियामेंट में बैठना नहीं चाहते थे। वे जनवरी १९१९ ई० में डबलिन में अपनी बैठक किये। इस तरह आयरी पार्लियामेंट (डेलआयरियन) का संगठन हुआ और आयरलैंड के जनतन्त्र की घोषणा कर दी गई।

स्त्री समस्या—बीसवीं सदी के प्रारंभ से ही स्त्रियों में अपूर्व जागरण आया और वे अपने अधिकारों के लिये आन्दोलन करने लगीं। उन्होंने सरकार को तंग करने की नीति अपनायी और इसके लिये उचित या अनुचित सभी तरह के उपायों को काम में लाया। सरकारी कामों में अड़ंगा डालना, सभाओं में हुल्लड़बाजी करना, भूख हड़ताल के द्वारा दबाव डालना, चीजों को तहस-नहस करना, ये सब उनके ढंग थे परन्तु ये सब शान्तिकाल में ही किये गये। जब महायुद्ध प्रारंभ हो गया तो स्त्रियों ने भी अपना आन्दोलन स्थगित कर दिया और पुरुषों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर देश की रक्षा के लिये क्रियाशील हो उठीं। उन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में राष्ट्र को बहुमूल्य सेवायें प्रदान कीं। गृह-प्रबन्ध और बच्चों के पालन-पोषण का भार तो उनपर था ही, उन्होंने कई कार्यालयों और युद्ध के सामान बनने वाले कारखानों में भी काम किया। उन्होंने उपचारिकाओं के रूप में घायलों और असमर्थों की सेवा तथा सहायता भी की। अपनी सेवाओं से इन औरतों ने पुरुष वर्ग की सहानुभूति प्राप्त कर ली और जहाँ पहले इनकी राजनैतिक माँग की उपेक्षा की जाती थी वहाँ अब

कृतज्ञतास्वरूप वह स्वीकृत कर ली गई। १९१८ ई० में जनता का प्रतिनिधित्व नियम* पास कर स्त्रियों को पहले पहल मताधिकार दिया गया।

इस नियम के द्वारा काउन्टी और बौरों में निवास तथा पेशा पर आधारित पुराना योग्यता का अन्त कर दिया गया और बालिग मताधिकार का सिद्धान्त स्वीकृत हुआ। २१ वर्ष के सभी पुरुषों को मताधिकार प्राप्त हुआ। इस नियम ने ३० वर्ष तक की स्त्रियों को भी मताधिकार प्रदान कर दिया यदि वे या उनके पति स्थानीय सरकार के निर्वाचक रहे हों। अब मतदाताओं की संख्या में बहुत वृद्धि हुई। अब जनसंख्या म तीन में दो व्यक्ति मतदाता बन गये। मतदाताओं की संख्या २ करोड़ १० लाख ( २१ मिलियन ) हो गई। इनमें ८५ लाख ( ८½ मिलियन ) केवल स्त्रियाँ ही थीं। सीटों के वितरण के सम्बन्ध में यह निश्चय हुआ कि ग्रेट ब्रिटेन में ७०,००० और आयरलैंड ४३,००० व्यक्ति पर एक सदस्य निर्वाचित हो।

शिक्षा सम्बन्धी समस्या—१९०२ ई० म एक शिक्षा नियम पास हुआ था, किन्तु अभी तक राष्ट्राय पैमाने पर शिक्षा का खूब प्रचार नहीं हो रहा था। १९१६ ई० में ही पेसक्विथ सरकार ने विश्वविद्यालय के हर्बर्ट फिशर नामक एक प्राध्यापक को शिक्षामन्त्री नियुक्त किया और सुधार का काम उसे ही सौंप दिया गया। उसके प्रयास से १९१८ ई० में शिक्षा नियम पास हुआ। इसके अनुसार काउन्टी तथा बौरों के कार्य क्षेत्र को विस्तृत और उनके उत्तरदायित्व को व्यापक बनाया गया। शिक्षकों तथा शिक्षालयों की संख्या बढ़ायी जाने लगी। शिक्षकों के वेतन की नियमित चुकती पर विशेष ध्यान दिया गया। प्राथमिक शिक्षा पूर्णरूपेण नि शुल्क कर दी गई। १२ वर्ष से कम उम्र वाले लड़कों से मजदूरी नहीं करायी जा सकती थी। १४ या १५ वर्ष की उम्र तक स्कूल में पढ़ना अनिवार्य था। स्कूलों में विद्यार्थियों के मनोविनोद, व्यायाम, खेल कूद के प्रबन्ध पर जोर दिया गया और उनके स्वास्थ्य की नियमित डाक्टरी परीक्षा की व्यवस्था की गई। इन नियमों के पालन को देखने के लिये निरीक्षकों की भी नियुक्ति हुई। शिक्षा के क्षेत्र में राज्य की ओर से विशेष खर्च करने की व्यवस्था की गई।

---

* रिप्रेज़ेंटेशन ऑफ दी पीपुल ऐक्ट

## अध्याय ५७

# गृहनीति ( १९१९–१९३९ ई० )

( १ ) मजदूर दल का उदय—उदार दल का ह्रास—दोनों महायुद्धों के बीच ( १९१९-३९ ई० ) घरेलू क्षेत्र में मजदूर दल का उदय और उदार दल का ह्रास एक प्रमुख घटना है। १९वीं सदी में ग्रेट ब्रिटेन में दो मुख्य राजनीतिक दल थे—उदार ( लिबरल ) और अनुदार ( कन्जर्वेटिव )। बीसवीं सदी में भी यह परम्परा कायम रही है। यों तो कहने के लिये तीन दल हैं—मजदूर, उदार और अनुदार किन्तु वास्तव में मजदूर तथा अनुदार दलों की ही प्रधानता रही है और उदार दल उत्तरोत्तर पतन की ही ओर बढ़ता रहा है।

राजनीतिक क्षेत्र में मजदूर दल का विकास २०वीं सदी की ही देन है। १८९९ ई० में ब्रिटिश ट्रेड यूनियन कांग्रेस ने पार्लियामेंट में श्रम सदस्यों की संख्या बढ़ाने के लिये एक कमेटी नियुक्त की। दूसरे साल श्रम प्रतिनिधित्व समिति ( लेबर रिप्रेजेन्टेशन कमेटी ) के नाम से कई संस्थाओं को मिलाकर एक संघ कायम हुआ। १९०६ ई० में इस कमेटी का नाम 'लेबर' पार्टी में परिवर्तित हो गया। अब श्रमिकों का संगठन सुचारु रूप से होने लगा। पार्लियामेंट में उनके प्रतिनिधियों की संख्या क्रमशः बढ़ती गई। १९०० ई० में उनके २५ प्रतिनिधि थे। १९०६ ई० में उनकी संख्या २९ थी और महायुद्ध के पहले तक श्रम प्रतिनिधि ५० तक हो गये।

लड़ाई के बाद देश की आर्थिक स्थिति खराब हो गई। बेकारी, गरीबी और महँगी की समस्या बढ़ गई। इसे हल करने के लिये मजदूर दल ने समाजवाद का समर्थन किया और अपने कार्यक्रम में इसे समुचित स्थान दिया। अपने सिद्धान्तों को कार्यान्वित करने के लिये भी वे हिंसात्मक उपायों के बदले वैधानिक उपायों के ही समर्थक थे। अतः मजदूर दल जनता में अधिकाधिक लोकप्रिय होता गया और इस सदी के मध्य तक प्रत्येक निर्वाचन में उसके सदस्यों की संख्या बढ़ती ही गई। निर्वाचन में श्रम दल के सदस्य १९१८ ई० में ७०, १९२२ ई० में १४२, १९२९ ई० में २८९ और १९४५ ई० में ४०० से अधिक ही सफल हुये थे। इसे तीन बार मंत्रिमंडल भी बनाने का सुअवसर प्राप्त हुआ—१९२४ ई०, १९२९ ई० और १९४५ ई०। प्रथम दो अवसरों पर उदारवादियों की सहायता प्राप्त थी किन्तु तीसरे अवसर पर इसे मंत्रिमंडल के निर्माण में किसी अन्य दल की सहायता की आवश्यकता नहीं थी। यह मजदूर दल का प्रथम स्वतंत्र मंत्रिमंडल था। ५ वर्ष पूरा हो जाने पर

१६५० ई० में जब फिर चुनाव हुआ तो मजदूर दल को फिर बहुमत मिला किन्तु इस बार बहुमत बहुत थोड़ा था। अतः दूसरे साल के चुनाव में श्रम दल पदच्युत हो गया।

अनुदार दल मजदूर दल का विरोधी था। यह समाजवादी-सिद्धान्तों का विरोध करता रहा है। यह पूँजीवादी व्यवस्था का समर्थक रहा है और इसी में आवश्यकतानुसार सुधार करना चाहता है। अतः प्रथम महायुद्ध के बाद इस दल का भी स्थान मजबूत ही रहा है। राजनीतिक रंग मन्च पर मजदूर और अनुदार दल ही एक दूसरे के प्रतियोगी के रूप में उपस्थित होते रहे और संयुक्त मन्त्रिमंडल छोड़कर कभी एक का तो कभी दूसरे का मंत्रिमंडल बनता रहा है।

उदार दल की शक्ति दिन पर दिन घटती ही गयी। इसके उत्तरोत्तर ह्रास के कई कारण हुये। इसकी कमजोरी का सबसे बड़ा कारण था—पारस्परिक द्वेष एवं विभाजन। १८८६ ई० के बाद आयरी स्वराज्य के प्रश्न पर यह दल दो भागों में बँट गया—होमरूलर और यूनियनिस्ट उस समय यूनियनिस्ट भी अनुदार दल के साथ मिल गये जिससे इस दल की शक्ति घट गई। होमरूल के नेता ग्लैडस्टन और यूनियनिस्ट के नेता सैलिसबरी थे। फिर १६१६ ई० में युद्ध मन्त्रिमंडल (वार कैबिनेट) के निर्माण के प्रश्न पर उदार दल में विभाजन हो गया—स्वतंत्र उदारवादी और राष्ट्रीय उदारवादी। पहले के नेता ऐसक्विथ और दूसरे के लायड जार्ज थे। पीछे अल्पकाल के लिये संरक्षण के प्रश्न पर दोनों दल एक हो गये थे किन्तु १६२६ ई० में हड़ताल को लेकर फिर दोनों में मतभेद हो गया। १६२६ ई० में लायड जार्ज का दल भी दो भागों में बँट गया। उसके अधीन रहने वाले वामपक्षी और जॉन साइमन के अधीन रहने वाले दाँये पक्ष कहलाये। फूट एवं विभाजन के अलावे उदारवादी दल की कमजोरी का यह भी कारण था कि उसकी न तो कोई नीति स्पष्ट थी और न उसका कोई लाभदायक कार्यक्रम ही था। इनके कार्यक्रम में जो प्रमुख समस्यायें थीं उनका निराकरण हो चुका था। लार्ड सभा के अधिकारों को बहुत सीमित कर दिया गया था। आयरी समस्या भी हल हो चुकी थी और मताधिकार का भी पर्याप्त विस्तार किया जा चुका था। नई परिस्थिति में जो नई समस्यायें थीं वे श्रम दल के कार्यक्रम में रख ली गई थीं।

## (२) राजनीतिक दलबन्दी

(क) लायड जार्ज का मन्त्रिमंडल (१६१८-२२ ई०)—हम देख चुके हैं कि युद्ध काल में १६१६ ई० में लायड जार्ज के नेतृत्व में संयुक्त सरकार की स्थापना हुई थी। इसके युद्ध कालीन कार्यों का भी वर्णन हो चुका है। युद्ध समाप्त होने पर

निर्वाचन हुआ और संयुक्त सरकार के ही पक्ष में बहुमत आया किन्तु इसमें अनुदार दल वालों की प्रधानता थी। लायड जार्ज के ही नेतृत्व में पुनः संयुक्त सरकार की स्थापना हुई जो ४ वर्षों तक कायम रही।

इस सरकार के सामने युद्ध जनित अनेक विकट समस्यायें विकराल रूप धारण किये उपस्थित थीं। बेकारों की संख्या बहुत बढ़ गई थी और नौकरी मिलने में बड़ी कठिनाई हो रही थी। चीजें महँगी थीं किन्तु मजदूरी कम थी। जनता कर के बोझ से दुखित थी। मालिक-मजदूर का सम्बन्ध कटु होता जा रहा था और हड़ताल कर देना तो एक साधारण बात हो गयी थी। हड़ताल होने से फिर उत्पादन का ह्रास होता था। व्यापार की दशा भी ठीक नहीं थी। इस तरह आर्थिक दशा बड़ी ही शोचनीय थी और ऐसी हालत में कोई सुधार-योजना लागू करना भी दुस्तर कार्य था। वेल्स, आयरलैंड, भारत तथा मिश्र आदि देशों में भी असन्तोष की अग्नि सुलगती जा रही थी। सरकार ने इन सभी समस्याओं को हल करने का भरपूर प्रयत्न किया और इसे काफी सफलता भी मिली।

सर्वप्रथम बेकारी बीमा की व्यवस्था की गई। प्रति वर्ष अधिक से अधिक १५ सप्ताह तक बेकार पुरुषों को प्रति सप्ताह १५ शिलिंग और बेकार स्त्रियों को १२ शिलिंग आर्थिक सहायता देने का प्रबन्ध हुआ, लेकिन इसके लिये हर साल बहुत बड़ी रकम खर्च करनी पड़ती थी और इस पर भी बेकारी की समस्या स्थायी रूप से हल नहीं हो रही थी। अतः इस नियम से विशेष फायदा नहीं हुआ। सरकार ने देशान्तर गमन को भी प्रोत्साहित किया किन्तु बहुत से लोग न तो बाहर जाने के लिये उत्सुक थे और न दूसरे ही देश उन्हें अपने यहाँ खुशी से रखना चाहते थे। इस तरह बेकारी समस्या निर्मूल नहीं की जा सकी। १९२० ई० में बेकारी-बीमा नियम के अनुसार प्रायः सभी प्रकार के मजदूरों के लिये बीमा अनिवार्य कर दिया गया। स्त्रियों को मताधिकार तो पहले दे ही दिया गया था किन्तु १९१९ ई० के एक नियम के अनुसार उन्हें पेशों, पदों तथा सार्वजनिक उत्सवों की दृष्टि से भी पुरुषों के साथ समानता का पद दे दिया गया। १९२० ई० में वेल्स के चर्च को राज्य से अलग कर स्वराज्य प्रदान किया गया। १९२१ ई० में रूस के साथ एक व्यापारिक समझौता किया गया। युद्ध सम्बन्धी कुछ प्रमुख व्यवसायों की रक्षा के लिये व्यवसाय सुरक्षा नियम के अनुसार ३३⅓ प्रतिशत चुंगी लगाने की व्यवस्था की गई।

भारत को १९१९ ई० में गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट के अनुसार उत्तरदायी शासन के पथ पर और मिश्र को १९२२ ई० तक ऐक्ट के द्वारा स्वाधीनता के पथ पर अग्रसर किया गया किन्तु हम यथास्थान पर देखेंगे कि भारत तथा मिश्र को जो

( ख ) अन्य मन्त्रिमंडल—हम देख चुके हैं कि संयुक्त सरकार में अनुदारवादियों का ही बहुमत था यद्यपि उदारवादी लायड जार्ज प्रधान मंत्री थे। १६२२ ई० में अनुदारवादियों ने अपना समर्थन हटा लिया और लायड जार्ज ने पदत्याग कर दिया। अब अनुदार नेता बोनरला प्रधान मंत्री बने। शीघ्र ही चुनाव हुआ और उसमें अनुदारवादियों को ही बहुमत मिला लेकिन बुरे स्वास्थ्य के कारण ला ने एकाध महीने के बाद ही पदत्याग कर दिया और बाल्डविन प्रधान मंत्री हुआ। वह संरक्षण की नीति का समर्थक था और इसी प्रश्न पर एक चुनाव भी कराया गया। उसमें अनुदार दल का बहुमत नहीं मिला। उदार और मजदूर मिलकर अनुदार से अधिक थे। उदारवादियों और मजदूरों में भी मजदूर अधिक थे। अतः १६२४ ई० में उदारवादियों के समर्थन से मजदूर दल का मंत्रिमंडल बना। रैमजे मैकडोनल्ड प्रधान मंत्री हुये।

स्वतंत्र बहुमत न रहने से मजदूर सरकार की स्थिति कमजोर थी। अतः विशेष महत्वपूर्ण कानून नहीं पास किये जा सके। सरकार के सामने अनेक अन्य कठिनाइयाँ थीं जैसे बेकारी, मन्दी, सस्ते घरों का अभाव आदि। सरकार ने कुछ सुधार के लिये प्रयत्न भी किया। युद्धकाल के कुछ करों को उठा दिया गया और कुछ करों को कम कर दिया गया। ह्वीटली या हाउसिंग नियम के अनुसार सरकार की ओर से सस्ते घरों के निर्माण की व्यवस्था की गई। रूस से एक व्यापारिक समझौता भी किया गया जिसके अनुसार रूस में अंग्रेजी माल भेजने की व्यवस्था की गई लेकिन इन सुधारों के करने पर भी यह मजदूर सरकार लोकप्रिय नहीं बन सकी। इसका झुकाव बोल्शेविक रूस की ओर कुछ अधिक था। अतः उदारवादी और अनुदारवादी इकट्ठे और सशक्ति होने लगे। रूस से व्यापारिक समझौता होने से शंका में और भी वृद्धि होने लगी। विरोधियों ने कटु आलोचना करनी शुरू की। विरोधी पक्ष ने एक जाँच समिति की स्थापना के लिये एक प्रस्ताव पेश किया। उदारवादियों ने सरकार का समर्थन नहीं किया। अतः कॉमन्स सभा में सरकार की हार हो गई। तत्पश्चात् चुनाव हुआ और इसमें अनुदारवादियों को बहुमत मिला। अतः बाल्डविन ने अपना दूसरा मन्त्रिमंडल बनाया।

बाल्डविन मन्त्रिमंडल ५ वर्षों तक कायम रहा। बाल्डविन खाद्य पदार्थों के आयात पर चुंगी लगाना नहीं चाहता था किन्तु कुछ प्रमुख उद्योगों की रक्षा के लिये चुंगी लगाना आवश्यक समझता था। यह सीमित संरक्षण की योजना थी जिसका फल अच्छा नहीं हुआ। विदेशी खाद्यान्नों पर टैक्स न लगाने से भूमिपति नाराज थे और विदेशी उद्योगों पर टैक्स लगाने से संरक्षण और मुक्त व्यापार दोनों नीतियों के समर्थक असंतुष्ट थे क्योंकि संरक्षण नीति के समर्थक लगाई गई चुंगी को कम

और मुक्त व्यापार वाले उसे अधिक समझते थे। पर, मन्दी और बेकारी की समस्या भी अभी तक पड़ी था। आर्थिक परिस्थिति सुधारने के लिये प्रयत्न किये गये। कई व्यापार समितियाँ कायम हुईं। ये समितियाँ परिस्थिति की जाँच कर अपने सुझावों को उपस्थित करतीं और उनके आधार पर कर लगाकर संरक्षण को प्रोत्साहित किया जाता।

लेकिन शीघ्र ही कोयले के व्यवसाय में भीषण संकट उत्पन्न हो गया। १६२४ ई० में मालिक और खनकों के बीच एक मजूरी समझौता हुआ लेकिन खनकों की दशा गिरती ही जा रही थी। सरकार ने उन्हें आर्थिक सहायता भी दी और स्थिति की जाँच करने के लिये एक कमीशन भी नियुक्त किया किन्तु कमीशन की सिफारिश से किसी भी पक्ष को सन्तोष नहीं हुआ। समझौता न हो सका। १६२६ ई० में खनकों ने हड़ताल कर दी और उनकी सहानुभूति में व्यवसाय संघ ने आम हड़ताल करा दी। खनकों की हड़ताल ६ महीने तक चलती रही लेकिन आम हड़ताल करीब एक सप्ताह में समाप्त हो गई। आम हड़ताल से कई व्यवसाय प्रभावित हुये लेकिन खनकों की बड़ी दुर्गति हुई। सरकार ने बड़ी सख्ती से काम लिया। अन्त में मालिक की ही शर्त मानने के लिये उन्हें बाध्य होना पड़ा। उनके वेतन घट गये और कार्य के घंटे बढ़ गये। कितनों की नौकरी भी छीन ली गई। १६२७ ई० में व्यापार संघ तथा व्यापार संघर्ष नियम ( ट्रेड यूनियन्स ऐंड ट्रेड डिस्प्युट्स ऐक्ट ) पास हुआ। इसके अनुसार आम हड़ताल को अवैध घोषित कर दिया गया और पिकेटिंग पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। संघ के सदस्यों को चन्दा के लिये बाध्य नहीं किया जा सकता और हड़ताल में हाथ न बँटाने वाले मजदूरों की सुरक्षा की भी व्यवस्था कर दी गई।

१६२८ ई० में पाँचवाँ सुधार नियम पास हुआ और मताधिकार का विस्तार हुआ। इसके द्वारा पुरुषों के समान ही २१ वर्ष तक की स्त्रियों को भी मताधिकार दे दिया गया। अब ग्रेट ब्रिटेन में बालिग मताधिकार का सिद्धान्त पूर्ण रूप से लागू हो गया।

लेकिन दूसरे ही साल आम चुनाव हुआ जिसमें बाल्डविन सरकार का पतन हो गया। श्रम दल को २८८, अनुदार को २६० और उदार को ५६ सीट मिले थे। अतः मैक्डोनल्ड ने उदारवादियों के समर्थन से अपना दूसरा श्रम मंत्रिमंडल बनाया। इंगलैंड के वैधानिक इतिहास में सर्वप्रथम इसी मंत्रिमंडल में मारग्रेट बौन्डफील्ड नामक एक स्त्री को भी स्थान दिया गया।

इस सरकार ने गृह-क्षेत्र में कोई महत्वपूर्ण कार्य नहीं किया। कई वादे पूरे नहीं किये जा सके। कृषि और कोयले के व्यवसाय में कुछ सुधार हुये। १६३० ई० में

एक कोयला खान नियम पास हुआ था। मोटर सम्बन्धी यातायात में भी सुधार किया गया। सार्वजनिक स्कूलों से सैनिक शिक्षा उठा दी गई और आर्थिक सहायता बन्द कर दी गई। प्रथम महायुद्ध के समय कुछ लोगों ने सिद्धान्ततः युद्ध का विरोध किया था और कई नागरिक तथा राजनीतिक अधिकार छीन लिये गये थे। इन अधिकारों को फिर वापिस कर दिया गया। सेना से भागने और अपने कर्त्तव्य के पालन में शिथिलता दिखलाने के अपराध में प्राण दण्ड की सजा उठा दी गई। मजदूरों के लिये सस्ते गृह निर्माण का भार स्थानीय अधिकारियों पर सौंपा गया और इसके लिये सरकार की ओर से ग्रीनवुड नियम के अनुसार सवा दो पौंड प्रति वर्ष प्रति व्यक्ति के हिसाब से ४० वर्ष तक धन देने के लिये तय हुआ।

लेकिन आर्थिक समस्याओं का निराकरण नहीं हो सका। बेकारी दूर करने, व्यापार बढ़ाने, सार्वजनिक कार्यक्षेत्र विस्तृत करने तथा शिक्षा में सुधार लाने के लिये भी प्रयत्न हुये किन्तु सफलता नहीं मिली। धन का अभाव था और आय की अपेक्षा व्यय में काफी वृद्धि हो गई थी। निर्यात की अपेक्षा आयात बढ़ गया था जिससे देश का सोना विदेशों में चला जा रहा था। मजदूर सरकार मुक्त व्यापार का समर्थक होने के कारण आयात पर कर भी नहीं लगाना चाहती थी। कनाडा के प्रधान मंत्री के इसी आशय के सुझाव की भी उपेक्षा कर दी गई थी। सुवर्ण के बाहर जाने से बैंक के सुवर्ण कोष की क्षति होने लगी जिससे कागजी मुद्रा की कीमत घटने की आशंका बढ़ने लगी। विदेशों में भी उसकी साख घटने लगी थी जिससे विदेशी ब्रिटिश बैंकों से अपनी जमा की हुई रकम वापस लेने लगे थे। १६३१ ई० तो सारे विश्व के लिये विकट आर्थिक संकट का साल था। सभी पूँजीवादी देशों में उत्पादन खूब था—माल ढेर के ढेर पड़े थे लेकिन उनकी बिक्री नहीं हो रही थी। अतः इस साल ग्रेट ब्रिटेन की आर्थिक समस्यायें और भी भयंकर हो गईं।

संकट दूर करने के लिये प्रधानमंत्री ने कुछ योजनायें प्रस्तुत कीं। वे सभी के वेतन, पेंशन तथा बीमा आदि के व्यय में कटौती करना और कुछ करों में कुछ वृद्धि करना चाहते थे। एक मितव्ययिता नियम पास हुआ जिसके द्वारा प्रधान मंत्री से लेकर शिक्षक तक के वेतन में कमी करने तक का प्रस्ताव किया गया किन्तु देश में इसका घोर विरोध हुआ। सुधार के अन्य प्रस्तावों से मजदूरों को ही अधिक असुविधा होने की आशंका थी। अतः कुछ मंत्रियों ने इसका विरोध किया। मंत्रिमंडल में कुछ नरम पंथी थे तो कुछ उग्र पंथी। इस तरह मंत्रिमंडल में मतभेद हो गया। इस पर मैक्डोनल्ड ने १६३१ ई० में पदत्याग कर दिया।

१६३१ ई० में सम्राट के निमंत्रण पर मैक्डोनल्ड ने राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की। मैक्डोनल्ड के साथ बहुत कम श्रम सदस्य रह गये। बहुसंख्यक आर्थर हेन्डर्सन

के नेतृत्व में उसका साथ छोड़ दिये और उसके विरोधी बन गये। उसे और उसके समर्थकों को मजदूर दल से निकाल दिया गया। शीघ्र ही चुनाव हुआ और इसमें राष्ट्रीय सरकार को ५५४ सदस्यों का बहुमत प्राप्त हुआ।

१६३१ ई० से १६३६ ई० तक राष्ट्रीय सरकार कायम रही। १६३१ के चुनाव के फलस्वरूप अधिकांश अनुदारवादियों को ही सफलता मिली थी। उन्हें ३२५ का बहुमत प्राप्त था। मंत्रिमंडल में ११ अनुदार, ५ उदार और ४ मजदूर दल के सदस्य थे। प्रधान मंत्री मजदूर नेता मैक्डोनल्ड ही रहे। पहले दो अवसरों पर १६२४ और १६२६ ई० में वे उदारवादियों पर निर्भर थे किन्तु इस बार अनुदारवादियों का समर्थन प्राप्त हुआ।

अब आर्थिक उन्नति के लिये कई उपायों को काम में लाया गया। उस आर्थिक योजना को जिस पर मजदूर सरकार की गाड़ी टकरा गयी थी, लागू किया गया। कई मदों पर खर्च में कमी कर दी गई। इससे आय-व्यय में सन्तुलन हो गया किन्तु सुवर्ण अभी भी बाहर जाता रहा। अतः सरकार ने सुवर्ण-मुद्रा ( गोल्ड स्टैंडर्ड ) का ही परित्याग कर दिया। इससे विदेशों में पौंड की कीमत घट गई। इसका फल यह हुआ कि ब्रिटिश आयात की तुलना में निर्यात की मात्रा बढ़ गई। इससे ग्रेट ब्रिटेन को लाभ ही हुआ।

अनुदार दल वाले संरक्षण नीति के समर्थक थे। बहुमत में रहने के कारण इसे लागू करने के लिये उन्हें सुअवसर प्राप्त था। अतः कुछ आयात तो बन्द कर दिये गये और जो रह गये उन पर १० प्रतिशत की चुंगी रख दी गई लेकिन ऊन, कपास, मांस, मछली आदि जैसे कुछ कच्चे मालों पर चुंगी नहीं लगायी गयी। साम्राज्यान्तर्गत देशों के बीच व्यापार को बढ़ाने के लिये १६३१ ई० में ओटावा में एक सम्मेलन ( इम्पीरियल कान्फ्रेंस ) हुआ। इसमें एक समझौता हुआ जिसे ओटावा समझौता कहते हैं। इसके अनुसार विदेशी मालों की तुलना में साम्राज्यान्तर्गत देशों के बीच आपस में रियायती चुंगी लगाने के लिए निश्चय हुआ।

इस सरकार ने दूध की दर को निर्धारित करने के लिए १६३३ ई० में एक दूध विक्रय ( मिल्क-मार्केटिंग ) बोर्ड की स्थापना कर दी। इसने गृह-निर्माण को भी प्रोत्साहित किया। १६३५ ई० में भारत के लिए एक ऐक्ट पास हुआ और उसी के बाद बुरे स्वास्थ्य के कारण मैक्डोनल्ड ने पदत्याग कर दिया।

यहाँ मैक्डोनल्ड की जीवनी पर संक्षिप्त प्रकाश डाल देना असंगत नहीं होगा। १८६६ ई० में स्कॉटलैंड में उसका जन्म हुआ था। उसके माँ-बाप गरीब मजदूर थे। अतः उसे उच्च शिक्षा के लिये सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। फिर भी वह अध्ययन शील था और मजदूरों के हित के लिए चिन्तित था। ३० वर्ष की उम्र में उसका

हुआ। १६०० ई० के बाद वह कई वर्षों तक मजदूर दल का मन्त्री था और प्रथम महायुद्ध के समय इस दल का नेता ही था। वह शान्ति का इच्छुक था। अत युद्ध से अलग रहना चाहता था। इसी प्रश्न पर उसने दल का नेतृत्व छोड़ दिया। १६१८ ई० के चुनाव में वह सफल नहीं हो सका किन्तु १६२२ ई० में वह कॉमन सभा का सदस्य निर्वाचित हुआ। १६२४ और १६२६ ई० में उसने उदारवादियों के समर्थन से और १६३१ ई० में अनुदारवादियों के समर्थन से सरकार का नेतृत्व किया। १६३५ ई० में पदत्याग के बाद बाल्डविन मन्त्रिमण्डल में वह कौंसिल का लार्ड प्रेसिडेन्ट बहाल हुआ था लेकिन १६३७ ई० में बाल्डविन के पदत्याग के साथ ही उसने भी अवकाश प्राप्त कर लिया। उसी साल वह स्वास्थ्य सुधार के लिए देश से बाहर जा रहा था कि जहाज पर ही उसका देहान्त हो गया।

उसके बाद अनुदारवादी बाल्डविन तीसरी बार प्रधान मन्त्री बने। अब वास्तविकता के अनुसार बहुमत वाले दल का ही प्रधान मन्त्री भी पदारूढ़ हो गया। उसी समय चुनाव भी हुआ। संयुक्त दल में ४३१ सदस्य थे और इनमें ३८७ अनुदार ही थे। फिर भी राष्ट्रीय सरकार चलती रही। मैकडोनल्ड के समर्थकों का ही इसमें सहयोग था। अन्य श्रम नेता अलग ही रहे।

१६३५ ई० में पंचम जार्ज की रजत जयन्ती धूमधाम से मनाई गई। लेकिन दूसरे ही साल जनवरी में वह मर गये। उनका बड़ा लड़का अष्टम् एडवर्ड के नाम से गद्दी पर बैठा। उसके समय की सबसे बड़ी घटना है उसी का गद्दी त्याग। उसे सिम्पसन नामक अमेरिकी औरत से प्रेम हो गया था। सिम्पसन अपने एक पति को तलाक देकर एडवर्ड से शादी कर लेना चाहती थी। एडवर्ड तैयार था। इस विवाह से जो सन्तान होती वह गद्दी की भी अधिकारी न होती किन्तु बाल्डविन मन्त्रिमण्डल ने उसके प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। इस पर सम्राट एडवर्ड ने श्रीमती सिम्पसन के लिये गद्दी ठुकरा दी। उसे विंडसर का ड्यूक बना दिया गया। अब उसका छोटा भाई यॉर्क का ड्यूक छठें जार्ज के नाम से गद्दी पर बैठा। यह घटना दिसम्बर १६३६ ई० में हुई किन्तु मई १६३७ ई० में उसका समारोह राज्याभिषेक हुआ। इसके कुछ ही दिनों के बाद खराब स्वास्थ्य के कारण बाल्डविन ने पदत्याग कर दिया।

बाल्डविन मन्त्रिमंडल के समय सुधार सम्बन्धी भी कुछ कार्य हुये। अन्य मजदूरों की भाँति कृषक मजदूरों को भी बेकारी बीमा से लाभ पहुँचाया गया। बेकारी की हालत में उन्हें भी साप्ताहिक आर्थिक सहायता देने की व्यवस्था की गई। श्रमिकों की सहायता करने के लिये एक श्रम-बोर्ड की स्थापना हुई। शिक्षा के क्षेत्र में स्कूल त्याग की उम्र १४ से १५ वर्ष कर दी गई लेकिन अपवादस्वरूप अभी भी १४ वर्ष की उम्र में स्कूल छोड़ा जा सकता था। स्कूलों की स्थापना को प्रोत्साहित करने के

लिये स्थानीय बोर्ड के अधिकारियों का अधिकार भी बढ़ा दिया गया। वे ₹ के अनुपात में आर्थिक सहायता दे सकते थे।

बाल्डविन भी राजनीति-क्षेत्र में बहुत समय तक रहा। १८६७ ई० में ही उसका एक धनी परिवार में जन्म हुआ था। पढ़ने-लिखने के बाद वह व्यापार करने लगा था। १६०६ ई० में उसने सर्वप्रथम राजनीति में प्रवेश किया। १६२१ ई० में यह व्यापार-संघ का सभापति बना और दूसरे साल चांसलर ऑफ एक्सचेकर हुआ। १६२३ ई० में पहली बार और १६२४ ई० में दूसरी बार वह प्रधान मंत्री बना। दूसरी बार ५ वर्षों तक वह अपने पद पर बना रहा। १६२६ ई० में वह राष्ट्रीय मंत्रिमंडल में भी शामिल हुआ था। १६३५ ई० में तीसरी बार वह प्रधान मंत्री हुआ और दो वर्षों के बाद पदत्याग किया। १६३६ ई० में उसकी मृत्यु हो गई।

१६३७ ई० में बाल्डविन के पदत्याग के बाद अनुदारवादी नेता नेविल चेम्बरलेन प्रधान मंत्री हुआ। वह करीब तीन वर्षों तक अपने पद पर बना रहा। उसके समय में कई नियम पास हुये। शिक्षा नियम के द्वारा ५ वर्ष की ही उम्र में बहरे बच्चों को स्कूल जाने की व्यवस्था की गई। पहले सात वर्ष की उम्र में वे स्कूल जाते थे। नियम के अनुसार तलाक के सम्बन्ध में कुछ सुधार हुआ। पेन्शन नियम के द्वारा ४० वर्ष तक की उम्र के व्यक्तियों को पेन्शन के लिए बीमा कराने की सुविधा दे दी गई। इसके लिए स्त्रियों की आय २५० पौंड की और मर्दों की ४०० पौंड की होनी आवश्यक थी।

इस समय अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति फासिस्ट शक्तियों के उदय के कारण गंभीर होती जा रही थी। अतः सेना के क्षेत्र में कई सुधार हुये और अस्त्र-शस्त्र की वृद्धि पर जोर दिया गया। इसके लिए खर्च में भी वृद्धि हुई। इसके लिये पर्याप्त धन की आवश्यकता थी। अतः वाणिज्य व्यापार के विकास के लिये भी प्रयत्न हुआ। इस सम्बन्ध में कनाडा तथा अमेरिका से व्यापारिक समझौते हुये जिनके अनुसार कई मालों पर परस्पर रियायती चुंगी लगाने के लिये तय हुआ। आयरलैंड के साथ भी चुंगी सम्बन्धी झगड़े का अन्त कर कई बातें तय कर ली गईं। बेकारी की समस्या हल करने के लिये एक समुद्र पार निवास बोर्ड ( ओवरसी सेटिलमेंट बोर्ड ) की स्थापना हुई। इस बोर्ड का मुख्य उद्देश्य था साम्राज्यान्तर्गत देशान्तर गमन को प्रोत्साहित करना। कोयले की खानों का राष्ट्रीयकरण करने के लिये एक कोयला खान नियम भी पास किया गया।

इसी मंत्रिमंडल के समय सितम्बर १६३६ ई० में दूसरे महायुद्ध का श्री गणेश हो गया। चेम्बरलेन की युद्धनीति संतोषजनक नहीं थी। अतः उसने ११ मई १६४० ई० को पदत्याग कर दिया और चर्चिल प्रधान मन्त्री हुये।

## अध्याय ५८

# वैदेशिक नीति (१६१६—१६३६ ई०)

महायुद्ध समाप्त होने पर १६१६ ई० में पेरिस में शान्ति सम्मेलन का आयोजन हुआ। जर्मनी आदि पराजित राज्यों के साथ सन्धियाँ भी हुईं। अब सभी राज्य शान्ति चाहते थे किन्तु युद्धोत्तर काल में भी अशान्ति बनी रही और अनेक समस्यायें निराकरण के लिए मुँह बाये खड़ी थीं। ये समस्यायें मुख्यत दो प्रकार की थीं—आर्थिक और राजनीतिक। आर्थिक समस्याओं का सम्बन्ध था तावान तथा कर्ज से और राजनीतिक समस्याओं का सम्बन्ध था फ्रांस द्वारा सुरक्षा का खोज से। यहाँ हम पहले आर्थिक समस्याओं का ही विवेचन करेंगे तब राजनीतिक समस्याओं का।

(क) आर्थिक समस्यायें—जर्मनी को युद्ध के लिये उत्तरदायी ठहराया गया था। अत मित्रराष्ट्रों को युद्ध से जो क्षति हुई उसे पूरा करने का भार जर्मनी पर सौंपा गया। तावान का रकम निश्चित करने के लिये एक क्षति पूर्ति कमीशन की नियुक्ति हुई थी। इसमें ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस तथा कुछ मित्र राष्ट्र के प्रतिनिधि थे। कमीशन ने १६२१ ई० में १३२० अरब सोने के मार्क के रूप में यह रकम निश्चित की। शान्ति-सम्मेलन में अर्थशास्त्रियों का जो अनुमान था उससे यह रकम तिगुनी अधिक थी। कमीशन ने यह भी तय किया कि जर्मनी प्रत्येक वर्ष २ अरब मार्क नगद और अपनी निर्यात का २६ प्रतिशत माल मित्र राष्ट्र को दिया करे। सम्मेलन में राजनीतिज्ञों ने अपना हिस्सा भी निर्धारित कर लिया। फ्रांस का ५२ और ब्रिटिश का २२ प्रतिशत हिस्सा निश्चित हुआ और इसके बाद बची हुई रकम को मित्र राष्ट्र बाँटते।

जर्मनी ने तावान की रकम के कुछ अश को तो चुकाया किन्तु सारी रकम को चुकाना उसकी शक्ति से बाहर की बात थी। उसके व्यापार का भी विकास नहीं हो रहा था। तावान की इतनी विशाल रकम उसे देने की इच्छा भी नहीं थी। अत. रकम की चुकती में शिथिलता दीख पड़ने लगी। १६२२ से १६२४ ई० तक की चुकती के सम्बन्ध मे छूट देने की माँग की गई। इस प्रश्न पर मित्र राष्ट्रों में मतभेद हो गया। लायर्ड जार्ज की सरकार छूट देने (मोरेटोरियम) के पक्ष में थी। ब्रिटेन का इसी में स्वार्थ था कि जर्मनी का विकास हो क्योंकि वह पहले ही से उसके मालों का खरीदार था किन्तु फ्रांस जर्मनी को कमजोर ही देखना चाहता था। अत उसने मोरेटोरियम का विरोध किया और बेलजियम तथा इटली के साथ मिलकर १६२३ ई० में रूर पर

कब्जा कर लिया। रूर जर्मनी का औद्योगिक केन्द्र था। रूरवासियों ने असहयोग की नीति अपनायी।

अब इन सारी स्थिति की जाँच करने के लिए डौस नामक अर्थशास्त्री के अधीन एक कमेटी नियुक्त की गई। डौस कमेटी ने कई बातों की सिफारिश की—फ्रांस रूर को खाली कर दे, एक केन्द्रीय बैंक की स्थापना हो, जिसे ५० वर्षों तक नोट निकालने का एकाधिकार रहे। जर्मनी २ अरब ५० करोड़ मार्क नगद प्रति वर्ष दिया करे। कुल रकम की संख्या में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। १९२४ ई० में ब्रिटेन तथा अन्य राष्ट्रों ने डौस योजना को स्वीकृत कर लिया लेकिन यह योजना असफल ही रही और १९२८ ई० में यंग नामक अमरीकी अर्थशास्त्री के अधीन दूसरी कमेटी नियुक्त हुई। इस कमेटी ने यंग योजना प्रस्तुत की। पूर्व योजना में तावान के कुल रकम की संख्या पूर्ववत् रहने दी गई थी। यह रकम इतनी विशाल थी कि यह अनुमान करना कि जर्मनी कितने वर्षों में इसे चुका सकेगा। अतः नई योजना में यह निश्चित कर दिया गया कि जर्मनी ५८½ वर्षों में ३४ अरब मार्क चुका दे। १० वर्षों तक माल के रूप में भी तावान देने की व्यवस्था रखी गई। क्षतिपूरक कमीशन का अन्त करने और एक अन्तर्राष्ट्रीय बैंक की स्थापना करने के लिए भी प्रस्ताव हुआ। १९३० ई० में ब्रिटेन तथा अन्य राष्ट्रों ने इसे स्वीकार कर लिया। इससे लोगों को बड़ी आशा हुई थी कि तावान समस्या हल हो गई किन्तु शीघ्र ही उनकी आशा पर पानी फिर गया।

इसी समय सारे यूरोप में आर्थिक मन्दी फैल गई थी और सभी राष्ट्र बेचैन हो रहे थे। स्थिति पर विचार करने के लिये इन राष्ट्रों ने कई सम्मेलनों की व्यवस्था की। इनमें ग्रेट ब्रिटेन ने प्रमुख भाग लिया। प्रादेशिक समझौता के आधार पर आर्थिक संघ कायम करने की कोशिश हो रही थी किन्तु सफलता नहीं मिली। मार्च १९३१ ई० में केवल जर्मनी और आस्ट्रिया के बीच चुंगी संघ कायम हुआ। इन दोनों राज्यों ने आपस में चुंगी उठा दी और विदेशी मालों पर दोनों राज्यों में एक समान चुंगी लगाने की व्यवस्था कर दी गई। ग्रेट ब्रिटेन ने इस चुंगी संघ के निर्माण का स्वागत किया किन्तु फ्रांस ने विरोध किया। उसी समय आस्ट्रिया को कर्जे की बड़ी आवश्यकता थी। क्रेडिट अन्सटाल्ट आस्ट्रिया का मुख्य बैंक था। उसी पर आस्ट्रिया की व्यावसायिक उन्नति निर्भर थी। लेकिन इसकी दशा खराब हो रही थी और इसी के सुधार के लिए धन की आवश्यकता थी। फ्रांस कर्ज देने को तैयार था किन्तु शर्त यह थी कि चुंगी संघ भंग कर दिया जाय। आस्ट्रिया इसके लिए तैयार नहीं था और ब्रिटेन से कर्ज माँगने लगा। ब्रिटेन ने उसकी माँग पूरी भी की किन्तु कम ही समय के लिये।

जर्मनी की आर्थिक अवस्था बड़ी ही शोचनीय हो गई थी। अत अमेरिका के राष्ट्रपति हूवर के अनुरोध पर कर्ज और तावान की रकम की चुकती एक साल के लिये जुलाई १९३१ ई० से जून १९३२ ई० तक स्थगित कर दी गई। इसे मोरेटोरियम कहते हैं। फिर भी जर्मनी को इससे कोई लाभ नहीं हुआ। जर्मनी का सोना पर्याप्त मात्रा में अभी भी बाहर जाता रहा। कई बैंक फेल कर गये और कई बैंकों को सरकार ने ही बन्द कर डाला। इस परिस्थिति से प्रभावित हो लदन तथा पेरिस में कई सम्मेलनों का आयोजन किया गया और उनमें अनेक योजनाओं पर विचार विमर्श हुआ परन्तु जर्मनी की दशा बिगड़ती गई। वह कर्ज या तावान की रकम चुकाने की स्थिति में बिलकुल ही नहीं था। अत १६ जून १९३२ ई० को लोज़ेन में एक सम्मेलन बुलाया गया। इसमें ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, बेलजियम, इटली, जापान और जर्मनी के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसमें जर्मनी से तावान की रकम न लेने का निश्चय हुआ केवल निर्माण के लिये जर्मनी को ३ अरब मार्क देने का आदेश दिया गया लेकिन ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, बेलजियम तथा इटली के प्रतिनिधियों ने एक अलग भी समझौता किया। इसमें यही तय हुआ कि लोसेन सम्मेलन का निर्णय तभी लागू होगा जबकि उनके महाजन भी उनके साथ वैसा ही निर्णय स्वीकृत कर लें लेकिन उनका सर्वप्रथम महाजन अमेरिका था और अमेरिका ने ही वैसा निर्णय मानने से अस्वीकार कर दिया यानी अपना कर्ज छोड़ने को तैयार नहीं था। अत लोसेन का निर्णय लागू नहीं किया जा सका लेकिन इसके बावजूद भी जर्मनी तावान की रकम आगे नहीं चुका सका। अमेरिका को छोड़ अन्य मित्र राष्ट्र तावान और युद्ध कर्ज को परस्पर सम्बन्धित करना चाहते थे। तावान तो युद्ध के उत्तरदायित्व के फलस्वरूप जर्मनी पर विजेताओं के द्वारा लादा गया था किन्तु युद्ध कर्ज की समस्या भी विकट थी। अमेरिका को युद्ध में आने के पहले ग्रेट ब्रिटेन मित्रराष्ट्रों को कर्ज दिया करता था किन्तु उसकी भी शक्ति सीमित थी। जब युद्ध में अमेरिका का प्रवेश हुआ तो वह ग्रेट ब्रिटेन सहित सभी प्रमुख राष्ट्रों को कर्ज देने लगा। युद्ध के अन्त में ग्रेट ब्रिटेन अपने कर्जदारों को मुक्त कर देने के लिये तैयार था यदि अमेरिका भी अपने कर्ज से उसे मुक्त कर देता किन्तु अमेरिका इसके लिये तैयार नहीं हुआ। अमेरिका ६२ वर्ष में सूद सहित समूचे कर्ज को लेने के लिये राजी था। सूद का दर भिन्न भिन्न था। सबसे अधिक सूद का दर चेकोस्लोवाकिया से निश्चित था और उसके बाद ग्रेट ब्रिटेन का स्थान था। कुछ समय तक जर्मनी को विदेशों से खासकर अमेरिका से कर्ज मिलता था। जर्मनी तावान की रकम इस तरह चुकाता था और कर्जदार राज्य उसी रकम से अमेरिका का कर्ज चुकाते थे। इस तरह अमेरिका का धन अमेरिका में ही पहुँच जाता

था। लेकिन आर्थिक मन्दी एवं संकट के कारण जब जर्मनी को कर्ज मिलना बन्द हो गया तो उसने तावान की रकम भी चुकाना बन्द कर दिया। इस तरह छूट के काल ( मोरेटोरियम ) का अन्त होने पर युद्ध क्षति पूर्ति एवं कर्ज की चुकती बिलकुल ही बन्द हो गई।

जून १६३३ ई० में लंदन में एक अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्मेलन का आयोजन किया गया। ६७ राष्ट्रों ने इसमें भाग लिया। अमेरिका ने भी इसमें भाग लिया लेकिन शर्त यह थी कि इसके कार्य-क्रम में क्षति-पूर्ति, युद्ध-कर्ज तथा चुंगी सम्बन्धी बातों पर विचार नहीं किया जायगा। इसमें सुवर्ण स्टैंडर्ड वाले राष्ट्र एक दल में हो गये थे और उनके विरुद्ध अमेरिका की एक अपनी अलग नीति थी। ग्रेट ब्रिटेन की कोई स्पष्ट नीति नहीं थी। अतः सम्मेलन को विशेष सफलता नहीं मिली। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की स्थिति में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हुआ।

१६३३ और १६३६ ई० के बीच सभी राष्ट्रों ने आर्थिक पूर्णता पर विशेष जोर दिया। इस नीति को औटार्की कहते हैं। राजनीतिक क्षेत्र की भाँति आर्थिक क्षेत्र में भी सद्भावना या मित्रता का भाव बढ़ाने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया। इससे आर्थिक राष्ट्रीयता को प्रोत्साहन मिला और यह भावना भी दूसरे महायुद्ध को लाने में सहायक सिद्ध हुई।

( ख ) राजनीतिक समस्यायें—युद्धोत्तर यूरोप में समस्याओं की भरमार थी। हम आर्थिक क्षेत्र की समस्याओं पर तो दृष्टिपात कर चुके हैं किन्तु राजनीतिक क्षेत्र में भी कुछ कम विकट समस्यायें नहीं थीं। उन पर विचार-विमर्श करने के लिये अनेक सम्मेलनों का आयोजन हुआ। कई संधियाँ भी की गईं।

१६२३ ई० में अनुदारवादी सरकार ने लौजेन की संधि की। टर्की सेवर की संधि के कारण बहुत असंतुष्ट था। अतः इस सन्धि को रद्द कर दिया गया और लौजेन की संधि के द्वारा टर्की को सन्तुष्ट किया गया। यूरोपीय राष्ट्रों ने पुराने आर्थिक एवं राजनीतिक अधिकारों का परित्याग कर दिया। समस्त एशिया माइनर और इसके आस-पास के भूभागों पर टर्की का अधिकार रहा।

१६१६ ई० में ही दो सन्धियाँ की जा चुकी थीं—फ्रांस और ग्रेट ब्रिटेन के बीच तथा फ्रांस और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के बीच, लेकिन जब अमेरिका ने इसे कार्यान्वित नहीं किया तो ब्रिटेन भी चुप रह गया और इस तरह ये दोनों सन्धियाँ लागू नहीं की जा सकीं। १६२४ ई० में ब्रिटिश प्रधान-मंत्री मैक्डोनल्ड और फ्रांसीसी प्रधान-मंत्री हेरियट के प्रयास से जेनेवा प्रोटोकोल का प्रचार किया गया। इसके द्वारा यह तय हुआ कि आपसी झगड़े का निपटारा करने के लिये युद्ध नहीं किया जायगा। अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय, संघ कौंसिल या अन्य पंचायत के द्वारा ही झगड़ों का निपटारा

करा लिया जायगा। जो राष्ट्र अपने झगड़ों को इन संस्थाओं के सामने नहीं लाता या इनके निर्णय को नहीं मानता और युद्ध घोषित करता है वह अतिक्रमी समझा जाता और उसके विरुद्ध कार्रवाई की जाती। नि शस्त्रीकरण को प्रोत्साहित करने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन भी बुलाने की व्यवस्था की गई। नि.शस्त्रीकरण के सम्बन्ध में अपनी सच्चाई दिखलाने के लिये मैक्डोनल्ड सरकार ने सिंगापुर के नौ सैनिक अड्डे का निर्माण भी रोक दिया। इस तरह लायड जार्ज के समय फ्रांस और इङ्गलैंड में जो कटुता पैदा हो गई थी उसे दूर करने के लिये मैक्डोनल्ड ने प्रयत्न किया। मजदूर सरकार ने १९२४ ई० में रूस की सोवियत सरकार को भी मान्यता प्रदान कर दी।

लेकिन प्रथम मजदूर सरकार का शीघ्र ही अन्त हो गया और बाल्डविन का अनुदार मन्त्रिमंडल कायम हुआ। बाल्डविन और मैक्डोनल्ड के विचारों में बहुत अन्तर था। जेनेवा प्रोटोकोल में तीन बातों पर जोर दिया गया था। शान्तिपूर्ण ढंग से झगड़े का फैसला अतिक्रमी की व्याख्या और उसके विरुद्ध सैनिक तथा आर्थिक अनुशास्तों को लागू करने की व्यवस्था। इसके अतिरिक्त उसमें एक बात और भी थी यदि आन्तरिक शासन को लेकर दो राष्ट्रों के बीच झगड़ा हो तो ऐसा झगड़ा भी संघ या पंच के सामने लाना चाहिये। यह बात ग्रेट ब्रिटेन को पसन्द नहीं आयी क्योंकि उसके साम्राज्य के अन्दर तो इस तरह के झगड़े प्राय हुआ करते थे। अत. बाल्डविन सरकार ने टाल बेटाल कर उस पर हस्ताक्षर ही नहीं किया और यह प्रोटोकोल व्यर्थ सिद्ध हुआ।

लेकिन १९२५ ई० में राइन प्रदेश में शान्ति कायम रखने के लिये लोकार्नो पैक्ट हुआ। इसके अन्तर्गत सात पैक्ट सम्मिलित थे किन्तु इनमें ग्रेट ब्रिटेन का एक ही से सम्बन्ध था। ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस इटली और बेलजियम इन पाँच राज्यों ने वर्सायी सन्धि द्वारा स्थापित जर्मनी और फ्रांस तथा जर्मनी और बेलजियम के बीच की सीमा की रक्षा करने के लिये वादा किया। यह भी तय हुआ कि राइन के ५० किलोमीटर तक पश्चिमी भू भाग में नि शस्त्रीकरण को कायम रखा जाय। शान्ति स्थापना के प्रयत्न में लोकार्नो पैक्ट एक महत्वपूर्ण कदम था। महायुद्ध के बाद सर्वप्रथम लोकार्नो सम्मेलन में ही सभी राष्ट्र समानता के आधार पर मिले थे। यह भी निश्चय हुआ कि लोकार्नो पैक्ट तभी लागू किया जायगा जबकि जर्मनी राष्ट्र संघ का सदस्य बन जायगा। बहुत कुछ परेशानी के बाद १९२६ ई० में जर्मनी संघ का सदस्य भी बन गया। इस समय ग्रेट ब्रिटेन तथा अमेरिका में मनमुटाव हो गया। १९२७ ई० में जेनेवा में एक जहाजी सम्मेलन बुलाया गया जिसमें ब्रिटेन, अमेरिका तथा जापान ने भाग लिया। इसके पहले १९२१ २२ ई० में वाशिंगटन सम्मेलन में

सात सन्धियाँ हुईं। इनमें से दो पंच राज्य सन्धियों का सम्बन्ध जहाजी नियंत्रण से ही था। ये पाँच राज्य थे—अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, जापान, फ्रांस, इटली। दोनों संधियों में एक संधि से यह तय हुआ कि पनडुब्बियों के लिये वे ही नियम लागू हों जो जल के ऊपर चलने वाले जहाजों के लिये लागू हैं, किन्तु यह संधि कार्यान्वित नहीं हो सकी। दूसरी संधि के द्वारा पाँचों राज्यों के लिये कैपिटल जहाज का टन भार निश्चित कर दिया गया। अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन तथा जापान के लिए यह ५:५:३ के अनुपात में निश्चित हुआ लेकिन इस संधि में दूसरे युद्ध-पोतों के सम्बन्ध में कोई चर्चा नहीं की गई। इसीलिये १९२७ ई० में जेनेवा सम्मेलन बुलाया गया। अमेरिका ने अन्य जहाजों के लिये भी ५:५:३ का ही अनुपात मान लेने के लिये जोर लगाया। ब्रिटेन ७५०० टन के क्रूजर के निर्माण पर कोई नियन्त्रण स्वीकार करना नहीं चाहता था। वह इसे अपने विशाल साम्राज्य एवं व्यापार की रक्षा के लिये आवश्यक समझता था परन्तु समुद्री अड्डों के अभाव तथा लम्बे समुद्री किनारों के कारण १०,००० टन के क्रूजर अमेरिका के लिये आवश्यक थे और ब्रिटेन इस पर नियन्त्रण लगाने के लिये उत्सुक था। इस तरह पारस्परिक स्वार्थ एवं मतभेद के कारण जेनेवा सम्मेलन असफल हो गया और अमेरिका तथा ब्रिटेन का सम्बन्ध कटु होने लगा।

दूसरे साल एक घटना ने दोनों देशों के बीच कटुता में और वृद्धि ला दी। १९२८ के प्रारंभ में इंगलैंड तथा फ्रांस में एक गुप्त समझौता हुआ। इसके अनुसार इंगलैंड ने स्थल सेना के सम्बन्ध में फ्रांस की बात स्वीकार कर ली और फ्रांस ने वादा किया कि निःशस्त्रीकरण सम्मेलन में वह अंग्रेजों के नौ सेना सम्बन्धी विचारों का समर्थन करेगा। लोगों को इस सन्धि का पता लग गया और 'न्यूयार्क अमेरिकन' नामक अखबार में यह समाचार प्रकाशित भी हो गया। इससे अमेरिकावासी अंग्रेजों से और भी अधिक नाराज हो गये।

इसी समय ग्रेट ब्रिटेन का सोवियत रूस के साथ भी सम्बन्ध कटु हो गया। अनुदार सरकार बोल्शेविक सरकार को शंका की दृष्टि से देखती थी। यह शंका और भी बढ़ गई जबकि रूस ने १९२६ ई० में इंगलैंड में की गई हड़ताल का समर्थन किया और चन्दा तक भी भेजा। रूस ने कई राज्यों से अनाक्रमण समझौता भी कर लिया था। इस तरह बातें बढ़ती गईं और सोवियत रूस इंगलैंड के विरुद्ध भी प्रचार कार्य करता रहा। अतः १९२७ ई० में दोनों देशों में कूटनीतिक सम्बन्ध विच्छेद हो गया।

१९२८ ई० में पेरिस सन्धि हुई। इसे केलौगब्रियाँ पैक्ट भी कहते हैं। इसके अनुसार राष्ट्रीय नीति में युद्ध का परित्याग करने की घोषणा की गई। सभी झगड़ों

का फैसला शान्तिपूर्ण ढंग से करने के लिये निश्चय हुआ लेकिन आत्म रक्षा और पूर्व सन्धियों का उत्तरदायित्व अपवाद स्वरूप माने गये। इगलैंड इसे अपने साम्राज्य के सम्बन्ध में भी लागू करना नहीं चाहता था। विश्व के सभी प्रमुख राष्ट्रों ने इस समझौता पर हस्ताक्षर किया था और शान्ति प्रयास के मार्ग में यह महत्वपूर्ण कदम था।

१६२६ ई० में मैकडोनल्ड ने द्वितीय मजदूर सरकार की स्थापना की। इसने सोवियत रूस से कूटनीतिक सम्बन्ध फिर स्थापित कर लिया और रूसी बाजारों में ब्रिटिश मालों के लिये भी कुछ सुविधा प्राप्त हुई।

मैकडोनल्ड ने अमेरिका से भी अच्छा सम्बन्ध कायम करने का प्रयत्न किया। १६२८ ई० के पेरिस समझौते से दोनों देशों में कुछ सद्भावना उत्पन्न हो चुकी थी। मैकडोनल्ड ने इसमें और वृद्धि की। वह स्वयं राष्ट्रपति हूवर से मिला और दोनों में वार्तालाप हुआ। १६३० ई० में लंदन में पाँच राज्यों का जहाजी सम्मेलन हुआ। इसमें अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, जापान, फ्रांस और इटली ने भाग लिया किन्तु फ्रांस तथा इटली में समझौते का प्रयास व्यर्थ साबित हुआ। अन्य तीन राज्यों के बीच जहाजी सन्धि हो सकी। इसके अनुसार अमेरिका को १८, ग्रेट ब्रिटेन को १५ और जापान को १२ बड़े क्रूजर बनाने का अधिकार मिला। प्रत्येक राष्ट्र निर्धारित टन के छोटे-छोटे क्रूजरों को भी बना सकता था। विध्वंसक के लिए अमेरिका तथा ग्रेट ब्रिटेन का टन भार १,५०,००० (प्रत्येक के लिये) और जापान का १,०५,५०० निश्चित हुआ। तीनों राष्ट्रों के लिए पनडुब्बी का टन भार बराबर रहा—५२,७००। १६३६ ई० तक कैपिटल जहाज कोई नहीं बना सकता था। यदि इस संधि पर हस्ताक्षर न करने वाले राष्ट्र के नये निर्माणों से किसी राष्ट्र की सुरक्षा पर संकट आने की संभावना हो तो वह अपने टन-भारों में वृद्धि कर सकता है लेकिन इसकी सूचना हस्ताक्षर करने वाले अन्य राष्ट्रों को भी शीघ्र ही दे देनी आवश्यक थी।

**राष्ट्रीय सरकार (१६३१-३६ ई०)**—१६३१ ई० में मजदूर मंत्रिमंडल टूट गया और मैकडानल्ड ने राष्ट्रीय सरकार का निर्माण किया। इसी समय एशिया में जापान ने मंचूरिया पर हमला कर दिया। मंचूरिया चीनी राज्य के अन्दर था। अतः चीन ने संघ में अपील की और संघ ने लिटन कमीशन नियुक्त किया। कमीशन ने जापान की निन्दा की किन्तु जापान को इसकी कोई चिंता नहीं थी। उसने संघ की सदस्यता का ही परित्याग कर दिया। धीरे धीरे ग्रेट ब्रिटेन तथा अन्य राष्ट्रों ने मंचूरिया पर जापान के आधिपत्य को स्वीकार कर लिया।

१६३२ ई० में जेनेवा में निःशस्त्रीकरण सम्मेलन हुआ इसमें लगभग ६० राष्ट्रों ने भाग लिया था और इनके २०० से ऊपर ही प्रतिनिधि उपस्थित थे। इसके सभा-

पति इंगलैंड के विरोधी पक्ष के नेता हेन्डरसन थे। इसमें फ्रांस ने सुरक्षा पर और जर्मनी ने समानता पर विशेष जोर दिया और दोनों में कोई समझौता नहीं हो सका। जुलाई में सम्मेलन स्थगित करना पड़ा। सम्मेलन के प्रथम अधिवेशन की असफलता से इटली, रूस और जर्मनी में भयंकर प्रतिक्रिया हुई। प्रथम दोनों देशों में संघ की नपुंसकता के प्रति काफी घृणा हो गई। जर्मनी ने यह माँग की कि संसार के अन्य सभी देश उसी के अनुपात में निरस्त्र हो जायँ या उसे उनकी बराबरी में सशस्त्र हो जाने की सुविधा दी जाय। उसकी माँग पूरी हुये बिना वह अब सम्मेलन में भी जाने को तैयार नहीं था। प्रधान मंत्री मैकडोनल्ड स्वयं सम्मेलन भवन में आकर जर्मनी तथा फ्रांस को सन्तुष्ट करना चाहा किंतु वह भी असफल रहा। जून १९३३ ई० में सम्मेलन भंग हो गया। इसी साल के प्रारंभ में ही हिटलर जर्मनी का चान्सलर हो गया था। सभा भंग होने के बाद इसके सभापति हेन्डरसेन ने यूरोप का भ्रमण भी किया ताकि स्थिति में सुधार हो लेकिन इससे भी कुछ लाभ नहीं हुआ। अक्टूबर में हिटलर ने निःशस्त्रीकरण सम्मेलन के सम्बन्ध में असहयोग की नीति घोषित कर दी और राष्ट्र संघ की सहायता भी छोड़ दी। मई १९३४ ई० में सम्मेलन ने बैठक फिर शुरू की किन्तु कोई प्रगति नहीं हुई और शीघ्र ही वह भंग भी हो गया। इसके बाद जर्मनी सहित सभी राष्ट्रों में अस्त्र-शस्त्र की वृद्धि के लिये प्रतियोगिता चल पड़ी।

वस्तु स्थिति तो यह थी कि हिटलर वर्साई की संधि की शर्तों से बड़ा ही असंतुष्ट था और उनका पालन करने के लिये अनिच्छुक था। वह राइन भू-भाग पर अधिकार करना, छीने गये उपनिवेशों को प्राप्त करना और जर्मनी को अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित करना चाहता था। इससे यूरोप के राष्ट्रों में बेचैनी आ गई थी। अतः जुलाई १९३३ ई० में ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, इटली तथा जर्मनी के बीच एक समझौता हुआ। इसे रोम का समझौता कहते हैं और इसकी अवधि १० वर्ष के लिये निश्चित हुई। प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं पर परस्पर विचार विमर्श करने के लिये तय हुआ। इससे सशंकित हो रूस ने भी अपने पड़ोसी राज्यों से अनाक्रमण सन्धियाँ कीं।

लेकिन जर्मनी की नात्सी सरकार कोई संधि सच्चे दिल से नहीं करती थी। हम देख चुके हैं कि हिटलर ने किस तरह निरस्त्रीकरण सम्मेलन तथा राष्ट्र संघ दोनों को अँगूठा दिखा दिया। उसने अनिवार्य सैनिक भर्ती नियम भी लागू कर दिया।

ब्रिटिश विदेश मंत्री सर जॉन साइमन ने हिटलर से बर्लिन में भेंट भी की—वार्तालाप भी हुआ किंतु कोई लाभ नहीं हुआ। अतः १९३४ ई० के प्रारंभ में ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस तथा इटली के प्रतिनिधि स्ट्रेसा में मिले और उन्होंने यह निश्चय किया कि राष्ट्र संघ और वर्साई की संधि के विरुद्ध काम करने वाले राष्ट्र को दोषी घोषित

किया जायगा। उन्होंने आस्ट्रिया की स्वतन्त्रता का भी समर्थन किया लेकिन इससे हिटलर विचलित नहीं हुआ और सैन्य वृद्धि का कार्य करता रहा। यह देखकर ग्रेट ब्रिटेन ने भी अपनी सेना की वृद्धि के लिये एक योजना बनाई।

इसी समय ग्रेट ब्रिटेन, अमेरिका और जापान के बीच एक जहाजी सम्मेलन हुआ। जापान ने अन्य दो राष्ट्रों के साथ समानता की माँग की। इस माँग को अस्वीकृत कर दिया गया। इस पर जापान ने नौ सैनिक संधियों का अन्त कर देने के लिये निश्चय कर लिया और इसकी सूचना तक दे दी।

इसी समय इटली और अबीसीनिया का सम्बन्ध कटु हो रहा था। उधर हिटलर की बढ़ती हुई शक्ति से फ्रांस और इटली एक दूसरे के निकट सम्पर्क में आ रहे थे। सन १९३५ ई० के प्रारम्भ में मुसोलिनी और लावाल के बीच एक पैक्ट हुआ। उधर हिटलर ने सार को अधिकृत कर अपने राज्य में मिला लिया। फ्रांस ने ग्रेट ब्रिटेन से इसकी शिकायत कर सहायता माँगी किन्तु ग्रेट ब्रिटेन ने अनसुनी कर दी। इतना ही नहीं, उसने जर्मनी से एक जहाजी समझौता भी कर लिया। यह तय हुआ कि जर्मनी ब्रिटिश राष्ट्रमंडल की टन भार के ३५ प्रतिशत टन भार तक जहाजी बेड़ा का निर्माण कर सकता है।

इसी साल बाल्डविन मन्त्रिमंडल के समय इटली ने अबीसीनिया पर हमला भी कर दिया। संघ की कौंसिल ने इटली को आक्रमणकारी घोषित किया और उसके साथ आर्थिक बहिष्कार की नीति लागू की गई। इटली में कई मालों को जाने से रोक दिया गया किन्तु बहिष्कार पूर्ण रूपेण नहीं किया जा सका। तेल इटली के लिये बहुत आवश्यक था और इस पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया। इसके अलावे छिपे तौर से भी इटली को कुछ चीजें प्राप्त होती रहीं। अतः इटली पर बहिष्कार नीति का कोई असर नहीं पड़ा और उसने सात महीने के संघर्ष के बाद १९३६ ई० में अबीसीनिया का गला दबोच ही डाला। संघ मुँह ताकता रह गया।

इसी बीच इटली की सफलता और संघ की नपुंसकता को देखकर हिटलर का उत्साह बढ़ा और उसने मार्च १९३६ ई० में राइन प्रदेश पर एक सेना भेज अधिकार कर लिया था। हिटलर ने मुसोलिनी द्वारा अबीसीनिया अपहरण के समय सहानुभूति प्रदर्शित की थी। जून १९३६ ई० में स्पेन में गृह-युद्ध शुरू हुआ तो उसमें भी दोनों अधिनायकों ने प्रजातन्त्र के विरुद्ध विद्रोहियों की सहायता की। इस तरह इटली और जर्मनी सम्पर्क में आ गये और रोम-बर्लिन धुरी का निर्माण हुआ। स्पेन के गृह युद्ध में ग्रेट ब्रिटेन ने अहस्तक्षेप की नीति का समर्थन किया और हस्तक्षेप पर प्रतिबन्ध लगाने के लिये एक अन्तर्राष्ट्रीय अहस्तक्षेप समिति का संगठन हुआ लेकिन ब्रिटिश

नीति असफल रही। इटली और जर्मनी अहस्तक्षेप समिति में होते हुये भी स्पेन में हस्तक्षेप करते रहे।

इस प्रकार १९३७ ई० तक जब कि चेम्बरलेन प्रधान मंत्री हुये ग्रेट ब्रिटेन का सम्बन्ध जर्मनी से खराब हो गया था। फ्रांस भी ब्रिटिश नीति से पूरा खुश नहीं था किन्तु ब्रिटेन के विरुद्ध जाने का साहस भी नहीं कर सकता था। ग्रेट ब्रिटेन भी इटली तथा जर्मनी का खुले आम विरोध करना नहीं चाहता था और किसी तरह शांति बनाये रखना चाहता था। अतः उसने इन फासिस्ट राज्यों के प्रति संतुष्ट करने की नीति ग्रहण की। वह इनकी माँगों को मानता गया और समझौता करने के लिये भरपूर चेष्टा करता रहा किन्तु जर्मनी तथा इटली की भूख बढ़ती ही गई और अन्त में इसका परिणाम हुआ महायुद्ध का श्रीगणेश।

नवम्बर १९३७ ई० में हैलिफाक्स बर्लिन में हिटलर से मिले किन्तु विशेष लाभ न हुआ। ईडन तोष नीति का पक्षपाती नहीं था। अतः फरवरी १९३८ ई० में उसने मंत्रिमंडल से पदत्याग कर दिया। ब्रिटिश सरकार ने अबीसीनिया पर भी इटली के आधिपत्य को स्वीकार कर लिया। तोष-नीति के कारण अधिनायकों का मन बढ़ता जा रहा था। मार्च १९३८ ई० में जर्मनी ने आस्ट्रिया पर हमला किया और अप्रैल में मतगणना का जाल रचकर उसे अपने राज्य में हड़प लिया। इटली भी स्वार्थवश शान्त रहा लेकिन ग्रेट ब्रिटेन तथा फ्रांस ने पारस्परिक सहयोग बढ़ाने के लिये इसी समय एक समझौता किया। आस्ट्रिया के बाद चेकोस्लोवाकिया पर हिटलर की लोलुप दृष्टि पड़ी। चेकोस्लोवाकिया के सुडेटन प्रदेश में जर्मनी की प्रधानता थी और हेनलीन उनका नेता था। हिटलर इसे जर्मन राज्य में मिलाना चाहता था। तनाव बढ़ रहा था। ब्रिटिश सरकार ने एक बार रन्सीमैन को समझौता कराने के लिये भेजा किन्तु वह कुछ भी नहीं कर सका। १५ सितम्बर १९३८ ई० को ब्रिटिश प्रधान मंत्री चेम्बरलेन स्वयं हिटलर से मिले। चेक सरकार पर दबाव डालकर ब्रिटेन तथा फ्रांस ने जर्मन बहुमत प्रदेश जर्मनी को दिला दिया। बचे हुये भाग की सुरक्षा के लिये चेक सरकार को आश्वासन दिया गया लेकिन जर्मनी इतने से ही संतुष्ट नहीं था। उसकी माँग अधिक थी। अतः सितम्बर मास के अन्तिम सप्ताह में म्यूनिक में हिटलर और चेम्बरलेन पुनः मिले और म्यूनिक का समझौता हुआ। समस्त सुडेटन प्रदेश जर्मनी को दे दिया गया और चेक सरकार को बचे हुये भाग की सुरक्षा का सबों की ओर से आश्वासन दिया गया।

इस बीच इटली ने फ्रांस से ट्यूनीसिया की माँग की और १९३५ ई० में हुये मुसोलिनी-लावाल पैक्ट समाप्त हो जाने की घोषणा कर दी।

१९३९ ई० के प्रारम्भ में ब्रिटिश सरकार ने स्पेन की फ्रैंको सरकार को भी मान्यता

प्रदान कर दी। उधर हिटलर समस्त चेकोस्लोवाकिया को ही निगल जाने के लिये उतारू था। उसने म्यूनिक समझौते को ताक पर रख दिया और मार्च १९३९ ई० में वहाँ के राष्ट्रपति को बाध्य कर बोहेमिया के आसपास के भागों पर जर्मन सरक्षण कायम कर दिया। मुसोलिनी ने अबीसीनिया में अल्बानिया पर विजय प्राप्त कर ली।

अब तक ग्रेट ब्रिटेन तथा फ्रांस की तोष नीति की निष्फलता स्पष्ट हो गई। अब वे अधिनायकों की कटु नीति का समझ गये। अब चेकोस्लोवाकिया के बाद पोलैंड की बारी आई। अतः ग्रेट ब्रिटेन तथा फ्रांस ने पोलैंड की रक्षा के लिये उसे सहायता देने का वादा किया। अगस्त में हिटलर ने सोवियत रूस से एक अनाक्रमण संधि कर ली। उसने पोलैंड के सामने भी कई माँगें उपस्थित कीं और शीघ्र ही १ सितम्बर १९३९ ई० को उसके नगरों पर बमवर्षा होने लगी। ३ सितम्बर को ग्रेट ब्रिटेन तथा फ्रांस ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया। इस प्रकार दूसरे महायुद्ध का प्रारम्भ हो गया।

---

## अध्याय ५६

# साम्राज्यान्तर्गत देशों की समस्यायें (१६१६—१६३६ ई०)

(क) मिश्र—१६१४ ई० में जब प्रथम महायुद्ध प्रारंभ हुआ तो टर्की जर्मनी की ओर से इसमें शामिल हुआ। अब तक कानूनी दृष्टि से मिश्र पर टर्की का आधिपत्य माना जाता था किन्तु अब ऐसी बात नहीं रह गई। ग्रेट ब्रिटेन ने मिश्र को संरक्षित राज्य घोषित कर दिया और तत्कालीन खदीव को गद्दी से उतार कर उसके चाचा को सुल्तान की पदवी देकर पदारूढ़ कर दिया गया। ग्रेट ब्रिटेन ने युद्ध सम्बन्धी समस्त भार को भी अपने ही ऊपर ले लेने की घोषणा कर दी। इससे आशा की गई कि मिश्री खुश होंगे।

परन्तु इंगलैंड ने अपनी प्रतिज्ञा का समुचित पालन नहीं किया। मिश्र में सैनिक कानून लागू कर दिया गया। सेना में लोगों को भर्ती किया जाने लगा। शुरू में तो यह स्वेच्छा पर निर्भर था और उचित वेतन भी मिलता था किन्तु बाद में कम ही वेतन पर लोग भर्ती होने के लिये बाध्य किये जाने लगे। ब्रिटिश मिश्री मालों को भी मनमाने ढंग से खरीदा करते थे, अतः मिश्री असन्तुष्ट होने लगे थे। उनके असन्तोष के अन्य कारण भी थे। अंग्रेजों के विदेशी शासन से उन्हें घृणा थी। धार्मिक दृष्टि से अंग्रेज ईसाई थे तो मिश्री मुसलमान थे। अतः वे अंग्रेजी शासन से मुक्ति पाना चाहते थे। मित्र राष्ट्रों के युद्ध उद्देश्य को सुनकर मिश्रियों को आशा हो गई कि युद्ध के बाद वे स्वशासन के अधिकारी हो जायेंगे। अतः युद्धकाल में वे शान्त रहे।

लेकिन युद्ध का अन्त होने पर मिश्रियों की आशा पर पानी फिर गया। उन्हें शान्ति-सम्मेलन में प्रतिनिधि भी भेजने का अधिकार नहीं मिला। इससे वे नाराज हुये और जगलूल पाशा के नेतृत्व में शान्ति-सम्मेलन में भाग लेने के लिये एक विशिष्ट मंडल चला किन्तु नेता सहित सभी सदस्य रास्ते में ही पकड़कर माल्टा भेज दिये गये। इसके बाद मिश्र में भयंकर विद्रोह हो गया। विद्रोहियों ने तोड़-फोड़ की नीति अपनायी। जेनरल एलुम्बी ने विद्रोह को दबा डाला किन्तु अंग्रेज यह भी अनुभव करने लगे कि मिश्रियों को संतुष्ट करना भी आवश्यक है। १६१६ ई० में विशिष्ट मंडल के सभी सदस्य मुक्त कर दिये गये और लार्ड मिलनर के नेतृत्व में एक जाँच कमीशन की नियुक्ति हुई।

मिलनर कमीशन स्थिति की जाँच कर लौटा। ब्रिटेन में लौटने

जगलूल के बीच भी वार्तालाप हुआ। कमीशन ने अपनी रिपोर्ट में मिश्र की स्वतन्त्रता का समर्थन किया किन्तु इसके साथ ही कई प्रतिबन्ध भी लगा दिया। इसी आधार पर १९२१ ई० में एक सन्धि पत्र तैयार कर मिश्र के सामने उपस्थित किया गया किन्तु राष्ट्रवादियों ने इसे ठुकरा दिया। इस पर भी दंगा शुरू हो गया और एलेन्बी सैनिक कार्रवाई पुनः करने लगा। जगलूल भी गिरफ्तार कर जिब्राल्टर भेज दिये गये लेकिन दमन से ही समस्या हल होने को नहीं थी। ब्रिटिश सरकार मिश्रियों को अधिकार भी देने के लिये राजी हुई। फरवरी १९२२ ई० में एक घोषणा पत्र प्रकाशित किया गया जिसमें मिश्र को एक स्वतन्त्र सर्वाधिकार प्राप्त राष्ट्र स्वीकृत कर लिया गया किन्तु चार विषय ग्रेट ब्रिटेन के अधीन सुरक्षित रहे—स्वेज की रक्षा, विदेशी हमले से मिश्र की रक्षा, मिश्र में विदेशियों और उनके हितों की रक्षा और सूडान का नियन्त्रण। अब ब्रिटिश संरक्षण का अन्त हो गया और सुल्तान अहमद फवाद राजा की उपाधि से विभूषित हुआ।

मिश्र में एक नया संविधान लागू हुआ। १९२३ ई० में चुनाव हुआ और वफदी बहुमत में आये। इस समय तक जगलूल भी मुक्त हो गया था और उसी के नेतृत्व में जनवरी १९२४ ई० में मन्त्रिमण्डल का निर्माण हुआ। इस तरह मिश्र में उत्तरदायी शासन का प्रारंभ हुआ। इसी समय ग्रेट ब्रिटेन में रैमजे मैक्डोनल्ड की सरकार थी। पूर्ण स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में जगलूल उससे लंदन में मिलने गये किन्तु उसका उद्देश्य पूरा नहीं हुआ। ब्रिटिश प्रधानमन्त्री मिश्र से अंग्रेजी सेना हटाने के लिए तैयार नहीं हुआ और जगलूल निराश हो लौट आया।

१९२४ ई० के ही अन्त में एक दुर्घटना हो गई। सर ली स्टैक मिश्री सेना का सेनापति और सूडान का गवर्नर-जनरल था। कैरो में किसी ने उसकी हत्या कर डाली। राजा और प्रधान मन्त्री ने इस पर दुःख प्रकट किया और इसके सम्बन्ध में उचित कार्रवाई के लिये भी वादा किया किन्तु ग्रेट ब्रिटेन को इतने से संतोष नहीं हुआ और इसने शाम ही एक चेतावनी भेज दी। इसमें ब्रिटिश सरकार की कई माँगें थीं—मिश्र सरकार की ओर से माफी, अपराधियों को दंड, राजनीतिक प्रदर्शनों का दमन, ५ लाख पौंड स्टर्लिंग की क्षतिपूर्ति और सूडान से सारी मिश्री सेना की तत्काल वापसी। कपास की खेती के लिये सूडान के जेजिरे क्षेत्र के अनिश्चित विस्तार करने की भी घोषणा कर दी गई। इससे मिश्र को पानी की प्राप्ति में कठिनाई हो जाती। अतः जगलूल ने सूडान सम्बन्धी माँग को छोड़कर अन्य सभी माँगों को मंजूर कर लिया। इसके बाद अंग्रेजों ने अलेक्जेंड्रिया के चुंगी घर पर कब्जा कर लिया और इसके विरोधस्वरूप जगलूल ने पदत्याग कर दिया। नये प्रधान मन्त्री ने सभी ब्रिटिश माँगों को कबूल कर लिया और इसके बदले में अंग्रेजों ने केवल नाले नील

के ही पानी का उपयोग करने का वचन दिया लेकिन इससे राष्ट्रवादी सन्तुष्ट नहीं हुये और वे राष्ट्र संघ के सामने मिश्र के प्रश्न को ले जाना चाहते थे किन्तु अंग्रेजों के विरोध से यह संभव नहीं हो सका।

इसके बाद १६२८ ई० तक मिश्री समस्या अनिश्चित स्थिति में पड़ी रही। पार्लियामेंट में राष्ट्रवादियों की प्रधानता थी और अंग्रेजों से सहानुभूति रखने वाला कोई भी मंत्रिमंडल टिक नहीं सकता था। १६२६ ई० के निर्वाचन में राष्ट्रवादियों का ही बहुमत था किन्तु जगलूल को प्रधान मंत्री नहीं होने दिया गया। एक संयुक्त मंत्रिमंडल का निर्माण हुआ। दूसरे ही साल १६२७ ई० में जगलूल का देहान्त भी हो गया।

१६२६ ई० में इंगलैंड में मजदूर सरकार की स्थापना हुई। मिश्रियों के हृदय में नई आशा का संचार हुआ। हेन्डरसन और महमूद के बीच समझौता का प्रयत्न हुआ किन्तु सफलता नहीं मिली। इसके बाद पार्लियामेंट स्थगित कर दी गई। वफ्द नेता नहस पाशा ने जो जगलूल का उत्तराधिकारी था, पदत्याग कर दिया। इसके बाद १६३० ई० में सिदकी पाशा प्रधान मंत्री बना और उसने एक नया विधान लागू किया।

यह विधान प्रतिक्रियावादी था। इसका उद्देश्य था राष्ट्रवादी दल (वफ्द) को कमजोर करना। इसने अप्रत्यक्ष निर्वाचन की व्यवस्था की। सिदकी को पदच्युत कराने के उद्देश्य से नहस पाशा और महमूद ने गठबंधन किया, किन्तु वे सिदकी का कुछ बिगाड़ नहीं सके और वह अधिनायक की भाँति शासन करता रहा। उसने राष्ट्रवादियों और कम्युनिस्टों को दबाने का खूब प्रयत्न किया। इसी समय रूई की कीमत घटने के कारण आर्थिक संकट भी पैदा हो गया था। ईसाइयों के विरुद्ध भयंकर विद्रोह भी शुरू हो गया था। इस विद्रोह का मुख्य कारण था कि एक अंग्रेज महिला एक मुस्लिम लड़की को बलात् ईसाई बनाना चाहती थी। राजा भी सिदकी से असंतुष्ट था और शासन में हस्तक्षेप करता था। जनता भी उसके निरंकुश शासन से असन्तुष्ट हो गई थी। धीरे-धीरे उसका स्वास्थ्य भी खराब होने लगा था। इन सब कारणों से सिदकी ने सितम्बर १६३३ ई० में पदत्याग कर दिया। नसीम पाशा उसका उत्तराधिकारी बना।

इसके बाद १६३० ई० का विधान रद्द हो गया लेकिन मिश्री इतने से ही संतुष्ट नहीं हुये। १६३५ ई० में मुसोलिनी ने अबीसीनिया पर हमला कर दिया। अब भूमध्य सागर की सुरक्षा की दृष्टि से मिश्रियों को सन्तुष्ट करना अत्यावश्यक हो गया। वफ्दिस्ट नेता नहस पाशा समानता के ही आधार पर इंगलैंड के साथ सहयोग करने को तैयार था। अतः १६३६ ई० के ग्रीष्म में नये निर्वाचन की व्यवस्था की

गई। वफ्द को बहुमत प्राप्त हुआ और नहस प्रधान मंत्री बना। इसी साल राजा फुआद की मृत्यु हो गई और उसका पुत्र फारूक प्रथम नया राजा हुआ। इसी साल मिश्र तथा इंगलैंड के बीच एक नयी संधि हुई।

१९३६ ई० की संधि—इस संधि के अनुसार ग्रेट ब्रिटेन ने मिश्र को प्रभुता सम्पन्न राज्य स्वीकार कर लिया। यह तय हुआ कि दोनों देशों के राजदूत दोनों देशों में रहेंगे। दोनों ने एक दूसरे की सहायता करने के लिये भी वादा किया। यह भी तय हुआ कि अन्य राष्ट्रों के विशेषाधिकारों का अन्त करने के लिये ग्रेट ब्रिटेन उन्हें प्रभावित करे और राष्ट्र संघ में मिश्र की सदस्यता के लिये प्रयत्न करे। विदेशियों की रक्षा का भार मिश्री सरकार पर ही सौंपा गया किन्तु अभी भी मिश्र पर कुछ प्रतिबन्ध रह ही गये जो एक प्रभुतासम्पन्न राज्य के लिये अपमान जनक था। स्वेज नहर के क्षेत्र में अभी भी अंग्रेजी सेना कायम रही। ग्रेट ब्रिटेन को १०,००० सैनिक और ४०० हवाई सैनिक रखने का अधिकार प्राप्त था। युद्ध काल में वह मिश्र की सारी सुविधाओं का भी उपयोग कर सकता था। सूडान पर संयुक्त अधिकार कायम रहा। १० या २० वर्ष के बाद इस संधि पर पुनर्विचार करने के लिये तय हुआ।

सभी विदेशियों के विशेषाधिकारों का अन्त करने के सम्बन्ध में विचार करने के लिये ग्रेट ब्रिटेन ने १९३७ ई० में मौन्ट्रे में एक सम्मेलन बुलाया। सभी राष्ट्रों के बीच एक समझौता हुआ। १९४९ ई० तक सभी विशेषाधिकारों का अन्त कर देने का निश्चय हुआ। इसी साल मिश्र राष्ट्र संघ का सदस्य भी बन गया। फारूक प्रथम का स्वतन्त्र मिश्र के प्रथम राजा के रूप में अभिषेक हुआ।

शीघ्र ही राजा तथा प्रधान मंत्री में तीन बातों को लेकर मतभेद हो गया। ये बातें थीं—राजा का अभिषेक, विधान में राजा का स्थान और ब्लूशर्ट नामक संगठन का विघटन। राजा ने मंत्रिमण्डल को भंग कर दिया। उदारवादी मुहम्मद महमूद ने नया मंत्रिमण्डल बनाया और शीघ्र ही उसने ब्लूशर्ट का विघटन कर दिया किन्तु जहाँ तहाँ दंगा होने लगा जिसे इंगलैंड ने दबा दिया। इसी समय फारूक का विवाहोत्सव भी मनाया गया। १९३८ ई० में नया निर्वाचन हुआ। इस समय राष्ट्रवादियों में विभाजन हो गया था और राजा की लोकप्रियता बढ़ रही थी। अतः चुनाव में सरकार ही विजयी हुई और महमूद का प्रधान मंत्रित्व कायम रहा। अगस्त १९३९ ई० में महमूद ने पदत्याग कर दिया और अली मेहर प्रधान मंत्री बना। यह एक स्वतन्त्र विचारक था और इसे वफ्दिस्ट दल के एक भाग सादिए का समर्थन प्राप्त था।

( ख ) फिलस्तीन—फिलिस्तीन पश्चिमी एशिया में छोटा-सा एक देश है किन्तु ब्रिटिश साम्राज्य के अन्दर इसका एक महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है।

फिलस्तीन प्राचीन सभ्यता तथा संस्कृति का केन्द्र रह चुका था। पुरातन काल में वह यहूदियों का निवास-स्थान था, किन्तु रोमनों ने उसे जीतकर उन्हें वहाँ से निकाल बाहर कर दिया और वे विश्व के विभिन्न देशों में रहने लगे लेकिन वे अपनी प्राचीन भूमि और जाति को नहीं भूले। बाद में बहुसंख्यक अरबों ने फिलस्तीन को जीतकर उसे आबाद किया। इस प्रकार फिलस्तीन में यहूदियों तथा अरबों का राज्य स्थापित था। वहाँ ईसाइयों का भी पवित्र स्थान था, क्योंकि वह ईसा की जन्म-भूमि थी।

प्रथम महायुद्ध तक फिलस्तीन तुर्की साम्राज्य का एक अंग था किन्तु उस युद्ध में टर्की ने जर्मनी का पक्ष लिया और हार गया। अतः फिलस्तीन उसके हाथ से निकल गया।

प्रथम महायुद्ध में यहूदियों ने मित्र राष्ट्रों का साथ दिया और इसके बदले इंगलैंड ने बाल्फर घोषणा के द्वारा फिलस्तीन में उन्हें राष्ट्रीय घर देने का वादा किया। अरबों की सहायता के बदले उन्हें स्वतन्त्रता देने की प्रतिज्ञा की गई। महायुद्ध के अन्त होने पर फिलस्तीन अंग्रेजों के शासनादेश में सौंपा गया। अब यहूदियों को वहाँ आने के लिये सुअवसर प्राप्त हुआ और वे विभिन्न देशों से आकर बसने लगे। अरबों ने अंग्रेजी नीति का घोर विरोध किया। यहूदी प्रत्येक क्षेत्र में उनके प्रतियोगी निकले और उनकी बढ़ती हुई संख्या से अरबों की स्थिति संकटपूर्ण हो गई। अतः उन्होंने विद्रोह करना शुरू कर दिया। १६३६ ई० तक कई विद्रोह हुये और बहुत से मौत के घाट उतरे। अरबों ने हर तरह से उनका बहिष्कार किया परन्तु साम्राज्यवादी इंगलैंड से कहाँ तक पार पा सकते थे। विद्रोह क्रूरतापूर्वक दबा डाले गये।

पील कमीशन का सुझाव—लेकिन १६३३ ई० बाद स्थिति पुनः संगीन होने लगी। जर्मनी में नात्सी शासन स्थापित हुआ और यहूदियों को खोज-खोजकर शिकार किया जाने लगा। अब वे फिर अधिक संख्या में फिलस्तीन आने लगे। उनकी संख्या ३० प्रतिशत से भी बढ़ने लगी।

अरबों ने भी उत्पात मचाना शुरू किया। १६३६ ई० में भयानक सर्वव्यापी आन्दोलन हुआ। यहूदी और अंग्रेज दोनों ही अरबों के आक्रमण के शिकार हुये किन्तु अन्त में आन्दोलन क्रूरतापूर्वक दबा दिया गया। १६३७ ई० में ब्रिटिश सरकार ने इस समस्या पर विचार करने के लिये पील कमीशन नियुक्त किया। कमीशन ने फिलस्तीन को तीन भागों में विभक्त करने का प्रस्ताव पेश किया—यहूदी, अरब तथा ब्रिटिश।

इस तरह यहूदीवादी, राष्ट्रीयतावादी और साम्राज्यवादी स्वार्थों की पूर्ति की कोशिश की गई। किन्तु यह कोशिश व्यर्थ सिद्ध हुई। अरबों तथा यहूदियों ने इस योजना को धोखे की टट्टी समझ इसका घोर विरोध किया। अरबों का कहना था कि उपजाऊ भाग यहूदियों को और पवित्र भाग अंग्रेजों को मिला है। उन्हें तो अनुर्वर भाग ही दिया है। फिर अरबों की ओर से दंगा फसाद शुरू हो गया और ब्रिटिश सरकार का भी दमनचक्र चलने लगा। ब्रिटिश सरकार तो पील योजना को लागू करना चाहती था किन्तु अरबों के विरोध को देखकर उसकी हिम्मत नहीं हुई और योजना स्थगित करनी पड़ी।

१९३८ ई० में सर जॉन वुडहेड के नेतृत्व में पुनः एक कमीशन नियुक्त हुआ। वुडहेड कमीशन को एक विस्तृत योजना प्रस्तुत करने का भार सौंपा गया। इस कमीशन ने बँटवारे की योजना का समर्थन नहीं किया। अतः इस योजना को छोड़ दिया गया और अरबों तथा यहूदियों के बीच समझौता कराने का प्रयत्न हुआ। इसी उद्देश्य से १९३९ ई० के प्रारंभ में लंदन में एक सम्मेलन बुलाया गया लेकिन अरबों तथा यहूदियों ने परस्पर विरोधी माँगें उपस्थित कीं और दोनों में समझौता नहीं हो सका। सम्मेलन भंग हो गया।

ब्रिटिश सरकार ने श्वेत पत्र में पुनः एक नयी योजना निकाली। किन्तु दोनों ने फिर इसका भी विरोध किया। इस तरह ब्रिटिश सरकार तंग हो गई और अन्त में इसने फिलस्तीन में यहूदियों के प्रवेश पर ६ महीने के लिये प्रतिबन्ध लगा दिया। यह आदेश पहली अक्टूबर १९३९ ई० से लागू होता तब तक सितम्बर में ही दूसरा महायुद्ध शुरू हो गया और फिलस्तीन समस्या ज्यों की त्यों पड़ी रह गई।

भारत, इराक आदि भी कई देश थे जहाँ राष्ट्रीय आन्दोलन प्रबल था किन्तु यहाँ इसका विस्तृत उल्लेख करना हमारा उद्देश्य नहीं है।

(ग) ब्रिटिश राष्ट्रमंडल—ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और दक्षिणी अफ्रीका नामक डोमिनियन के १९१४ ई० तक के विकास का उल्लेख हम कर चुके हैं। १९१४ ई० तक ये राज्य आन्तरिक मामलों में स्वतन्त्र हो चुके थे। बाहरी मामलों में भी नाम मात्र का ही ब्रिटिश अधिकार रह गया था। १८५९ ई० में ग्रेट ब्रिटेन के विरोध के बावजूद भी कनाडा ने अंग्रेजी माल पर चुंगी लगाई थी। इसके बाद अन्य राज्यों ने भी कनाडा का अनुसरण किया। १८८८ ई० में आस्ट्रेलिया के उपनिवेशों ने एशियायी और अफ्रीकी प्रवासियों के अपने यहाँ आने पर प्रतिबन्ध लगा दिया।

१९१४ ई० में प्रथम महायुद्ध शुरू हुआ। सभी डोमिनियनों ने युद्ध में ग्रेट-ब्रिटेन का साथ दिया और उसकी अमूल्य सेवा की। युद्ध समाप्त होने पर शान्ति

सम्मेलन और राष्ट्र संघ में इन राज्यों को भी ग्रेट ब्रिटेन के साथ साथ अधिकार दिया गया। अब बाहरी मामलों में भी ये डोमिनियन अपने अधिकारों का उपयोग करने लगे। वे विदेशों में अपना राजदूत नियुक्त करने लगे और विदेशी राजदूतों का भी अपने यहाँ स्वागत करने लगे। कनाडा ने १६२३ ई० में अमेरिका से एक सन्धि भी कर ली।

इस तरह प्रथम महायुद्ध का अन्त होते-होते डोमिनियन भीतरी और बाहरी दोनों क्षेत्रों में व्यावहारिक दृष्टि से मातृभूमि से स्वतन्त्र हो चुके थे। १८८७ ई० से ही एक सम्मेलन का आयोजन होता था जिसमें डोमिनियनों के प्रधान मंत्री या अन्य प्रतिनिधि भाग लेते थे। इसकी बैठक प्रायः लन्दन में होती थी। १६०७ ई० तक सम्मेलन औपनिवेशिक सम्मेलन ( कॉलोनिअल कान्फ्रेन्स ) के नाम से प्रसिद्ध था और उसके बाद यह इम्पीरियल कान्फरेन्स कहलाने लगा। इस सम्मेलन के रंग-मंच पर परस्पर हित के विषयों पर विचार-विमर्श होता था। डोमिनियन राज्यों के इतिहास में १६२६ ई० का इम्पीरियल कान्फ्रेंस विशेष महत्व रखता है। इसी सम्मेलन के एक प्रस्ताव में ( बाल्फर रिपोर्ट ) में यह घोषणा की गई कि ये डोमिनियन ब्रिटिश राष्ट्र-मंडल में आन्तरिक और वैदेशिक दोनों ही दृष्टियों से ग्रेट ब्रिटेन के बराबर हैं और केवल ताज ही इनके बीच मिलाने वाली एकमात्र कड़ी है। १६३० ई० के इम्पीरियल कान्फ्रेंस में इस प्रस्ताव को पुनः दुहराया गया।

१६३१ ई० में ब्रिटिश पार्लियामेन्ट ने स्टेच्यूट ऑफ वेस्टमिनिस्टर नामक कानून के द्वारा इस प्रस्ताव को कानूनी रूप दिया। अब ये डोमिनियन व्यवहार एवं सिद्धान्त दोनों ही में स्वतन्त्र समझे जाने लगे। अब सभी डोमिनियन ग्रेट ब्रिटेन की बराबरी में स्वीकृत कर लिये गये। अब ये अपने मन के अनुकूल अपना गवर्नर-जनरल नियुक्त करने लगे। डोमिनियन पार्लियामेंट कोई भी कानून बनाने की अधिकारिणी हो गई और इसका पास किया हुआ कानून ब्रिटिश-कानून का विरोधी होने पर भी अस्वीकृत नहीं किया जा सकता। डोमिनियन पार्लियामेंट के बिना स्वीकृति के अब कोई भी ब्रिटिश-कानून डोमिनियन राज्यों में लागू नहीं हो सकता। अब राजगद्दी के उत्तराधिकार नियम या सम्राट की उपाधि आदि के सम्बन्ध में कोई भी परिवर्तन करने के लिए ब्रिटिश पार्लियामेंट की स्वीकृति के साथ-साथ डोमीनियन पार्लियामेंट की भी स्वीकृति आवश्यक हो गई। १६३६ ई० में अष्टम् एडवर्ड के गद्दी-त्याग से जो वैधानिक परिवर्तन हुआ उसमें डोमिनियन पार्लियामेंट की भी स्वीकृति ली गई थी। डोमिनियन अपनी सुरक्षा का भी प्रबन्ध करने लगे और किसी युद्ध में जिसमें ग्रेट ब्रिटेन सम्मिलित हो, भाग लेना न लेना डोमिनियन की मर्जी पर निर्भर रहने लगा। ग्रेट ब्रिटेन इसके लिए डोमिनियन को बाध्य नहीं कर सकता। इस तरह १६३६ ई० में जब दूसरा

महायुद्ध शुरू हुआ तो प्राय सभी डोमिनियनों ने ग्रेट ब्रिटेन का साथ दिया किंतु स्वेच्छा से किसी के बाध्य करने से नहीं।

इस बीच १६२१ ई० में आयरी फ्री स्टेट नामक एक नये डोमिनियन का निर्माण हुआ था। १६३१ ई० में जब ही चेलेरा के हाथ में शासन सूत्र आया तो वह एक एक कर ग्रेट ब्रिटेन से सम्बन्ध विच्छेद करने लगा जिसका उल्लेख अन्यत्र * किया जायगा।

---

* देखिये अध्याय ६०

## अध्याय ६०

# ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैंड ( १९१९—१९३९ ई० )

**१९२१ ई० की सन्धि**—१९१९ ई० से १९२१ ई० तक के आंग्ल-आयरी सम्बन्ध पर लायड जार्ज के मंत्रिमंडल के समय हम दृष्टिपात कर चुके हैं। हम देख चुके हैं कि १९२१ ई० में ग्रेट-ब्रिटेन और आयरलैंड में एक सन्धि हुई। इसके अनुसार दक्षिणी आयरलैंड को आयरी फ्री स्टेट के नाम से औपनिवेशिक स्वराज्य दिया गया। सन्धि की शर्तों का भी उल्लेख पहले ही किया जा चुका है।

**सन्धि के परिणाम**—इस सन्धि के कारण आयरलैंड में गृहयुद्ध का सूत्रपात हुआ। सिनफेन दल में विभाजन हो गया। सन्धि के समर्थकों में आर्थर ग्रिफीथ और मिकायल कौलीन्स प्रसिद्ध थे। डी वेलेरा सन्धि का घोर विरोधी था। इस तरह सिनफेन में दो दल हो गये—फ्री स्टेटर और रिपब्लिकन। डैक ने भी सन्धि स्वीकार कर ली। १९२२ ई० के मध्य में जब अस्थायी पार्लियामेंट का निर्वाचन हुआ तो उसमें भी सन्धि के समर्थकों को ही बहुमत प्राप्त हुआ। इसके बाद डी वेलेरा के उग्रवादी समर्थक उत्पात मचाने लगे। यहाँ तक कि मिकायल कौलीन्स की हत्या कर डाली गई। आर्थर ग्रिफीथ तो कार्य एवं चिन्ता के भार से पहले ही मर चुका था। अब कास्ग्रेव प्रेसिडेन्ट निर्वाचित हुआ और उसने बड़ी कड़ाई से काम करना शुरू किया। इसके फलस्वरूप गृहयुद्ध की भीषणता बढ़ गई। हजारों जेल गये और कितने तलवार के शिकार हुये या फाँसी पर लटका दिए गए। अन्त में सरकार की ही जीत हुई। और डी वेलेरा का दल हथियार रख देने के लिए बाध्य हुआ।

१९२३ ई० से १९२७ ई० तक डी वेलेरा के समर्थक शान्त रहे। वे अपने दल को फियानाफेल कहते थे और सभी निर्वाचनों में भाग भी लेते थे लेकिन निर्वाचित हो जाने पर वे राजभक्ति की शपथ लेने के लिए तैयार नहीं थे। अतः वे पार्लियामेंट में बैठ नहीं सकते थे। इससे कास्ग्रेव सरकार को लाभ ही था क्योंकि उसे पार्लियामेंट में प्रबल विरोधी पक्ष का सामना नहीं करना पड़ा लेकिन १९२७ ई० में कास्ग्रेव के सहायक और न्यायमंत्री ओहीगीन्स की हत्या कर डाली गई। फियानाफेल पर इसका दोषारोपण किया गया और इस पर प्रतिबन्ध लगाया जाने लगा। एक नियम के अनुसार पार्लियामेंट के उम्मीदवारों के लिए पहले ही वादा करना आवश्यक हो गया कि निर्वाचित होने पर वे राजभक्ति की शपथ अवश्य लेंगे। फियानाफेल के हिंसात्मक

कार्यों से डी वेलेरा के कई हितैषी भी असन्तुष्ट होने लगे थे। अतः डी वेलेरा १९२७ ई० से वैधानिक तरीकों से काम करने लगा और पार्लियामेंट के साथ सहयोग करने लगा। १९३२ ई० में डी वेलेरा के दल को ही बहुमत प्राप्त हुआ और उसकी सरकार बनी।

कास्ग्रेव का शासन—इस प्रकार १० वर्षों तक (१९२२-३२ ई०) कास्ग्रेव का शासन रहा। इस सरकार ने कई महत्वपूर्ण कार्यों को किया। १९२२ ई० में नया विधान लागू हुआ। इगलैंड के राष्ट्रीय कर्ज में फ्री स्टेट का जो उत्तरदायित्व था उससे वह बरी हो गया। १९२३ ई० में फ्री स्टेट राष्ट्र सघ का सदस्य हो गया और बाहर अपने राजदूतों को भेजने लगा। आर्थिक क्षेत्र में उन्नति करने के लिए अनेक उपाय किये गये। अनेक विभागों का सगठन कर खर्च में कमी की गई। पुलिस और डाक विभाग में सुधार लाया गया। कृषि और विद्युत्‌शक्ति का विकास हुआ।

डी वेलेरा का शासन—१९३२ ई० में डी वेलेरा का शासन शुरू हुआ। १८८२ ई० में न्यूयार्क में उसका जन्म हुआ था। उसकी माँ आयरी थी और उसका पिता स्पेनी था। उसने उच्च शिक्षा प्राप्त की और वह गणित शास्त्र का प्राध्यापक नियुक्त हुआ था। वह बहुत बड़ा वक्ता था और उसमें देशभक्ति की भावना भी भरी हुई थी। १९१६ ई० के ईस्टर विद्रोह में उसने प्रमुख भाग लिया और इस अपराध में उसे फाँसी की सजा मिली लेकिन यह सजा आजीवन कैद के रूप में बदल दी गई। १९१७ ई० में उसे फिर जेल से मुक्ति मिली किन्तु दूसरे ही साल वह फिर गिरफ्तार कर लिया गया परन्तु वह भाग कर अमेरिका चला गया। युद्ध का अन्त होने पर वह आयरलैंड लौटा और प्रजातन्त्रीय दल में शामिल हो गया।

डी वेलेरा ग्रेट ब्रिटेन से कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहता था। वह पूर्ण स्वतन्त्रता का समर्थक था। अतः वह शीघ्र ही सम्बन्ध विच्छेद के पथ पर अग्रसर हुआ। अंग्रेज जमींदारों की क्षति पूर्ति के लिए कुछ वार्षिक रकम देने के लिए तय हुआ था किन्तु डी वेलेरा उसे देने में आनाकानी करने लगा। दोनों देशों में टैरिफ सम्बन्धी लड़ाई छिड़ जाने की नौबत पहुँच गई। संविधान में अनेक परिवर्तन ला दिये गये। राजभक्ति की शपथ उठा दी गई। आयरी कानून को पास करने के लिए गवर्नर की स्वीकृति की आवश्यकता नहीं रह गई। प्रिवी-कौन्सिल में आयरलैंड से अपील करने की प्रथा बन्द कर दी गई। १९३६ ई० में सिनेट का ही अन्त कर दिया गया।

१९३७ ई० में एक नया विधान लागू हुआ। आयरी फ्री स्टेट को आयर के नाम से पुकारा गया और इसे एक प्रभुत्वसम्पन्न प्रजातन्त्र राज्य घोषित कर दिया गया। एक प्रेसीडेंट उत्तरदायी मन्त्रिमडल की व्यवस्था की गई। १९३८ ई० में डा० हाइड ने प्रेसीडेन्ट के और डी वेलेरा ने प्रधान मन्त्री के पद को सुशोभित किया। उसी साल ग्रेट-

ब्रिटेन से एक समझौता हुआ और कई विवादपूर्ण विषयों के सम्बन्ध में निर्णय कर लिया गया। ब्रिटिश सरकार ने तटवर्ती अड्डों को आयरियों के हाथ सौंप दिया और उन स्थानों से अपनी सेना को वापस बुला लिया। आयर ने ग्रेट ब्रिटेन को एक करोड़ पौंड देना मंजूर कर लिया। इस प्रकार दोनों देशों में मनमुटाव बहुत कुछ दूर हो गया किन्तु देश के विभाजन से जो कटुता पैदा हो गई थी वह अभी भी बनी रही। सितम्बर १९३९ ई० में जब दूसरा महायुद्ध शुरू हुआ तो आयर तटस्थ रह गया। लेकिन अन्य सभी डोमीनियनों ने युद्ध में ग्रेट ब्रिटेन का साथ दिया था।

———

## अध्याय ६१

# द्वितीय महायुद्ध और ग्रेट ब्रिटेन (१९३९—१९४५ ई०)

युद्ध का प्रारंभ— हम देख चुके हैं कि ३ सितम्बर १९३९ ई० को हिटलर ने पोलैंड पर हमला किया और द्वितीय महायुद्ध प्रारम हो गया। अब इसकी प्रगति का संक्षिप्त विवरण हम प्रस्तुत करेंगे।

पोलैंड में युद्ध बहुत दिनों तक नहीं चला। जर्मनी और रूस दोनों ने इस पर हमला किया और पोलैंड हार गया। १९४० ई० के पूर्वार्द्ध में हिटलर ने डेनमार्क, नार्वे, हालैंड और बेल्जियम पर विजय प्राप्त की। अब उत्तर-पूर्व की ओर से फ्रांस पर धावा बोलना सुगम हो गया। फ्रांस और बेल्जियम में ब्रिटिश सेना लड़ रही थी उसकी स्थिति ही नाजुक हो गई। फ्रांसीसी लोग अपनी रक्षा के लिए मैजीनो पंक्ति पर निर्भर थे लेकिन यह उनकी भूल थी। जर्मन बेलजियम होते हुये मैजीनो पंक्ति के एक छोर से फ्रांस में घुस गये, पेरिस पर कब्जा हो गया और तत्कालीन सरकार को आत्म समर्पण करना पड़ा। मार्शल पेटेन के नेतृत्व में वीच में एक नई सरकार का निर्माण हुआ। फ्रांस के शीघ्र पतन का मुख्य कारण था—वहाँ के राजनीतिज्ञों और लोगों में भ्रष्टाचार का प्रचार।

इसी समय इटली भी युद्ध में कूद पड़ा। इसने फ्रांस से अपने कुछ प्रदेशों को लौटाना चाहा किन्तु इसमें उसे पूरी सफलता नहीं मिली। अब यूनान पर धावा बोला गया। एक अंग्रेजी सेना इसकी मदद में भेजी गई। इटालियनों की पराजय तो हुई किन्तु जर्मनी की सहायता से यूनान को जीत लिया गया और ब्रिटिश सेना को क्रीट तथा मिस्र में शरण लेनी पड़ी। इस समय ग्रेट ब्रिटेन की स्थिति बहुत कमजोर थी। डोमिनियन के अलावे उसके सहयोगियों का अभाव था। उसका शक्ति जर्मनी का तुलना में कम थी। इसी समय ग्रेट ब्रिटेन पर शीघ्र आक्रमण न कर हिटलर ने एक बड़ा भूल की। इसके बाद अंग्रेजी शक्ति बढ़ने लगी और मई १९४० ई० में चर्चिल के प्रधान मंत्री होते ही स्थिति में और अधिक सुधार होने लगा।

ग्रेट ब्रिटेन पर हमला—जर्मनी ने ग्रेट ब्रिटेन पर १९४० ई० के शरद ऋतु में हमला शुरू किया। जर्मनी रात में लन्दन आदि बड़े नगरों पर बम वर्षा करने लगा। ग्रेट ब्रिटेन ने भी जर्मनी के बड़ हवाई जहाजों और समुद्री जहाजों को बर्बाद किया। जर्मनी ने पनडुब्बी जहाजों (सबमेरीन) के द्वारा भी अंग्रेजों को बहुत क्षति पहुँचाई किंतु अंगरेजों ने भी सैकड़ों पनडुब्बी जहाजों को नष्ट कर डाला।

**अमेरिका का युद्ध-प्रवेश**—१६४१ ई० में युद्ध में प्रवेश करने से पहले संयुक्त राज्य अमेरिका से ग्रेट ब्रिटेन को सहायता मिलने लगी थी। ५० विध्वंसक पोत और अन्य कई सामान मिले थे। दिसम्बर १६४१ ई० में जापान ने पर्ल हार्बर पर हमला किया और इसके बाद शीघ्र ही अमेरिका भी मित्र-राष्ट्रों की ओर से युद्ध में कूद पड़ा। प्रशान्त महासागर में युद्ध के लिए जापान को बहुत सुविधाएँ थीं और उसने कई द्वीपों पर कब्जा कर लिया। उसने बर्मा को भी जीत लिया। भारत पर भी हमला की आशंका बनी हुई थी किन्तु जब मित्र-राष्ट्रों की शक्ति बढ़ने लगी तो जापान की स्थिति कमजोर होने लगी। प्रशान्त महासागर में युद्ध संचालन का भार अमेरिका के सेनापति मैकार्थर को और बर्मा में लुई माउन्टबैटन को सौंपा गया। अब जापान को जीते हुये भागों से पीछे की ओर मुड़ना पड़ा। बर्मा आदि कई स्थान उसके हाथों से निकलने लगे।

इसी बीच १६४१ ई० में हिटलर रूस पर हमला कर विश्वासघात का दोषी बना। यह उसकी दूसरी बड़ी भूल साबित हुई क्योंकि इसमें उसकी शक्ति का बहुत दुरुपयोग हुआ।

**उत्तरी अफ्रीका में युद्ध**—उत्तरी अफ्रीका भी युद्ध का प्रथम केन्द्र था। अबीसीनिया इटली के हाथ से छीन कर पुराने राजकीय-वंश के हाथ में दे दिया गया। मौन्टगोमरी ने लिबिया से दुश्मनों को भगा दिया और ट्रिपोली पर अधिकार कर लिया। १६४२ ई० में मित्र-राष्ट्रों की सेना ने अलजीरिया को भी अधिकृत कर लिया और बहुत से दुश्मनों को कैदी बना लिया।

१६४३ ई० की गर्मी में सिसली पर अधिकार हुआ और इटली पर हमला किया गया। इटलीवासियों ने विद्रोह कर दिया और मुसोलिनी को गिरफ्तार कर लिया किन्तु वह भाग निकला। फिर भी वह पकड़ा गया और गोली से उड़ा दिया गया। बदोगलियो के नेतृत्व में इटली में नयी सरकार का निर्माण हुआ।

**जर्मनी का पतन**—इस बीच जर्मनी पर हमला करने के लिए ग्रेट ब्रिटेन में तैयारी हो रही थी। हमला हुआ भी। जर्मनी में युद्ध का संचालन आइजेनहावर तथा मौन्टगोमरी ने किया था। नौर्मंडी पर भी सफलतापूर्वक आक्रमण हुआ। जर्मनी में जब आइजेनहावर की सेना एल्ब नदी की ओर बढ़ रही थी तो पूर्व की ओर से रूसियों ने भी जर्मनी पर हमला किया। जर्मनों की स्थिति बड़ी नाजुक हो गई और अप्रैल १६४५ ई० में हिटलर ने संभवतः आत्महत्या कर डाली। मई में मित्रराष्ट्रों ने बर्लिन पर अधिकार कर लिया और जर्मनो ने आत्मसमर्पण कर दिया।

**जापान का पतन**—लेकिन जापान अभी भी लड़ता रहा। अब तक ऐटम बम का भी आविष्कार हो चुका था। अमेरिका ने अगस्त १६४५ ई० में हिरोशिमा तथा

नागासकी नामक नगरों पर ऐटम बम गिराया। ये नगर बर्बाद हो गये और अब जापानियों की आँखें खुलीं। जापान ने भी हथियार डाल दिया और महायुद्ध का अन्त हो गया जर्मनी को रूस, फ्रांस, ग्रेट ब्रिटेन और अमेरिका ने आपस में बाँट लिया था। लेकिन जापान का बँटवारा नहीं हुआ। वहाँ एक संविधान लागू हुआ किन्तु जेनरल मैकार्थर के नेतृत्व में एक अन्तर्राष्ट्रीय सेना भी उसकी भूमि पर रखी गई।

**महायुद्ध का अन्त**—इस प्रकार दूसरा महायुद्ध ६ वर्षों तक चलता रहा। प्रथम महायुद्ध से इसकी अवधि दो वर्ष अधिक रही परन्तु प्रथम महायुद्ध की तुलना में दूसरे महायुद्ध में ग्रेट ब्रिटेन का नुकसान बहुत कम हुआ। जितने लोग प्रथम महायुद्ध में मरे और घायल हुए उससे कम ही लोग दूसरे महायुद्ध में नुकसान हुए।

दूसरे महायुद्ध के प्रारम्भ होते ही राष्ट्र संघ का अन्त हो गया और १९४५ ई० में एक नये अन्तर्राष्ट्रीय संगठन का जन्म हुआ। यह संयुक्त राष्ट्र संघ के नाम से विख्यात है। राष्ट्रसंघ और संयुक्त राष्ट्र संघ में कोई मौलिक भेद नहीं है किन्तु दोनों में दो तीन बातों में अन्तर है। पहले, रूस बहुत समय तक राष्ट्र संघ का सदस्य नहीं बन सका था और अमेरिका तो कभी भी इसका सदस्य नहीं हुआ किन्तु दोनों ही प्रारम्भ से ही संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य बन गये। दूसरे, राष्ट्र संघ संयुक्त राष्ट्र संघ की अपेक्षा आक्रमणकारी के विरुद्ध कोई कार्रवाई करने में अधिक असमर्थ था। तीसरे, राष्ट्र संघ का केन्द्र जेनेवा था तो संयुक्त राष्ट्र संघ का केन्द्र न्यूयार्क है।

**युद्धकालीन वैधानिक परिवर्तन**—ग्रेट ब्रिटेन पर इस महायुद्ध का क्या प्रभाव पड़ा, इसका विवरण अगले अध्याय में प्रस्तुत किया जायगा। वैधानिक क्षेत्र में युद्ध के कारण जो परिवर्तन हुए उनका उल्लेख यहाँ किया जाता है। युद्ध का प्रारम्भ होते ही चेम्बरलेन ने एक युद्ध मन्त्रिमंडल का निर्माण किया। पहले तो इसके नौ सदस्य थे किन्तु बाद में सदस्यों की संख्या आठ ही रखी गयी। इन आठ सदस्यों में रक्षा विभाग के तीन प्रधान भी सम्मिलित थे लेकिन व्यवहार में इस व्यवस्था में कुछ त्रुटियाँ दीख पड़ीं। पहले, रक्षा विभाग के तीनों प्रधानों को युद्ध मन्त्रिमंडल की बैठक में बराबर भाग लेने के लिये समय नहीं मिलता था। दूसरे, युद्धकाल में श्रम, खाद्यान्न आदि जैसे कुछ आवश्यक विभागों के मन्त्रियों की भी सर्वथा उपेक्षा नहीं की जा सकती। तीसरे, संकट काल में शीघ्र निर्णय की दृष्टि से अभी भी सदस्यों की संख्या अधिक थी। चर्चिल ने इन त्रुटियों को दूर करने का प्रयत्न किया। उसने सदस्यों की संख्या घटा दी और स्वयं रक्षामन्त्री का कार्यभार सँभालने लगा। उसने उप प्रधानमन्त्री के एक नये पद का निर्माण किया और इस पर श्रमिक दल के नेता एटली को नियुक्त किया।

---

## अध्याय ६२

# युद्धोत्तर ग्रेट ब्रिटेन ( १६४६—१६५६ ई० )

( क ) गृह नीति—हम देख चुके हैं कि मई १६४० ई० में अनुदार नेता चेम्बर-लेन ने पदत्याग कर दिया और चर्चिल प्रधान मंत्री बने। चर्चिल भी अनुदार दल के ही नेता थे। चर्चिल के नेतृत्व में संयुक्त मंत्रिमंडल जारी रहा। पार्लियामेंट का निर्वाचन १६३५ ई० में ही हुआ था। युद्ध की स्थिति में १६४५ ई० तक इसका नया निर्वाचन स्थगित रहा और पार्लियामेंट अपनी अवधि बढ़ाती रही।

चर्चिल मंत्रिमंडल के सामने युद्ध-संचालन की ही प्रमुख समस्या थी किन्तु सरकार ने कुछ अन्य बातों की ओर भी ध्यान दिया। पुनर्निर्माण कार्य के लिए एक नगर तथा ग्राम योजना नामक नया विभाग खोला गया। राज्य विभाग सम्बन्धी योजनाओं का विस्तार हुआ और सर विलियम बेवरिज की देखरेख में सामाजिक सुरक्षा के सम्बन्ध में एक विस्तृत योजना तैयार की गई। इसके आधार पर युद्ध-काल में तो कोई कानून नहीं बन सका किन्तु शान्ति-काल में उसे लागू करने के लिए आशा की गई। १६४४ ई० में एक शिक्षा नियम पास हुआ किन्तु इसे भी शान्ति-काल में लागू करने के लिये स्थगित रखा गया लेकिन लागू होने पर इस नियम के द्वारा महत्वपूर्ण सुधार हुए। अब स्कूल छोड़ने के लिये विद्यार्थियों की उम्र १६ वर्ष निश्चित हुई। माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में भी सुधार हुआ और योग्य एवं प्रतिभा-शाली विद्यार्थियों को पर्याप्त आर्थिक सहायता देकर उत्साहित किया जाने लगा।

मई १६४५ ई० में दूसरा महायुद्ध समाप्त हुआ और जुलाई में निर्वाचन की व्यवस्था की गई। श्रम दल को विजयश्री मिली। इस दल के ४०० से भी अधिक सदस्य निर्वाचन में सफल हुए। एटली के प्रधान मंत्रित्व में सरकार का निर्माण हुआ। यों तो श्रमदल का यह तीसरा मंत्रिमंडल था किन्तु वास्तव में यह प्रथम श्रम मंत्रिमंडल था जिसे कॉमन्स सभा में अपने दल का स्पष्ट बहुमत प्राप्त था।

एटली मंत्रिमण्डल १६४५ से १६५० ई० तक कायम रहा। ५ वर्ष की अवधि पूरी हो जाने पर १६५० ई० में निर्वाचन कराया गया। इसमें श्रम-दल को बहुमत तो मिला किन्तु बहुत कम। लगभग १७ सदस्यों का ही बहुमत प्राप्त हुआ। एटली की सरकार पुनः बनी, किन्तु यह अल्पकाल तक ही रही। १६५१ ई० में पुनः चुनाव हुआ और अनुदार दल को बहुमत मिला। चर्चिल ने अपना दूसरा मंत्रिमंडल बनाया।

एटली सरकार के कामों को दो भागों में बाँध जा सकता है—उद्योगों का राष्ट्रीयकरण और सामाजिक दशा का सुधार। युद्धकाल में कई प्रमुख उद्योगों पर सरकारी नियन्त्रण स्थापित हो गया था और शान्तिकाल में भी यह नियन्त्रण कायम रखना आवश्यक समझा गया। अतः यातायात, कोयला, बिजली, गैस, बैंक आफ इगलैंड और लोहे तथा इस्पात के उद्योगों का राष्ट्रीयकरण अनुदार दल वाले नहीं चाहते थे किन्तु बहुमत के अभाव में वे कुछ कर तो नहीं सकते थे। राष्ट्रीयकरण के उद्देश्य से एक केन्द्रीय बोर्ड की स्थापना हुई। इसमें कई सदस्य और एक अध्यक्ष होते थे। इनकी नियुक्ति मन्त्रियों के द्वारा होती थी।

इस तरह एटली सरकार ने कुछ प्रमुख उद्योगों का राष्ट्रीयकरण कर दिया और कुछ उद्योगों में सुधार हुआ। इसके अतिरिक्त सामाजिक सुधार के लिये भी कई योजनायें प्रस्तुत की गई। पारिवारिक भत्ते नियम (फेमिली एलाउन्सेज़ ऐक्ट १९४६ ई०) के अनुसार बच्चा पैदा करने वाली स्त्रियों को साप्ताहिक भत्ता देने की व्यवस्था की गई। बच्चे के लिये १४ वर्ष की उम्र तक स्कूल में जाना आवश्यक था और उस समय तक यह भत्ता उसकी माँ को मिलता रहता। यदि लड़का १६ वर्ष की उम्र तक पढ़ता तो उस हालत में उस समय तक भत्ता दिया जाता। एक राष्ट्रीय बीमा (औद्योगिक क्षति) नियम पास हुआ। इसके द्वारा कारखानों में काम करते समय घायल होने या जान जाने पर मजदूरों या उनके परिवारों को उचित एवं पर्याप्त क्षति पूर्ति करने की व्यवस्था की गई। सामाजिक क्षेत्र में बेवरिज योजना के आधार पर राष्ट्रीय बीमा की व्यवस्था पहले से अधिक विस्तृत पैमाने पर की गई। गरीबों की आर्थिक समस्या हल करने के लिये एक राष्ट्रीय सहायता नियम (नेशनल असिस्टेंट्स ऐक्ट) पास किया गया।

मजदूर सरकार ने कृषि, चरागाह तथा माल मवेशी के महत्त्व को भी समझा और इनकी उन्नति के लिये भी योजनाएँ बनाई गई। १९४६ ई० में एक हील फार्मिंग नियम पास हुआ। इसके अनुसार सुधार के सम्बन्ध में जो खर्च होता उसका आधा सरकार ने स्वयं देने के लिये स्वीकार किया।

एटली सरकार के समय कुछ अन्य परिवर्तन भी दीख पड़ते हैं। प्रथम महायुद्ध का अन्त होते ही अनिवार्य सैनिक सेवा और खाद्य नियंत्रण की व्यवस्था का अन्त हो गया किन्तु इस बार १९४५ ई० के बाद भी ये जारी रहे। दूसरे, उत्पादन और निर्यात में वृद्धि रही। तीसरे, युद्ध के बाद भी टैक्स कुछ अधिक रहा। प्रत्यक्ष कर और आय कर में वृद्धि रही जिससे धनी वर्ग पर विशेष प्रभाव पड़ा। १९१४ ई० के पहले जहाँ अधिकतम आय पर करीब १० प्रतिशत ही आय कर था वहाँ अब ६० प्रतिशत तक बढ़ गया था।

युद्धोत्तर काल में ब्रिटिश सरकार को कर्ज भी लेने के लिये बाध्य होना पड़ा था। १९४६ ई० में ही अमेरिका ने ३,७५०,०००,००० डालर का कर्ज दिया। इसके साथ यह शर्त भी लगी कि ब्रिटेन में अमेरिका से जिन चीजों का निर्यात होता है उन्हें घटाना नहीं चाहिये और डोमिनियन से न मँगाना चाहिये। यह आशा की गई कि यह कर्ज ५ वर्ष तक रहेगा और इस बीच ग्रेट ब्रिटेन की आर्थिक स्थिति पूरी सुधर जायगी किन्तु यह आशा पूरी नहीं हुई और १९४८ ई० में मार्शल योजना के अन्तर्गत ग्रेट-ब्रिटेन को अमेरिका से पुनः आर्थिक सहायता लेनी पड़ी। इस योजना के अनुसार पश्चिमी यूरोप के अन्य देशों को भी आर्थिक सहायता मिली थी।

वैधानिक क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन हुये। १९११ ई० के पार्लियामेंट नियम के अनुसार लार्ड सभा को अधिकार था कि वह किसी गैर आर्थिक बिल को दो वर्ष तक पास होने से रोक सकती थी। जब अनुदार दल विरोध पक्ष में रहता था तो वह इस नियम से अनुचित लाभ उठा सकता था और उठाता था। श्रम सरकार इसे पसन्द नहीं करती थी। अतः १९४९ ई० में एक दूसरा पार्लियामेंट नियम पास हुआ और दो वर्ष की लम्बी अवधि को घटाकर एक वर्ष कर दिया गया। अब इसके बाद लार्ड सभा किसी गैर आर्थिक बिल को पास होने से एक ही वर्ष तक रोक सकती है।

कॉमन्स सभा के सम्बन्ध में सुधार लाने के लिये १९४८ और १९४९ ई० में नियम पास हुये। इन नियमों के द्वारा 'एक व्यक्ति, एक मत' का सिद्धान्त कायम हुआ। विश्वविद्यालयों को जो स्थान मिले थे वे हटा दिये गये। एक निर्वाचन क्षेत्र से एक ही व्यक्ति के निर्वाचन की व्यवस्था की गई और करीब ६०,००० मतदाता उसे चुनते थे। कॉमन्स सभा के कुल सदस्यों की संख्या ६२५ हो गई।

१९५१ ई० में जब एटली के पदत्याग के बाद चर्चिल ने दूसरा अनुदार मंत्रि-मंडल कायम किया तो उसने श्रम सरकार की बहुत-सी योजनाओं को तो जारी रखा किन्तु लोहे तथा इस्पात सम्बन्धी उद्योगों और सड़क के राष्ट्रीयकरण को रद्द कर दिया गया।

इसी मंत्रिमंडल के समय १९५२ ई० के प्रारंभ में जार्ज षष्टम की मृत्यु हो गई और उसकी लड़की द्वितीय एलिजाबेथ के नाम से गद्दी पर बैठी। १९५५ ई० के प्रारंभ में चर्चिल ने अस्वस्थता के कारण पदत्याग कर दिया और दूसरा अनुदार नेता इडेन उसका उत्तराधिकारी बना। मई में चुनाव हुआ और अनुदार दल को ही बहुमत मिला। इडेन प्रधानमंत्री बने रहे।

लेकिन इडेन नई पार्लियामेंट की अवधि पूरी होने के समय तक प्रधान मंत्री के पद पर नहीं रह सके। उसी के प्रधान मंत्रित्व काल में मिश्र में स्वेज नहर का राष्ट्रीय-करण कर दिया गया और इससे इंगलैंड में हलचल पैदा हो गई। इडेन आगबबूला

हो गये और फ्रांस के साथ मिलकर मिश्र पर हमला भी कर दिया। इस घटना का विस्तृत उल्लेख अन्यत्र किया जायगा। यहाँ इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इस घटना से इडेन की बड़ी बदनामी हुई। उसके सभी देशवासी भी एक स्वर से उसकी नीति के समर्थक नहीं थे। अतः ६ जनवरी १९५७ ई० को उसने पदत्याग कर दिया। वास्तविकता तो यही था किन्तु यह घोषणा की गई कि बुरे स्वास्थ्य के कारण इडेन ने पद-त्याग किया है।

अब नये प्रधान मंत्री के चुनाव करने का प्रश्न उठा। अनुदार दल ने अभी किसी को नेता नहीं चुना था। राजनीतिक क्षेत्र में अनुमान किया जाता था कि बटलर नया प्रधान मंत्री होगा क्योंकि वह इडेन की स्वेज नीति का हार्दिक समर्थन नहीं करता था किन्तु अनुमान सत्य नहीं निकला। हेरोल्ड मैकमिलन प्रधान मंत्री नियुक्त हुआ। महारानी एलिजाबेथ ने महान् राजनीतिज्ञ एवं अनुदार नेता श्री चर्चिल की राय से मैकमिलन को प्रधान मंत्री के पद पर नियुक्त किया था लेकिन जिस ढग से मैकमिलन की नियुक्ति हुई इस पर कुछ श्रमिक नेताओं ने क्षोभ प्रकट किया। उनका कहना था कि महारानी के समक्ष दो उम्मीदवारों को उपस्थित कर अनुचित कार्य किया गया और उन्हें दलबन्दी में घसीटा गया किन्तु महारानी ने सवैधानिक ढग से ही काम किया क्योंकि उन्होंने महान् अनुदार नेता की राय लेकर ही फैसला किया। अब तो लोकमत ही स्पष्ट रूप से बतला सकता है कि महारानी का मैकमिलन को प्रधान मंत्री नियुक्त करना कहाँ तक उचित था।

श्री मैकमिलन भी अनुदारवादी हैं और इस समय उनकी उम्र ६२ वर्ष है। सर्वप्रथम १९४० ई० में ही वे मंत्रि पद पर नियुक्त हुये थे। इडेन मंत्रिमंडल में वे ८ महीने तक विदेश मंत्री थे जबकि परराष्ट्र मंत्रियों के कई सम्मेलनों में भाग लेने का अवसर प्राप्त हुआ था। पिछले एक साल से वे वित्त मंत्री के पद पर थे। प्रधान मंत्री होने पर मंत्रिमंडल का पुनर्संगठन हुआ। कुछ पुराने हटे और कुछ नये लिये गये। पूर्वगामी मंत्रिमंडल में १९ सदस्य थे किन्तु इसमें १८ ही हैं। इसका कारण है कि बटलर को दो विभाग दे दिये गये हैं—वे राज मुद्राधिकारी तथा गृह मन्त्री दोनों ही हैं। परराष्ट्र विभाग पूर्ववत् सेलविन लायड के ही हाथ में रहा। इस मंत्रिमंडल में ५३ वर्ष से अधिक उम्र के सदस्यों की संख्या कम है।

(ख) वैदेशिक नीति—प्रथम महायुद्ध में ग्रेट ब्रिटेन ने प्रमुख भाग लिया था और इसके अन्त में वह एक महानतम राज्य के रूप में बना रहा। अमेरिका ने दो वर्ष के बाद युद्ध में प्रवेश किया और युद्ध के अन्त में पृथक्ता की नीति अख्तियार कर विश्व की राजनीति से अलग रहा। रूस तो पराजय और क्रान्ति का शिकार बन गया था और उसकी स्थिति कमजोर थी किन्तु दूसरे महायुद्ध के प्रारंभ होने के

समय तक रूस और अमेरिका दोनों ही खूब शक्तिशाली हो गये थे और दोनों ने ग्रेट ब्रिटेन के साथ-साथ युद्ध में प्रमुख भाग लिया है। वास्तव में द्वितीय महायुद्ध में रूस तथा अमेरिका की देन ग्रेट ब्रिटेन की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण रही है। अतः इस युद्ध के बाद ग्रेट ब्रिटेन का विश्व के रंगमंच पर तीसरा स्थान हो गया है। युद्धोत्तर काल में संसार के राजनीतिक रंगमंच पर अमेरिका और रूस दो प्रबल प्रतिद्वन्द्वी के रूप में उपस्थित हुए हैं। युद्ध समाप्त होने पर रूस अपने साम्यवादी विचार और प्रभाव को बढ़ाने का प्रयत्न करने लगा और अमेरिका उसकी नीति का विरोधी बना। ग्रेट ब्रिटेन अमेरिका का साथ देता रहा है। १९१८ ई० में जब सन्धि हुई तो उसके बाद लगभग १५ वर्षों तक किसी ने नहीं सोचा था कि फिर विश्वयुद्ध होगा। नाज़ियों के हाथ में शासन-सूत्र आने के बाद ही युद्ध होने की आशंका धीरे-धीरे बढ़ने लगी किन्तु दूसरे महायुद्ध के बाद सन्धि होने के बाद कुछ ही समय के अन्दर रूस के विरुद्ध युद्ध की आशंका होने लगी। अतः जहाँ वर्सायी की सन्धि ( १९१८ ई० ) के १७ वर्षों के बाद इंगलैंड में अस्त्र-शस्त्र की वृद्धि होने लगी वहाँ द्वितीय महायुद्ध के अन्त होने के ४ ही वर्ष के बाद (१९४९ ई०) अस्त्र-शस्त्र का उत्पादन शुरू हो गया।

युद्धोत्तर काल में शीघ्र ही एक नवीन प्रकार का युद्ध शुरू हुआ जिसे शीतयुद्ध कहते हैं। रूस ने इसमें काफ़ी हाथ बँटाया है और अमेरिका तथा ब्रिटेन को तंग करता रहा है। राष्ट्र संघ की भाँति संयुक्त राष्ट्र संघ का भी एक विधान बना है। इसकी कार्यकारिणी संस्था को सुरक्षा परिषद कहते हैं। इसमें ५ बड़े राज्यों को स्थायी स्थान प्राप्त है। इन ५ राज्यों में एक ग्रेट ब्रिटेन भी है। इनमें से यदि कोई भी राज्य किसी प्रस्ताव को स्वीकृत न करे तो वह पास नहीं समझा जायगा। इस तरह इसमें प्रत्येक महान राज्य को ये अधिकार प्राप्त हैं और रूस ने अपने इस अधिकार का कई बार उपयोग भी किया है। जर्मनी की पराजय हो जाने पर चारों विजेता राष्ट्रों ( अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस और रूस ) ने उसे आपस में बाँट लिया। इस परिस्थिति में अन्य कोई उपाय नहीं था। जर्मनी की राजधानी बर्लिन में भी चारों ने हिस्सा लिया लेकिन अन्य तीन शक्तियों को रूसी भूमि से ही रास्ता मिलता था। एक बार १९४८ ई० में रूस ने रास्ता देना अस्वीकार कर दिया। तब अमेरिका और ब्रिटेन ने करीब १३ महीने तक हवाई रास्ते से अपने क्षेत्र में प्रबन्ध किया। इसके बाद रूस से फिर समझौता हो गया। कोरिया में भी युद्ध शुरू हो गया। वह दो भागों में बँटा था—उत्तरी और दक्षिणी और दोनों कोरिया में युद्ध शुरू हो गया। संयुक्त राष्ट्र संगठन की ओर से युद्ध घोषित हुआ जिसमें अमेरिका की ही प्रधानता रही। कई वर्षों तक लड़ाई चलने के बाद इसकी समाप्ति हुई। यहाँ भी रूस तथा अमेरिका विरोधी के रूप में लड़ रहे थे।

रूसी नीति एवं शीत युद्ध के फलस्वरूप यह आवश्यक था कि पश्चिमी प्रजातंत्र राज्य परस्पर सहयोग बढ़ायें। इसके लिये अमेरिका ने तत्परता दिखलाई। १९४७ ई० में मार्शल योजना के द्वारा यूरोप के पश्चिमी राज्यों को आर्थिक सहायता दी जाने लगी। सामूहिक सुरक्षा के लिए उत्तरी अटलांटिक संधि का संगठन हुआ। इसमें पश्चिमी यूरोप के कई राज्य तथा अमेरिका और कनाडा सम्मिलित थे। इसे संक्षेप में नाटो भी कहते हैं। इसे जब रक्षात्मक संगठन घोषित किया तो रूस भी अपनी विशाल सैनिक तैयारी को रक्षात्मक ही कहने लगा।

इस तरह महायुद्ध के समाप्त होते ही १९४६ ई० से ही विश्व के राजनीतिक रंगमंच पर अमेरिका तथा रूस एक दूसरे को नीचा गिराने के लिए अपना अपना दॉव पेंच लगाते रहे और ग्रेट ब्रिटेन भी प्रायः अमेरिका के ही साथ चलता रहा है। लेकिन ग्रेट ब्रिटेन अन्धे की तरह अमेरिका के पीछे नहीं चलता। अमेरिका और रूस के बीच जितना तनाव और मनमुटाव है उतना रूस और ग्रेट ब्रिटेन के बीच नहीं है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि ब्रिटिश सरकार ने रूस के प्रधान मन्त्री बुल्गानिन और कम्युनिस्ट पार्टी के मन्त्री ख्रुश्चेव को लन्दन में आने के लिये निमंत्रित किया। रूसी नेताओं ने अप्रैल १९५६ ई० में लंदन की यात्रा की। वहाँ पहुँचने पर इनका स्वागत हुआ, ब्रिटिश नेताओं के साथ विचार विनिमय हुआ और परस्पर तनाव में कमी हुई। दोनों देशों के बीच व्यापारिक तथा सांस्कृतिक सम्पर्क बढ़ाने का निश्चय हुआ और इससे दोनों देशों को बहुत लाभ होने की सम्भावना है। १९५६ ई० के अन्तिम चरण में जब ग्रेट ब्रिटेन ने फ्रांस और इसरायल के साथ मिल कर मिश्र पर हमला किया तो अमेरिका ने ब्रिटेन का साथ नहीं दिया बल्कि उसकी नीति की आलोचना की। अमेरिका के सहयोग के अभाव में उसकी स्थिति कमजोर हो गयी और संयुक्त राष्ट्र संगठन के दबाव देने से उसे अपनी सेना मिश्र से हटानी पड़ी। इतना ही नहीं, ग्रेट ब्रिटेन ने साम्यवादी चीनी सरकार को १९४९ ई० में ही मान्यता दे दी और दोनों देशों के राजदूत दोनों देशों की राजधानियों में रहते हैं किन्तु अमेरिका नवीन चीनी सरकार का विरोधी रहा है।

(ग) राष्ट्रमंडल—युद्धोत्तर काल की एक प्रमुख घटना है—भारत में ब्रिटिश शासन का अन्त होना। १५ अगस्त १९४७ ई० को भारत अंग्रेजों के चंगुल से मुक्त हुआ—लेकिन एक बुरी बात यह हुई कि देश दो टुकड़ों में बंट गया—हिन्दुस्तान और पाकिस्तान। अगस्त १९४७ ई० में इन दोनों राज्यों को औपनिवेशिक स्वराज्य दे दिया गया और ये डोमिनियन कहलाने लगे किन्तु भारत ने २६ जनवरी १९५० को अपने अधिकारों का उपयोग कर अपने को प्रभुता सम्पन्न जनतन्त्र राज्य घोषित किया। साथ ही ब्रिटिश राष्ट्रमंडल से इसने अपना सम्बन्ध भी बनाये रखने का

निश्चय किया। इससे अंग्रेजों को काफी खुशी हुई। अब ब्रिटिश राष्ट्रमंडल के स्वरूप में बड़ा परिवर्तन हुआ। अब ब्रिटिश शब्द को हटाकर केवल राष्ट्रमंडल ही कहा जाने लगा और ब्रिटिश सम्राट को स्वतंत्र राष्ट्रों के एक समूह की एकता का प्रतीक मात्र ही माना गया। इससे भारत की प्रभुता में किसी तरह की कमी नहीं आई और यह अपनी इच्छा एवं सुविधानुसार जब चाहे राष्ट्रमंडल से अपना नाता तोड़ सकता है।

राष्ट्रमंडल के अन्य सदस्य भी ग्रेट ब्रिटेन से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर सकते हैं। ब्रिटिश राजा जैसे अपने मंत्रिमंडल की राय को मानने के लिए बाध्य है वैसा ही वह किसी भी डोमिनियन मंत्रिमंडल की राय की उपेक्षा नहीं कर सकता। यदि कोई डोमीनियन पार्लियामेंट सम्बन्ध विच्छेद सम्बन्धी कानून को पास करती है तो राजा उसे अस्वीकार नहीं कर सकता। दक्षिणी अफ्रीका ने तो १९३४ ई० में ही एक कानून पास कर दिया जिसके अनुसार राजा को कोई कानून अस्वीकृत करने का अधिकार ही नहीं रह गया।

पाकिस्तान भी राष्ट्रमंडल का सदस्य है। इसी समय सिलोन को भी स्वतंत्रता मिली और इसने भी राष्ट्रमंडल की सदस्यता स्वीकार की है। इस प्रकार नवजाग्रत एशिया के तीन नये स्वतंत्र राज्य राष्ट्रमंडल के सदस्य हैं। इन तीन एशियायी राज्यों के अतिरिक्त राष्ट्रमंडल के ६ अन्य सदस्य हैं—ग्रेट ब्रिटेन, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, दक्षिणी अफ्रीका और रोडेशिया-न्यासालैंड। सभी सदस्य राज्यो के प्रधान मन्त्रियों की समय-समय पर बैठक होती है जिसमें परस्पर सम्बन्धित विषयों तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति पर विचार विमर्श किया जाता है। विश्व-शान्ति एवं सुरक्षा की स्थापना में इस राष्ट्रमंडल की भी महत्वपूर्ण देन है। द्वितीय महायुद्ध के बाद से १९५६ ई० तक राष्ट्रमंडलीय प्रधान मंत्रियों के कुल सात सम्मेलन हो चुके हैं।

राष्ट्रमंडल के अन्दर नागरिकता के सम्बन्ध में कोई विशेष विभेद नहीं माना जाता है। राष्ट्रमंडल के सदस्य राज्यों के नागरिक एक दूसरे को विदेशी नहीं समझते किन्तु दक्षिणी अफ्रीका में जातीयता तथा रंग के आधार पर भारतीयों के साथ कुछ भेद-भाव रखा जाता है।

१९५६ ई० तक राष्ट्रमंडल के प्रधान मंत्रियों का सम्मेलन केवल लंदन में ही होता रहा किन्तु इस वर्ष यह सुझाव रखा गया कि अन्य सदस्य राज्यों की राजधानियों में भी यह सम्मेलन हुआ करे। संभव है कि अगला सम्मेलन नई दिल्ली में हो। यह भी विचार हुआ कि राष्ट्रमंडल के परराष्ट्र मंत्रियों का भी सम्मेलन किया जाय। ऐसा सम्मेलन एक बार कोलम्बो में हो भी चुका है।

**( घ ) ब्रिटिश साम्राज्य—मिश्र—**ब्रिटिश साम्राज्य के अन्य भागों का भी जहाँ

तक सम्बन्ध है उनमें कई उपनिवेशों को शासन में अधिकार प्राप्त हुआ है। ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रवृत्ति क्षीण होती जा रही है और अधीनस्थ राज्यों को स्वशासन सम्बन्धी अधिकार देने की ही भावना का विकास हो रहा है।

१६३६ ई० में द्वितीय महायुद्ध छिड़ने पर मिश्र की रक्षा के लिये वहाँ अंग्रेजी सेना भेजी गई। १६४० ई० में मिश्र पर हमला भी हुआ, किन्तु दो वर्ष के अन्दर दुश्मन भगा दिये गये। युद्ध समाप्त होने पर मिश्रियों ने यह माँग की कि अंग्रेजी सेना उनकी भूमि से हटा दी जाय। मिश्र छोड़ो—के नारे लगाये जाने लगे और जहाँ-तहाँ प्रदर्शन होने लगे। १६४७ ई० में मिश्र से सेना हटा ली गई किन्तु नहर के क्षेत्र में अभी भी सेना कायम रही। इसे हटाने के सम्बन्ध में मिश्रियों और अंग्रेजों में १६५४ ई० में एक समझौता हुआ। १६५२ ई० में ही मिश्र में राजतंत्र की नींव उखाड़ दी गयी जब कि वहाँ के राजा को गद्दी से उतार दिया गया। १६५६ ई० के मध्य तक वहाँ नया संविधान लागू हो गया और मिश्र का एक जनतंत्र के रूप में उदय हुआ। कर्नल नासिर इसके प्रथम राष्ट्रपति चुने गये।

मिश्रियों ने सूडान को भी अंग्रेजों से लेने का प्रयत्न किया, लेकिन अंग्रेजों ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया और यह प्रश्न संयुक्त राष्ट्र संघ में भी पेश किया गया किन्तु कोई विशेष सफलता नहीं मिली। १६५३ ई० में इंगलैंड और मिश्र के बीच एक समझौता हुआ। इसके अनुसार यह निश्चय हुआ कि सूडानवासी मिश्र के साथ मिलकर रहें या स्वतंत्र होकर रहें। सूडान की लोकसभा ने इसे एक प्रभुता सम्पन्न जनतन्त्र राज्य घोषित कर दिया। १ जनवरी १६५६ ई० को सूडान पूर्ण स्वतंत्र हो गया और इस पर न इंगलैंड का कोई अधिकार रहा और न मिश्र का ही।

मिश्र ने फिलिस्तीन के मामले में भी हस्तक्षेप किया। अरबों के साथ मिश्रियों की पूरी सहानुभूति थी। १६४८ ई० में जब फिलस्तीन को दो भागों में बाँट दिया गया तो मिश्री बहुत नाराज हुए और उन्होंने इसरायल नामक यहूदी राज्य पर हमला तक कर दिया। फिर विराम सन्धि हुई और अन्त में समझौता हुआ।

आंग्ल मिश्री सम्बन्ध के इतिहास में १६५६ का वर्ष बड़ा ही महत्वपूर्ण है। स्वेज नहर का पहले ही उल्लेख हो चुका है। यह अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की नहर है और ग्रेट ब्रिटेन इससे अपना सम्बन्ध विच्छेद करना नहीं चाहता था। नहर की खुदाई में इंगलैंड तथा फ्रांस ने सहायता की किन्तु मिश्रियों ने भी तन मन धन से पूर्ण सहयोग दिया था। उन्होंने कठोर कष्ट झेला—सहस्त्रों के प्राण गये। इस तरह नहर तो तैयार हुई किन्तु आगे चलकर अंग्रेजों ने छल-बल से मिश्रियों का भी हिस्सा ले लिया। अब इंगलैंड तथा फ्रांस नहर को पाकर माल बनाने लगे और मिश्र की आर्थिक दशा बिगड़ती ही रही। उसे विकास के लिये अर्थ की बड़ी आवश्यकता थी। स्वेज नहर से

उत्पन्न आय में उसे बहुत कम मिलता था। १९५५ ई० में ३१ करोड़ पौंड की आय में मिश्र को केवल १० लाख पौंड ही मिले थे। मिश्रियों की दृष्टि में यह घोर अन्याय था—राष्ट्रीय धन का लूट था। यह अन्याय और भी बुरी तरह खलने लगा जब कि आवश्यकता पड़ने पर इंगलैंड तथा फ्रांस ने मिश्र को ऋण देने से अस्वीकार कर दिया। मिश्री सरकार को असवन बाँध के लिये एक बड़ी रकम की आवश्यकता थी। इंगलैंड तथा फ्रांस से कर्ज माँगा गया किन्तु इन दोनों देशों ने अँगूठा दिखा दिया। इससे मिश्रियों की आत्म-प्रतिष्ठा को—राष्ट्रीय भावना को गहरी चोट पहुँची। नहर के क्षेत्र से ब्रिटिश सेना हटायी जा चुकी थी। राष्ट्रपति कर्नल नसीर ने स्वेज नहर का राष्ट्रीयकरण कर दिया।

स्वेज नहर के राष्ट्रीयकरण का समाचार पाते ही ग्रेट ब्रिटेन तथा फ्रांस में खलबली मच गई। इन देशों के साम्राज्यवादी स्वार्थ को गहरा धक्का लगा। प्रधान मन्त्री इडेन ने रोष में आकर आक्रमणात्मक नीति अपनायी। फ्रांस तो क्रुद्ध था ही। इसरायल भी मिश्र का दुश्मन था। अतः इन तीनों राज्यों ने अक्टूबर १९५६ ई० में मिश्र पर धावा बोल दिया। सभी दिशाओं से हमले का घोर विरोध होने लगा—आक्रमणकारियों की कटु निन्दा की जाने लगी। एशियाई-अफ्रीकी देशों की जनता ने मिश्री सरकार की नीति का समर्थन किया और आक्रमण का एक स्वर से विरोध किया। केवल पाकिस्तान अपवादस्वरूप है। संयुक्त राष्ट्र संगठन के रंगमंच से भी आक्रमण नीति की आलोचना की गई और सेना हटा लेने के लिये प्रस्ताव पास हुआ। यहाँ तक कि अमेरिका ने भी मिश्र पर हमले का समर्थन नहीं किया और इंगलैंड को सहयोग देने से अस्वीकार कर दिया। ब्रिटिश लोकमत भी अपनी सरकार की इस नीति से पूर्ण रूपेण सहमत नहीं था। इन सब का यही परिणाम हुआ कि अपनी अवधि के बहुत पूर्व ही इडेन को प्रधान मन्त्री के पद से त्याग-पत्र देना पड़ा। वह मन्त्रिमंडल से ही नहीं हटा बल्कि लोक सभा की सदस्यता से भी त्याग पत्र दे दिया। यह उनकी बहुत बड़ी पराजय थी और थी कर्नल नासिर की महान् विजय। मिश्र की भूमि से धीरे-धीरे सेना भी हटने लगी और तृतीय महायुद्ध के बादल भी फटने लगे।

---

# परिशिष्ट १

## हैनोवर राजाओं की वंशावली ( क्रमशः )

विन्टसर घराना

जार्ज पंचम
( १९१०—३६ ई० )

- एडवर्ड अष्टम ( १९३६ )
- जार्ज षष्ठम ( १९३६-५२ ई० )
  - एलिजाबेथ द्वितीय ( १९५२— )

---
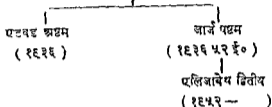
# परिशिष्ट २

## मंत्रिमंडल की सूची ( १८१५-१९५७ ई० )

| | | |
|---|---|---|
| २९ | लिवरपूल का टोरी मन्त्रिमंडल | १८१२—२७ ई० |
| ३० | गोडरिक का " " | १८२७—२८ ई० |
| ३१ | वेलिंगटन का " " | १८२८—३० ई० |
| ३२ | ग्रे का ह्विग मन्त्रिमंडल | १८३०—३४ ई० |
| ३३ | मेलबोर्न का प्रथम ह्विग मन्त्रिमंडल | १८३४ ई० |
| ३४ | पील का प्रथम कन्जर्वेटिव मन्त्रिमंडल | १८३४—३५ ई० |
| ३५. | मेलबोर्न का द्वितीय लिबरल मन्त्रिमंडल | १८३५—४१ ई० |
| ३६. | पील का दूसरा कन्जर्वेटिव मन्त्रिमंडल | १८४१—४६ ई० |
| ३७ | रसेल का प्रथम लिबरल मन्त्रिमंडल | १८४६—५२ ई० |
| ३८ | डर्बी डिसरैली का प्रथम कन्जर्वेटिव मन्त्रिमंडल | १८५२ ई० |
| ३९ | एबर्डीन का लिबरल पीलाइट मन्त्रिमंडल | १८५२—५५ ई० |
| ४० | पामर्स्टन का प्रथम लिबरल मन्त्रिमंडल | १८५५—५८ ई० |
| ४१ | डर्बी डिसरैली का द्वितीय कन्जर्वेटिव मन्त्रिमंडल | १८५८—५९ ई० |
| ४२ | पामर्स्टन का द्वितीय लिबरल पीलाइट मन्त्रिमंडल | १८५९—६५ ई० |
| ४३ | रसेल का द्वितीय लिबरल मन्त्रिमंडल | १८६५—६६ ई० |

| | | |
|---|---|---|
| ४४. | डर्बी-डिसरैली का तृतीय कन्जर्वेटिव मंत्रिमंडल | १८६६—६८ ई० |
| ४५. | डिसरैली का प्रथम कन्जर्वेटिव मंत्रिमंडल | १८६८ ई० |
| ४६. | ग्लैडस्टन का प्रथम लिबरल मंत्रिमंडल | १८६८—७४ ई० |
| ४७. | डिसरैली का द्वितीय कन्जर्वेटिव मंत्रिमंडल | १८७४—८० ई० |
| ४८. | ग्लैडस्टन का दूसरा लिबरल मंत्रिमंडल | १८८०—८५ ई० |
| ४९. | सैलिसबरी का प्रथम कन्जर्वेटिव मंत्रिमंडल | १८८५—८६ ई० |
| ५०. | ग्लैडस्टन का तृतीय लिबरल मंत्रिमंडल | १८८६ ई० |
| ५१. | सैलिसबरी का द्वितीय कन्जर्वेटिव मंत्रिमंडल | १८८६—९२ ई० |
| ५२. | ग्लैडस्टन का चतुर्थ लिबरल मंत्रिमंडल | १८९२—९४ ई० |
| ५३. | रोजबरी का लिबरल मंत्रिमंडल | १८९४—९५ ई० |
| ५४. | सैलिसबरी का तृतीय कन्जर्वेटिव मंत्रिमंडल | १८९५—१९०२ ई० |
| | ( कन्जर्वेटिव और लिबरल यूनियनिस्ट ) | |
| ५५. | बाल्फ़र मंत्रिमंडल ( कन्जर्वेटिव और लिबरल यूनियनिस्ट ) | १९०२—०५ ई० |
| ५६. | कैम्पबेल-बैनरमैन का लिबरल मंत्रिमंडल | १९०५—०८ ई० |
| ५७. | ऐसक्विथ का लिबरल मंत्रिमंडल | १९०८—१६ ई० |
| | ( १९१५ ई० के बाद संयुक्त ) | |
| ५८. | लायड जार्ज ( लिबरल ) का संयुक्त मंत्रिमंडल | १९१६—२२ ई० |
| ५९. | बोनरला का कन्जर्वेटिव मंत्रिमंडल | १९२२—२३ ई० |
| ६०. | बाल्डविन का प्रथम कन्जर्वेटिव मंत्रिमंडल | १९२३—२४ ई० |
| ६१. | मैक्डोनल्ड का प्रथम श्रम ( लेबर ) मंत्रिमंडल | १९२४ ई० |
| ६२. | बाल्डविन का द्वितीय कन्जर्वेटिव मंत्रिमंडल | १९२४—२९ ई० |
| ६३. | मैक्डोनल्ड का द्वितीय श्रम मंत्रिमंडल | १९२९—३१ ई० |
| ६४. | मैक्डोनल्ड का तृतीय मंत्रिमंडल ( राष्ट्रीय ) | १९३१—३५ ई० |
| ६५. | बाल्डविन का तृतीय मंत्रिमंडल " | १९३५—३७ ई० |
| ६६. | चेम्बरलेन का मंत्रिमंडल " | १९३७—४० ई० |
| ६७. | चर्चिल का प्रथम मंत्रिमंडल " | १९४०—४५ ई० |
| ६८. | एटली का श्रम मंत्रिमंडल | १९४५—५१ ई० |
| ६९. | चर्चिल का दूसरा मंत्रिमंडल ( कन्जर्वेटिव ) | १९५१—५५ ई० |
| ७०. | इडेन का मंत्रिमंडल " | अप्रैल १९५५—दिसम्बर ५६ ई० |
| ७१. | हैरोल्ड मैकमिलन का मंत्रिमंडल " | जनवरी १९५७— |

# परिशिष्ट ३

## प्रसिद्ध घटनाएँ तथा तिथियाँ ( १८१५-१९५६ ई० )

| | |
|---|---|
| मैनचेस्टर हत्या एवं द्वितीय फैक्टरी नियम | १८१९ ई० |
| जार्ज तृतीय की मृत्यु और जार्ज चतुर्थ का राज्याभिषेक | १८२० ई० |
| नेपोलियन की मृत्यु | १८२१ ई० |
| रोमन कैथोलिक मुक्ति नियम | १८२९ ई० |
| जार्ज चतुर्थ की मृत्यु, विलियम चतुर्थ का राज्याभिषेक, दूसरी फ्रांसीसी क्रान्ति और बेल्जियम का विद्रोह | १८३० ई० |
| प्रथम सुधार बिल | १८३२ ई० |
| विलियम चतुर्थ की मृत्यु, विक्टोरिया का राज्याभिषेक | १८३७ ई० |
| आयरिश दुर्भिक्ष | १८४५ ई० |
| चार्टिस्ट जुलूस, आयरी विद्रोह | १८४८ ई० |
| क्रीमिया का युद्ध | १८५४ ई० |
| पेरिस की सन्धि | १८५६ ई० |
| भारत का कथित सिपाही विद्रोह | १८५७ ई० |
| ईस्ट इंडिया कम्पनी का अन्त | १८५८ ई० |
| अमेरिकी गृह युद्ध का प्रारंभ | १८६१ ई० |
| फेनियन आन्दोलन | १८६३ ई० |
| दूसरा सुधार नियम | १८६७ ई० |
| स्वेज नहर की स्थापना | १८६९ ई० |
| होमरूल लीग, नेपोलियन तृतीय का पतन | १८७० ई० |
| गुप्त मतदान नियम ( बैलट एक्ट ) | १८७२ ई० |
| सैनस्टेफानो की सन्धि, बर्लिन कांग्रेस | १८७८ ई० |
| आयरी लैंड लीग, जुलू युद्ध | १८७९ ई० |
| तीसरा सुधार नियम | १८८४ ई० |
| प्रथम औपनिवेशिक सम्मेलन और विक्टोरिया की स्वर्ण जयन्ती | १८८७ ई० |
| विक्टोरिया की हीरक जयन्ती | १८९७ ई० |
| आग्ल जापानी समझौता | १९०२ ई० |
| आस्ट्रेलियन कॉमनवेल्थ ऐक्ट | १९०० ई० |
| विक्टोरिया की मृत्यु, एडवर्ड सप्तम का राज्याभिषेक | १९०१ ई० |

| | |
|---|---|
| आंग्ल-फ्रांसीसी समझौता | १९०४ ई० |
| आंग्ल-रूसी समझौता | १९०७ ई० |
| एडवर्ड सप्तम की मृत्यु, जार्ज पंचम का राज्याभिषेक, दक्षिणी अफ्रीका का संयोग | १९१० ई० |
| पार्लियामेंट ऐक्ट | १९११ ई० |
| प्रथम महायुद्ध; मिश्र पर आंग्ल संरक्षण | १९१४ ई० |
| चौथा सुधार नियम | १९१८ ई० |
| गवर्नमेंट आफ इंडिया ऐक्ट, वर्साय़ी की सन्धि, राष्ट्र संघ की स्थापना | १९१९ ई० |
| आयरी फ्री स्टेट का निर्माण | १९२२ ई० |
| मिश्र में आंग्ल संरक्षण का अन्त, लौजेन की संधि और तुर्की प्रजातंत्र | १९२३ ई० |
| आर्थिक संकट | १९२९ ई० |
| स्टेट्युट आफ वेस्टमिनस्टर | १९३१ ई० |
| जार्ज पंचम की मृत्यु; अष्टम एडवर्ड का राज्याभिषेक और गद्दी-त्याग, जार्ज षष्टम का राज्याभिषेक | १९३६ ई० |
| द्वितीय महायुद्ध | १९३९ ई० |
| ,, ,, का अन्त और संयुक्त राष्ट्र संघ का निर्माण | १९४५ ई० |
| जार्ज षष्टम की मृत्यु, द्वितीय एलिजाबेथ का राज्यारोहण | १९५२ ई० |
| मिश्र पर इङ्गलैंड तथा फ्रांस द्वारा आक्रमण | १९५६ ई० |

## परिशिष्ट ४

Important Questions & Quotations ( 1815-1956 )

1. What were the principal features of English History after Waterloo and before the first Reform Bill ?
2. What was the condition of England in 1815? What methods were adopted by the Government to cope with the social unrest of the time ?
3. Describe and account for the changes in Britain's domestic and foreign policy during 1815-1830.
4. In what ways did the discontent of the people express itself after 1815 ? What did the Government do to deal with the situation ?
5. What were the defects in the Parliamentary System

of England before 1832 ? How far were they removed by the first Reform Bill ?

6 'The Reform Act of 1832 marked a revolution in English history but a revolution of a very English kind ' Discuss

7 Discuss the nature and importance of the reforms introduced by the Liberals between 1832 and 1841

8 Form a critical estimate of the achievements of Peel Did he betray his party ?

9 Trace the history of the rise and fall of the Chartist movement Why did it fail ? How far have the demands of the Chartists been met ?

10 Review the foreign policy of Lord Palmerston

11 Sketch briefly the political career of Palmerston How far he was conservative at home and liberal abroad ?

12 'Seldom in English History have two great statesmen living in the same age been so different as Gladstone and Disraeli ' Discuss

13 'While the domestic policy of the two great protagonists Gladstone and Disraeli—ran along parallel courses, their foreign and colonial policies diverged Discuss

14 Describe the political career of Disraeli What were his services to England ?

15 What were the achievements of the first Gladstone Ministry Why did this Government become unpopular ?

16 Review the foreign policy of Disraeli or Salisbury

17 Describe briefly the main features of British History in the 19th century

18 Describe the social and economic condition of England in the 19th century

19 Write a short essay on the progress of Science in England in the 19th century

20 Describe the course of Parliamentary Reform in the 19th century

21 What reforms were carried out by the Liberals in the first quarter of the twentieth century ?

22 Describe the achievements of the Asquith government ( 1908 '16)

23 Account for England's inactivity in European politics after 1878 How was it ended ?

24. 'With the beginning of the 20th century there was a change in the foreign policy of England'. Discuss.
25. Describe Anglo-French relations during 1850-1905 or Anglo-German relations during 1900-1914.
26. Review domestic and foreign affairs of England during the reign of Edward VII.
27. What do you mean by Eastern Question ? Describe its different phases in the 19th century with special reference to the part played by England.
28. Discuss the British attitude towards the Eastern Question between 1850 and 1880.
29. Why did England take part in the Crimean War ? what were her gains and losses ?
30. Briefly describe the growth of the British empire in South Africa down to 1910.
31. Review briefly the British colonial expansion and policy in the century preceding the outbreak of the first Great War.
32. How did the Irish Question affect English politics in the 19th century.
33. How did Gladstone try to pacify Ireland and with what results ?
34. What were the special features of the first Great War ?
35. Why did Great Britain join the first Great War ? What were her gains and losses ?
36. Describe the essential home problem of Great Britain during the first Great War and how were they solved ?
37. 'One of the important events of the post-war (1914-'18) period is the rise of the labour party and the submergence of once triumphant liberal party'. Discuss.
38. Review the foreign policy of Great Britain between the two World Wars.
39. What important events took place during the reign of George V ?
40. 'The establishment of British control over Egypt and its withdrawal form an interesting chapter in the history of the British Empire.' Discuss.
41. Trace Anglo-Egyptian relations in the 20th century.
42. Trace the history of Palestine since 1919.

43 Write a brief history of second Great War with reference to the part played by Great Britain in it.
44 Describe the changes in the fortunes of the politi- parties in Great Britain in the 20th century
45 Trace the Anglo Irish relations in the 20th century
46 Review the foreign policy of England in the first half of the 20th century
47. Trace the evolution of the Commonwealth of Nations. What is its significance ?
48 Describe the growth of political democracy in England in the 19th and 20th centuries
49. Trace the course of franchise reform from 1832 to 1928.
50 Trace the history of education in England in the 19th and 20th centuries
51. What measures of social or constitutional reform were passed in England in the 20th century ?

---

## परिशिष्ट ५

### विस्तृत अध्ययन के लिये ग्रन्थ-सूची ( १८१५-१९५६ ई० )


| Name of the Author | Works |
| --- | --- |
| E. L. Woodward | (1) The Age of R (1815-1870) |
| R C. K Ensor | (2) England (1870-1914) |
| G M Trevelyan | (3) British History in 19th Century (1782-1901 |
| J H Clapham | (4) An Economic History Modern Britain (1820 1914 in 3 Volumes) |
| Brandenburg | (5) From Bismarck to the World War (1870 1914) |
| G Hardy | (6) Short History of national Affairs |
| K. B Smellie | (7) A Hundred Years of English Government |
| J W Adamson | (8) English Education (1... 1902) |
| D. C Somervell | (9) Disraeli and Gladstone |